श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान

(हिन्दी अर्थ सहित)

मंगलाचरण

दोहा : **जिनाधीश शिवईस नमि, सहसगुणित विस्तार।**
सिद्धचक्र पूजा रचूँ, शुद्ध त्रियोग सम्हार।।१।।

अर्थ : जिनों के अधीश/सकल परमात्मा के भी स्वामी निकल परमात्मा, शिव/कल्याण/ मोक्ष-लक्ष्मी के स्वामी सिद्ध भगवान को नमस्कार कर (उनके मुख्य आठ गुणों को) हजार गुणा विस्तृत कर; मन-वचन-काय की शुद्धता/एकाग्रता पूर्वक उन सिद्ध समूह की पूजन करता हूँ।।१।।

यजमान/पूजन करनेवाले का स्वरूप

नीत्याश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुण खान।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान।।२।।

अर्थ : नीति-सम्पन्न, धनवान, बुद्धिमान/सम्यग्ज्ञानी, शील आदि गुणों का भण्डार, जिनेन्द्र भगवान के चरण-कमलों में भौंरे के समान मन को रमानेवाला पुण्य-शाली/पुण्यवान/महान यजमान है।।२।।

याजक/पूजन करानेवाले/विधानाचार्य का स्वरूप

देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार।
मधुर बैन नयना सुघर, सो याजक निरधार।।३।।
रत्नत्रयमंडित महा, विषय-कषाय न लेश।
संशयहरण सुहितकरन, करत सुगुरु उपदेश।।४।।

अर्थ : सुगुरु/निर्ग्रन्थ गुरु उपदेश करते हैं कि देश-काल की विधि/परिस्थिति आदि का जानकार, निपुण बुद्धिवाला, निर्मल भाववान, उदार, मिष्ट-भाषी, तीक्ष्ण नेत्र ज्योति-सम्पन्न/ आकर्षक सौन्दर्य-सम्पन्न, रत्नत्रय से सुशोभित, महान/उच्च व्यक्तित्व-युक्त, विषय-कषाय से रहित, संशय का हरण करनेवाला, सुहित करनेवाला ही वास्तविक याजक है।।३-४।।

विधान-मण्डप और द्रव्य का स्वरूप

छप्पय : **निर्मल मंडप भूमि दरव-मंगल करि सोहत।**
सुरभि सरस शुभ पुष्प-जाल, मंडित मन मोहत।।
यथायोग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा।
दीरघ मोल सुडोल, बसन झखझोल सरूपा।।
हो वित्त-सार प्रासुक दरब, सरब अंग मन को हरै।
सो महाभाग आनंद सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै।।५।।

अर्थ : अत्यन्त स्वच्छ, मंगल द्रव्यों से सुशोभित; सुगन्धित, सुन्दर, शुभ पुष्प समूह/मालाओं से सुसज्जित; मन को मुग्ध करनेवाले यथा-योग्य, सुन्दर, मनोज्ञ, अनुपम चित्रों से सजा हुआ; बहुमूल्य वस्त्र से बने, सुडोल, झखझोल चाँदनी-युक्त मण्डप का क्षेत्र विशाल होता है।

अपने सभी अंगों से मन को हरनेवाले, बहुमूल्य, प्रासुक द्रव्यों से आनन्द पूर्वक जिनेन्द्र भगवान की जो पूजन करते हैं, वे महा-भाग्य-शाली हैं।। ५।।

अब प्रथम परिधी में कर्णिकाकार यंत्र के साथ आठ कोष्ठों की पूजन प्रारम्भ होती है।

यन्त्र स्थापना

दोहा : **सुर-मुनि मन आनन्दकर, ज्ञान सुधारस धार।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, विधि-दव-जल उनहार।।६।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्; अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः; अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अर्थ : देवों, मुनिओं आदि के मन को आनन्दित करनेवाले ज्ञानरूपी अमृत के धारक, कर्मरूपी दावानल को बुझाने के लिए जल के समान सिद्ध-समूह की स्थापना करता हूँ।।६।।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट्;

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः;

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

क्रमशः आठ दिशाओं में अर्घ्य-

अडिल्ल : **अर्हं शब्द प्रसिद्ध अर्ध-मात्रिक कहा,**
अकारादि स्वर मंडित अति शोभा लहा।

अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके,
पूरब दिशि पूजों अष्टांग नमायके।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अर्ध मात्रिक, प्रसिद्ध, महान, अकारादि (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः) स्वरों से सुशोभित, अति शोभायमान अर्हं शब्द की अति पवित्र अष्टांग अर्घ्य द्वारा पूर्व दिशा में आठों अंगों को झुकाकर/अष्टांग नमस्कार करते हुए पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः अनाहत पराक्रम/अनन्त वीर्य-सम्पन्न, सिद्ध-दशा के स्वामी को नमस्कार है; पूर्व दिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा: **वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्वविधि अर्घ ले।**
भक्ति भाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिशि।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये आग्नेयविदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की आग्नेय विदिशा में स्थित महान 'क' वर्ग के क, ख, ग, घ, ङ - वर्णों की, हृदय में भक्ति-भाव प्रगट कर पूर्ववत् अष्ट प्रकार का अर्घ्य लेकर पूजन करता हूँ।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं क, ख, ग, घ, ङ अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्ध-दशा के स्वामी को आग्नेय विदिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके।
मिलि है वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिशि पूजा करौं।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की दक्षिण दिशा में स्थित प्रसिद्ध 'च' वर्ग के च, छ, ज, झ, ञ वर्णों की, अष्टांग अर्घ्य उतारकर पूजन करता हूँ; जिससे आठ प्रकार की ऋद्धि प्राप्त होती है।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं च, छ, ज, झ, ञ अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्ध-दशा के स्वामी को दक्षिण दिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण टवर्ग प्रसिद्ध, जलफलादि शुभ अर्घ ले।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैर्ऋत्य दिशि अर्चा करौं।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैर्ऋत्यविदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की नैर्ऋत्य विदिशा में स्थित प्रसिद्ध 'ट' वर्ग के ट, ठ, ड, ढ, ण - वर्णों की, जल, फल आदि शुभ अर्घ्य लेकर पूजन करता हूँ; जिससे सभी प्रकार के कल्याण प्राप्त कर लूँ।। १०।।

ॐ ह्रीं अर्हं ट, ठ, ड, ढ, ण अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्धाधिपति को नैर्ऋत्य विदिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि।
मिलि है सब शुभ योग, पश्चिम दिशि पूजा करौं।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की पश्चिम दिशा में स्थित मनोज्ञ 'त' वर्ग के त, थ, द, ध, न - वर्णों की, यथा-योग्य अर्घ्य लेकर पूजन करता हूँ; जिससे सभी शुभ योग प्राप्त हो जाते हैं।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं त, थ, द, ध, न अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्धाधिपति को पश्चिम दिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ ले।
सब विधि आरति त्याग, वायव दिशि पूजा करौं।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यविदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की वायव्य विदिशा में स्थित सौभाग्य-दायी 'प' वर्ग के प, फ, ब, भ, म - वर्णों की, सर्व प्रकार के आर्त-ध्यान का त्याग कर, अर्घ्य लेकर आरती करता हूँ, पूजा करता हूँ।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं प, फ, ब, भ, म अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्धाधिपति को वायव्य विदिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व-अर्घ वसु द्रव्य करि।
भाव-अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करौं।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की उत्तर दिशा में स्थित, सारभूत 'य' वर्ग के य, र, ल, व - वर्णों की, आठ द्रव्यमय द्रव्य अर्घ्य लेकर और भाव अर्घ्य को हृदय में धारण कर, पूजन करता हूँ।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं य, र, ल, व अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्धाधिपति को उत्तर दिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।
नशे कर्म वसु भंत, पूजों हो ईशान दिशि।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानविदिशि अर्घ्यं०...।

अर्थ : सिद्ध यन्त्र के अर्हं की ईशान विदिशा में स्थित शेष रहे अन्तिम चार श, ष, स, ह - वर्णों की उत्तम अर्घ्य बनाकर पूजन करता हूँ; हे स्वामी! जिससे आठों कर्मों का नाश हो जाए।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श, ष, स, ह अनाहत पराक्रम-सम्पन्न सिद्धाधिपति को ईशान विदिशा में अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय मंत्र : ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्ममुक्तसिद्धाधिपतये नमः।

आठ गुण–सहित प्रथम पूजन

छप्पय : ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ़्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टगुण–संयुक्त–श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : जिसके मध्य में 'ह कार', ऊपर–नीचे रेफ–युक्त और बिन्दु–सहित है; कर्णिका अ कारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ यंत्र क्रमशः वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन यंत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मंत्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है। अन्त में पुनः यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्धयंत्र कर्म–शत्रुरूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह–समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उसकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; आठ गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; आठ गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; आठ गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा : **सूक्ष्मादिक गुणसहित हैं, कर्मरहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापूहूँ, मिटै उपद्रव योग।।

(इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अव्याबाधत्व, अगुरुलघुत्व, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य) आदि गुणों-सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

इसप्रकार यंत्र-स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।

अब अष्टक/आठ द्रव्य संबंधी छन्द प्रारम्भ होते हैं -

(चाल : नन्दीश्वरद्वीप पूजन के अष्टकों की)

शीतल शुभ सुरभि सु नीर, कंचन कुम्भ भरों।
पाऊँ भवसागर तीर, आनन्द भेंट धरों।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमुं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्मत्तणाणं दंसणवीरजसुहमं तहेव अवग्गहणमगुरुलघु-मव्वावाहं अष्टगुणसंयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अर्थ : भवरूपी समुद्र का किनारा प्राप्त करने-हेतु शीतल, पवित्र, सुगन्धित जल, सुवर्ण कलशों में भरकर आनन्द पूर्वक भेंट देता हूँ और नमस्कार करता हूँ। स्वरूप के सूचक अन्तरंग आठ गुणों से सुशोभित, शिव/मोक्ष/कल्याण के राजा/स्वामी, अचल रूप में विराजमान सिद्ध-समूह को नमस्कार करता हूँ।।१।।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; श्री सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्याबाध - इन आठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को जन्म, जरा, मृत्यु के विनाश-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन तुम वंदन हेत, उत्तम मान्य गिना।
नातर सब काष्ठ समेत, ईंधन ही थपना।।अन्तरगत...।।२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आपकी वन्दना-हेतु चन्दन श्रेष्ठ माना गया है। इस कारण ही चन्दन मान्य है। यदि ऐसा नहीं होता तो यह भी अन्य काष्ठों के समान ईंधन ही होता।...।।२।।

......संसार का ताप नष्ट करने-हेतु चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत ल्यावत हूँ।
शशिमंडल सम बहुमान, पूज रचावत हूँ।।

अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमुँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।३।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चन्द्र-मण्डल के समान शोभायमान, चन्द्रमा की विशाल किरणों के समान धवल, लाए हुए अक्षतों के द्वारा पूजन रचाता हूँ। स्वरूप के सूचक अन्तरंग आठ गुणों से सुशोभित, शिव-स्वामी, अचल रूप में विराजमान सिद्ध समूह को नमस्कार करता हूँ।।३।।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; श्री सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्याबाध - इन आठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को अक्षय पद की प्राप्ति-हेतु अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम चरणचन्द्र के पास, पुष्प धरे सोहैं।
मनुँ नक्षत्रन की रास, सोहत मन मोहैं।।अन्तरगत...।।४।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आपके चरणरूपी चन्द्रमा के पास रखे पुष्प ऐसे सुशोभित हो रहे हैं, मानों नक्षत्रों के समूह में विद्यमान/शोभायमान चन्द्रमा ही मन को मोहित कर रहा है।...।।४।।

.......काम बाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम नेवज बहु भाँति, सरस सुधा साने।
अहमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने।।अन्तरगत...।।५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अहमिन्द्रों का मन भी ललचाकर जिनका भक्षण करने के लिए उत्साहित हो रहा है; उन रसवान, अमृत से परिपूर्ण, अनेक प्रकार के नैवेद्यों को लाकर मैं .....करता हूँ।।५।।

.......क्षुधा रोग-नष्ट करने-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फैली दीपन की जोति, अति परकाश करै।
जिम स्याद्वाद उद्योत, संशय तिमिर हरै।।अन्तरगत...।।६।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे स्याद्वादरूपी उद्योत/प्रकाश संशयरूपी तिमिर अन्धकार का हरण कर लेता है; उसी प्रकार दीपक की ज्योति प्रकाश करती हुई फैल रही है। मैं ..... करता हूँ।।६।।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; श्री सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्याबाध - इन आठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को मोहरूपी अन्धकार के विनाश-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि अग्नि धूप के ढेर, गंध उड़ावत हूँ।
कर्मों की धूप बिखेर, ठोंक जरावत हूँ।।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमुँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।७।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अग्नि में धूप के ढेर/बहुत अधिक धूप डालकर गन्ध उड़ा रहा हूँ। वह ऐसी प्रतीत हो रही है मानों कर्मों की धूप फैलाकर उनका समूह ही जला रहा हूँ। .....करता हूँ।।७।।

......अष्ट कर्म-विध्वंसन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन-धर्म वृक्ष की डाल, शिवफल सोहत हैं।
इम धरि फल कंचन थाल, भविजन मोहत हैं।।अन्तरगत...।।८।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे धर्मरूपी वृक्ष की डाली में शिवरूपी फल सुशोभित होता है; उसी प्रकार सुवर्ण थाल में रखे हुए फल भव्य-जनों के मन को मुग्ध कर रहे हैं। .....करता हूँ।।८।।

......मोक्ष फल की प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।

करि अर्घ दरव वसु जात, यातैं ध्यावत हूँ।
अष्टांग सुगुण विख्यात, तुम ढिंग पावत हूँ।।अन्तरगत...।।९।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि-अष्टगुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आठ प्रकार के द्रव्य से अर्घ्य बनाकर उसके द्वारा आपको ध्या रहा हूँ; सुप्रसिद्ध अष्टांगमय सुगुण आपके पास ही प्राप्त करता हूँ। मैं स्वरूप के सूचक अन्तरंग आठ गुणों से सुशोभित, शिव-स्वामी, अचल रूप में विराजमान श्री सिद्ध-समूह को नमस्कार करता हूँ।।९।।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; श्री सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्याबाध - इन आठ गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी को अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता : **निर्मल सलिल शुभवास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
करि दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्म-दल सब दलमले।।१।।

ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मलरूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँगुण गेह, द्यो हम शुभमती।।२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्मत्तणाणादि-अष्टगुणसंयुक्ताय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन, उज्ज्वल-अनीसहित/अखण्डित अक्षत, मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित, श्रेष्ठ दीपों का समूह; धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमशः होनेवाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाश कर युगपत्/एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय; जन्मादि के दुःख को नष्टकर असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्यपूज्य, अखण्ड शिवलक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य, अनन्त चतुष्टय के भण्डार भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।।१०।।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; श्री सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्याबाध - इन आठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को अनर्घ्य पद की प्राप्ति-हेतु महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गुणों के अर्घ्य

बेसरी/चौपाई : **मिथ्या-त्रय चउ आदि कषाया, मोह नाशि क्षायिक गुण पाया।**
निज अनुभव प्रत्यक्ष सरूपा, नमूँ सिद्ध समकित गुणभूपा।।१।।

ॐ ह्रीं शुद्ध-सम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दर्शन-मोहनीय की मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति - इन मिथ्यात्रय तथा अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ - इन आदि की चार कषाय-युक्त सात प्रकृतिओं वाले मोह का नाश हो जाने से क्षायिक सम्यक्त्व गुण प्राप्त कर अपने आत्मा के स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव करने वाले, सम्यक्त्व-गुण के स्वामी सिद्ध भगवान को नमस्कार है।।१।।

ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक्त्व के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल त्रिधा षट् द्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं भगवंता।
निर आवरण विसद स्वाधीना, ज्ञानानंद परम रस लीना।।२।।

ॐ ह्रीं अनन्त-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण लोकालोक के त्रिकालवर्ती जाति-अपेक्षा छह और संख्या-अपेक्षा अनन्त द्रव्यों के अनन्त गुण-पर्यायों को एक साथ जानने वाले सिद्ध भगवान आवरण-रहित, स्पष्ट, स्वाधीन, ज्ञानानन्दमय परम रस में लीन हैं।।२।।

ॐ ह्रीं अनन्त ज्ञान के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नासी, केवल दर्श जोति परकासी।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूँ सिद्धों का।।३।।

ॐ ह्रीं अनन्त-दर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चक्षु, अचक्षु, अवधि आदि दर्शनावरण कर्म प्रकृतिओं का नाश हो जाने से प्रगट हुई, सम्पूर्ण ज्ञेयों का एक साथ अवलोकन करने वाली, उत्तम दर्शनमय सिद्धों की केवल-दर्शन-ज्योति को नमस्कार करता हूँ।। ३।।

ॐ ह्रीं अनन्त दर्शन के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी।।४।।

ॐ ह्रीं अनन्त-वीर्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जीव की शक्ति के घात में निमित्त होने वाले, अनेक प्रकृति वाले, अन्तराय कर्म का पूर्णतया नाश हो जाने से व्यक्त हुए अतुल्य/अनन्त बल के स्वामी, अखेदमय सुशोभित सिद्ध भगवान को मैं प्रणाम करता हूँ।। ४।।

ॐ ह्रीं अनन्त वीर्य के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपातीत मन-इन्द्रिय नाहीं, मनपर्यय हूँ जानत नाहीं।
अलख अनूप अमित अविकारी, नमूँ सिद्ध सूक्षम गुणधारी।।५।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : रूपातीत; मन, इन्द्रिय और मन:पर्यय ज्ञान के भी अगोचर; अलख/नेत्रों से दिखाई नहीं देने वाले, अनुपम, असीम/अनन्त, विकारों से पूर्णतया रहित, सूक्ष्म गुण-धारक सिद्ध भगवान को नमस्कार है।।५।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक क्षेत्र-अवगाह स्वरूपा, भिन्न-भिन्न राजैं चिद्रूपा।
निज-पर-घात विभाव विडारा, नमूँ सुहित अवगाह अपारा।।६।।

ॐ ह्रीं परमावगाहनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोकाकाश के एक ही क्षेत्र में रहना, विश्व-स्वरूप, वस्तु-स्वरूप होने पर भी चिद्रूपता से पृथक्-पृथक् शोभायमान, स्व-पर का घात करने रूप विभाव को नष्ट करनेवाले, अनन्त अवगाहनामय सिद्ध भगवान को आत्म-हित की भावना से नमस्कार करता हूँ।।६।।

ॐ ह्रीं परम अवगाहना के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परकृत ऊँच-नीच पद नाहीं, रमत निरंतर निजपद माहीं।
उत्तम अगुरुलघु गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावै नित योगी।।७।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर-कृत/कर्म के उदय में होने वाले उच्च-नीच पद से रहित; निज-पद में निरंतर रमण करने वाले, उत्कृष्ट अगुरुलघु गुण का भोग करने वाले सिद्ध-समूह का योगीजन सदा ध्यान करते हैं।।७।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्व के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्य निरामय भवभयभंजन, अचल निरंतर शुद्ध निरंजन।
अव्याबाध सोइ गुण जानौ, सिद्धचक्र पूजन मन मानौ।।८।।

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नित्य, रोगादि से पूर्णतया रहित, सांसारिक भय को नष्ट करने वाले, अचल, निरंतर, शुद्ध, कर्म-कालिमा से रहित गुण ही अव्याबाध गुण है - ऐसा जानिए और सिद्ध-समूह की पूजन में मन लगाइए।।८।।

ॐ ह्रीं अव्याबाध के लिए नमस्कार है; अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यहाँ ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः - इस मंत्र का एक सौ आठ बार जाप करना चाहिए।

जयमाला

दोहा : **जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय।**
विजय आरती तिन कहूँ, पुरुषारथ गुणगाय।।

अर्थ : जगत में आर्त-ध्यान से/आसक्ति से होने वाले महा-भारत/चार गति-चौरासी लाख

योनिओं में परिभ्रमण रूप द्वन्द्व/युद्ध को नष्ट कर जिन्होंने उस पर विजय प्राप्त की है/अपने संसार-भ्रमण को नष्ट कर दिया है; उनके पुरुषार्थ का गुण-गान करते हुए उनकी इस विजय की आरती कहता हूँ।

(एक भव्य जीव स्व-पर के भेद-विज्ञान पूर्वक आत्मोन्मुखी अनन्त पुरुषार्थ करके सम्यक्त्व से सिद्ध-दशा पर्यन्त वीतरागता आदि की प्राप्ति कैसे, किस क्रम से करता है? इसका अत्यन्त रोचक शैली में भाववाही वर्णन प्रस्तुत जयमाला में किया गया है।)

पद्धरी : **जय करण कृपाण सु प्रथम बार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार।**
दिढ़ कोट विपर्यय मति उलंघि, पायो समकित थल थिर अभंग।।१।।

अर्थ : करणलब्धि रूपी कृपाण/तलवार के पहले ही अचूक वार से मिथ्यात्व रूपी सुभट/महाबलवान योद्धा पर प्रहार कर, उसे नष्ट कर, विपर्यय मति/मिथ्याज्ञानरूपी दृढ़ कोट का उल्लंघन कर स्थिर, अखण्ड सम्यक्त्वरूपी स्थल को प्राप्त कर लिया है - आपकी जय हो।

निज-पर विवेक अंतर पुनीत, आतम रुचि वरती राजनीत।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह।।२।।

अर्थ : स्व-पर का विवेक/भेद-विज्ञान हो जाने के कारण अंतरंग में आत्मरुचिमय पवित्र राजनीति प्रवर्तित हुई; जिससे जगत का वैभव, विभाव, शरीर आदि सभी असार और स्वयं से विपरीत स्वभावी प्रतीत होने लगे तथा सुख रसमय स्वात्मा और आत्मिक सुख ही उपादेय लगने लगा।

तिन नाशन लीनो दृढ़ सँभार, शुद्धोपयोग चित चरण-सार।
निर्ग्रन्थ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारण सुलभ रूप।।३।।

अर्थ : उन विभावों आदि को नष्ट करने के लिए हिंसादि को दूर करने के सरल उपायरूप, अनुपम, निर्ग्रन्थमय कठिन मार्ग अपना कर, चारित्र में सारभूत, चेतनामय शुद्धोपयोग को दृढ़ता से ग्रहण कर लिया।

द्वयबीस परीषह सहन वीर, बहिरंतर संयम धरण धीर।
द्वादश भावन, दशभेद धर्म, विधि नाशन बारह तप सु पर्म।।४।।

अर्थ - क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नाग्न्य, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शैया, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार-पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, अदर्शनरूप बाईस परिषहों को सहन करने में वीर; बहिरंग-अंतरंग संयम को धारण करने में धीर आपने कर्मों को नष्ट करने-हेतु अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि,

आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्ममय बारह भावनाओं; उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग आकिंचन्य, ब्रम्हचर्यमय दशधर्मों; अनशन, अवमौदर्य, वृत्ति परिसंख्यान, रस परित्याग, विविक्त शैयासन, कायक्लेशमय बहिरंग तप और प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यानमय अंतरंग तप - इन उत्कृष्ट तपों को धारण किया।

शुभ दया हेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रय गुप्ति धार।
एकाकी निर्भय नि:सहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय।।५।।

अर्थ : आपने कल्याणमय दया का पालन करने-हेतु सारभूत ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण, उत्सर्ग/प्रतिष्ठापनमय पाँच समितिओं को धारण कर; मन को शुद्ध करने के लिए मन, वचन, कायमय तीन गुप्तिओं को धारण कर; प्रमाद को नष्ट करने के लिए एकाकी, निर्भय, नि:सहाय/पर-सहाय की कांछा से रहित हो अप्रमत्त दशा/सप्तम गुणस्थान को प्राप्त किया।

लखि मोहशत्रु परचंड जोर, तिस हनन शुकल दल ध्यान जोर।
आनन्द वीररस हिये छाय, क्षायक श्रेणी आरम्भ थाय।।६।।

अर्थ : मोह शत्रु का प्रचण्ड जोर/अत्यधिक बल देख कर उसे नष्ट करने के लिए मन में आनन्दमय वीर रस धारण कर/अत्यन्त आनन्द-सम्पन्न तीव्र उत्साह पूर्वक शुक्ल-ध्यान के बल से क्षपक-श्रेणी का आरोहण प्रारम्भ किया।

बारम गुणथानक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश।
नव केवललब्धि विराजमान, देदीप्यमान सोहे सुभान।।७।।

अर्थ : उससे मोह का नाश कर, शेष रहे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय का बारहवें गुणस्थान के अन्त में क्षय कर देदीप्यमान, सुशोभित सूर्य के समान निज-पद का प्रकाश/केवलज्ञान प्राप्त कर; क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, क्षायिक दर्शन, क्षायिक ज्ञान, क्षायिक वीर्य, क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षायिक भोग, क्षायिक उपभोग रूप नौ केवल-लब्धिओं से सम्पन्न हो तेरहवें गुणस्थान में विराजमान हो गए।

तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकांत, थी कुमति स्वरूप अनेक भाँति।
जिनवाणी करि ताको विहंड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचंड।।८।।

अर्थ : यहाँ उस मोह की दुष्टतामय एकान्त आदि अनेक प्रकार की कुमति/मिथ्या-बुद्धि स्वरूप आज्ञा का जिनवाणी/जिनेन्द्र भगवान की दिव्य-ध्वनि द्वारा नाश कर स्याद्वादमयी महान आज्ञा का प्रवर्तन किया।

बरतायो जग में सुमति रूप, भविजन पायो आनंद अनूप।
थे मोह नृपति उपकरण शेष, चारों अघातिया विधि विशेष।।९।।

अर्थ : आपने उसमें जगत को सुमतिरूप/वस्तु का वास्तविक स्वरूप बतलाया; जिससे भव्यजनों को अनुपम आनन्द प्राप्त हुआ। यहाँ अभी मोहरूपी राजा के उपकरणरूप में शेष रहे नाम, गोत्र, वेदनीय, आयुष्क - ये चार अघाति कर्म विशिष्ट रूप में विद्यमान थे।

है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखे नाम तेह।
यों तिन नाशन उद्यम सु ठानि, आरंभ्यो परम शुकल सु ध्यान।।१०।।

अर्थ : राजाओं की यह सनातन/अनादि-कालीन अति प्राचीन पद्धति है कि विमुख हुए शत्रुओं का नाम-निशान भी शेष नहीं रहने देते हैं। इसके अनुसार उन्हें नष्ट करने के लिए तीव्र पुरुषार्थ पूर्वक परम शुक्ल-ध्यान प्रारम्भ किया।

तिस बलकरि तिनकी थिति विनाश, पायो निर्भय सुखनिधि निवास।
यह अक्षय जोत लई अबाधि, पुनि अंश न व्यापो शत्रु व्याधि।।११।।

अर्थ : उस शुक्ल-ध्यान के बल से उन अघाति कर्मों की स्थिति का विनाश कर आपने निर्भय, सुख के भण्डारमय मोक्ष का निवास-स्थान प्राप्त कर लिया। आपने कभी नष्ट नहीं होने वाली अक्षय, सभी प्रकार की विघ्न-बाधाओं से रहित अव्याबाधमय आत्म-ज्योति को प्रगट कर लिया है; जिससे अब कभी भी पुन: कर्मरूपी शत्रुओं का किसी भी प्रकार का कष्ट प्राप्त नहीं होगा।

शाश्वत स्वाश्रित सुखश्रेय स्वामि, है शांति संत! तुम कर प्रणाम।
अन्तिम पुरुषारथ फल विशाल, तुम विलसौ सुखसौं अमित काल।।१२।।

अर्थ - हे स्वामी! अन्तिम पुरुषार्थ/मोक्ष पुरुषार्थ के विशाल फलरूप में आप कभी नष्ट नहीं होनेवाले शाश्वत स्वयं के आश्रय से उत्पन्न स्वाधीन, कल्याण-कारी सुख-शान्ति को प्राप्त कर अनन्त काल पर्यन्त सुख से विलास करते रहेंगे/इसमें ही सन्तुष्ट, तृप्त, निमग्न रहेंगे। सन्त कवि आपको प्रणाम करते हैं।

घत्ता : **परसमय विदूरित पूरित निजसुख समयसार चेतनरूपा।**
नानाप्रकार पर का विकार सब टार लसै सब गुण भूपा।।
ते निरावरण निर्देह निरूपम सिद्धचक्र परसिद्ध जजूँ।
सुर-मुनि नित ध्यावैं आनन्द पावैं, मैं पूजत भवभार तजूँ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सम्मत्तणाणादि-अट्ठगुणसंजुत्तसिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – पर समय/मिथ्यात्व को नष्ट करनेवाले, स्व सुख/आत्मीक अतीन्द्रिय आनन्द से परिपूर्ण, समय के सार/द्रव्यकर्म-भावकर्म-नोकर्म से रहित पूर्णतया शुद्ध दशा-सम्पन्न शुद्धात्मा, चेतनरूप गुणों के स्वामी हे भगवान! आप अनेक प्रकार के, पर निमित्त से होने वाले सभी विकारों को पूर्णतया नष्ट कर सुशोभित हो रहे हैं। देव, मुनि आदि भी जिनका ध्यान कर आनन्द प्राप्त करते हैं; उन वर्णादि से रहित, देह-रहित/अशरीरी, उपमा-रहित, प्रकृष्टरूप से वस्तु-स्वभाव को सिद्ध करने वाले, परम-पूज्य सिद्ध-समूह की मैं भव-भार छोड़ने-हेतु/संसार के सभी दु:खों से मुक्त होने के लिए पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध-भगवान को नमस्कार है; श्री सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहना, अगुरुलघुत्व, अव्याबाध - इन आठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद प्राप्ति-हेतु जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा : **तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भवभय नशैं।**
सन्त सदा चितधार, शान्ति करौ भव तप हरौ।।

अर्थ : अपने मल-रहित, अनन्त गुणों का अनुभव कर आपने अपने भव के भय को नष्ट कर दिया है। सन्त कवि कहते हैं कि हम भी आपको सदा मन में धारण करते हैं; आप संसार के संताप का हरण कर शान्ति कीजिए।

इसप्रकार प्रथम पूजन समाप्त हुई।।१।।

सोलह गुण-सहित द्वितीय पूजन

छप्पय : ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुणसंयुक्त-सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार', ऊपर-नीचे रेफ-युक्त और बिन्दु-सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमश: वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमश: अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्रभाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है। अन्त में पुन: यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है।

देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध यंत्र कर्म-शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह-समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; सोलह गुणों से संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; सोलह गुणों से संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; सोलह गुणों से संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा : **सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व) आदि गुणों-सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी, सिद्ध-समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

इसप्रकार यंत्र-स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं–

हरिगीतिका : **हिमशैल धवल महान कठिन पाषाण तुम जस रासतैं।**
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै बही गंगा तासतैं।।
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारी में भरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश–गुण–संयुक्ताय श्रीसिद्ध–परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके यश की राशि/सर्वत्र फैले हुए यश को देखकर धवल/श्वेत–वर्णी, विशाल, कठोर पाषाणमय हिमशैल/हिमालय पर्वत भी लज्जित हो, संकुचित हो, द्रवित हो/पिघल गया है। उसमें से इस कारण गंगा नदी बह निकली। ऐसा ही योग संबंध मेरे साथ बन गया है। आपके प्रति भक्ति के कारण मेरा हृदय भी पिघल रहा है। यह विचार कर भेंट देने के लिए/आपसे मिलने के लिए अपना मन ही झारी में भर रहा हूँ तथा सोलह गुणों से सहित सिद्ध समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; अनन्त दर्शन, ज्ञान आदि सोलह गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को जन्म–जरा–मृत्यु के विनाश–हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

काश्मीर चन्दन आदि अन्तर–बाह्य बहुविधि तप हरै।
यह कार्य–कारण लखि नमित मम भाव हू उद्यम करै।।
मैं हूँ दुखी भवताप से घसि मलय चरनन ढिंग धरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश–गुण–संयुक्ताय श्रीसिद्ध–परमेष्ठिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनेक प्रकार के अंतरंग–बहिरंग तापों का हरण, काश्मीर चन्दन आदि कर लेते हैं। यह निमित्त–नैमित्तिकरूप कारण–कार्य संबंध देखकर मेरे भाव भी अनेक प्रयास कर रहे हैं। मैं संसार ताप से दुखी हूँ। आप इसे नष्ट करने के लिए निमित्त कारण हैं; अत: मलय चन्दन को घिसकर आपके चरणों के समीप रख रहा हूँ और सोलह गुणों से सहित सिद्ध–समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं .... संसार–ताप–नष्ट करने–हेतु चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

सौरभि चमक जिस सह न सकि अम्बुज वसैं सरताल में।
शशि गगन वसि नित होत कृश अहिनिश भ्रमै इस ख्याल में।।
सो अक्षतौघ अखण्ड अनुपम पुंज धरि सन्मुख धरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।३।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश–गुण–संयुक्ताय श्रीसिद्ध–परमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिनकी सुगन्ध को सहन नहीं कर पाने के कारण कमल सरोवर/तालाब में जाकर रहने लगा है और जिनकी चमक को सहन नहीं कर पाने के कारण 'कोई मुझसे भी अधिक उज्ज्वल है' – यह विचार कर चन्द्रमा नित्य कृश/कमजोर होता हुआ आकाश में रह दिन-रात घूमता रहता है। उन अखण्ड, अनुपम अक्षत के समूह से पुञ्ज बना कर आपके समक्ष रखता हूँ और सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान आदि सोलह गुण संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को अक्षय पद की प्राप्ति-हेतु अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा।
तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुझट भगा।।
इम पुष्पराशि सुवास तुम ढिंग कर सुयश बहु उच्चरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।४।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत में यह तथ्य प्रगट है कि यह काम/विषय-वासना रूपी विकराल सुभट जिस जीव के अन्दर जागृत हो जाता है, वह उसे अत्यधिक दु:खी/आकुलित कर देता है; परन्तु वह आपकी शीलरूपी संगठित सेना के समक्ष धनुष-बाण फेंककर शीघ्र ही भाग गया। इसप्रकार सुगन्धित पुष्प-राशि को आपके समक्ष कर अनेक प्रकार से आपका यशोगान करते हुए सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं .... कामबाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

जीवन सतावत नहिं अघावत क्षुधा डाइन सी बनी।
सो तुम हनी, तुम ढिंग न आवत, जान यह विधि हम ठनी।।
नैवेद्य के संकेत करि निज क्षुधानाशन विधि करूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनादि काल से संसारी जीवों को सताते हुए भी तृप्त नहीं होने वाली डाइन/राक्षसी के समान लगने वाली इस क्षुधा को आपने नष्ट कर दिया है। यह आपके पास नहीं आती है – ऐसा जानकर हम भी इसी पद्धति को स्वीकार कर नैवेद्य के बहाने अपनी क्षुधा को नष्ट करने की विधि कर रहे हैं और सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहे हैं।

ॐ ह्रीं ......क्षुधा रोग का विनाश करने के लिए नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

मैं मोह-अन्ध अशक्त अरु यह विषम भववन है महा।
ऐसे रुले को ज्ञानदुति बिन पार निवरण हो कहाँ?।
सो ज्ञानचक्षु उघार स्वामी दीप ले पायनि परूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।६।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मैं मोह के कारण वस्तु का यथार्थ स्वरूप स्वीकार नहीं कर पाने से अन्धा और असमर्थ हूँ तथा यह संसाररूपी वन महा भयानक है। इसमें भटकते हुए जीव का ज्ञान-ज्योति के विना उद्धार कैसे हो सकता है? हे स्वामी! मेरे ज्ञान-नेत्र खोल दीजिए; मैं दीपक लेकर आपके चरणों में आया हूँ और सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर आपकी पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; अनन्त दर्शन, ज्ञान आदि सोलह गुणों से संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को मोहरूपी अन्धकार के विनाश-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

प्रासुक सुगंधित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुखावनो।
धरि अग्नि दश दिश वास पूरित ललित धूम्र सुहावनो।।
तुम भक्ति भाव उमंग करत प्रसंग धूप सु विस्तरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।७।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रासुक/जीव-रहित/मर्यादित, सुगन्धित, दिव्य, सुन्दर, नासिका को सुख देने वाली/अच्छी लगनेवाली सामग्री को अग्नि में डालकर, दशों दिशाओं को सुगन्धित करते हुए कर्मों का धूम्र/धुआँ उड़ा रहा हूँ। सुगन्धित धूप को फैलाते हुए तीव्र उत्साह पूर्वक भक्ति के भाव से आपकी भक्ति करते हुए सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं ....अष्ट कर्म नष्ट करने के लिए धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

चित हरन अचित सुरंग रसपूरित विविध फल सोहने।
रसना लुभावन कल्पतरु के सुर-असुर मन मोहने।।
भरि थाल कंचन भेंट धरि संसार फल तृष्णा हरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।८।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मनोहारी, अचित्त/जीव-रहित, अच्छे रंगों वाले, सरस, सुस्वाद, रसना/जीभ को

अच्छे लगने वाले, सुर-असुर के मन को मुग्ध करने वाले, कल्पवृक्ष के विविध फलों को सुवर्ण थाल में भरकर भेंट रखकर संसार रूप में फलित होने वाली तृष्णा का हरण करता हूँ और सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहा हूँ।
ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; अनन्त दर्शन, ज्ञान आदि सोलह गुणों से संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को अष्ट कर्म नष्ट करने के लिए फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

शुभ नीर वर काश्मीर चंदन धवल अक्षत युत अनी।
वर पुष्पमाल विशाल चरु सुरमाल दीपक दुति मनी।।
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ।।९।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रासुक जल, काश्मीरी श्रेष्ठ चन्दन, उज्ज्वल-अनी सहित/अखण्डित अक्षत, श्रेष्ठ पुष्पों की विशाल मालाएँ, स्वादिष्ट नैवेद्य, मणिओं के तेज-समान दीपक, श्रेष्ठ धूप, स्वादिष्ट भली-भाँति पके हुए फल - इन आठ द्रव्यों से अर्घ्य बनाकर सोलह गुणों से सहित सिद्ध-समूह को मन में धारण कर उनकी पूजन कर रहा हूँ।
ॐ ह्रीं ....अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

गीता : **निर्मल सलिल शुभवास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीप माल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ्य सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मलरूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती।।१०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडश-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन, उज्ज्वल-अखण्डित अक्षत, मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित, श्रेष्ठ दीपों का समूह; धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमशः होने वाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाश कर युगपत्/एक साथ प्रवर्तित

ज्ञान-दर्शनमय; जन्मादि के दु:खों को नष्ट कर असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्य-पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य; अनन्त चतुष्टय के भण्डार भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; अनन्त दर्शन, ज्ञान आदि सोलह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को अनर्घ्य पद की प्राप्ति के लिए महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

सोलह गुणों के अर्घ्य

त्रोटक : **दर्शन आवर्णी प्रकृति हनी, अथिता अवलोक सुभाव बनी।**
इक साथ समान लखो सब ही, नमुँ सिद्ध अनंत दृगन अबही।।१।।

ॐ ह्रीं अनन्त-दर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दर्शनावरण कर्म प्रकृति का नाश हो जाने के कारण स्वभाव से ही सभी को एक साथ एक समान देखने, अवलोकन करने वाले सिद्ध भगवान के अनन्त दर्शन को अभी नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त दर्शन के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१।।

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निज ज्ञानस्वभाव विकाश लियो।
समयांतर सर्व विशेष जनौं, नमुँ ज्ञान अनंत सु सिद्ध तनौं।।२।।

ॐ ह्रीं अनन्त-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानावरण कर्म का विनाश हो जाने के कारण प्रगट हुए पूर्ण विकसित ज्ञान-स्वभाव से प्रति समय सभी विशेषों को एक साथ जाननेवाले सुसिद्धों के अनन्त ज्ञान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनन्त ज्ञान के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं.....।।२।।

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो।
असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप बिडारत हैं।।३।।

ॐ ह्रीं अतुल-वीर्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो सुखरूपी अमृत पीते हुए थकते नहीं हैं, अपने स्वभाव में अनन्त काल पर्यन्त विराजमान रहते हुए भी जिन्हें खेद नहीं होता है; ऐसे अतुल/अनन्त बल के धारक उन सिद्ध भगवान की अपने पापों को नष्ट करने के लिए हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अतुल वीर्य के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।३।।

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरै न करै थिरता।
पर की अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनन्द बेवत हैं।।४।।

ॐ ह्रीं अनन्त-सुखाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सांसारिक सुख, दुःख रूप, भयसहित, पराधीन, सुखाभासमय, स्थिरता रहित है। आप पर-पदार्थों की इच्छा से पूर्णतया रहित हो अपने स्वाभाविक आनन्द का वेदन करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त सुख के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।४।।

निज आत्म विकासक बोध लह्यो, भ्रम को परवेस न लेश कह्यो।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये।।५।।

ॐ ह्रीं अनन्त-सम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने आत्म-विकासक/आत्मा का विकास/कल्याण करने वाला ज्ञान प्रगट कर लिया है, जिससे किसी भी प्रकार का थोड़ा-सा भी संशय आदि नहीं रहा है। आप आत्मानुभवरूपी अमृत-पान में मग्न हैं। सिद्धों की इस शुद्ध प्रतीति को हम नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त सम्यक्त्व के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।५।।

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो।
निजस्थान निरूपम नित्य बसैं, नमुँ सिद्ध अनाचलरूप लसैं।।६।।

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपमें अपने स्वभाव को नष्ट करने वाले विभाव नहीं होते हैं; गमन आदि भेद-विकार भी नहीं होते हैं। अनुपम, अपने स्थान में नित्य निवास करने वाले, अविचल रूप से शोभायमान सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अचल के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।६।।

चौपाई : **गुण पर्यय परणति के भेद, अति सूक्षम असमान अछेद।**
ज्ञान गहै न कहै जड़ बैन, नमों सिद्ध सूक्षम गुण ऐन।।७।।

ॐ ह्रीं अनन्त-सूक्ष्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुण, पर्याय की परिणति के भेद अति सूक्ष्म, विशेष और भेद-रहित हैं। इन्हें ज्ञान जानता है; परन्तु जड़ वचन कह नहीं सकते हैं। सिद्धों के ऐसे सूक्ष्म गुण के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनन्त सूक्ष्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।७।।

जन्म-मरण युत धरे न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय।
नित्य निरंजन निर-अविकार, अव्याबाध नमों सुखकार।।८।।

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप जन्म-मरण-युक्त शरीर धारण नहीं करते हैं, रोगादि संक्लेश भी नहीं भोगते हैं; ऐसे नित्य, निरंजन/कर्म-कालिमा से रहित, रागादि विकारों से रहित, अव्याबाध, सुख को करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अव्याबाध के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।८।।

एक पुरुष अवगाह प्रजंत, राजत सिद्ध-समूह अनंत।
एकमेक बाधा नहिं लहैं, भिन्न-भिन्न निजगुण में रहैं।।९।।

ॐ ह्रीं अवगाहनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुरुषाकार एक आत्मा द्वारा अवगाहित लोकाकाश के प्रदेशों में अनन्त सिद्ध समूह विराजमान रहते हैं। वे एक-दूसरे से बाधित नहीं होते हुए अपने-अपने पृथक्-पृथक् गुणों में निवास करते हैं/मग्न रहते हैं।

ॐ ह्रीं अवगाहना के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।९।।

काययोग पर्यापति प्रान, अनवधि छिन-छिन होवे हान।
जरा कष्ट जग प्रानी लहै, नमों सिद्ध यह दोष न सहै।।१०।।

ॐ ह्रीं अजराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : औदारिक आदि शरीर; मन, वचन, काय रूप योग; आहार आदि पर्याप्तिआँ; इन्द्रिय आदि प्राण सतत प्रतिक्षण क्षीण होते होने से यह संसारी प्राणी, जरा/वृद्धावस्था के कष्ट को भोगता है। इस दोष से पूर्णतया रहित सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अजर/बुढ़ापा से रहित के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१०।।

काल-अकाल प्राण कौ नाश, पावैं जीव मरण कौ त्रास।
तासौं रहित अमर अविकार, सिद्ध-समूह नमूँ सुखकार।।११।।

ॐ ह्रीं अमराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : काल-लब्धि की मुख्यता से कहे जाने वाले काल और स्वभाव आदि की मुख्यता से कहे जाने वाले अकाल में प्राणों का नाश होने पर जीव, मरण का कष्ट भोगता है। उससे रहित अमर, अविकारी, सुखकार सिद्ध-समूह को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अमर/मरण से रहित के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।११।।

गुण-गुण प्रति है भेद अनन्त, यों अथाह गुणयुत भगवंत।
है परमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण बंदूँ एह।।१२।।

ॐ ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रत्येक गुण की अपेक्षा अनन्त भेद होने से परिमाण/सीमा-अगोचर अनन्तानन्त गुण-युक्त भगवान के इस अप्रमेय गुण की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अप्रमेय/सीमा से रहित के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१२।।

भुजंगप्रयात : **अनूकर्मतैं फर्स वर्णादि जानौं, किसी एक वीशेष को किं प्रमानौं?**
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी, नमूँ सिद्ध विगतेन्द्रिय ज्ञान भागी।।१३।।

ॐ ह्रीं अतीन्द्रिय-ज्ञान-धारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षायोपशमिक ज्ञान स्पर्श, वर्ण आदि किन्हीं एक-एक विशेष को अनुक्रम से जानता है; उसे प्रमाण कैसे माना जाए? ऐसे पराधीन, आवरण-सहित, अज्ञान का त्याग कर अतीन्द्रिय ज्ञान-सम्पन्न हुए सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अतीन्द्रिय ज्ञान-धारक के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१३।।

त्रिधा भेद भावित महा कष्टकारे, रमण भावसों आकुलित जीव सारे।
निजानंद रमणीय शिवनार स्वामी, नमों पुरुष आकृति सबै सिद्ध नामी।।१४।।

ॐ ह्रीं अवेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा कष्ट-कारक स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद - इन तीन भाव वेदों के कारण प्रगट होने वाले रमण भाव से सभी जीव आकुलित हैं। निजानन्द में रमण करने वाले, मोक्षरूपी स्त्री के स्वामी, पुरुषाकार, प्रसिद्ध, सभी सिद्धों को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अवेद/भोग-वासना से रहित के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१४।।

विशेषं सकल चेतना धार माँही, भये लै भली विधि रहो भेद नाहीं।
तथा हीन अधिकाय को भाव टारी, नमों सिद्ध पूरण कला ज्ञानधारी।।१५।।

ॐ ह्रीं अभेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी विशेषों के लिए एक चेतना ही आधार है। उसमें भली-भाँति लीन हो जाने के कारण भेद से रहित, हीन-अधिक भाव से भी रहित, पूर्ण विकसित कला-सम्पन्न ज्ञान के धारक सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अभेद/अखण्ड के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१५।।

निजानन्दरस स्वाद में लीन अंता, मगन हो रहे रागवर्जित निरंता।
कहाँलों कहूँ आपकौ पार नाहीं, धरों आपको आपही आपमाहीं।।१६।।

ॐ ह्रीं अविलीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : राग से रहित वीतरागता-सम्पन्न अनन्त, निजानन्द रस के वेदन में आप अनन्त-अनन्त काल पर्यन्त निमग्न रहेंगे। आपके गुणों का तो पार नहीं है; अतः मैं उन्हें कहाँ तक कह सकता हूँ? आप स्वयं में ही पूर्णतया लीन हैं। मैं तो आपको स्वयं ही स्वयं में धारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं अविलीन/आत्म-स्थिर के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।१६।।

यहाँ ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः - इस मन्त्र का एक सौ आठ बार जाप करना चाहिए।

जयमाला

दोहा : **पंच परम परमात्मा, रहित कर्म के फंद।**
जग प्रपंच विरहित सदा, नमों सिद्ध सुखकंद।।१।।

अर्थ : कर्म के फन्द/बन्धन से पूर्णतया रहित, जगत/संसार के विस्तार से रहित, सुख के कन्द, पंच परम परमात्मामय सिद्ध भगवान को सदा नमस्कार है।

त्रोटक : **दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो।**
भवितारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।२।।

अर्थ : दुःख के कारणभूत द्वेष को नष्ट कर देने वाले, वशीभूत करने वाले राग के निवारक, भव्य जीवों को संसार-सागर से पार उतारने के लिए परिपूर्ण कारणभूत, सुख के कारण सभी सिद्धों को नमस्कार है।

समयामृत पूरित देव सही, पर आकृत मूरति लेश नहीं।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।३।।

अर्थ : आत्मानुभूति रूपी अमृत से परिपूर्ण, वास्तविक देव, पर-निमित्तक आकृति और मूर्ति से पूर्णतया रहित, स्वभाव से विपरीत विभावों के निवारक, सुख के कारणभूत सभी सिद्धों को नमस्कार है।

अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा।
यमजाम जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।४।।

अर्थ : अखिन्न/खिन्नता से रहित, अभिन्न/भेद से रहित/अखण्ड, अछिन्न-क्षणिकता से रहित/शाश्वत, सुपरा/सर्वश्रेष्ठ, अभिद/भेदन से रहित, अखेद/खेद से रहित, अविनाशवर/स्थायित्व में श्रेष्ठ; जन्म, जरा, मरण के दुःख को नष्ट करने वाले सुख के कारणभूत सभी सिद्धों को नमस्कार है।

निर-आश्रित स्वाश्रित वासित हो, पर-आश्रित खेद विनाशित हो।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।५।।

अर्थ : अन्य के आश्रय-विना स्वाधीन रूप से स्वयं में रहने वाले, दूसरों के आश्रय से उत्पन्न खेद को नष्ट करने वाले, सुखी होने की विधि के धारक, कर्म रूपी विधि के हारक/हरण करने वाले, सांसारिक विधि के पारक/सांसारिक दुःखों से पार करने वाले, सुख के कारणभूत सभी सिद्धों को नमस्कार है।

अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुबुधा सुसिधं।
विधि कानन दहन हुताशन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।६।।

अर्थ : अमुधा/मुग्धता से रहित/क्षायिक सम्यग्दृष्टि, अछुदा/क्षुधा की वेदना से रहित/पूर्णतृप्त, अद्विधा/दुविधा/संशय से रहित, अविध/अनेक रूपता से रहित/एक रूप, अकुधा/क्रोध से रहित/क्षमाशील, सुसुधा/परम अमृतमय/शाश्वत, सुबुधा/सम्यग्ज्ञानी/सर्वज्ञ, सुसिध/अनादि-अनन्त स्वभाव को भली-भाँति पर्याय में सिद्ध करने वाले, कर्मरूपी कानन/घोर

जंगल को जलाने के लिए भयंकर अग्नि के समान, सुख के कारणभूत सभी सिद्धों को नमस्कार है।

शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं चरनं मरनं हरनं।
तरनं भव-वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।७।।

अर्थ : जिनके चरणों की शरण से श्रेष्ठ करण रूपी निर्मल भावों द्वारा जन्म, जरा, मरण का क्षय हो जाता है; संसाररूपी सागर से पार होने के लिए नाव के समान और सुख के कारणभूत उन सभी सिद्धों को नमस्कार है।

भववास त्रास विनाशन हो, दुखरास विनास हुताशन हो।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।८।।

अर्थ : संसार-परिभ्रमण संबंधी कष्टों के विनाशक, दुःखों की विशाल-राशि/महा दुःखों को भस्म करने के लिए तीव्र अग्नि के समान, अपने भक्तों के कष्ट मिटाने वाले, सुख के कारणभूत सभी सिद्धों को नमस्कार है।

तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूज लहै।
शरणागत 'संत' उधारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।९।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अनन्त-दर्शन-ज्ञानादि-षोडश-गुण-युक्त-श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका ध्यान करने से शाश्वत व्याधि/संसार-परिभ्रमण रूपी अनादि-कालीन रोग नष्ट हो जाता है। आपकी पूजन करने से पूज्य पद की प्राप्ति हो जाती है। शरण में आए सन्तों का उद्धार करने वाले, सुख के कारणभूत सभी सिद्धों को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; अनन्त दर्शन-ज्ञानादि सोलह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

दोहा : **सिद्धवर्ग गुण अगम हैं, शेष न पावैं पार।**
हम किंह विधि वरणन करैं, भक्ति भाव उर धार।।१०।।

अर्थ : सिद्ध भगवान के गुण अपार हैं; शेषनाग भी उनका पार नहीं पा सकते हैं/अपनी हजार जिह्वा से कह नहीं सकते हैं; तब फिर अल्प बुद्धि वाले हम उनका वर्णन कैसे कर सकते हैं? हम तो मात्र भक्ति-भाव ही हृदय में धारण करते हैं।

तीन लोक चूड़ामणि, सदा रहो जयवंत।
विघ्न हरण मंगलकरण, तुम्हें नमैं नित 'संत'।।११।।

अर्थ : हे भगवान! तीन लोक के चूड़ामणि आप सदा जयवन्त वर्तें। विघ्नों का हरण करने वाले, मंगल करने वाले आपको 'सन्त' सदा नमस्कार करते हैं।। ११।।

इसप्रकार द्वितीय पूजन समाप्त हुई।।२।।

बत्तीस गुण–सहित तृतीय पूजन

छप्पय : **ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे,**
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्–गुण–संयुक्त–श्रीसिद्ध–परमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार', ऊपर–नीचे रेफ–युक्त और बिन्दु–सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमशः वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र–भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है।

अन्त में पुनः यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध यंत्र कर्म–शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह–समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; बत्तीस गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; बत्तीस गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; बत्तीस गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा : **सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व) आदि गुणों से सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

इसप्रकार यन्त्र–स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं–

चाल : प्रभु पूजो रे भाई.... (आँचली)

प्रभु पूजो रे भाई! सिद्धचक्र बत्तीस गुण, प्रभु पूजो रे भाई!
भवत्रासित आकुलित रहै, भवि कठिन मिटन दुखताई।।
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने जन्म-जरा-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अर्थ : हे भाई! प्रभु की पूजन कीजिए। बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध समूह की हे भाई! आप पूजन कीजिए। संसार के कष्टों से आकुलित भव्य जीवों का, अन्य अनेक उपाय करने पर भी उन कष्टों से छुटकारा पाना कठिन है; परन्तु आपके विमल चरणों में जल की धारा देने से वे सहज ही नष्ट हो गए हैं; अत: हे भाई! बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; बत्तीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को जन्म, जरा, मृत्यु विनाशन-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

जगवंदन परसत पद चन्दन, महाभाग उपजाई।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढ़ाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

अर्थ : त्रैलोक्य-पूज्य जिनेन्द्र भगवान के चरण-स्पर्श से चन्दन के ऐसा महा-भाग्य प्रगट हुआ कि जिससे लोक-मान्य श्रेष्ठ हरि-हर आदि महा-पुरुषों ने भी उसे शीश पर लगा लिया है; ऐसे बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध-समूह की हे भाई! पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... संसार-ताप-विनाशन-हेतु चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

शिवनायक पूजन लायक है, यह महिमा अधिकाई।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, साँचो नाम धराई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

अर्थ : शिव-नायक/मोक्ष के स्वामी/कल्याण करने में प्रधान होने से आप ही पूजन के योग्य हैं – यह आपकी महिमा की अधिकता है। अक्षय/अक्षत पद देने वाले होने से आपका 'अक्षत' नाम वास्तविक है। हे भाई! बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध-समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... अक्षय पद की प्राप्ति के लिए अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उर से न टराई।
ताहि निवारण पुष्प भेंट धरि, माँगूँ वर शिवराई।। प्रभु पूजो रे०।।
सिद्धचक्र बत्तीस गुण, प्रभु पूजा रे भाई!!

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने काम-बाण-विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

अर्थ : अत्यन्त दु:ख-दायक काम की दाह मेरे हृदय से नष्ट नहीं हो रही है। हे शिव के स्वामी! उसका निवारण करने के लिए पुष्पों की यह भेंट समर्पित कर आपसे वरदान माँग रहा हूँ। हे भाई! बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध-समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; बत्तीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी को काम-बाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहिं मेंटत पूर परौ इन ताई।
भेंट करत तुम इनहुँ न भेंटूँ, रहूँ चिरकाल अघाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

अर्थ : प्रचुर मात्रा में श्रेष्ठ नैवेद्यों का सेवन करने पर भी भूख नहीं मिट सकी है; अत: अब इनसे वश हो/मेरा उपयोग अब इनकी ओर नहीं जाए। मैं इस भावना से इन्हें आपके लिए भेंट कर रहा हूँ कि चिरकाल पर्यन्त स्वयं में इतना तृप्त रहूँ; जिससे पुन: इन्हें ग्रहण करने का भाव कभी भी प्रगट नहीं हो। हे भाई! बत्तीस गुण संयुक्त सिद्ध समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... क्षुधा-रोग-नष्ट करने-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

दिव्य रतन इस देश-काल में, कहै कौन है नाँईं?
तुम पद भेंटे दीप प्रकट यह, चिंतामणि पद पाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

अर्थ : कौन कहता है कि इस देश और इस काल में दिव्य रत्न नहीं हैं? आपके चरणों में दीपक समर्पित करने से चिन्तामणि/मनो-वांछित पद को प्राप्त कराने वाला यह दीपक प्रगट हुआ है। हे भाई! बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध-समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... मोहान्धकार-नष्ट करने-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

धूप हुताशन वासन में धरि, दसदिश वास वसाई।
तुम पद पूजत या विधि वसु विधि, ईंधन जर हो जाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

अर्थ : धूप को अग्नि-पात्र में रखने से दशों दिशाओं में सुगन्ध फैल गई। इस विधि से आपके

चरणों की पूजन करने पर आठों कर्मों रूपी ईंधन जलकर भस्म हो जाता है। हे भाई! बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध-समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; बत्तीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अष्ट कर्म-दहन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूँ हूँ तुम पाई।
जासौं जजैं मुक्तिपद पइये, सर्वोत्तम फलदाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्‌गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

अर्थ : मन को स्थिर कर सर्वोत्तम फल रूपी द्रव्य से आपके चरणों की पूजन करता हूँ; उनसे पूजन करने पर सर्वोत्तम फल-दायी मुक्ति-पद की प्राप्ति होती है। हे भाई! बत्तीस गुणों से संयुक्त सिद्ध-समूह की पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... मोक्षफल की प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

वसुविधि अर्घ देऊँ तुम मम द्यो, वसुविधि गुण सुखदाई।
जासु पाय वसु त्रास न पाऊँ, 'सन्त' कहे हर्षाई।। प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्‌गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

अर्थ : हे भगवन! मैं आपको आठ प्रकार का अर्घ्य समर्पित कर रहा हूँ; आप मुझे सुख-दायक आठ प्रकार के गुण दीजिए। सन्त कवि हर्षित होकर कह रहे हैं कि इन्हें प्राप्त कर लेने पर मैं कभी भी आठ कर्मों का कष्ट प्राप्त नहीं करूँगा। हे भाई! बत्तीस गुण-संयुक्त सिद्ध-समूह का पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... सभी सुख/अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

गीता : **निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल, धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण, गेह द्यो हम शुभमती।।१०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन; उज्ज्वल, अखण्डित अक्षत; मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित, श्रेष्ठ दीपों का समूह;

धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमशः होनेवाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाश कर युगपत्/एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय; जन्मादि के दुःखों को नष्ट कर असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित त्रैलोक्य-पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य, अनन्त चतुष्टय के भण्डार भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; बत्तीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद की प्राप्ति-हेतु महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

बत्तीस गुणों के अर्घ्य

पद्धड़ी : **चेतन विभाव पुद्‌गल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिस निमित टार।**
दृगबोध सुरूप सुभाव एह, नमुँ शुद्ध चेतना सिद्ध देह।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चेतन में होने वाले विभाव भावों का निमित्त कारण पुद्‌गल का विकार है। शुद्ध-बुद्ध-स्वभाव का अवलम्बन उस निमित्त को दूर करने का उपाय है। इस दर्शन-ज्ञान-स्वरूपी आत्म-स्वभाव के आश्रय से प्रगट हुई सिद्धाकार शुद्ध चेतना को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध चेतना को नमस्कार; अर्घ्यं...।।१।।

मति आदि भेद विच्छेद कीन, क्षायक विशुद्ध निज भाव लीन।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमुँ शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मति आदि भेदों/मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान का विच्छेद कर निज स्वभाव में स्थिरता से व्यक्त हुए क्षायिक, विशुद्ध, निरपेक्ष, सतत विद्यमान, विकार-रहित, शुद्ध, सारभूत, ज्ञानमय सिद्धों को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२।।

सर्वांग चेतना व्यक्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप।
पर लेश न निज परदेश माँहि, नमुँ सिद्ध शुद्ध चिद्रूप ताँहि।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण आत्म-प्रदेशों में चेतना की व्यक्ततामय आप चेतन के व्यापक स्वरूप हैं। जिनके अपने प्रदेशों में पर का किंचित् मात्र भी अस्तित्व नहीं है, उन शुद्ध चिद्रूप सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध चिद्रूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३।।

अन्तरविधि उदय विपाक टार, तुम जातिभेद बाहिज विडार।
निज परिणति में नहिं लेश शेष, नमुँ शुद्धरूप गुणगण विशेष।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्दर में कर्म के उदय-विपाक को नष्ट कर देने के कारण आप बाह्य में भी एकेन्द्रिय आदि जाति-भेदों का विनाशकर अपनी परिणति में अन्य को रंचमात्र भी स्थान नहीं देते हैं। ऐसे विशेष गुण-समूह-सम्पन्न शुद्धरूप के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४।।

रागादिक परिणति को विध्वंस, आकुलित भाव राखो न अंस।
पायो निज शुद्ध स्वरूप भाव, नमुँ सिद्धवर्ग धर हिये चाव।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-शुद्ध-स्वरूप-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : रागादि विकारी भावों का पूर्णतया नाशकर आकुलतामय भावों को रंचमात्र भी नहीं रखने वाले/पूर्ण निराकुलतामय अपने शुद्ध स्वरूपी स्वभाव को प्रगट कर लेने वाले सिद्ध-समूह को हृदय में रुचि धारण कर नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परम शुद्ध स्वरूप भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५।।

दोहा : **तिहूँ काल में ना डिगें, रहैं निजानन्द थान।**
नमूँ शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-दृढ़ाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने स्वभाव से तीनों कालों में/कभी भी विचलित नहीं होने वाले, निजानन्द में सतत मग्न, शुद्ध दृढ़ गुण-सहित सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध दृढ़ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६।।

निज आवर्तक में बसे, नित ज्यों जलधि कलोल।
नमूँ शुद्ध आवर्तकी, करि निज हिये अडोल।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धावर्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे समुद्र की लहरें समुद्र में ही रहती हैं; उसी प्रकार अपने आवर्तक/परिणमन में ही निमग्न रहने वाले शुद्ध आवर्तकी के लिए अपने मन को अडोल/निश्चल कर नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध आवर्तक/परिणाम वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७।।

परकृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव।
नमों सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-स्वयं-भुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके ज्ञानादि स्वभाव दूसरों से उत्पन्न नहीं हुए हैं/अपने अनादि-अनन्त स्वभाव

से ही प्रगट हुए हैं। अपने इस सहज स्वभाव के आश्रय से अमल/पूर्ण शुद्ध पद प्राप्त कर लेने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध स्वयंभू/अपने में से स्वयं ही शुद्धता को प्रगट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८।।

पद्धडी : **निज सिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय, निज शुद्ध-चेतनापुंज काय।**
निज शुद्ध सबै पायो संयोग, तुम सिद्धराज सु शुद्ध जोग।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-योगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अनन्त चतुष्टय को पाकर स्वयं से ही सिद्ध हुए हैं; स्वयं से ही शुद्ध चेतना के पुंजरूप काय/चैतन्याकार/ज्ञानाकार हैं; आपने अपना समस्त शुद्ध संयोग प्राप्त कर लिया है; अपने शुद्ध योग से आप सिद्धराज हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध योग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९।।

एकेन्द्रिय आदिक जातिभेद, हीनाधिक नामा प्रकृति छेद।
संपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूजैं हैं पद जोर हाथ।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-जाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एकेन्द्रिय आदि जाति के भेद से हीनाधिक करने वाली नाम-कर्म की प्रकृतिओं का छेदन कर परिपूर्ण विशुद्ध जाति को प्राप्त हुए सिद्ध-पद की/सिद्ध भगवान के चरणों की हम हाथ जोड़कर पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध रूप से उत्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०।।

दोहा : **महातेज आनन्दघन, महातेज परताप।**
नमों सिद्ध निजगुण सहित, दिपै अनूपम आप।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-तपसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा-तेजस्वी आनन्दघन, महा-तेजवान प्रताप-संयुक्त अपने आत्म-गुणों से सहित अनुपम देदीप्यमान सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध तप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।११।।

पद्धड़ी : **वर्णादिक को अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं।**
अति तेजपिंड चेतन अखंड, नमुँ शुद्ध मूर्तिक कर्मखंड।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-मूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मों के क्षय में व्यक्त हुए; वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श आदि से पूर्णतया रहित; संस्थान आदि आकार से सर्वथा विमुक्त, तेज-पिण्ड, अखण्ड चेतनमय शुद्ध मूर्तिक के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध मूर्तिक/स्वरूप वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२।।

बाहिज पदार्थ को इष्ट मान, नहिं रमत ममत तासों जु ठान।
निज अनुभव रस में सदा लीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप अपने से भिन्न बाह्य पदार्थों को इष्ट मानकर उनसे ममत्व कर उनमें रमण नहीं करते हैं; अपने आत्मानुभवरूपी रस में सदा लीन परिपूर्ण सुखी आपको हम नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध/मात्र परिपूर्ण सुख के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३।।

दोहा : **धर्म अर्थ अरु काम बिन, अन्तिम पौरुष साध।**
भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूँ सिद्ध निरबाध।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-पौरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ को छोड़कर अन्तिम मोक्ष पुरुषार्थ की साधना कर बाधा-रहित शुद्ध पूर्णतया पुरुषार्थी रूप से प्रगट हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध पौरुष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४।।

पद्धड़ी : **पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त।**
पुरुषांकित चेतनमय प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूँ हमेश।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-शरीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुद्गल द्रव्य से निर्मित वर्ण-युक्त नाम-कर्म द्वारा रचित शरीर से पूर्णतया रहित होने पर भी पुरुषाकार, चेतनामय प्रदेशों से सदा शुद्ध शरीर वाले आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध शरीर/आकार के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५।।

दोहा : **पूरण केवलज्ञान-गम, तुम स्वरूप निर्बाध।**
और ज्ञान जाने नहीं, नमों सिद्ध तज आध।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-प्रमेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आपका बाधा-रहित, परिपूर्ण स्वरूप मात्र केवलज्ञान द्वारा ही ज्ञात होता है; अन्य मति आदि क्षायोपशमिक ज्ञान उसे नहीं जान पाते हैं। इन शरीर-रहित सिद्ध भगवान को नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध प्रमेय/मात्र केवलज्ञान से ज्ञात के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६।।

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग।
पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धोपयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा का लक्षण चेतना उपयोगमय है। वह दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोगरूप में दो

प्रकार का है। आत्म-स्वभाव में परिपूर्ण स्थिरता के बल पर प्रगट हुई पूर्ण विशुद्धतामय शुद्धोपयोग के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धोपयोग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७।।

पद्धड़ी : **परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग।**
निजरस स्वादन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-भोगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर-द्रव्यों संबंधी भोगोपभोग प्रत्यक्ष ही खेदरूप है। भोगों में सारभूत निज रस/आत्मानुभूतिमय अतीन्द्रिय आनन्द-सम्पन्न रस को आप भोगते रहिए; हम आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध भोग/आत्मिक-आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८।।

दोहा : **निर्ममत्व युगपत लखौ, तुम सब लोकालोक।**
शुद्ध ज्ञान तुमको लखों, नमों शुद्ध अवलोक।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धावलोकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ममत्व-भाव के विना आप एक साथ सम्पूर्ण लोकालोक को देखते हैं। शुद्ध ज्ञानमय देखकर शुद्ध अवलोकनरूप आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध अवलोक/दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१९।।

पद्धड़ी : **निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान।**
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलित-शुक्ल-ध्यानाग्नि-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इच्छाओं से रहित मनरूपी महान/विशाल वेदी पर शुक्ल-ध्यानरूपी प्रज्वलित अग्नि में अभेद अर्घ्य देनेवाले/स्वरूप-स्थिर महा मुनिओं को ही अरहन्त/पूजन के योग्य जानकर हम आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुक्लध्यानरूपी प्रज्वलित अग्नि-सम्पन्न जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०।।

दोहा : **आदि-अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्य की जात।**
स्वयंसिद्ध परमात्मा, प्रणमूँ शुद्ध निपात।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-निपाताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आदि-अन्त से रहित/अनादि-अनन्त महान शुद्ध द्रव्य का आश्रय लेकर प्रगट हुई स्वयं सिद्ध परमात्मामय सिद्धरूप निपात/अव्यय दशा को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध निपात/अविनाशी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१।।

लोकालोक अनन्तवें, भाग वसो तुम आन।
ये तुमसों अति भिन्न हैं, शुद्ध गर्भ यह जान।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-गर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप संसार दशा से आकर/उसे समाप्त कर लोकालोक के अनन्तवें भाग में रहते होने पर भी, वह आपसे पूर्णतया पृथक् है। इसे ही शुद्ध गर्भ जानना चाहिए।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध गर्भ/स्वरूप-स्थित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२।।

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास।
शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुण की रास।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-वासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : व्यवहार से लोक-शिखररूप पवित्र स्थान में और निश्चय से अपने आत्मा में आपका निवास है; ऐसे सुगुणों के भण्डार, शुद्ध वास-सम्पन्न परमात्मा को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध वास/पवित्र स्थान पर रहने के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३।।

अति विशुद्ध निज धर्म में, वसत नशत सब खेद।
परमवास नमि सिद्ध को, वासी वास अभेद।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्ध-परम-वासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार की आकुलता को नष्ट कर अति विशुद्ध निजधर्म में रहते हुए, वासी/निवास करने वाले और वास में अभेदरूप उत्कृष्ट वासमय सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्ध परम वास के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३।।

बहिरंतर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय।
निरविकार परमात्मा, नमूँ नमूँ सुखदाय।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बहिरंग ज्ञानावरणादि द्रव्य-कर्म और अन्तरंग मोहादि भाव-कर्म - इन दोनों कर्मों से रहित हो परमात्मा पद प्राप्त करनेवाले, निर्विकारी/वीतरागी, सुख-दायी परमात्मा के लिए बारम्बार नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध परमात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५।।

हीन अधिक इक देश को, विकल विभाव उछेद।
शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूँ सिद्ध निरभेद।।२६।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-अनन्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हीनता, अधिकता, एकदेश, विकल, विभाव आदि सभी विकारों का अभाव कर अभेद, शुद्ध, अनन्त दशा प्राप्त कर लेनेवाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध अनन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६।।

त्रोटक : **तुम राग-विरोध विनाश कियो, निज ज्ञान सुधारस स्वाद लियो।**
तुम पूरण शांति विशुद्ध धरो, हमको इकदेश विशुद्ध करो।।२७।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-शांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप राग-द्वेष का पूर्णतया अभाव कर आत्म-ज्ञानरूपी अमृत का अनुभव कर रहे हैं। आप परिपूर्ण शान्ति और विशुद्धि के धारक हैं; हमें भी कुछ विशुद्ध कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध/परिपूर्ण शान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७।।

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है।
निजज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अंश न जानन माहिं रहो।।२८।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-विदंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी शास्त्रों के ज्ञाता होने से, अनन्त धर्मात्मक वस्तु के सभी धर्मों को जानते होने से आप पण्डित कहलाते हैं। आपने अपने ज्ञानरूपी प्रकाश से सभी का अन्त प्राप्त कर लिया है; अब जानने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहा है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध विदंत/केवलज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८।।

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो।
मन-इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति लही।।२९।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-ज्योति-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वर्ण आदि भेदों को दूर करनेवाले, कषाय भावों को नष्ट करनेवाले आपने अति शुद्ध, अनुपम केवल-ज्ञानरूपी ज्योति प्राप्त की है। मन और इन्द्रिय के निमित्त से जाननेवाले क्षायोपशमिक ज्ञान द्वारा आपको जान पाना, प्राप्त कर पाना सम्भव नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धज्योति/सर्वज्ञ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।। २९।।

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन-शासन में परसिद्ध कहो।।३०।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-निर्वाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप महान, विशुद्ध निर्वाण दशा को प्राप्त हो गए होने से अब पुनः कभी भी जन्म आदि व्याधिओं को धारण नहीं करेंगे, मरण आदि आपत्तिओं का वरण नहीं करेंगे/ अब आपके कभी भी जन्म-मरण नहीं होंगे - ऐसा जिन/जैन-शासन का प्रसिद्ध कथन है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध निर्वाण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०।।

करि अन्त न गर्भ लियो फिरके, जनमे शिववास जनम धरके।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूँ, शिवराय कहाय नमूँ अबहूँ।।३१।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-संदर्भ-गर्भाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शिव-वास में जन्म/मोक्ष दशा प्रगट कर लेने के कारण गर्भ का अन्त हो जाने से अब कभी भी आपका जन्म नहीं होगा। शिवराज कहलानेवाले जिनका अब कभी भी गर्भ में आना नहीं होगा; उन सिद्ध भगवान को अब नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध संदर्भ गर्भ/गर्भ-जन्म से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१।।

जग जीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो।
तुम मंगल मूरति शांति सही, सब पाप नशैं तुम पूजत ही।।३२।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-शांताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसारी जीवों के पाप नष्ट करनेवाले, महा-सुख-नायक, मंगल मूर्तिमय, वास्तविक शान्तिरूप आपकी पूजन करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध शान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२।।

यहाँ 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नम:' इस मन्त्र की एक सौ आठ बार जाप कीजिए।

जयमाला

दोहा : **पंच परमपद ईश हैं, पंचमगति जगदीश।**
जगत प्रपंच रहित बसे, नमूँ सिद्ध जग-ईश।।
परम ब्रम्ह परमातमा, परम ज्योति शिवथान।
परमातम पद पाइयो, नमों सिद्ध भगवान।।१।।

अर्थ : पंच परम पद/परमेष्ठिओं के ईश्वर, जगत के प्रपंचों से रहित हो पंचम गति को प्राप्त कर जगत के शीश/लोक के शिखर पर विराजमान जगत के स्वामी सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

परम ब्रम्ह, परमात्मा, परमज्योति/सर्वज्ञ, शिव/कल्याण/मोक्ष के स्थान, परमात्म-पद को प्राप्त हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।।१।।

कामिनी मोहन : **जन्ममरणकष्ट को टारि अमरा भये,**
जरादि रोग व्याधि परिहार अजरा भये।
जय द्विविधि कर्ममलजार अमला भये,
जय दुविधि टार संसार अचला भये।।२।।

अर्थ : मरण के कष्ट को नष्ट कर अमर हो गए, जरा/वृद्धावस्था आदि रोग-व्याधि का

अभाव कर अजर हो गए आपकी जय हो। मोहादि भाव-कर्ममय अंतरंग और ज्ञानावरणादि द्रव्य-कर्ममय बहिरंग - इन दो प्रकार के कर्ममल को भस्म कर अमर हुए आपकी जय हो; द्रव्य और भाव - दोनों प्रकार के संसार को टाल कर अचल हुए आपकी जय हो।।२।।

जय जगतवास तज जगतस्वामी भये, जय विना नाम थिर परमनामी भये।
जय कुबुद्धिरूप तजि सुबुद्धिरूपा भये, जय निषधदोष तज सुगुण भूपा भये।।३।।

अर्थ : जगत का वास/तीन लोक में परिभ्रमण छोड़ देने पर भी जगत के स्वामी होने वाले आपकी जय हो; नाम के विना ही उत्कृष्ट नाम-धारी होने वाले आपकी जय हो। कुबुद्धि/मिथ्या-ज्ञान का त्याग कर सुबुद्धि रूप/सम्यग्ज्ञानी/सर्वज्ञ हुए आपकी जय हो; सभी निषिद्ध दोषों का त्याग कर सुगुणों के स्वामी होने वाले आपकी जय हो।।३।।

कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइयो, लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइयो।
इन्द्रनागेन्द्र धरणीन्द्र तुम पद जजैं, महा वैरागरस पाग मुनिगण भजैं।।४।।

अर्थ : कर्मरूपी शत्रु का नाशकर उत्कृष्ट विजय प्राप्त कर लेने के कारण आपके सुयश रूपी मेघ तीनों लोकों में व्याप्त होकर छा गए हैं/आपका सुयश तीनों लोकों में फैल गया है। इन्द्र, नागेन्द्र, धरणीन्द्र/चक्रवर्ती आपके चरणों की पूजन करते हैं; महान वैराग्य-रस से ओत-प्रोत/अत्यधिक वैरागी मुनिओं के समूह भी आपकी भक्ति करते हैं।।४।।

विघनवन दहन को अघन घन पौन हो, सघन गुणरास के वास को भौन हो।
शिवतिय वशकरन मोहिनी मंत्र हो, काल क्षयकार बेताल के यंत्र हो।।५।।

अर्थ : विघ्नों के समूह रूपी वन को जलाने के लिए अग्नि प्रज्वलित करने-हेतु आप तीव्र पवन के समान हैं; अथवा विघ्नरूपी वन को दग्ध करने के लिए अग्नि और पापोंरूपी बादलों को नष्ट करने के लिए आप पवन के समान हैं; गुणों की अति विशाल राशि को रहने के लिए आप भवन के समान हैं। मोक्षरूपी स्त्री को वश में करने के लिए आप मोहनी मन्त्र और कर्मों को नष्ट करने के लिए वैताल यन्त्र के समान हैं।।५।।

कोटिथित क्लेश को मेटि शिवकर रहो, उपल की नकल हो अचल इकथल रहो।
स्वप्न में हू न निजअर्थ को पावहीं, जे महा खल न तुम ध्यानधरि ध्यावहीं।।६।।

अर्थ : करोड़ों सागर पर्यंत चलने वाले कष्टों की पोटली को नष्ट कर शिव/मोक्ष दशारूप से परिणमित आप पत्थर के समान अचल हो एक स्थान पर रहते हैं। जो महा अज्ञानी ध्यान पूर्वक आपको ध्याते नहीं हैं, वे स्वप्न में भी अपने प्रयोजन को सिद्ध नहीं कर पाते हैं।।६।।

आपके जाप बिन पाप सब भेंटही, पाप की ताप को पाप कब मेंटही।
'संत' निज दास की आस पूरी करौ, जगत से काढ़ निजचरण में ले धरौ।।७।।

अर्थ : आपकी जाप नहीं करने पर सभी प्रकार के पाप होते हैं, पाप संबंधी संताप/दुःख

को पाप कब/कैसे मिटा पाएंगे? कभी नहीं। सन्त कवि कहते हैं कि हे भगवान! अपने दास को संसार से निकालकर अपने चरणों में स्थान देने की मेरी आशा पूर्ण कीजिए।।७।।

घत्ता : **जय अमल अनूपं, शुद्ध स्वरूपं, निखिल निरूपं धर्मधरा।**
जय विघन नशायक, मंगलदायक, तिहुँ जगनायक परमपरा।।८।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : समस्त कर्म-मल से रहित, अनुपम, शुद्ध स्वरूपी, निखिल/परिपूर्ण, अमूर्तिक, आत्म-धर्म को धारण करने वाले आपकी जय हो। विघ्नों को नष्ट करने वाले, मंगल को देने वाले, तीनों लोकों के नायक, उत्कृष्टों में भी उत्कृष्ट/सर्वोत्कृष्ट आपकी जय हो।।८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; बत्तीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध-परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद की प्राप्ति-हेतु जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा : **तुम गुण अमल अपार, अनुभव तैं भव भय नशैं।**
'सन्त' सदा चित धार, शान्ति करौ भव तप हरौ।।९।।

अर्थ : अमल, अनन्त गुण-सम्पन्न आपका अनुभव करने से संसार के सभी भय नष्ट हो जाते हैं। सन्त कवि कहते हैं कि हम अपने मन में आपको सदा धारण करते हैं; आप भव-ताप का हरण कर शान्ति कीजिए।।९।।

इसप्रकार तृतीय पूजन समाप्त हुई।।३।।

चौंषठ गुण–सहित चतुर्थ पूजन

छप्पय : **ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे,**
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्ग्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुःषष्ठिगुणसंयुक्त–श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार', ऊपर–नीचे रेफ–युक्त और बिन्दु–सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमशः वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र–भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है।

अन्त में पुनः यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध यंत्र कर्म–शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह–समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; चौंषठ गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; चौंषठ गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार है; चौंषठ गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा : **सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व) आदि गुणों से सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध–समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

इसप्रकार यन्त्र–स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं -

लावनी : **सिद्धगण पूजौं हरषाई, चौंसठ गुण नामा विधि माला।**
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजो रे भाई।। अचरी/आँचली।।
त्रिभुवन उपमा वास लखै, तुम पद-अम्बुज माँई।।
निर्मल जल की धार देहु, अवशेष करण ताँई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने जन्मजरारोगमृत्युविनाशनाय जलं०।।१।।

अर्थ : हर्षित होकर सिद्ध-समूह की पूजन कर रहा हूँ। श्रुत के अनुसार सुख-दाई चौंषठ गुणों की नाम-माला का स्मरण करता हूँ। हे भाई! सिद्ध-समूह की पूजन कीजिए। हे भगवान! आपके चरण-कमलों में तीनों लोकों की उपमाएँ निवास करती हैं। जन्म, जरा, मरण का नाश करने के लिए उन पर निर्मल जल की धारा देकर हर्षित होकर सिद्ध-समूह की पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार, चौषठ गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए जन्म, जरा, रोग, मृत्यु-विनाशन-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन भाई।
निजसों गुणाधिक्य संगति कौं, लहि मन हरषाई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं०।।२।।

अर्थ : अपने से अधिक गुणवान की संगति पाकर हर्षित हो मानों चन्दन को भी आपके चरण-कमलों की सुगन्ध लेने की भावना हुई है। इसप्रकार .... पूजन कीजिए।

ॐ ह्रीं .... संसार ताप-विनाशन-हेतु चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई।
अंगुल से तंदुल सों पूजत, अक्षय पद पाई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं०।।३।।

अर्थ : कमल के समान सुगन्धित, क्षीरज धान के, अपने हाथों से तैयार किए, अंगुली के समान दीर्घ-अखण्डित चावलों द्वारा, अक्षय पद की प्राप्ति के लिए पूजन करता हूँ। श्रुत के .... पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं .... अक्षय पद की प्राप्ति-हेतु अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

धूलिसार छवि हरण विवर्जित फूलमाल लाई।
कामशूल निरमूल करण कौं, पूजहूँ तुम पाई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्पं०।।४।।

अर्थ : समवसरण में नाना प्रकार की रत्न-राशि से निर्मित प्रथम धूलिशाल कोट की सुन्दरता का हरण कर उसे शोभा-रहित कर देने वाली फूलों की माला लाकर काम-धूल/विषय-वासना को जड़-मूल से नष्ट करने के लिए श्रुतानुसार सुख-दाई चौंषठ गुणों का स्मरण करते हुए हर्षित हो सिद्ध भगवान की पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है; चौंषठ गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए कामबाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

भूखागार अक्षीण रसी हू, पूरति है नाँई।
चरू लाय तुम पद पूजत हों, पूरन शिवराई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०।।५।।

अर्थ : आज तक कभी भी नष्ट नहीं हुई वृहद भूख भोजन से भी नष्ट नहीं होती है; अत: इस चरु को लाकर आपके चरणों की पूजन कर रहा हूँ। श्रुत के .... पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं .... क्षुधा-रोग विनाशन-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

दीपनि प्रति तुम पद नित पूजत, शिवमारग दरशाई।
घोर अंध संसार हरण की, भली सूझ पाई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं०।।६।।

अर्थ : संसार के घोर अन्धकार को नष्ट करने का उत्तम उपाय हमने प्राप्त कर लिया है; अत: शिव/कल्याण/मोक्ष का मार्ग दिखाने वाले आपके चरणों की दीपक के निमित्त से पूजन कर रहे हैं। श्रुतानुसार .... पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं .... मोहान्धकार विनाशन-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

कृष्णागुरु कर्पूर पूर घट, अगनि से प्रजलाई।
उड़ै धूम यह, उड़े किधों जर करमन की छाई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने अष्टकर्म-दहनाय धूपं०।।७।।

अर्थ : कृष्णागरु, कपूर को अग्नि-घट में डालकर जलाने से उड़ने वाला धूम्र ऐसा प्रतीत हो रहा है मानों कर्मों के जलने से ही वह उड़ रहा है। श्रुतानुसार ..... पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं .... अष्ट कर्म-दहन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

मधुर मनोग सु प्रासुक फल सों, पूजों शिवराई।
यथायोग्य विधि फल को दे गुण फल की अधिकाई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने मोक्ष-फल-प्राप्तये फलं०।।८।।

अर्थ : मधुर, मनोज्ञ, प्रासुक फल से अपनी शक्ति के अनुसार सिद्ध भगवान की पूजन कर रहा हूँ; जिससे मुझे इसके फल में इनसे अधिक गुण वाला मोक्षफल प्राप्त हो जाए। श्रुतानुसार सुख-दाई चौंषठ गुणों का स्मरण करते हुए हर्षित हो सिद्ध भगवान की पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार है; चौंषठ गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए मोक्ष-फल-प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई।
भेंट धरत तुम पद पाऊँ पद निर-आकुलताई।। सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने सर्वसुख-प्राप्तये अर्घ्यं०।।९।।

अर्थ : पाप-रहित दशा प्राप्त करने के लिए हर्षित हो आठ प्रकार का पवित्र अर्घ्य आपके चरणों में समर्पित करता हूँ। मैं भी निराकुल पद प्राप्त कर लूँ - इस भावना से श्रुतानुसार, ...पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं ....सभी सुख/अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

गीता : **निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीप माल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती।।१०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतु:षष्ठि-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन; उज्ज्वल, अखण्डित अक्षत; मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित श्रेष्ठ दीपों का समूह; धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमश: होने वाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाशकर युगपत्/एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय, जन्मादि के दु:खों को नष्ट कर, असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्य पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य; अनन्त चतुष्टय के भण्डार, भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; चौंषठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद की प्राप्ति-हेतु पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

चौंषठ गुणों के अर्घ्य

(इन अर्घ्यों में चौंषठ ऋद्धिओं का स्मरण किया गया है। यहाँ ऋद्धि का अर्थ है विशिष्ट शक्ति की प्राप्ति। आत्माराधक जीवों के साधक दशा में आत्म-स्थिरता परिपूर्ण नहीं हो पाने से, शेष रही आत्म-अस्थिरतामय विशुद्धि का निमित्त पा अपनी योग्यतानुसार कुछ विशिष्ट शक्तिआँ व्यक्त हो जाती हैं। उन्हीं का इन छन्दों में वर्णन है। उनमें से यहाँ सर्वप्रथम अठारह भेदों वाली बुद्धि ऋद्धि में से सत्रह ऋद्धिओं का कथन १ से १७ पर्यन्त छन्दों में है।)

चाल : (आलोचना पाठ की राग) चउ घाती कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो।
द्वै धर्म कह्यो सुखकारा, नमुँ सिद्ध भए अविकारा।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्-जिन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चार घाति-कर्मों का नाशकर, अरहंत रूप परम-पद प्राप्त कर, सुख-कारी दो धर्म/ श्रावक-धर्म और मुनि-धर्म का उपदेश देकर, विकार-रहित सिद्ध पद को प्राप्त हुए भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत जिन सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

संक्लेश भाव परिहारी, भए अमल अवधि बलधारी।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना।।२।।

ॐ ह्रीं अवधि-जिन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संक्लेश भावों का परिहार कर निर्दोष अवधि ज्ञान के धारी हो, अतिशय-सम्पन्न केवलज्ञान को प्रगट कर कल्याण का स्थान/मोक्ष-दशा प्राप्त कर ली है।

ॐ ह्रीं अवधि जिन सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

निर्मल चारित्र समारा, परमावधि पटल उघारा।
केवल पायो तिस कारण, नमुँ सिद्ध भये जग तारण।।३।।

ॐ ह्रीं परमावधि-जिन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निर्मल चारित्र को धारण कर, अवधि ज्ञानावरणरूपी पटल को उघाड़ कर, परमावधि ज्ञान को प्रगट कर, उससे केवलज्ञान को प्राप्त कर जगत के तारक हुए सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परमावधि जिन सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

वर्धमान विशद परिणामी, सर्वावधि के हो स्वामी।
अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमुँ सिद्ध भये सुखदाया।।४।।

ॐ ह्रीं सर्वावधि-जिन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सतत वर्धमान/बड़ते हुए निर्मल भावों से सर्वावधि ज्ञान के स्वामी हो, अन्त में आठों कर्मों का नाशकर हुए सुख-दाई सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सर्वावधि जिन सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

जिस अन्त अवधि कौ नाहीं, तुम उपजायो पद ताहीं।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमूँ सुखकारी।।५।।

ॐ ह्रीं अनन्तावधि-जिन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अवधि/सीमा के अन्त से रहित, प्रगट हुए निर्मल अवधि गुण के धारक, सुख-कारक सभी सिद्धों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनन्त अवधि जिन सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

तप बल महिमा अधिकाई, बुधि कोष्ठ रिद्धि उपजाई।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भण्डारी, नमूँ सिद्ध भये अविकारी।।६।।

ॐ ह्रीं कोष्ठ-बुद्धि-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : (कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि : जैसे भण्डार में हीरा, पन्ना आदि पदार्थ जहाँ जैसे रख दिए जाते हैं; बहुत समय बीत जाने के बाद भी वे वहीं वैसे ही रखे रहते हैं; उसी प्रकार सिद्धान्त, न्याय, व्याकरण आदि के सूत्र, गद्य, पद्य ग्रन्थ जिसप्रकार पढ़े, सुने या मनन किए थे; बहुत समय बीत जाने के बाद भी उन्हें पूर्णतया उसीरूप में बता देने की क्षमता कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि है।) बहुत महिमावान तप के बल से कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि प्रगटकर, श्रुत-ज्ञानरूपी कोष्ठ के भण्डारी हो अविकारी हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमूँ शिव ईशा।।७।।

ॐ ह्रीं बीज-बुद्धि-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक फल से उसकी बहुत राशि प्राप्त हो जाने के समान, योगीश को प्राप्त होने वाली, क्षण भर में बहुत अभ्यास कर शिव-स्वामी हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं बीज बुद्धि ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

पदमात्र समस्त चितारैं, यह रिद्धि पद अनुसारैं।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूँ शिवथानी।।८।।

ॐ ह्रीं पदानुसारिणि-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ग्रन्थ के आदि, मध्य या अन्त के मात्र एक पद को सुनकर सम्पूर्ण ग्रन्थ को कह देने की शक्तिरूप पदानुसारिणी ऋद्धि प्राप्त करते हुए यतीश्वर मोक्ष को प्राप्त सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पदानुसारिणी ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

जो भिन्न-भिन्न इक लारैं, शब्दन सुन अर्थ विचारैं।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमुँ सिद्ध भये जगत्राता।।९।।

ॐ ह्रीं संभिन्न-संश्रोतृ-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भिन्न-भिन्न शब्दों को एक साथ सुनकर अर्थ का विचार करनेरूप ऋद्धि को प्राप्त कर हुए सुख-दाता, जगत के रक्षक सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सम्भिन्न संश्रोतृ ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, बिन गुरु के सहज सरूपा।
भए स्वयंबुद्ध निज ज्ञानी, नमुँ सिद्ध भये सुखदानी।।१०।।

ॐ ह्रीं स्वयं-बुद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुरु-उपदेश के विना ही अनुपम मति, श्रुत, अवधिज्ञानी; सहज, स्वरूप सम्पन्न स्वयं बुद्ध, निजात्मज्ञानी हो, सुखदायक सिद्ध पद प्राप्त करनेवाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्वयं-बुद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा।
प्रत्येकबुद्ध गुणधारी, भये सिद्ध नमूँ हितकारी।।११।।

ॐ ह्रीं प्रत्येक-बुद्ध-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दूसरों के उपदेश-विना ही तप, ज्ञान आदि के विशेषों को जानने वाली प्रत्येक बुद्ध ऋद्धि को प्राप्त कर हुए हितकारी सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रत्येक-बुद्ध ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

गणधर से समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी।
ज्ञानिन सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये।।१२।।

ॐ ह्रीं बोधित-बुद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपकी दिव्य-ध्वनि का अनुसरण कर गणधर के समान शुद्ध सम्यक्त्व धारण कर ज्ञानिओं में श्रेष्ठ कहलाकर हुए सिद्ध भगवान का हम सुयश गाते हैं।

ॐ ह्रीं बोधित-बुद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

मन योग सरलता धारै, तिस अन्तर भेद उघारै।
जो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमुँ सिद्ध भये सुखदानी।।१३।।

ॐ ह्रीं ऋजुमति-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मनो-योग की सरलता के धारक/सरल मन वाले के अन्दर की सब बातें जानने वाले ऋजुमति मन:पर्यय-ज्ञानी होने वाले सुख-दायक, सिद्धराज को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं ऋजुमति ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

बाँके मन की सब बाता, जाने सो विपुल कहाता।
तुम पाय भये शिवधामी, नमुँ सिद्धराज अभिरामी।।१४।।

ॐ ह्रीं विपुलमति-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कुटिल मन की भी सभी बातों को जानने वाले विपुल-मति मन:पर्यय ज्ञान को प्राप्त कर होने वाले अभिरामी/सुन्दर, शिव-धामी/कल्याण के भण्डार सिद्धराज के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं विपुलमति ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

सुर-विद्या को नहिं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं।
दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो।।१५।।

ॐ ह्रीं दशपूर्व-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने चारित्र की महिमा से महिमा-मण्डित मुनिराज, देवों द्वारा दी जाने वाली विद्याओं की इच्छा नहीं करते हैं - ऐसी दश पूर्व ऋद्धि प्राप्त कर हुए सिद्ध भगवान का गुणगान मुनि भी करते हैं।

ॐ ह्रीं दशपूर्व ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जानैं परोक्ष परमानी।
प्रत्यक्ष लखो तिस सारूँ, भये सिद्ध हरो अघ म्हारूँ।।१६।।

ॐ ह्रीं चौदहपूर्व-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चौदह पूर्व रूप सम्पूर्ण श्रुतज्ञान के द्वारा सभी को परोक्ष प्रमाण से जानने के बाद उन्हें ही केवलज्ञान द्वारा प्रत्यक्ष देखकर हुए सिद्ध हमारे पाप नष्ट करें।

ॐ ह्रीं चौदहपूर्व ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

सुन्दरी : **ज्योतिषादिक लक्षण जानकैं, शुभ अशुभ फल कहत बखानिकैं।**
निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूँ यथा।।१७।।

ॐ ह्रीं अष्टांग-निमित्त-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : (अन्तरीक्ष, भौम, अंग, स्वर, व्यंजन, लक्षण, छिन्न, स्वप्न - इन आठ निमित्तों से शुभाशुभ फल जानने की क्षमता, अष्टांग निमित्त ऋद्धि है।) ज्योतिष आदि द्वारा लक्षण को जानकर शुभाशुभ फल बताने वाले; परन्तु उसका दुरुपयोग नहीं करने वाले निमित्त ऋद्धि-धारी हो जो सिद्ध हुए हैं; उन्हें हम प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं अष्टांग निमित्त ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१७।।

(इस एक पद्य द्वारा ग्यारह भेद वाली विक्रिया ऋद्धि से सम्पन्न हो सिद्ध होनेवालों की उपासना कर रहे हैं।)

बहु विधि अणिमादिक ऋद्धि जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्धिजू।
निष्प्रयोजन निजपद लीन हैं, नमूँ सिद्ध भये स्वाधीन हैं।।१८।।

ॐ ह्रीं विवर्ण-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तप के प्रभाव से अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा आदि अनेक प्रकार की ऋद्धिआँ प्रगट हो जाने के बाद भी उन्हें निष्प्रयोजनीय समझ कर आत्मा में लीन रह, होने वाले स्वाधीन सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं विवर्ण/विक्रिया ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८।।

(अब, इन तीन पद्यों द्वारा नौ भेदवाली क्रिया ऋद्धि-सम्पन्न हो सिद्ध होने वालों की भक्ति कर रहे हैं।)

भूमि जल तंतु जिय ना हरैं, नमूँ ते मुनि शिवकामिनी वरैं।
नैकु नहीं बाधा परिहार हो, नमूँ सिद्ध सभी सुखकार हो।।१९।।

ॐ ह्रीं विज्ञा-हरण-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भूमि, जल, तन्तु (मकड़ी आदि के जाले) आदि पर गमन करते हुए भी उन जीवों को कष्ट या बाधा नहीं देने वाले मुनि मोक्षरूपी मनोहर स्त्री का वरण करते हैं। किसी को भी रंच-मात्र भी बाधा नहीं देने वाले, सभी की बाधाओं का परिहार करने वाले, सुख-कारक सभी सिद्धों को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं विज्ञाहरण/विघ्न-बाधाओं का हरण करने वाली ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

जंघ पर दो हाथ लगावहीं, अन्तरीक्ष पवनवत जावहीं।
पाय ऋद्धि महामुनि चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी।।२०।।

ॐ ह्रीं चारण-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जंघा पर दोनों हाथ लगाकर आकाश में पवन के समान गमन करने वाले चारण ऋद्धिधारी महामुनि यथा-योग्य विशुद्धता पूर्वक विहार करते हैं।

ॐ ह्रीं चारण ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०।।

खग समान चलैं आकाश में, लीन नित निज धर्म प्रकाश में।
शुद्ध चारित करि निज सुद्धता, पाययो नभ गमन करैं यथा।।२१।।

ॐ ह्रीं आकाश-गामिनि-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने मन को आत्म-धर्म के प्रकाश में/स्वरूप में स्थिर कर शुद्ध चारित्र द्वारा अपनी शुद्धता को बड़ाते हुए पक्षी के समान आकाश में या पादप/पेड़-पौधों पर उगने वाले पुष्पों आदि पर भी गमन कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं आकाशगामिनी ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

(अब, शेष रही एक वादित्व बुद्धि ऋद्धि की मुख्यता से सिद्ध भगवान का गुणानुवाद करते हैं।)

वाद विद्या फुरत प्रमानही, बज्रसम परमतगिरि हानही।
सब कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्याद्‌वाद महादुति कौं धरैं।।२२।।

ॐ ह्रीं परामर्श-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वाद-विवाद में परमतरूपी पर्वतों को प्रमाणरूपी बज्र द्वारा नष्ट कर, स्याद्वादरूपी महा प्रकाश को धारण कर उसके द्वारा सभी कुपक्षी/एकान्तवादिओं के दोष बता देते हैं।

ॐ ह्रीं परामर्श/वादित्व ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२।।

(अब, आठ भेदवाली औषधि ऋद्धि में से दो को दो पद्यों द्वारा बताते हुए सिद्ध भगवान की स्तुति करते हैं।)

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहिं तिस शक्ती हरैं।
ते महामुनि जग सुखदाय जू, हम नमें तिन शिवपद पाय जू।।२३।।

ॐ ह्रीं आशीर्विष-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भयानक जहर मिले भोजन का ग्रास लेते ही उसकी शक्ति को नष्ट/निर्विष कर देने वाले महा मुनिराज हो होने वाले सुख-दायक मोक्ष-पद में पाकर हम नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं आशीर्विष ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३।।

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूँ उर धारकैं।।२४।।

ॐ ह्रीं दृष्टि-विषंविष-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अति प्रचण्ड महा-विष से व्याप्त शरीर आदि को अपनी दृष्टि से ही पूर्णतया निर्विष कर देने वाले यतीश्वर कर्मों को नष्ट कर सिद्ध हो जाते हैं। उन्हें हम हृदय में धारण कर नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं दृष्टि विषंविष ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४।।

(अब, २५ से ३२ पर्यन्त आठ पद्यों द्वारा सात भेद-संयुक्त तपो ऋद्धि की प्रधानता से सिद्ध भगवान का यशोगान करते हैं।)

अनशनादिक नित प्रति साधना, मरणकाल तईं न विराधना।
उग्र तप करि वसुविधि नासतैं, हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं।।२५।।

ॐ ह्रीं उग्र-तप-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नित्य प्रति अनशन आदि की साधना करते हुए, मरण काल पर्यन्त किसी भी प्रकार की विराधना नहीं करते हुए उग्र तप द्वारा आठों कर्मों का नाश कर हुए तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाले सिद्ध भगवान को हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं उग्र तप ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५।।

बढ़त नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना।
दीप्ति तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूँ सिर नायकैं।।२६।।

ॐ ह्रीं दीप्त-तप-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उग्र तप करके क्लेश का अनुभव नहीं करने वाले, धर्म की सहज भाव से प्रभावना करने वाले दीप्त तप द्वारा कर्मों को जलाकर होने वाले सिद्ध भगवान के लिए हम सिर झुकाकर नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं दीप्त तप ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २६।।

अन्तराय भये उत्सव बढ़े, बाल चन्द्र समान कला चढ़े।
वृद्धि तप की ऋद्धि लहैं यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती।।२७।।

ॐ ह्रीं तपो-वृद्धि-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे बाल-चन्द्र/द्वितीया के चन्द्रमा की कलाएँ बड़ती जाती हैं; उसी प्रकार अन्तराय हो जाने पर अति उत्साह पूर्वक तप की वृद्धि करते हुए ऋद्धि प्राप्त यति हो होने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार करने से अत्यधिक सुख होता है।

ॐ ह्रीं तप वृद्धि ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७।।

सिंहक्रीड़ित आदि विधानतें, नित बढ़ावत तप विधि हानतें।
महामुनीश्वर तप परकाशतें, नमूँ मुक्त भये जगवासतें।।२८।।

ॐ ह्रीं महा-तपो-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तप की विधि के अनुसार सिंह-निष्क्रीड़ित आदि तपों को बड़ाने वाले, तप के प्रभाव से संसार-वास से मुक्त हुए महा मुनीश्वर को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं महातप ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८।।

गिरि-शिखर ग्रीषम हिम सर-तटैं, तरु निकट पावस निजपद रटैं।
घोर परिषह करि नाहीं हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं।।२९।।

ॐ ह्रीं घोर-तपो-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ग्रीष्म ऋतु में पर्वत के शिखर पर, शीत ऋतु में तालाब के किनारे, वर्षा ऋतु में वृक्ष के नीचे आत्म-ध्यान करते हुए घोर परिषहों में भी विचलित नहीं होते हुए जो सिद्ध हुए हैं; उन्हें नमन करने से हमारे दु:ख नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं घोर तप ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९।।

महाभयंकर निमित मिलै जहाँ, निरविकार यती तिष्ठैं तहाँ।
महापराक्रम गुण की खान हैं, नमों सिद्ध जगत सुखदान हैं।।३०।।

ॐ ह्रीं घोर-गुण-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा भयंकर निमित्त मिलने पर भी महा पराक्रमी, गुणों के भण्डार यति निर्विकाररूप में वहाँ विराजमान रहते हैं। जगत को सुख-दायक उन सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पराक्रम ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०।।

सघन गुण की रास महा यती, रत्नराशि समान दिपै अती।
शेष जिन वर्णन करि थकि रहै, नमूँ सिद्ध महापद को लहै।।३१।।

ॐ ह्रीं घोर-गुण-परिक्रमाणं-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त गुणों के भण्डार महायति रत्न-राशि के समान अत्यधिक देदीप्यमान होते हैं। उनका वर्णन करने में शेषनाग भी थक रहे हैं। हम तो मोक्ष-महा-पद की प्राप्ति के लिए उन सिद्ध भगवान को नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं घोर गुण पराक्रम ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१।।

अतुल वीर्य धनी हन काम कौं, चलत मन न लखत सुर वाम कौं।
बालब्रम्हचारी योगीश्वरा, नमूँ सिद्ध भये वसुविधि हरा।।३२।।

ॐ ह्रीं ब्रम्हचर्य-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विषय-वासनारूपी काम को नष्ट कर अतुल्य बल के स्वामी बाल ब्रम्हचारी, योगीश्वर का मन देव-स्त्री/देवांगना को देख कर भी चंचल नहीं होता है। आठों कर्मों का नाश कर उन सिद्ध हुए भगवान को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं ब्रम्हचर्य ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२।।

(अब, ३३ से ३६ पर्यन्त ४ पद्यों द्वारा शेष रहीं छह औषधि ऋद्धिओं की प्रधानता से सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

सकल रोग मिटैं संस्पर्शतें, महा यतीश्वर के आमर्शतें।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३३।।

ॐ ह्रीं आमर्ष-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा प्रभावना करने वाली आमर्श औषधि ऋद्धि-सम्पन्न महा-यतीश्वर के स्पर्श मात्र से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। उन सिद्ध हुए भगवान को सुख की प्राप्ति के लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आमर्ष औषधि ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३।।

मूत्र में अमृत अतिशय बसै, जा परसतैं सब व्याधी नसै।
औषधि यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३४।।

ॐ ह्रीं आमोसिय-औषधि-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रभावना करने वाली विडौषधि ऋद्धि-सम्पन्न मुनिराज के अमृत-समान अतिशय-संयुक्त मूत्र के स्पर्श से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। उन सिद्ध हुए भगवान को सुख की प्राप्ति के लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आमोसिय औषधि-ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४।।

तन पसीजत जल-कण लगतही, रोग व्याधि सब जन भगतही।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३५।।

ॐ ह्रीं जलोसिय-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रभावना करने वाली जल्लौषधि ऋद्धि-सम्पन्न मुनि के शरीर संबंधी पसीने का जल-कण लगते ही सभी जनों के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। उन सिद्ध हुए भगवान के लिए सुख-प्राप्ति-हेतु नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं जलौषधि ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५।।

हस्त पादादिक नखकेश में, सर्व औषधि हैं सब देश में।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३६।।

ॐ ह्रीं सर्वोसियऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रभावना करने वाली सर्वौषधि ऋद्धि-सम्पन्न मुनि के हस्त, पैर, नख, केश आदि सभी अंगों में सभी औषधिआँ विद्यमान रहती हैं। उन सिद्ध हुए भगवान के लिए सुख -प्राप्ति-हेतु नमन है।

ॐ ह्रीं सर्वौषधि ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६।।

(अब, ३७ से ३९ पर्यन्त तीन पद्यों द्वारा तीन भेद वाली बल ऋद्धि की प्रधानता से सिद्ध भगवान की पूजन करते हैं।)

अडिल्ल : **मन सम्बन्धी वीर्य बढ़े अतिशय महा,**
एक महूरत अन्तर श्रुत चिंतवन लहा।
मनोबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।३७।।

ॐ ह्रीं मनो-बली-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मन संबंधी वीर्य के अत्यधिक अतिशयरूप में बड़ जाने से एक अन्तर्मुहूर्त में द्वादशांगरूप सम्पूर्ण श्रुत का चिन्तवन करने वाली सुख-दायक मनोबल ऋद्धि प्राप्त कर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दाई चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मनो-बल ऋद्धि सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७।।

भिन्न-भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक महूरत अन्तर श्रुत वर्णन करैं।
वचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।३८।।

ॐ ह्रीं वचन-बली-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पृथक्-पृथक्, अति शुद्ध, उच्च स्वर में, एक अन्तर्मुहूर्त में सम्पूर्ण श्रुत का वर्णन करने वाली, सुख-दायक वचन बल ऋद्धि पाकर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दाई चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं वचन बल ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८।।

खड्गासन इक अंग मास षट्मासलों,
अचलरूप थिर रहैं छिनक खेदित न हों।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।३९।।

ॐ ह्रीं काय-बली-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : खड्गासन से एक अंग द्वारा एक माह, छह माह पर्यन्त अचल रूप से स्थिर रहने पर भी किसी भी प्रकार का खेद नहीं होने वाली, सुख-दायक काय-बल ऋद्धि को पाकर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दायक चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं कायबल ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९।।

(अब, ४० से ४२ पर्यन्त तीन पद्यों द्वारा बहु-भेद-युक्त रस ऋद्धि की प्रधानता से सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

अती अरस चरु क्षीर होय कर धरत ही,
वचन खिरत पर-श्रवण तुष्टता करत ही।
क्षीरस्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।४०।।

ॐ ह्रीं क्षीर-स्रावी-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अति नीरस भोजन भी हाथ में आते ही दुग्ध के समान गुण-कारी हो जाने; जिनके वचन सुनने से कमजोर व्यक्ति भी दुग्ध पीने के समान हृष्ट-पुष्ट हो जाने रूप सुख-दायक क्षीर-स्रावी ऋद्धि पाकर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दाई चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं क्षीरस्रावी ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०।।

रूखे भोजन से कर में घृतरस स्रवै,
वचन सुनत पर को घृतसम स्वादित ह्वै।
सर्पिस्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।४१।।

ॐ ह्रीं सर्पि-स्रावी-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अति नीरस भोजन भी हाथ में आते ही घी के समान स्वादिष्ट और बल-वर्धक हो जाने; जिनके वचन सुनने से भी दूसरों को घी के समान संतुष्टि होने रूप सुख-दायक घृत-स्रावी ऋद्धि पाकर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दाई चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं घृत-स्रावी सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१।।

हस्तकमल में अन्न मधुर रस देत है,
मधुकर सम जिय वचन गन्ध कौं लेत है।
मधुस्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।४२।।

ॐ ह्रीं मधु-स्रावी-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अति नीरस भोजन भी हाथ में आते ही मधुर रसमय हो जाने; जिनके वचन रूपी पुष्पों की गन्ध को लेकर दु:खी जीवरूपी भ्रमर साता का अनुभव करने रूप सुख-दाई मधु-स्रावी ऋद्धि पाकर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दायक चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं मधुस्रावी ऋद्धि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२।।

अमृत सम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दे सुक्ख श्रवण में जायके।
आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।४३।।

ॐ ह्रीं आमिय-रस-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अति नीरस आहार भी हाथ में आते ही अमृत-सम हो जाने; जिनके वचन दूसरों के कान में पड़ने पर अमृत के समान संतुष्टि-कारक होने रूप सुख-दायक अमृत रस ऋद्धि पाकर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दायक चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं आमिय/अमृत रस ऋद्धि सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३।।

(अब, इस एक पद्य द्वारा दो भेद वाली क्षेत्र ऋद्धि की प्रधानता से सिद्ध भगवान की स्तुति करते हैं।)

जिस बासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखै होवे अती।
अक्षीणरसी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू।।४४।।

ॐ ह्रीं अक्षीण-रस-ऋद्धि-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस बर्तन का, जिस स्थान पर मुनिराज आहार लेते हैं; वहाँ चक्रवर्ती की सम्पूर्ण सेना द्वारा आहार लेने पर भी भोजन और स्थान की कमी नहीं होती है। इस सुख-दायक अक्षीण रस ऋद्धि को प्राप्त कर सिद्ध हुए भगवान के सुख-दायक चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अक्षीण रस-ऋद्धि सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४।।

सोरठा : **सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे।**
नमूँ ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है।।४५।।

ॐ ह्रीं वड्ढमाण-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निरन्तर वृद्धि रूप से शोभायमान, सुख-दायक, सिद्ध-समूह के लिए सिर झुकाकर

नमस्कार है। उनका यह वृद्धिवाला गुण अगम है/छद्मस्थ ज्ञान के गोचर नहीं है।

ॐ ह्रीं वर्धमान सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५।।

रागादिक परिणाम, अन्तर के अरि नाशके।
लहि अरहन्त सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया।।४६।।

ॐ ह्रीं अरहन्त-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : रागादि परिणाम रूप अंतरंग शत्रुओं का नाशकर अरहन्त दशा पाने के बाद सिद्ध पद प्राप्त करने वाले सभी को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अरहन्त सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६।।

दो अन्तिम गुणथान, भाव-सिद्ध इस लोक में।
तथा द्रव्य-शिवथान, सर्व सिद्ध प्रणमूँ सदा।।४७।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सर्व-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इस लोक में अन्तिम दो गुणस्थान वाले सयोग-केवली और अयोग-केवली जिन भाव-सिद्ध जीव कहलाते हैं तथा सिद्धालय में रहने वाले द्रव्य-सिद्ध हैं। इन सभी सिद्धों को मेरा सदा प्रणाम है।

ॐ ह्रीं लोक में सभी सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७।।

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी।
नमूँ सिद्ध जिननाह, सन्तनि के भवभय हरैं।।४८।।

ॐ ह्रीं भयवदो महावीर-वड्ढमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महान वीर और महा धैर्यवान होने के कारण आप शत्रु, व्याधि, भय से पूर्णतया रहित हैं। सन्तों के भव-भय का हरण करने वाले जिन-नाथ सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं भय-विध्वंसक महावीर वर्धमान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८।।

क्षपकश्रेणि आरुढ़, निजभावी योगी यथा।
निश्चय दर्श अमूढ़, सिद्ध योग सब ही जजों।।४९।।

ॐ ह्रीं णमो योग-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षपक श्रेणी का आरोहण कर आत्म-स्वभाव में योगी/पूर्ण स्थिर हो क्षायिक दर्शन, क्षायिक ज्ञान प्राप्त कर होने वाले सिद्ध भगवान की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं योग-सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९।।

वीतराग परधान, ध्यान करैं तिनकौं सदा।
सोई ध्येय महान, नमों सिद्ध हम अघ हरो।।५०।।

ॐ ह्रीं णमो ध्येय-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वीतरागता की प्रधानता से उनका सदा सभी ध्यान करते हैं। ये ही महान ध्येय हमारे पाप नष्ट करें। हम इन सिद्ध भगवान को नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं ध्येय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०।।

लोक शिखर शिव थान, अचल विराजत सिद्ध जिन।
लोकवास सर्वान, भये सिद्ध प्रणमूँ सदा।।५१।।

ॐ ह्रीं णमो सव्व-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक के शिखर पर स्थित सिद्धालय में सभी सिद्ध भगवान अचलरूप से विराजमान हैं। इस लोक में स्थित सभी सिद्धों को हम सदा प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं सभी सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१।।

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय।
सोई सिद्ध महान, मंगलहेतु नमूँ सदा।।५२।।

ॐ ह्रीं णमो स्वस्ति-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप सम्पूर्ण कल्याणमय होने के कारण दूसरों का कल्याण करते होने से महान सिद्ध हैं। हम मंगल के लिए सदा आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं सभी स्वस्ति सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२।।

तीन लोक के पूज, सर्वोत्तम सुखदाय हैं।
जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भावयुत।।५३।।

ॐ ह्रीं णमो अर्हं सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप तीन लोक के पूज्य, सर्वोत्तम सुख-दाई हैं। आपके समान और कोई दूसरा नहीं है; अत: आपके चरणों की भाव पूर्वक पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं पूजन-योग्य सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ५३।।

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा।
तातैं सिद्ध महान, सर्व पूज्य के पूज्य हो।।५४।।

ॐ ह्रीं णमो अर्हं सिद्ध-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक में उत्तम प्रधान, आपके चरणों की सदा पूजन करते होने से आप महान, सभी पूज्यों के भी पूज्य हैं।

ॐ ह्रीं पूज्यों से भी सिद्ध सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४।।

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो।
सोई धर्म अबाध, पूजत हमको दीजिये।।५५।।

ॐ ह्रीं णमो परमात्म-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्म-स्वभाव में परिपूर्ण स्थिरता रूप परम धर्म की साधना कर आपने परमात्म-पद प्राप्त किया है। वही बाधा-रहित आत्म-धर्म हमें भी दीजिए; हम आपके चरणों की पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं परमात्म सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५।।

सर्व सिद्धि नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो।
निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको णमो।।५६।।

ॐ ह्रीं परम-सिद्धाणं नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी सिद्धिआँ, नौ निधिआँ सिद्ध हो जाने पर भी सिद्ध नहीं होते हैं। एकमात्र निज पद/ज्ञानानन्द-स्वभावी निज कारण परमात्मा की साधना से ही सिद्ध होते हैं; उन्हें नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६।।

परमागम की शाख, परम अगम गुणगण सहित।
सोई मन में राख, श्रद्धायुत पूजा करों।।५७।।

ॐ ह्रीं परमागम-सिद्धाणं नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परमागम/जिनवाणी की साक्षी पूर्वक उत्कृष्ट अगम्य/हमारे ज्ञान द्वारा ज्ञात नहीं होने वाले, अनन्त गुणों से सहित आपको मन में धारण कर श्रद्धा पूर्वक आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं परमागम सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७।।

गुण अनन्त परकाश, महा विभवमय लसत है।
आवर्णित पद नाश, ते पूजूँ प्रणमूँ सदा।।५८।।

ॐ ह्रीं प्रकाशमान-सिद्धाणं नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सांसारिक सभी पदों का नाश करनेवाले, अनन्त गुणों को प्रकाशित कर/पर्याय में प्रगट कर महा वैभव-सम्पन्नता से शोभायमान उन सिद्ध भगवान की सदा पूजन करते हैं; उन्हें प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं प्रकाशमान सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८।।

स्वयं सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाशमय।
लसत नमूँ मन आन, मम उर चिंता दुख हरो।।५९।।

ॐ ह्रीं णमो स्वयंभू-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वयं-सिद्ध, ज्ञान-स्वरूपी, प्रकाशमय शोभायमान भगवान को मनो-योग पूर्वक नमस्कार करता हूँ; आप मेरे मन की चिन्ता और दु:ख का हरण कीजिए।

ॐ ह्रीं स्वयंभू सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९।।

मन इन्द्रिय सों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर।
सोई ब्रम्ह अखिन्न, साधित सिद्ध भये नमूँ।।६०।।

ॐ ह्रीं णमो ब्रम्ह-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मन और इन्द्रियों से भिन्न होने पर भी उन मन और इन्द्रियों को प्रकाशित कर, खिन्नता-रहित साधना से सिद्ध हुए उन्हीं ब्रम्ह के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह सिद्धों को नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०।।

द्रव्य अनन्त गुणात्म, परणामी परसिद्ध के।
सोई पद निज-आत्म, साधत सिद्ध अनन्त गुण।।६१।।

ॐ ह्रीं अनन्त-गुण-सिद्धाणं नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त गुणात्मक द्रव्य परिणामी/परिणमन स्वभावी है। उसे प्रकृष्ट रूप से सिद्ध कर प्रगट हुआ पद ही अपना पद है। इसकी साधना से अनन्त गुणों की सिद्धि हो जाती है।

ॐ ह्रीं अनन्त गुण सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१।।

सर्व तत्त्वमय पर्म, गुण अनन्त परमातमा।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनकों नमूँ।।६२।।

ॐ ह्रीं णमो परमानन्त-सिद्धाणं नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त गुणात्मक (कारण) परमात्मा सभी तत्त्वों में श्रेष्ठ है। आत्मधर्म/उसे अपनत्वरूप से जानकर, मानकर, उसमें स्थिरता द्वारा प्राप्त कर हुए परम सिद्धों को हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम अनन्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२।।

लोक शिखर के वास, पायो अविचल थान निज।
सर्व लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनकों नमों।।६३।।

ॐ ह्रीं लोकाग्र-वासि-सिद्धाणं नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक के शिखर पर प्राप्त हुए अपने अविचल स्थान में रहते हुए सम्पूर्ण लोक को प्रकाशित करने वाली ज्ञान ज्योति-सम्पन्न उन सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोकाग्र-वासी सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३।।

काल विभाग अनादि, शाश्वत रूप विराजते।
यातैं नहिं सो आदि, नमि अनादि सिद्धान को।।६४।।

ॐ ह्रीं णमो अनादि-सिद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : काल का विभाग अनादि से चला आ रहा है। उसमें आप शाश्वतरूप से विराजमान

होने के कारण आपकी आदि नहीं है। उन अनादि सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनादि सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४।।

दोहा : **सिद्धन के जु अनन्त गुण, कहि न सकें गणराय।**
तिन सिद्धन कौं मैं जजूँ, पूरण अर्घ चढ़ाय।।६५।।

ॐ ह्रीं अनन्त-गुणात्मक-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सिद्धों के अनन्त गुणों को गणधर भी नहीं कह सकते हैं। उन सिद्धों की हम पूर्ण अर्घ्य चढ़ाकर पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त गुणात्मक सिद्ध परमेष्ठिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५।।

यहाँ 'ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नम:' इस मन्त्र का एक सौ आठ बार जाप कीजिए।

जयमाला

दोहा : **तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जापद करत प्रणाम।**
हम किह मुख वर्णन करैं, तिन महिमा अभिराम।।१।।

अर्थ : तीनों लोकों के नाथ तीर्थंकर भी (दीक्षा लेते समय) जिस सिद्ध-पद को प्रणाम करते हैं; उनकी सुन्दर महिमा का वर्णन हम किस मुख से करें? हम वर्णन करने में समर्थ नहीं हैं।।१।।

बेसरी/चौपाई : **जय भवि-कुमुदन मोदन चंदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरविंदा।**
भव-तप-हरण शरण रस-कूपा, मद ज्वर जरण हरण घनरूपा।।२।।

अर्थ : भव्य जीवों रूपी कुमुद के फूलों को विकसित करने के लिए चन्द्रमा के समान आपकी जय हो; तीनों लोकों के जीवों रूपी कमलों को विकसित करने के लिए सूर्य के समान आपकी जय हो। संसार के सन्ताप को नष्ट करने के लिए शरणरूपी रस के कूप और मदरूपी ज्वर की दाह का हरण करने के लिए आप घन/मेघ के समान हैं।।२।।

अकथित महिमा अमित अथाई, निर-उपमेय सरसता नाँई।
भावलिंग बिन कर्म खिपाई, द्रव्यलिंग बिन शिव पद पाई।।३।।
नय विभाग बिन वस्तु प्रमाणा, दया भाव बिन निज कल्याणा।
पंगु सुमेरु चूलिका परसै, गुंग गान आरम्भे स्वर से।।४।।
यों अजोग कारज नहीं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई।
सर्व जैन-शासन जिनमाहीं, भाग अनन्त धरै तुम नाहीं।।५।।

अर्थ : आपकी महिमा अनिर्वचनीय, अनन्त, अथाह, उपमा-रहित होने पर भी नवीन-नवीन सरसता-सम्पन्न है।

जैसे भाव-लिंग के विना कर्मों को नष्ट करना, द्रव्य-लिंग के विना मोक्ष-पद प्राप्त करना, नय-विभाग के विना वस्तु को प्रमाणित/सिद्ध कर पाना अथवा नय-विभाग और प्रमाण के विना वस्तु का यथार्थ ज्ञान कर पाना, दया भाव के विना अपना कल्याण हो पाना, पंगु/लँगड़े के द्वारा सुमेरु पर्वत की चूलिका का स्पर्श कर पाना, गूँगे के द्वारा सस्वर गान का प्रारम्भ कर पाना असम्भव है/ये अयोग्य कार्य कभी हो ही नहीं सकते हैं; उसी प्रकार आपके गुणों का कथन करना कठिन है।

सम्पूर्ण जैन शासन में जितना भी आपका कथन किया गया है, वह आपके गुणों का अनन्तवाँ भाग भी नहीं है।। ३-५।।

गोखुर में नहिं सिन्धु समावे, वायस लोक अन्त नहिं पावै।
तातैं केवल भक्ति भाव तुम, पावन करो अपावन उर हम।।६।।

अर्थ : जैसे गौखुर/गाय के पैर रखने से कीचड़ में बने हुए गड्ढे में समुद्र का जल नहीं समा सकता, कौआ उड़कर लोक का अन्त प्राप्त नहीं कर सकता है; उसी प्रकार आपके गुणों का कथन हम नहीं कर सकते हैं; अत: मात्र भक्ति-भाव-वश ही आपके गुणों का कुछ कथन कर रहा हूँ। आप हमारे अपवित्र मन को पवित्र कर दीजिए।।६।।

जे तुम यश निज मुख उच्चारैं, ते तिहुँ लोक सुजस विस्तारैं।
तुम गुणगान मात्र कर प्रानी, पावैं सुगुण महा सुखदानी।।७।।

अर्थ : जो जीव अपने मुख से आपके यश का उच्चारण करते हैं, वे तीनों लोकों में अपने यश का विस्तार करते हैं। आपके गुणों का गान करने मात्र से प्राणी महा सुख-दाई सुगुणों को प्राप्त कर लेते हैं।।७।।

जिन चित ध्यान सलिल तुम धारा, ते मुनि तीरथ हैं निरधारा।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जाल में लेत न फाँसी।।८।।

अर्थ : जिनके मन में आपके ध्यानरूपी जल-धारा विद्यमान है, वे मुनि नियम से तीर्थ हैं। हे भगवान! आपके गुणरूपी हंस आपकी शाश्वत सत्तारूपी तालाब में निवास करते हैं। मैं अपने वचनरूपी जाल में उन्हें फँसा नहीं पाता हूँ; अर्थात् आपके गुणों का गान मैं वचनों द्वारा करने में असमर्थ हूँ।।८।।

जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि।
अक्षय शिव-स्वरूप श्रिय स्वामी, पूरण निजानन्द विश्रामी।।९।।

अर्थ : हे भगवान! आप जगत के बन्धु, गुणों के सागर, दया के भण्डार, कल्याण और सर्व-सिद्धिओं के बीजभूत, अविनाशी, शिव-स्वरूप, मोक्ष-लक्ष्मी के स्वामी, परिपूर्ण निजानन्द में विश्राम करने वाले हैं।।९।।

शरणागत सर्वस्व सुहितकर, जन्म-मरण दुख आधि-व्याधि हर।
'सन्त' भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी।।१०।।

अर्थ : हे भगवान! आप अपनी शरण में आने वाले का सर्वांगीण सुहित करने वाले और जन्म, मरण, दुःख, आधि, व्याधि का हरण करने वाले हैं। आपकी भक्ति में अनुरागी सन्त निश्चय ही अजर-अमर पद के पात्र होते हैं।।१०।।

घत्तानन्द : **जय जय सुखसागर, सुजस उजागर, गुणगण आगर, तारण हो।**
जय संत उधारण विपति विडारण, सुख विस्तारण, कारण हो।।११।।

अर्थ : हे सुख के सागर, उज्ज्वल यश को फैलाने वाले, गुण-समूहों के भण्डार, संसार से पार करने वाले! आपकी जय हो, जय हो; सन्तों का उद्धार करने वाले, विपत्तिओं का नाश करने वाले, सुख के कारणों का विस्तार करने वाले! आपकी जय हो।।११।।

तुम गुण गान परम फलदान, सो मंत्र प्रमान विधान करूँ।
जहरी कर्मनि वैरी की कहरी, असहैरी भव की व्याधि हरूँ।।१२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुष्षष्ठि-गुण-संयुक्ताय श्री सिद्ध-परमेष्ठिने महार्घ्यं...।

अर्थ : हे भगवान! आपका गुणगान परम फल/मोक्ष को देने वाला है; अत: मैं मन्त्र के अनुसार विधान कर रहा हूँ; जिससे कर्म रूपी बैरी द्वारा दिए जाने वाले जहरीले, असहनीय दुःखोंमय भव की व्याधि का हरण कर लूँ।।१२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; चौषठ गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

दोहा : **तीन लोक चूड़ामणि, सदा रहो जयवंत।**
विघ्न हरण मंगलकरण, तुम्हें नमैं नित 'संत'।।११।।

अर्थ : तीन लोक के चूड़ामणि/सर्वोत्तम पदार्थ आप सदा जयवन्त रहें। विघ्नों का हरण करने वाले, मंगल को करने वाले आपको सन्त कवि सदा नमन करते हैं।।१३।।

इसप्रकार चतुर्थ पूजन समाप्त हुई।।४।।

एक सौ अट्ठाईस गुण-सहित पंचम पूजन

छप्पय : **ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे,**
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्ग्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्त-सिद्ध-परमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार', ऊपर-नीचे रेफ-युक्त और बिन्दु-सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमशः वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र-भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है।

अन्त में पुनः यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध यंत्र कर्म-शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह-समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करे।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार हो; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार हो; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार हो; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा : **सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व) आदि गुणों से सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

इसप्रकार यन्त्र-स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं–

(चाल – बारहमासा छन्द)

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकांतमणि, मनतें श्रवै हुलसधारा हो।
कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूँ अंतर अनुसारा हो।।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमिरत ही भवपारा हो।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने जन्म-जरा-रोग-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अर्थ : जैसे चन्द्रमा की किरणें पड़ते ही चन्द्रकान्त मणि में से जल की धारा प्रवाहित होने लगती है; उसी प्रकार हे भगवान! आपको देखकर मेरे मन में भक्ति की धारा प्रवाहित होने लगी है। मैं कमलों से सुगन्धित प्रासुक जल द्वारा विधिवत् आपके चरणों की पूजन कर रहा हूँ। तीनों लोकों के स्वामी, लोक के शिखर पर चूड़ामणि के समान विराजमान सिद्ध भगवान के चरणों को मन में धारण कर सुगुणों रूपी चौंषठ से दुगुने/एक सौ अट्ठाईस मणिओं का स्मरण कर रहा हूँ; क्योंकि उनके स्मरण द्वारा संसार से पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए जन्म, जरा, रोग, मृत्यु विनाशन-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं।
सो चंदन नंदनवन भूषण, तुम पदकमल चढ़ावत हैं।। लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

अर्थ : कल्पवासी देवों के समूह, मणिधर/मुकुट में मणि को धारण करने वाले नागकुमार जाति के देवगण जिसकी सुगन्ध को जान कर अपना मद/घमण्ड छोड़कर गन्ध पर आकर्षित हो रहे हैं; नन्दन वन की शोभा बड़ाने वाले उस चन्दन को आपके चरण कमलों में चढ़ा रहा हूँ। तीनों लोकों.............हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं.............संसार ताप-विनाशन-हेतु चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

चंपक ही के भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए।
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कंज नये।। लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

अर्थ : अत्यधिक धवल, सुगन्धित अक्षतों में चम्पक पुष्प के भ्रम से भ्रमर-समूह और चन्द्र

मण्डल के भ्रम से चकवा पक्षी भी चकित हो रहे हैं; उन अक्षतों के पुंज से मैं भगवान के चरण-कमलों की पूजन कर रहा हूँ। तीनों लोकों के स्वामी, लोक के शिखर पर चूड़ामणि के समान विराजमान, सिद्ध भगवान के चरणों को अपने मन में धारण कर, सुगुणों रूपी एक सौ अट्ठाईस मणिओं का स्मरण कर रहा हूँ; क्योंकि उनके स्मरण द्वारा संसार से पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए अक्षय पद की प्राप्ति-हेतु अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

मदन वदन दुतिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे।
पुष्पमाल वासित विशाल सो, भेंट धरत उर काम दहे।।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमिरत ही भवपारा हो।।४।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने काम-बाण-विनाशनाय पुष्पं०।।४।।

अर्थ : कामदेव के मुख की कांति का हरण करने वाले, वर्ण देखने के लिए रति के नेत्र रूपी मँडराते हुए भ्रमर-समूह से युक्त, सुगन्धित, विशाल पुष्प-मालाओं की भेंट चढ़ाने से हृदय का काम नष्ट हो जाता है। तीनों लोकों.................पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं...................कामबाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

चितवत मन, वरणत रसना, रस स्वाद लेत ही तृप्त थये।
जन्मांतर हूँ की क्षुधा निवारै, सो नेवज तुम भेंट धरै।।लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं०।।५।।

अर्थ : चिन्तन करने से मन; वर्णन करने, स्वाद लेने से रसना/जीभ को तृप्त करने वाले नैवेद्य को जन्म-जन्मान्तर की भूख का निवारण करने के लिए आपको भेंट देता हूँ।

तीनों लोकों................पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं ....क्षुधा-रोग-विनाशन-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ५।।

लवमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरण की रास करै।
या बिन तुच्छ विभव निज जानैं, सो दीपक तुम भेंट धरै।।लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं०।।६।।

अर्थ : हे भगवान! आपके प्रति लव/रुचि/भक्ति रूपी अनुपम मणिओं की प्रभा को देव-गण 'इनके बिना हमारा वैभव तुच्छ है' - ऐसा जानकर अपने शीश पर धारण करना चाहते हैं। उन मणिमय दीपों को आपके सम्मुख भेंटरूप में रख रहा हूँ।

तीनों लोकों................पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए मोहान्धकार-विनाशन-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

नीलंजसा सुरी नभ में ज्यों, ऋषभ-भक्ति कर नृत्य कियो।
सो तुम सम्मुख धूप उड़ावत, तिस छवि को तिह भाव लियो।।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमिरत ही भवपारा हो।।७।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं०।।७।।

अर्थ : हे भगवान! आपके सम्मुख जो धूप उड़ा रहा हूँ; उसे देखकर ऐसा लगता है कि मानों ऋषभदेव की भक्तिवश आकाश में नृत्य करने वाली नीलांजना देवी का ही यह अनुसरण कर रहा है। तीनों लोकों के स्वामी, लोक के शिखर पर चूड़ामणि के समान विराजमान, सिद्ध भगवान के चरणों को अपने मन में धारण कर, सुगुणों रूपी एक सौ अट्ठाईस मणिओं का स्मरण कर रहा हूँ; क्योंकि उनके स्मरण द्वारा संसार से पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं .... अष्ट कर्म-दहन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

सेव रंगीले अनार रसीले, केला की ले डाल फली।
डाली हूँ नृपमाली हूँ, नातर प्रासुकता रीति भली।।लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने मोक्ष-फल-प्राप्तये फलं०।।८।।

अर्थ : रंगीले सेब, रसदार अनार, केला की फली हुई डाली इत्यादि सचित्त फलों को तो माली भी राजा के लिए समर्पित करता है; परन्तु मैं तो प्रासुकता की सुन्दर पद्धति के अनुसार प्रासुक/अचित्त फल चढ़ा रहा हूँ। तीनों लोकों........पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं .... मोक्षफल-प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

एक सैं एक अधिक सोहत वसु-जाति अर्घ करि चरण नमूँ।
आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति वमूँ।।लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्ताय सिद्ध-परमेष्ठिने अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं....।।९।।

अर्थ : एक से बड़कर एक अधिक सुन्दर आठ प्रकार के द्रव्यों से अर्घ्य बनाकर आपके चरणों में नमन करता हूँ; आनन्द पूर्वक आरती करता हुआ आर्त-ध्यान छोड़कर आत्म-कल्याण करने के लिए मिथ्या-ज्ञान का त्याग करता हूँ। तीनों लोकों........हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं...........अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

गीता : **निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।

वर दीप माल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती।।१०।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-युक्त-सिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन; उज्ज्वल, अखण्डित अक्षत; मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित श्रेष्ठ दीपों का समूह; धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमशः होने वाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाशकर युगपत्/एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय, जन्मादि के दुःखों को नष्ट कर, असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्य पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य; अनन्त चतुष्टय के भण्डार, भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद की प्राप्ति-हेतु पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

एक सौ अट्ठाईस गुणों के अर्घ्य

त्रोटक : **निरबाध सु तत्त्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो।**
अति शुद्ध सुभाविक क्षायक है, नमुँ दर्श महा सुखदायक है।।१।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लेशमात्र भी शेष रखे विना तत्त्व के सामान्य-विशेषात्मक सर्वांग स्वरूप को निर्बाधरूप से जानने/मानने में व्यक्त हुए अत्यन्त शुद्ध, स्वाभाविक, महा सुख-दायक क्षायिक दर्शन के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो।
निरअंस चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सुज्ञान प्रमानत हैं।।२।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोह से रहित, क्रोध से रहित, बाधा से रहित, पर-भावों के कारण विराधित नहीं होनेवाले, सम्पूर्ण चर-अचर/चेतन-अचेतन पदार्थों को जाननेवाले ज्ञान से हम स्वत:-सिद्ध सर्वज्ञ भगवान को प्रमाणित करते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञान के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

सब राग-विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन हैं।
पर में न कबहुं निज भाव वहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै।।३।।

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार के राग-द्वेष का निवारक, अपने भाव से स्वयं को ही धारण करने वाला, पर में कभी भी अपने भाव को नहीं बहाने वाला/पर से रंच-मात्र भी प्रभावित नहीं होने वाला ही विशिष्ट सम्यक्चारित्र है।

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्र के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

उतपाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नहीं निसरैं।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहाँ।।४।।

ॐ ह्रीं अस्तित्व-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्पाद-व्यय से बाधित नहीं होने वाले, परिणाम स्वभाव को नहीं छोड़ने वाले, अस्तित्व नामक महान धर्म को धारण करने वाले सिद्ध भगवान के चरणों की हम यहाँ ही शीश झुकाकर पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अस्तित्व धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

निज भावनतैं व्यतिरिक्त न हो, प्रनमों, गुणरूप गुणातम हो।
यह वस्तु सुभाव सदा विलसौ, हम पूजत हैं सब पाप नसौ।।५।।

ॐ ह्रीं वस्तुत्व-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने भावों से पृथक् नहीं होने वाले, गुणरूप, गुणात्मक वस्तु के स्वभाव में सदा विलास करने वाले सिद्ध भगवान को प्रणाम कर; अपने सभी पापों को नष्ट करने के लिए हम उनकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं वस्तुत्व धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

परमाण न जानत हैं तिनकौं, छिन रोग न आवत है जिनकौं।
अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।६।।

ॐ ह्रीं अप्रमेय-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हमारा क्षायोपशमिक ज्ञान जिसका प्रमाण नहीं जान पाता है; जिन्हें क्षण-मात्र के लिए भी किसी भी प्रकार का, कोई भी रोग नहीं होता है; उन अप्रमेय महान गुणों के धारक

सिद्ध भगवान की, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अप्रमेय/अनन्त धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

गुणपर्ज प्रमाण दसा नित ही, निजरूप न छाँडत है कित ही।
जिन वैन प्रमाण सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।७।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघु-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने स्वरूप को कभी भी, किसी भी रूप में नहीं छोड़ने वाले, गुण-पर्यायों के अनुसार ही सदा अपनी दशा धारण करने वाले सिद्ध भगवान को जिनेन्द्र के वचनानुसार स्वीकार कर, पापों को नष्ट करने के लिए हम उनकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्व धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ७।।

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं।
मुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।८।।

ॐ ह्रीं चेतनत्व-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके जितने जो भी परिणाम हैं, उन सभी को चेतन-स्वरूप ही जानना चाहिए। इसप्रकार मुख्यरूप से चेतनता गुण-धारक आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं चेतनत्व धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

जिन अंग उपंग शरीर नहीं, जिन रंग प्रसंग सु तीर नहीं।
नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।९।।

ॐ ह्रीं अमूर्तित्व-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अंग, उपांग, शरीर, रंग/वर्ण, अन्य के संबंध, किनारे/अन्तिम बिन्दु से रहित आकाश के समान अमूर्तता को धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अमूर्तत्व धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

पर कौ न कदाचित धर्म गहैं, निज धर्म स्वरूप न छाँड़त हैं।
अति उत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१०।।

ॐ ह्रीं समकित-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य के किसी भी धर्म को कभी भी ग्रहण नहीं करने वाले, अपने धर्म स्वरूप को नहीं छोड़ने वाले, अति उत्तम धर्म के धारक आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

जितनें कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसैं।
सुख-ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।११।।

ॐ ह्रीं ज्ञान-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने सभी प्रकार के सभी परिणामों को ज्ञान-स्वरूप से भली-भाँति जान लिया है। सुख-स्वरूपी ज्ञानमय गुण के धारक आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञान धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता बिन भेद कही।
निज जीव सुभाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१२।।

ॐ ह्रीं जीव-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सदा परिपूर्ण, अभेदरूप चिन्मय, चिन्मूर्ति ही यथार्थ जीव है। अपने जीव स्वभाव को भली-भाँति धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं जीव धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

मन कौ नहिं बेग लखावत हैं, जिस बैन नहीं बतलावत हैं।
अति सूक्षम भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१३।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मन का तीव्र वेग भी जिसे नहीं देख पाता है, वचन भी जिसे बता नहीं सकते हैं; उस अचिन्त्य, वचन-अगोचर अति सूक्ष्म भाव को भली-भाँति धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

परघात न आप न घात करैं, इक खेत समूह अनन्त वरैं।
अवगाह सरूप सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१४।।

ॐ ह्रीं अवगाह-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक ही क्षेत्र में समूह रूप से उत्कृष्ट अनन्त रहते हुए भी पर का घात या अपना घात नहीं करने वाले अवगाह स्वरूप को भली-भाँति धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अवगाह धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

अविनाश सुभाव विराजत हैं, बिन बाध स्वरूप सु छाजत हैं।
यह धर्म महा गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१५।।

ॐ ह्रीं अव्याबाध-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अविनाशी स्वभाव में विराजमान आप विना बाधा या विना व्याधिमय निर्बाध या

निर्व्याधि स्वरूप में शोभायमान हैं। इस महान धर्म, गुण को धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अव्याबाध धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

निजसौं निज की अनुभूति करैं, अपनो परसिद्ध सुभाव वरैं।
निज ज्ञान प्रतीति सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१६।।

ॐ ह्रीं स्व-संवेदन-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वयं से स्वयं की अनुभूति करने वाले अपने प्रसिद्धिमय श्रेष्ठ स्वभाव को धारण करने वाले, अपनी ज्ञान-प्रतीति के भली-भाँति धारक आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं स्वसंवेदन ज्ञान के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदीप्त रहैं नित ही।
यह ताप स्वरूप उधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१७।।

ॐ ह्रीं स्वरूप-ताप-तपसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपनी प्रकाशमई ज्योति स्वरूप से आप सदा ही देदीप्यमान हैं। इस ताप/तेज स्वरूप को धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं स्वरूप में तापवान तप के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७।।

निजऽनंत चतुष्टय राजत हैं, दृग ज्ञान बला सुख छाजत हैं।
यह आप महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१८।।

ॐ ह्रीं अनन्त-चतुष्टयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शोभायमान अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त बल, अनन्त सुखरूप अपने अनन्त में विराजमान, इस महान गुण के धारक आपकी, हम पापों को नष्ट करने-हेतु पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त चतुष्टय के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८।।

सुख समकित आदि महागुण कौ, तुम साधित सिद्ध भये अब हौ।
यह उत्तम भाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं।।१९।।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वादि-गुणात्मक-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सुख, सम्यक्त्व आदि महान गुणोंमय आपकी साधना करने से ही सिद्ध हुए हैं, हो रहे हैं और होंगे। इस उत्तम भाव को भली-भाँति धारण करने वाले आपकी, हम पापों को नष्ट करने के लिए पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वादि गुणात्मक सिद्धों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

दोहा : **निश्चय पंचाचार सब, भेद रहित तुम साध।**
चेतन की अति शक्ति में, सूचत सब निरबाध।।२०।।

ॐ ह्रीं पंचाचाराचार्येभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचाररूप सभी भेदों से रहित निश्चय पंचाचार की साधना द्वारा आप चेतन की अनन्त शक्तिओं में एक-दूसरे से शून्य और बाधा-रहित रूप से रहते हैं।

ॐ ह्रीं पंचाचार-युक्त आचार्यों के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०।।

चौपाई : **सब विकलप तजि भेद स्वरूपी, निज अनुभूति मग्न चिद्रूपी।**
निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजूँ भाव भेद हम नासो।।२१।।

ॐ ह्रीं रत्नत्रय-प्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भेद स्वरूपी सभी विकल्पों का त्याग कर चैतन्यमय आत्मानुभूति में मग्न हो निश्चय रत्नत्रय का प्रकाश करने वाले सिद्ध भगवान की, भाव-भेदों को नष्ट करने के लिए हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं रत्नत्रय-प्रकाश के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

करण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज-भाव सँवारी।
करता भेद आप परणामी, भेदाभेद रूप प्रणमामी।।२२।।

ॐ ह्रीं स्व-स्वरूप-साधक-सर्व-साधुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : करणरूपी भावों का भेदन कर रत्नत्रय को धारण करने वाले; कर्मों का भेदन कर निज भाव को सम्हालने वाले; कर्ता भाव का भेदन कर स्वयं परिणमन करने वाले भेदाभेद रूप आपके लिए प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं स्व-स्वरूप साधक सभी साधुओं के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं....।।२२।।

(जीवाधिकरण आस्रव एक सौ आठ प्रकार से होता है। संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ रूप कार्य मन, वचन, काय - इन तीनों से होते हैं। ये सभी कृत, कारित, अनुमोदना रूप हैं तथा क्रोध, मान, माया, लोभ - इन चार कषायों के वश होकर होते हैं। इसप्रकार (३x३x३x४= १०८) ये सभी मिलकर एक सौ आठ हो जाते हैं। कार्य करने का संकल्प करना, संरम्भ; उसके अनुरूप-अनुकूल सामग्री एकत्रित करना, समारम्भ; कार्य करने लगना, आरम्भ है। ये सभी स्वयं करना, कृत; दूसरों से कराना, कारित; करते हुए की प्रशंसा करना, अनुमोदना है।

यहाँ इन सभी भावों से रहित सिद्ध भगवान को नमन करते हुए अर्घ्य समर्पित कर रहे हैं। उनमें से सर्व-प्रथम क्रोध के वश किए गए मनो-योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ

और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान का तेईस से इकतीस पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा गुणानुवाद किया जा रहा है।)

मनोयोग कृत जिय संसारी, क्रोधारम्भ करत दुखकारी।
तासों रहित सिद्ध भगवाना, अंतर शुद्ध करूँ तिन ध्याना।।२३।।

ॐ ह्रीं अकृत-मन:-क्रोध-संरम्भ-मनो-गुप्तये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के वश हो मनोयोग द्वारा किया गया आरम्भ संसारी जीव को दुखी करता है। सिद्ध भगवान उनसे रहित हैं; अत: अन्तर्मन शुद्ध करने के लिए उनका ध्यान करता हूँ।
ॐ ह्रीं मन द्वारा नहीं किए गए क्रोधमय संरम्भ वाले मनोगुप्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं..।।२३।।

पर के मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा।
सिद्धराज प्रणमूँ तिस त्यागी, निर्विकल्प निज गुण के भागी।।२४।।

ॐ ह्रीं अकारित-मन:-क्रोध-संरम्भ-निर्विकल्प-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के वश हो दूसरों के मन में संरम्भ प्रगट करने के लिए मूर्ख जीव अनेक प्रकार के आरम्भ करता है। उन सबका त्यागकर निर्विकल्परूप में अपने गुणों का आस्वादन करने वाले सिद्ध भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोधमय संरम्भ को मन से नहीं कराने वाले निर्विकल्प धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४।।

भुजंगप्रयात : **मनोयोग रंभा प्रशंसीक क्रोधा, निजानंद को मान ठाने अबोधा।**
महानिंदनी भाव को त्याग दीना, निजानंद को स्वाद ही आप लीना।।२५।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मन:-क्रोध-संरम्भ-सानन्द-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के वश हो मनो-योग द्वारा किए गए आरम्भ की प्रशंसा कर यह अज्ञानी उसमें आनन्द मानता है। इस महा निन्दनीय भाव का त्याग कर, हे सिद्ध भगवान! आप स्वयं में स्वयं से ही निजानन्द का अनुभव कर रहे हैं।

ॐ ह्रीं क्रोधमय संरम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले सानन्द धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५।।

मनोयोग क्रोधी समारंभ धारी, सदा जीव भोगे महाखेद भारी।
महानंद आख्यात को भाव पायो, नमों सिद्ध सो दोष नाहीं उपायो।।२६।।

ॐ ह्रीं अकृत-मन:-क्रोध-समारम्भ-परमानन्दाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के वश हो मनो-योग द्वारा स्वयं कृत समारम्भ को धारण करने वाला जीव सदा ही महान भारी/अत्यधिक खेद को भोगता है। हे सिद्ध भगवान! आपने प्रसिद्ध आत्मीक अतीन्द्रिय आनन्द को प्राप्त कर उस दोष को पूर्णतया नष्ट कर दिया है; आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोधमय समारम्भ को मन से नहीं करने वाले परम आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६।।

दोहा : **समारम्भ क्रोधित सु मन, परकारित दुख नाहिं।**
परमातम पद पाइयो, नमूँ सिद्ध गुण ताहिं।।२७।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनः-क्रोध-समारम्भ-परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के वश हो मनो-योग द्वारा दूसरों से कराए गए समारम्भ वाला दुःख आपको नहीं है। आपने परमात्मा पद प्राप्त कर लिया है। उस गुण के लिए सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोधमय समारम्भ को मन से नहीं कराने वाले परम आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७।।

भुजंगप्रयात : **समारम्भ क्रोधी मनोयोग माहीं, धरे मोदना भाव कौं जीव ताहीं।**
भये आप संतुष्ट ये त्याग भावा, नमूँ सिद्ध सो दोष नाहीं उपावा।।२८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनः-क्रोध-समारम्भ-परमानन्द-संतुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के वश हो मनो-योग द्वारा अनुमोदना भाव वाले समारम्भ को यह संसारी जीव धारण करता है। आप इस भाव का त्याग कर स्वयं में संतुष्ट हो इस दोष से पूर्णतया रहित हैं। इन सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोधमय समारम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले परम आनन्द में सन्तुष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८।।

पद्धरि : **निज क्रोधित मन आरम्भ ठान, जग जिय दुख में सुख रहे मान।**
सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूँ धर हिये चाव।।२९।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनः-क्रोधारम्भ-स्व-संस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने क्रोधित मन से आरम्भ करते हुए जगत के ये जीव दुःख में सुख मान रहे हैं। इस संक्लेश भाव का त्याग कर आप सिद्ध हो गए हैं। मन में आपके प्रति रुचि धारण कर आपको नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोधमय आरम्भ को मन से नहीं करने वाले स्व संस्थान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९।।

क्रोधित मन सों आरम्भ हेत, पर प्रेरित निज अपराध लेत।
जग जीवन की विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत।।३०।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनः-क्रोधारम्भ-बन्ध-संस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोधित मन से आरम्भ करने के लिए दूसरों से प्रेरित होकर स्वयं अपराध करने

वाली, जगत के जीवों की इस विपरीत पद्धति का त्याग कर आप पवित्र, श्रेष्ठ, मोक्ष स्वरूप हो गए हैं।

ॐ ह्रीं क्रोधमय आरम्भ को मन से नहीं कराने वाले बन्ध संस्थान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०।।

क्रोधित मन सों आरम्भ देख, जिय मानत है आनन्द विशेष।
तुम सत्य सुखी इह भाव क्षार, भये सिद्ध नमूँ उर हर्ष धार।।३१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनः-क्रोधारम्भ-संस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोधित मन से आरम्भ देखकर यह जीव विशेष आनन्द मानता है। आप इस भाव का पूर्णतया नाशकर वास्तविक सुखी सिद्ध हो गए हैं। मैं मन में हर्षित होकर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोधमय आरम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले संस्थान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१।।

(अब, इन बत्तीस से लेकर चालीस पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा मान के वश किए गए मनो-योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान का गुणगान किया जा रहा है।)

दोहा : **मान योग मन रंभ में, वरतत हैं जग जीव।**
भये सिद्ध संक्लेश तजि, तिन पद नमूँ सदीव।।३२।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-मानारम्भ-साधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान के वश हो मनो-योग द्वारा किए गए आरम्भ में ये जगत जीव लगे रहते हैं। इस संक्लेश का त्याग कर सिद्ध होने वाले भगवान के चरणों में हम सदैव नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं मान संबंधी संरम्भ को मन से नहीं करने वाले साधर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२।।

मान उदय मन योगतें, पर कौं रम्भ करान।
त्याग भये परमातमा, नमूँ सरन पर हान।।३३।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-मान-संरम्भ-अनन्य-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान के उदय से मनो-योग द्वारा दूसरों से आरम्भ कराने संबंधी भाव का त्याग कर परमात्मा हुए भगवान को अन्य की शरण छोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान संबंधी संरम्भ को मन से अन्य द्वारा नहीं कराने वाले अनन्य शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३।।

मान सहित मन रंभ में, जग जिय राखैं चाव।
नमों सिद्ध परमातमा, जिन त्यागौं इह भाव।।३४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-मान-संरम्भ-सुगत-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – मान-सहित मन संबंधी संरम्भ में जगत के जीव रुचि रखते हैं। जिन्होंने इस भाव का त्याग कर दिया है, उन सिद्ध परमात्मा के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान संबंधी संरम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले सुगत भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।। ३४।।

अडिल्ल : **समारंभ परिवर्तमान युत मन धरै।**
विकलपमइ उपकरण विधि इकठे करै।।
महाकष्ट कौ हेत भाव यह ना गहौ।
प्रणमूँ सिद्ध अनंत सुखातम गुण लहौ।।३५।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-मान-समारम्भ-सुखात्म-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान पूर्वक होने वाले मनो-योग संबंधी समारम्भ में कार्य के अनुसार विकल्पों में अनेक प्रकार की सामग्री एकत्रित करता रहता है। महा कष्ट के कारणभूत इस भाव को जिन्होंने स्वीकार नहीं किया है और अनन्त सुखात्मक गुणों को ग्रहण किया है; उन सिद्ध भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान संबंधी समारम्भ को मन द्वारा नहीं करने वाले सुखात्म गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५।।

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करै।
समारंभ पर कृत्य करावन विधि वरै।।
तहाँ कष्ट कौ हेत भाव यह ना गहौ।
प्रणमूँ सिद्ध अनन्त गुणातम पद लहौ।।३६।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-मान-समारभ-अनन्य-गताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित मनो-योग द्वारा यह जीव दूसरों से समारम्भ कराने की विधि का चिन्तन करता रहता है। अत्यधिक कष्ट के कारणभूत इस भाव को स्वीकार नहीं कर जिन्होंने अनन्त गुणात्मक पद प्राप्त किया है; उन सिद्ध भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान संबंधी समारम्भ को मन द्वारा नहीं कराने वाले अनन्य-गत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६।।

जोड़े चित न समाज विविध जिस काज में।
समारंभ तिस नाम सोमत जिनराज में।।

माने मानी मन आनंद सु निमित्त से।
नमूँ सिद्ध हैं अतुल वीर्य त्यागत तिसे।।३७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-मान-समारम्भ-अनन्त-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : किसी कार्य को करने के लिए अनेक साधन इकट्ठे करना, जिनेन्द्र भगवान के मत में समारम्भ कहलाता है। मान-सहित मनो-योग द्वारा कार्य के कारण मिलाकर संसारी जीव आनन्द मानता है। इसका त्याग करने वाले अनन्त वीर्य-सम्पन्न सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान संबंधी समारम्भ की मन द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले अनन्त वीर्य के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३७।।

अशुभकाज परिवर्त नाम आरंभ कौ।
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहौ।।
जगवासी जिस नित प्रति पाप उपाय हैं।
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय हैं।।३८।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-योग-मानारम्भ-अनन्त-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अशुभ कार्य में प्रवृत्ति करना, आरम्भ है। मान-सहित मन द्वारा उसमें उद्यम कर जगवासी ये संसारी जीव सदैव पापों का संचय करते हैं। इनसे रहित अनन्त सुख के स्वामी सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान संबंधी आरम्भ को मन से नहीं करने वाले अनन्त सुख के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३८।।

दोहा : **मनो मान आरम्भ के, भये अकारित आप।**
अतुल ज्ञानधारी भये, नमत नसैं सब पाप।।३९।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-मानारम्भ-अनन्त-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित मन संबंधी आरम्भ को अन्य से नहीं कराने वाले, अनन्त ज्ञान के धारी आपको नमन करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं मान संबंधी आरम्भ को मन से नहीं कराने वाले अनन्त ज्ञान के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३९।।

मनो मान आरम्भ में, नानुमोदि भगवंत।
गुण अनंत युत सिद्ध पद, पूजत हैं नित संत।।४०।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-मानारम्भ-अनंत-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित मन संबंधी आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले, अनन्त गुण-सम्पन्न

सिद्ध पद में विराजमान भगवान की सन्त कवि सदा पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं मान संबंधी आरम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले अनन्त गुण के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।४०।।

(अब, इन इकतालीस से उनन्चास पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा माया के वश किए गए मनो-योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान का यशोगान किया जा रहा है।)

गीता : **जो अशुभ काज विकल्प हो, संरम्भ मनयुत कुटिलता।**
कर कर अनादित रंक जिय, बहु भाँति पाप उपावता।।
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्ध ब्रम्हस्वरूप हौ।
हम पूजि हैं निज भक्तियुत, तुम भक्त वत्सलरूप हौ।।४१।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-माया-संरम्भ-ब्रम्ह-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अशुभ कार्य करने के लिए कुटिलता पूर्वक मनो-योग से संरम्भ करता हुआ आनन्द मानकर यह दीन जीव अनेक प्रकार के पापों का संचय करता है। आप इन सभी विभावों का त्याग कर ब्रम्ह स्वरूप से सिद्ध हो गए हैं। भक्त-वात्सल्यरूप आपकी हम भक्ति पूर्वक सदा पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं माया संबंधी संरम्भ को मन से नहीं करने वाले ब्रम्ह स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१।।

दोहा : **मायावी मनतें नहीं, कबहुँ आरम्भ कराय।**
सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूँ सदा मन लाय।।४२।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-माया-संरम्भ-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कभी भी मायावी मन द्वारा अन्य से संरम्भ नहीं कराने वाले, चेतना गुण-सहित सिद्ध भगवान को सदा मन में लाकर/उनके गुणों में मन स्थिर कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया संबंधी संरम्भ को मन से नहीं कराने वाले चेतन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२।।

मायावी मनतैं कभी, रंभानन्द न होय।
सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूँ सदा मद खोय।।४३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-माया-संरम्भ-अनन्य-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मायावी मन द्वारा संरम्भ में कभी भी आनन्दित नहीं होने वाले, अनन्य स्वभाव-युक्त सिद्ध के लिए सदा मान का त्याग कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया संबंधी संरम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले अनन्य स्वभाव के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।४३।।

पद्धड़ी : **मायावी मन तैं समारंभ, नहिं करत सदा हो अचल खंभ।**
तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित रमन करौ धरि मन उमंग।।४४।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-माया-समारम्भ-स्वानुभूति-रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मायावी मन से समारम्भ नहीं करने वाले, सदा स्तम्भ के समान अचल रहने वाले, सदा स्वानुभूति के साथ रमण करने वाले सिद्ध भगवान को, सदा उत्साहित मन से नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया संबंधी समारम्भ को मन द्वारा नहीं करने वाले स्वानुभूति-रत के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।४४।।

मन वक्र द्वार उपकर्ण ठान, विधि समारंभ कौ नहिं करान।
निज साम्यधर्म में रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमों पद धार चित्त।।४५।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-माया-समारंभ-साम्य-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मायावी से कार्य की सामग्री को एकत्रित करने रूप समारम्भ को अन्य से नहीं कराने वाले, अपने साम्य/समता रूप धर्म में लीन रहने वाले सिद्धों के लिए उनके चरणों को हृदय में धारण कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया संबंधी समारम्भ को मन द्वारा अन्य से नहीं कराने वाले साम्य-धर्म के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।। ४५।।

दोहा : **मायावी मन में नहीं, समारंभ आनन्द।**
नमों सिद्धपद परमगुरु, पाऊँ पद सुखवृन्द।।४६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-माया-समारंभ-गुरवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मायावी मन से हुए समारम्भ में आनन्दित नहीं होने वाले, परम-गुरु सिद्ध पद के लिए अनन्त सुख प्राप्त करने-हेतु नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया संबंधी समारम्भ की मन द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले गुरु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६।।

पद्धड़ी : **बहु विधि कर जोड़े अशुभ काज, आरम्भ नाम हिंसा समाज।**
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूँ यह विधि हरेय।।४७।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-माया-आरम्भ-परम-शांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मायावी मन से हिंसात्मक अशुभ कार्यों को अनेक प्रकार से करने रूप आरम्भ की पद्धति का हरण करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया संबंधी आरम्भ को मन से नहीं करने वाले परम शान्त के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।४७।।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान।।४८।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-माया-आरंभ-निराकुलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पूर्वोक्त विधि को नहीं कराते हुए अर्थात् मायावी मन से हिंसात्मक अशुभ कार्यों मय आरम्भ को दूसरों द्वारा नहीं कराने वाले, निराकुल, अनुपम सुखमय, सर्वोत्तम महान पद को प्राप्त सिद्ध भगवान की, हृदय में भक्ति धारण कर हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं माया संबंधी आरम्भ को मन से नहीं कराने वाले निराकुल के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।४८।।

दोहा : **मायावी आरम्भ करि, मन में आनन्द मान।**
सो तुम त्यागौ भाव यह, भये परम सुख खान।।४९।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-माया-आरंभ-अनन्त-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया से युक्त आरम्भ कर मन में आनन्द मानने वाले भाव का त्यागकर आप परम सुख के भण्डार हो गए हैं।

ॐ ह्रीं माया संबंधी आरम्भ की मन से अनुमोदना नहीं करने वाले अनन्त सुख के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।। ४९।।

(अब, इन पचास से अट्ठावन पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा लोभ के वश किए गए मनो-योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की पूजन की जा रही है।)

लोभी मन द्वारै नहीं, करैं सदा समरंभ।
हम अनन्त-दृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ।।५०।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-लोभ-संरम्भ-अनन्त-दृगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन के द्वारा कभी भी संरम्भ नहीं करने वाले अनन्त दृग/दर्शनमय सिद्ध भगवान की हम मन को स्थिर कर पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी संरम्भ को मन से नहीं करने वाले अनन्त दृग/दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०।।

लोभी मन समरंभ कौं, पर-सों नाहिं कराय।
दृगानन्द भावातमा, नमूँ सिद्ध मन लाय।।५१।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-लोभ-संरम्भ-दृगानन्द-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन के द्वारा कभी भी दूसरों से संरम्भ नहीं कराने वाले दृगानन्द भावात्मा/दर्शन-आनन्द मय भाव स्वरूपी सिद्ध भगवान को, मन में धारण कर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी संरम्भ को मन द्वारा दूसरों से नहीं कराने वाले दृगानन्द भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१।।

लोभी मन समरंभ में, मानै नहिं आनन्द।
नमूँ नमूँ परमातमा, भये सिद्ध जगवंद।।५२।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-लोभ-संरम्भ-सिद्ध-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन के द्वारा किए गए संरम्भ-युक्त भावों में आनन्द नहीं मानने वाले, जगत-वन्द्य सिद्ध परमात्मा के लिए बारम्बार नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी संरम्भ की मन द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले सिद्ध-भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२।।

समारम्भ नहिं करत हैं, लोभी मन के द्वार।
चिदानंद चिद्देव तुम, नमूँ लहूँ पद सार।।५३।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-लोभ-समारम्भ-चिद्देवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन से समारम्भ नहीं करने वाले चिदानन्द चैतन्यमय देव के लिए, उत्कृष्ट पद की प्राप्ति-हेतु नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी समारम्भ को मन द्वारा नहीं करने वाले चित् देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३।।

पर सौं भी पूर्वोक्त विधि, कबहूँ नहीं कराय।
निराकार परमात्मा, नमूँ सिद्ध हर्षाय।।५४।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-लोभ-समारंभ-अनाकाराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पूर्वोक्त विधि से लोभी मन द्वारा दूसरों से भी समारम्भ नहीं कराने वाले, निराकार सिद्ध परमात्मा के लिए, हर्षित होकर नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी समारम्भ को मन द्वारा दूसरों से नहीं कराने वाले अनाकार/आकार-रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४।।

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं।
चित्सरूप साकारपद, धारत हूँ उरमाहिं।।५५।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-लोभ-समारम्भ-साकाराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इसी प्रकार पूर्वोक्त विधि से/लोभी मन द्वारा किए गए समारम्भ में हर्षित नहीं होने वाले, चित्स्वरूपी साकार पद को हृदय में धारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी समारम्भ की मन द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले साकार/स्वरूप-सहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५।।

रचना हिंसा काज की, लोभी मन के द्वार।
नहीं करैं है ते नमूँ, चिदानंद पद सार।।५६।।

ॐ ह्रीं अकृत-मनो-लोभारंभ-चिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन के द्वारा हिंसादि कार्यों का आरम्भ नहीं करने वाले, सारभूत पद चिदानन्द के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी आरम्भ को मन द्वारा नहीं करने वाले चिदानन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६।।

लोभी मन प्रेरित नहीं, पर कौ आरंभ हेत।
चिन्मय रूपी पद धरैं, नमूँ लहूँ निज खेत।।५७।।

ॐ ह्रीं अकारित-मनो-लोभारंभ-चिन्मय-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन द्वारा दूसरों को आरम्भ करने के लिए प्रेरित नहीं करने वाले, चिन्मय पद को धारण करने वाले सिद्ध भगवान को, अपना क्षेत्र/मोक्ष-प्राप्त करने-हेतु नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी आरम्भ को मन द्वारा दूसरों से नहीं कराने वाले चिन्मय स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७।।

मन लोभी आरंभ में, आनंद लहे न लेश।
निजपद में नित रमत हैं, ध्याऊँ भक्ति विशेष।।५८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-मनो-लोभारंभ-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभी मन द्वारा किए गए आरम्भ में रंच-मात्र भी आनन्दित नहीं होने वाले, सदा निज पद में ही रमण करने वाले सिद्ध भगवान का विशेष भक्ति पूर्वक ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोभ संबंधी आरम्भ की मन द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८।।

(अब, इन उनषठ से षड़षठ पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा क्रोध के वश किए गए वचन योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

अडिल्ल : **क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोग कौ।**
रचना विधि संकल्प नाम समरंभ सौ।।
तामें धरैं प्रवृत्ति पाप उपजावते।
नमूँ सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते।।५९।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-क्रोध-संरम्भ-वाग्गुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोधित उपयोग पूर्वक वचन योग द्वारा कार्य करने का संकल्प करना, संरम्भ है। उनमें प्रवृत्ति कर जीव पापों का बन्ध करता है। उन भावों के विना वचन गुप्ति प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा संरम्भ नहीं करने वाले वचन गुप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९।।

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावहीं।
वचनयोग करि विधि संरम्भ करावहीं।।
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो।
नमूँ उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो।।६०।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-क्रोध-संरम्भ-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोधरूपी अग्नि से अपने उपयोग को जलाकर/क्रोध से अत्यधिक आकुलित हो वचन योग द्वारा संरम्भ की विधि कराने वाले विभावों का त्याग कर आप स्वभाव स्वरूप, चिदानन्दरूप हो गए हैं। मन में आनन्दित हो आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा संरम्भ नहीं कराने वाले स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०।।

सोरठा : **क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरंभ में।**
सो तुम भाव विडार, नमूँ स्वानुभव लब्धियुत।।६१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-क्रोध-संरम्भ-स्वानुभव-लब्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त अपने वचनों द्वारा संरम्भ की अनुमोदना करने वाले भावों का विनाशकर स्वानुभव लब्धि-युक्त आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले स्वानुभव लब्धि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१।।

दोहा : **क्रोध सहित वाणी नहीं, समारंभ परवृत्त।**
स्वानुभूति रमणी रमण, नमूँ सिद्ध कृतकृत्य।।६२।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-क्रोध-समारम्भ-स्वानुभूति-रमणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त वचनों द्वारा समारम्भ में प्रवृत्ति नहीं करने वाले, स्वानुभूति रमणी के साथ रमण करने वाले, कृतकृत्य हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा समारम्भ नहीं करने वाले स्वानुभूति रमण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२।।

समारंभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार।
नमूँ सिद्ध इस कर्म बिन, धर्मधरा साधार।।६३।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-क्रोध-समारंभ-साधारण-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त वचनों द्वारा दूसरों को प्रेरित कर समारम्भ कराने वाले कर्म/भाव से रहित, धर्मरूपी धरा के आधारभूत सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा समारम्भ नहीं कराने वाले साधारण धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३।।

समारंभ मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध।
नमूँ सिद्ध या बिन लहो, परम शांति सुख बोध।।६४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-क्रोध-समारंभ-परम-शांताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त समारम्भ मय वचनों द्वारा हर्षित होने वाले भावों के विना ही परम शान्ति, सुख, बोध मय सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा समारम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले परम शान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४।।

मोतियादाम: वैर वचयोग धरै जियरोष, करैं विधि भेद आरम्भ सदोष।
तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूँ परमामृत तुष्ट अवार।।६५।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-क्रोधारम्भ-परमामृत-तुष्टाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बैर मय क्रोध-युक्त वचन योग पूर्वक ये जीव अनेक प्रकार के दोष पूर्ण आरम्भ करते हैं। इन भावों का पूर्णतया त्यागकर सुख-कारक परम अमृत से सदा संतुष्ट रहने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा आरम्भ नहीं करने वाले परम अमृत-तुष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।। ६५।।

अकारित बैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार आरम्भ अबोध।
भये समरूप महारस धार, नमैं हम सिद्ध लहैं भवपार।।६६।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-क्रोधारम्भ-सम-रसाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त वचनों द्वारा महा दु:ख-कारक, अज्ञानमय आरम्भ नहीं कराने वाले, समता रूप महा रस को धारण करने वाले सिद्ध भगवान के लिए, संसार से पार होने-हेतु हम नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा आरम्भ नहीं कराने वाले सम-रस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६।।

दोहा : **नानुमोद आरम्भ में, क्रोध सहित वच द्वार।**
परम प्रीति निज आत्मरति, नमूँ सिद्ध सुखकार।।६७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-क्रोधारम्भ-परम-प्रीतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त वचनों द्वारा आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले, अपनी आत्म-स्थिरता में ही परम प्रीति के धारक, सुख-कारक सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त वचन द्वारा आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाली परम प्रीति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७।।

(अब, इन अड़षठ से छिहत्तर पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा मान के वश किए गए वचन योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की स्तुति करते हैं।)

अडिल्ल : **वचन द्वार संरम्भ मानयुत के करैं,**
जोड़ करण उपकरण मानसों ऊचरैं।
नानाविधि दुखभोग निजातम को हरैं,
नमूँ सिद्ध या बिन अविनश्वर पद धरैं।।६८।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-मान-संरम्भ-अविनश्वर-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त वचनों द्वारा संरम्भ करते हुए सामग्री जोड़ने का विचार कर मान-सहित आचरण करने वाले जीव अनेक प्रकार के दु:ख भोगते हुए निजात्मा का घात करते हैं। इन भावों के विना ही अविनश्वर पद धारण करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से संरम्भ नहीं करने वाले अविनश्वर धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८।।

मान प्रकृति करि उदै करावै ना कदा,
वचनन करि संरंभ भेद वरणूँ यदा।
मन इन्द्रिय अव्यक्तस्वरूप अनूप हौ,
नमूँ सिद्ध गुणसागर स्वातमरूप हौ।।६९।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-मान-संरम्भ-अव्यक्त-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त वचनों द्वारा कभी भी संरम्भ कराने वाले भावों के उदय से सदा रहित; मन और इन्द्रिय से अव्यक्त/अगोचर स्वरूपी; अनुपम गुणों के भण्डार, स्वात्मरूप सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से संरम्भ नहीं कराने वाले अव्यक्त स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९।।

सोरठा : **नानुमोद वच योग, मान सहित संरम्भ मय।**
दुर्लभ इन्द्री भोग, परम सिद्ध प्रणमूँ सदा।।७०।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-मान-संरम्भ-दुर्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त वचन योग से संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले, इन्द्रियों के दुर्लभ भोग्य/विषय नहीं बनने वाले, परम सिद्ध भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले दुर्लभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०।।

चौपाई : **समारंभ निज वैनन द्वार, करत नहीं है मान सँभार।**
ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य है निर-आकार।।७१।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-मान-समारंभ-परम-गम्य-निराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान-सहित, चिन्मूर्ति के सार, परम गम्य/केवलज्ञान द्वारा ज्ञात, निराकार आप मान-युक्त अपने वचनों द्वारा समारम्भ नहीं करते हैं।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से समारम्भ नहीं करने वाले परम गम्य निराकार के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१।।

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारम्भ विधि नाहिं करान।
शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूँ सिद्ध उर आनन्द धार।।७२।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-मान-समारंभ-परम-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त वचन प्रवृत्ति द्वारा समारम्भ की विधि नहीं कराने वाले, शुद्ध स्वभावी, परम सुख-कारक सिद्ध भगवान को आनन्द पूर्वक हृदय में धारण कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से समारम्भ नहीं कराने वाले परम स्वभाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२।।

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय, समारम्भमय हर्षित सोय।
त्यागत एक रूप ठहराय, नमूँ एकत्व गती सुखदाय।।७३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-मान-समारम्भ-एकत्व-गताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त वचन प्रवृत्ति से होने वाले समारम्भ में हर्षित होना छोड़कर, सुख-दायक, एकत्व-गतिमय एक रूप स्थित सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से समारम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले एकत्व-गत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३।।

मानी जिय निज वचन उचार, वरतत है आरम्भ मँझार।
परमातम हो तजि यह भाव, नमूँ धर्म पति धर्मस्वभाव।।७४।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-मानारंभ-परमात्म-धर्मराज-धर्म-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मानी जीव अपने वचनों का उच्चारण करते हुए आरम्भ में प्रवृत्ति करता है। इस भाव का त्याग कर धर्म के स्वामी, धर्म स्वभाव मय परमात्मा हुए भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से आरम्भ नहीं करने वाले परमात्मा धर्मराज धर्म स्वभाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४।।

सोरठा : **मानी बोले बैन, पर-प्रेरण आरम्भ में।**
सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमूँ।।७५।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-मानारम्भ-शाश्वतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दूसरों को आरम्भ में प्रेरित करने के लिए मानी जीव वचन बोलता है। इस पाप का त्याग कर शाश्वत सुखमय आत्मा को प्राप्त करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से आरम्भ नहीं कराने वाले शाश्वत आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५।।

हर्षित वचन उचार, मान सहित आरम्भमय।
सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमूँ।।७६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-मानारम्भ-अमृत-पूरणाय नमः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित आरम्भमय वचनों का उच्चारण कर हर्षित होने वाले भाव को नष्ट कर निजानन्द रस के घन हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त वचन से आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले अमृत-पूरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६।।

(अब, इन सतत्तर से पचासी पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा माया के वश किए गए वचन योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति कर रहे हैं।)

धरि कुटिल भाव जो कहत बैन, संरम्भ रूप पापिष्ट एन।
तुम धन्य-धन्य यह रीति त्याग, हो बेहद धर्मस्वरूप भाग।।७७।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-माया-संरम्भ-अनन्त-धर्मैक-रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कुटिल भाव-सहित वचन बोलकर तीव्रतम पापमय संरम्भ करने वाली पद्धति का त्याग कर परम धर्म स्वरूप हुए आप धन्य हैं! धन्य हैं!!

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से संरम्भ नहीं करने वाले अनन्त धर्म एकरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७।।

मायायुत वचनन कौ प्रयोग, संरम्भ करावत अशुभ योग।
तुम यह कलंक नहिं धरो लेश, हो अमृत शशि पूजूँ हमेश।।७८।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-माया-संरम्भ-अमृत-चन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त वचनों के प्रयोग से संरम्भ करानेरूप अशुभ योगमय कलंक को रंचमात्र भी धारण नहीं करने वाले अमृतमय चन्द्रमा रूपी सिद्ध भगवान की सदा पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से संरम्भ नहीं कराने वाले अमृत-चन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८।।

वच मायायुत संरम्भ कीन, सो पापरूप भाषी मलीन।
तिस त्याग अनेक गुणात्मरूप, राजत अनेक मूरत अनूप।।७९।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-माया-संरम्भ-अनेक-मूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त वचनों द्वारा संरम्भ की प्रशंसा करना, पापरूप मलिन भाव बताया गया है। आप इसका त्याग कर अनेक गुणात्मक, अनेक मूर्ति, अनुपम रूप से सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाली अनेक मूर्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९।।

तुम समारम्भ की विधि विधान, नहिं करत कुटिलता भेद ठान।
हो नित्य निरंजन भाव-युक्त, मैं नमूँ सदा संशय विमुक्त।।८०।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-माया-समारम्भ-नित्य-निरंजन-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कुटिलता-युक्त वचनों द्वारा समारम्भ की भेद पूर्ण विधि नहीं करने वाले, नित्य, निरंजन भाव-युक्त आपके लिए, संशय से विमुक्त होकर सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से समारम्भ नहीं करने वाले नित्य निरंजन स्वभाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०।।

दोहा : **मायायुत निज बैनतैं, समारंभ के हेत।**
नहिं प्रेरित पर को नमूँ, निज गुण धर्म समेत।।८१।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-माया-समारम्भ-आत्मैक-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त अपने वचनों से समारम्भ करने-हेतु दूसरों को प्रेरित नहीं करने वाले, आत्मीक गुणों और धर्मों से सहित सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से समारम्भ नहीं कराने वाले, धर्मों के एक पिण्ड आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१।।

माया करि बोलत नहीं, समारम्भ हर्षाय।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमूँ, नमूँ सिद्ध मन लाय।।८२।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-माया-समारंभ-परम-सूक्ष्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त समारम्भ में हर्षित हो नहीं बोलने वाले, सूक्ष्म, अतीन्द्रिय, धर्ममय सिद्ध भगवान को मन लगाकर बारम्बार नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया-युक्त समारम्भ पूर्वक वचनों द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले परम सूक्ष्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२।।

मायायुत आरंभ की, वचन प्रवृत्ति नशाय।
नमूँ अनन्त अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय।।८३।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-मायारंभ-अनन्तावकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त आरम्भ संबंधी वचन की प्रवृत्ति को नष्ट कर, अनन्त अवकाश गुण-सम्पन्न, ज्ञान द्वारा सुख-दायक सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से आरम्भ नहीं करने वाले अनन्त अवकाश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३।।

मायायुत आरंभ मय, मेंट वचन उपदेश।
भये अमल गुण ते नमूँ, रागद्वेष नहीं लेश।।८४।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-मायारंभ-अमल-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त आरम्भ मय वचनों द्वारा दूसरों को उपदेश नहीं देने वाले, राग-द्वेष से पूर्णतया रहित, अमल/सम्पूर्ण विकारों से रहित गुण-सम्पन्न सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से आरम्भ नहीं कराने वाले, अमल गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४।।

मायायुत आरंभ मय, मेंट वचन आनन्द।
भये अनन्त सुखी नमूँ, सिद्ध सदा सुखवृन्द।।८५।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-मायारंभ-निरवधि-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त आरम्भ वचनात्मक आनन्द को नष्ट कर अनन्त सुखी हुए सुख के समूह स्वरूप सिद्ध भगवान के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया-युक्त वचन से आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले निरवधि/अनन्त सुख के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५।।

(अब, इन छ्यासी से चौरानवें पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा लोभ के वश किए गए वचन योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की वन्दना कर रहे हैं।)

अडिल्ल : **जो परिग्रह कौ चाह लोभ सो मानिये,**
विधि-विधान-ठानत संरंभ बखानिये।
वचन द्वार नहिं करें नमूँ परमातमा,
सब प्रत्यक्ष लखें व्यापक धर्मातमा।।८६।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-लोभ-संरम्भ-व्यापक-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परिग्रह की इच्छा को लोभ मानना चाहिए। उस लोभ के वश हो अनेक प्रकार के संरम्भ को वचनों द्वारा नहीं करने वाले, सभी को प्रत्यक्ष देखने वाले, व्यापक, धर्मात्मामय परमात्मा के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से संरम्भ नहीं करने वाले व्यापक धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।। ८६।।

वर्तावन संरम्भ हेत परके तई,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई।
नमूँ सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो।।८७।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-लोभ-संरम्भ-व्यापक-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ के उदय में होने वाले हिंसामयी वचनों से संरम्भ में दूसरों की प्रवृत्ति कराने वाली मिथ्या पद्धति को नष्ट करने वाले, सकल चराचर के ज्ञाता/सर्वज्ञ, श्रेष्ठ व्यापक गुण-सम्पन्न सिद्ध भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से संरम्भ नहीं कराने वाले व्यापक गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७।।

लोभी वच संरम्भ हर्ष परकाशनं,
नाना विधि संचरै पाप दुख नाशनं।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुव पद पाइयो,
नमूँ अचल गुण सहित सिद्ध मन भाइयो।।८८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-लोभ-संरम्भ-अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त वचनों से संरम्भ को प्रकाशित कर अनेक प्रकार के दु:खों के समूह रूप पापों का संचय करने वाले भावों को पूर्णतया नष्ट कर, शाश्वत, ध्रुव-पद प्राप्त करने वाले, मन को अच्छे लगने वाले, अचल गुण-सहित सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले अचल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८।।

सोरठा : **समारम्भ के बैन, लोभ सहित पर आसरैं।**
तज निरलम्बी ऐन, नमूँ सिद्ध उर धारिकैं।।८९।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-लोभ-समारम्भ-निरालंबाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त वचनों से पराश्रित, पापमय समारम्भ का त्याग कर निरालम्बी हुए सिद्ध भगवान को मन में धारण कर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से समारम्भ नहीं करने वाले निरालम्ब के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९।।

समारम्भ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें।
पायो अचल स्वदेश, नमूँ निराश्रय सिद्ध गुण।।९०।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-लोभ-समारम्भ-निराश्रयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ के उदय में वचनों द्वारा समारम्भ-पोषक उपदेश देने की स्थिति नष्ट कर, अचल, आत्म-प्रदेशों में निराश्रय गुण को प्राप्त सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से समारम्भ नहीं कराने वाले निराश्रय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०।।

नानुमोद वच लोभ, समारंभ परवृत्त में।
नमूँ तिन्हैं तजि क्षोभ, नित्य अखण्ड विराजतें।।९१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-लोभ-समारम्भ-अखण्डाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त वचनों द्वारा समारम्भ में प्रवृत्ति करने वाले की अनुमोदना नहीं करने वाले, निश्चय अखण्ड रूप में विराजमान सिद्ध भगवान के लिए, क्षोभ का त्याग कर हम नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से समारम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले अखण्ड के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१।।

दोहा : **लोभ सहित आरम्भ कौ, करत नहीं व्याख्यान।**
नूतन पंचम गति लहौ, नमूँ सिद्ध भगवान।।९२।।

ॐ ह्रीं अकृत-वचन-लोभारम्भ-परीतावस्थाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-सहित आरम्भ का व्याख्यान/वचनों से नहीं करने वाले नवीन पंचम गति को प्राप्त सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से आरम्भ नहीं करने वाले, परीत अवस्था/संसार दशा से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२।।

लोभ वचन आरम्भ कौ, कहत न पर के हेत।
समयसार परमातमा, नमत सदा सुख देत।।९३।।

ॐ ह्रीं अकारित-वचन-लोभारम्भ-समयसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-सहित वचनों द्वारा दूसरों के लिए आरम्भ नहीं बताने वाले, समयसार परमात्मा रूप, सदा सुख देने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से आरम्भ नहीं कराने वाले समयसार के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३।।

सोरठा : **नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरम्भमय।**
अजर अमर सुखदाय, नमूँ निरन्तर सिद्धपद।।९४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-वचन-लोभारम्भ-निरंतराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-सहित आरम्भ की वचनों द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले, अजर, अमर, सुख-दायक, निरन्तर सिद्ध पद-सम्पन्न भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त वचन से आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले निरन्तर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४।।

(अब, इन पंचानवें से लेकर एक सौ तीन पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा क्रोध के वश किए गए काय योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की गुण-गाथा गा रहे हैं।)

अडिल्ल : **क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी,**
करत समस्या सो संरम्भ प्रकाशनी।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूँ सदा।।९५।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-क्रोध-संरम्भ-काय-गुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भयंकर क्रोध पूर्वक हस्तादि द्वारा संरम्भ को बताने वाली निन्दनीय चेष्टाओं को काय गुप्ति द्वारा नष्ट कर, दृष्टि-अगोचर/आँखों से नहीं दिखने वाले, काय गुप्ति-सम्पन्न सिद्ध भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से संरम्भ नहीं करने वाली कायगुप्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५।।

सोरठा : **पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरम्भ तज।**
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूँ सदा।।९६।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-क्रोध-संरम्भ-शुद्ध-कायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-सहित अपने शरीर की चेष्टाओं द्वारा संरम्भ की दूसरों को प्रेरणा देने वाले भावों को छोड़कर, चेतन मूर्ति को प्राप्त हुए शुद्ध काय-सम्पन्न सिद्ध भगवान को सदा प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-सहित काय से संरम्भ नहीं कराने वाले शुद्ध काय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६।।

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय संरम्भ में।
त्यागत भये अकाय, नमूँ सिद्ध पद भावयुत।।९७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-क्रोध-संरम्भ-अकायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध के उदय में हुए संरम्भ की हर्षित होकर शीश हिलाने रूप अनुमोदना का त्याग कर अकाय हुए सिद्ध भगवान को भाव पूर्वक नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले अकाय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७।।

समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोध की।
स्वै गुणपर्य समेत, भक्ति सहित प्रणमूँ सदा।।९८।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-क्रोध-समारम्भ-स्वान्वय-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध की कायिक चेष्टामय समारम्भ की पद्धति को नष्ट कर अपने गुण और पर्याय सहित हुए सिद्ध भगवान को सदा भक्ति पूर्वक प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से समारम्भ नहीं करने वाले अपने अन्वय गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८।।

दोहा : **समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसौं नहीं कराय।**
नित-प्रति रति निजभाव में, बंदूँ तिनके पाय।।९९।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-क्रोध-समारम्भ-भाव-रतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त शरीर से समारम्भ की विधि को नहीं कराने वाले, सदा अपने भाव में रमण करने वाले सिद्ध भगवान के चरणों में वन्दन करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से समारम्भ नहीं कराने वाले भाव-रति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९।।

समारम्भ सो काय सों, क्रोध सहित परसंस।
स्वै अभिन्न पद पाइयो, नमूँ त्याग सरवंस।।१००।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-क्रोध-समारम्भ-स्वान्वय-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-सहित काय से समारम्भ की प्रशंसा नहीं करने वाले, अपने अभिन्न पद को प्राप्त सिद्ध भगवान के लिए, सभी विकारी भावों का त्याग कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से समारम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले अपने अन्वय धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००।।

क्रोधित कायारम्भ तजि, पर सों रहित स्वभाव।
शुद्ध द्रव्य में रत नमूँ, निज सुख सहज उपाव।।१०१।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-क्रोधारम्भ-शुद्ध-द्रव्य-रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त काय से आरम्भ करना छोड़कर, पर से रहित स्वभाव वाले शुद्ध द्रव्य में लीन सिद्ध भगवान को नमन करता हूँ; क्योंकि यह अपने स्वाभाविक सुख को प्राप्त करने का उपाय है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से आरम्भ नहीं करने वाले शुद्ध द्रव्य में रत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१।।

क्रोधित कायारम्भ नहिं, रंच प्रपंच कराय।
पंचरूप संसार हन, नमुँ पंचम गति राय।।१०२।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-क्रोधारम्भ-संसार-छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त काय से रंचमात्र भी आरम्भ संबंधी प्रपंच नहीं कराने वाले; द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव रूप पाँच प्रकार के संसार को नष्ट कर पंचम गति के स्वामी हुए सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय से आरम्भ नहीं कराने वाले, संसार के छेदक को नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२।।

क्रोधित कायारम्भ में, हर्ष-विषाद विडार।
अनेकांत वस्तुत्व गुण, धरै नमों पद सार।।१०३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-क्रोधारम्भ-जैन-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्रोध-युक्त काय के आरम्भ में हर्ष-विषाद को नष्ट कर अनेकान्तात्मक वस्तुत्व गुण के धारक, सारभूत सिद्ध पद के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं क्रोध-युक्त काय संबंधी आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले जैन-धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०३।।

(अब, इन एक सौ चार से एक सौ बारह पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा मान के वश किए गए काय योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की यशोगाथा गा रहे हैं।)

मान सहित संरंभ की, तन सों रचना त्याग।
पर प्रवेश बिन रूप जिन, लियो नमूँ बड़भाग।।१०४।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-मान-संरम्भ-स्वरूप-गुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित संरम्भ की शरीर सापेक्ष क्रियाओं का त्याग कर, परद्रव्यों के प्रवेश से पूर्णतया रहित अपने स्वरूप को प्राप्त महा भाग्यशाली सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी संरम्भ नहीं करने वाले स्वरूप-गुप्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०४।।

मान उदय संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय।
निज कृत पर उपकार बिन, लियो नमूँ तिन पाय।।१०५।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-मान-संरम्भ-निज-कृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान के उदय में होने वाले संरम्भ रूप कार्य को काय से नहीं कराने वाले, परकृत उपकार के विना अपनी कृति/सिद्धपद को प्राप्त करनेवाले भगवान के चरणों में नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी संरम्भ को नहीं कराने वाले निज कृति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०५।।

मान सहित संरंभ में, तन सों हर्ष न लेश।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूँ अशेष।।१०६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-मान-संरम्भ-ध्येय-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित संरम्भ में तन से रंचमात्र भी हर्षित नहीं होने वाले, ध्यान-योग द्वारा ध्येयभूत अपने आत्मा की भावना कर समस्त विकारों को पूर्णतया नष्ट कर देने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी संरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले ध्येय भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०६।।

मदयुत तन सों रंच भी, समारंभ विधि नाहिं।
परमाराधन योग पद, पायो प्रणमूँ ताहिं।।१०७।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-मान-समारम्भ-परमाराधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त शरीर से रंच-मात्र भी समारम्भ विधि को नहीं करने वाले, परम आराधना के योग से सिद्ध पद-प्राप्त भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी समारम्भ नहीं करने वाले परम आराधना के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०७।।

समारम्भ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय।
ज्ञानानन्द सुभाव युत, प्रणमूँ शीश नवाय।।१०८।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-मान-समारम्भ-आनंद-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त अपने शरीर से समारम्भ नहीं कराने वाले, ज्ञानानन्द स्वभाव-युक्त सिद्ध भगवान के लिए शीश झुकाकर प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी समारम्भ नहीं कराने वाले आनन्द गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०८।।

समारम्भ मन विधि सहित, तन सों हर्ष न होय।
निजानंद नन्दित तिन्हैं, नमूँ सदा मद खोय।।१०९।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-मान-समारम्भ-स्वानंदानन्दिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-सहित समारम्भ की विधि में शरीर से रंच-मात्र भी हर्षित नहीं होने वाले, अपने आनन्द से ही आनन्दित सिद्ध भगवान को सदा मान-रहित होकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी समारम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले, अपने आनन्द से आनन्दित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०९।।

चौपाई : **अकृत मानारंभ शरीर, पर अनिंद्य वन्दूँ धर धीर।**
सिद्ध बसैं जु लोक के अन्त, नमौं करौ हमरौ भव अन्त।।११०।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-मानारम्भ-संतोषाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त आरम्भ को शरीर से नहीं करने वाले, दूसरों के द्वारा प्रशंसनीय, धैर्य के धारक, लोक के अन्त में रहने वाले सिद्ध भगवान के लिए हमारा बारम्बार नमस्कार है। आप हमारे भव का अन्त कीजिए।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी आरम्भ नहीं करने वाले सन्तोष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११०।।

कायारंभ अकारित मान, स्वस्वरूप-रत बन्दूँ तान।
सिद्ध बसैं जु लोक के अन्त, नमौं करौ हमरौ भव अन्त।।१११।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-मानारम्भ-स्वरूप-रताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शरीर से मान-युक्त आरम्भ को नहीं कराने वाले, अपने आत्म-स्वरूप में सदा लीन, लोक के अन्त में रहने वाले सिद्ध भगवान को बारम्बार नमस्कार है। आप हमारे भव का अन्त कीजिए।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी आरम्भ नहीं कराने वाले स्वरूप-रत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१११।।

मानारंभ अनन्दित काय, प्रणमूँ विमल शुद्ध पर्याय।
सिद्ध बसैं जु लोक के अन्त, नमौं करौ हमरौ भव अन्त।।११२।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-मानारम्भ-शुद्ध-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मान-युक्त आरम्भ में काय से आनन्दित नहीं होने वाले, विमल, शुद्ध पर्याय-सहित शुद्धात्मा, तीनों लोकों के स्वामी को सदा शीश झुकाकर प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मान-युक्त काय संबंधी आरम्भ की अनुमोदना नहीं करने वाले शुद्ध पर्याय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११२।।

(अब, इन एक सौ तेरह से एक सौ इक्कीस पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा माया के वश किए गए काय योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान का मंगल गान कर रहे हैं।)

दोहा : **मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप।**
गुप्त निजामृत रस लहैं, नमूँ तिन्हैं तज पाप।।११३।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-माया-संरम्भ-अमृत-गर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया से युक्त आरम्भ की विधि को शरीर से नहीं करने वाले आपको गुप्त निजामृत रसवान देखकर पाप छोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया कृत संरम्भ को शरीर से नहीं करने वाले अमृत गर्भ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११३।।

मायायुत संरम्भ विधि, तन सों नहीं कराय।
मुख्य धर्म चैतन्यता, विलसैं प्रणमूँ पाय।।११४।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-माया-संरम्भ-चैतन्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त संरम्भ की विधि को शरीर से नहीं कराने वाले, मुख्य चैतन्य धर्म में विलास करने वाले सिद्ध भगवान के चरणों में प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया कृत संरम्भ को शरीर से नहीं कराने वाले चैतन्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११४।।

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोदयुत काय।
वीतराग आनन्द पद, समरस भावन भाय।।११५।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-माया-संरम्भ-समरसी-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त संरम्भमय काय की अनुमोदना नहीं करने वाले आप वीतरागी आनन्द पद मय समता रस की भावना भाते हैं/उस रूप परिणमित रहते हैं।

ॐ ह्रीं माया कृत संरम्भ की शरीर से अनुमोदना नहीं करने वाले समरसी-भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११५।।

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद।
बन्ध दशा निज पर द्विविध, नमत नसै भव खेद।।११६।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-माया-समारम्भ-बंधच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त समारम्भ को नहीं करने वाले आपने जीव/भाव-बन्ध और अजीव/द्रव्य-बन्ध - इन दोनों प्रकार की बन्ध दशा का विच्छेद कर दिया है। आपको नमस्कार करने से संसार के दु:ख नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं माया कृत समारम्भ को शरीर से नहीं करने वाले भव-छेदक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११६।।

समारम्भ तन कुटिलसों, भये अकारित स्वामि।
निज परिणति परिणमन बिन, गुण स्वातंत्र नमामि।।११७।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-माया-समारम्भ-स्वातंत्र्य-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कुटिल शरीर से समारम्भ नहीं कराने वाले, अन्य के विना ही अपनी स्वाभाविक परिणति में परिणमित हुए आपके स्वातन्त्र्य गुण के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया कृत समारम्भ को काय से नहीं कराने वाले स्वातन्त्र्य धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११७।।

नानुमोदि तन कुटिलता, समारम्भ विधि देव।
गुण अनन्त युत परिणमूँ, धर्म समूही एव।।११८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-माया-समारम्भ-धर्म-समूहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तन की कुटिलता पूर्वक समारम्भ संबंधी विधि की अनुमोदना नहीं करने वाले, अनन्त गुण-युक्त धर्म-समूह देव के लिए प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं माया कृत समारम्भ की काय से अनुमोदना नहीं करने वाले धर्म-समूह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११८।।

मायायुत निज देह सौं, नहीं आरम्भ करेह।
परमातम सुख अक्ष-बिन, पायो बन्दूँ तेह।।११९।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-मायारम्भ-परमात्म-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त अपने शरीर से आरम्भ नहीं करने वाले, इन्द्रियों के विना ही अतीन्द्रिय सुख-सम्पन्न परमात्मा-पद-प्राप्त करने वाले के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया कृत आरम्भ को काय से नहीं करने वाले परमात्म-सुख के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११९।।

मायारम्भ शरीर करि, परसों नहीं करान।
निष्ठातम स्वस्थित नमूँ, सिद्धराज गुणखान।।१२०।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-मायारम्भ-निष्ठात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त शरीर द्वारा दूसरों से आरम्भ नहीं कराने वाले, स्वात्म-निष्ठ, स्वयं में ही स्थित, गुणों के भण्डार सिद्धराज के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं माया कृत काय द्वारा दूसरों से आरम्भ नहीं कराने वाले निष्ठात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२०।।

मायारम्भ शरीरसौं, नानुमोद भगवन्त।
दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमें नित 'सन्त'।।१२१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-मायारम्भ-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : माया-युक्त आरम्भ की शरीर से अनुमोदना नहीं करने वाले, दर्शन-ज्ञानमय चेतना-सहित भगवान को सन्त कवि सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं माया कृत आरम्भ की काय द्वारा अनुमोदना नहीं करने वाले चेतन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२१।।

(अब, इन एक सौ बाईस से एक सौ तीस पर्यन्त नौ छन्दों द्वारा लोभ के वश किए गए काय योग पूर्वक संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ और कृत, कारित, अनुमोदना संबंधी नौ भावों से रहित सिद्ध भगवान की गौरव गाथा कह रहे हैं।)

पद्धड़ी : **संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग।**
धारक सिद्धन कौ धरूँ ध्यान, तुम मैटौ मेरौ सब अज्ञान।।१२२।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-लोभ-संरम्भ-परम-चित्-परिणताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त काय योग से संरम्भ नहीं करने वाले आपके चेतन गुण की परिणतिरूप शुद्धोपयोग के लिए नमस्कार है। इसके धारक सिद्धों का मैं ध्यान करता हूँ; आप मेरा सभी अज्ञान मिटा दीजिए।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त संरम्भ को काय से नहीं करने वाले परम-चित् परिणत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२२।।

संरम्भ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्व समय तेह।
धारक सिद्धन कौ धरूँ ध्यान, तुम मैटौ मेरौ सब अज्ञान।।१२३।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-लोभ-संरम्भ-स्व-समय-रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त काय से संरम्भ नहीं कराने वाले, स्वयं ही अपने आत्मा में लीनतारूप दशा के धारक सिद्ध भगवान का ध्यान करता हूँ; आप मेरे सभी अज्ञान मिटा दीजिए।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त संरम्भ को काय से नहीं कराने वाले स्व-समय-रत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२३।।

संरम्भ लोभ तन हर्ष नाश, नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश।
धारक सिद्धन कौ धरूँ ध्यान, तुम मैटौ मेरौ सब अज्ञान।।१२४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-लोभ-संरम्भ-व्यक्त-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त काय पूर्वक संरम्भ में हर्ष भाव को नष्ट कर केवलज्ञान द्वारा धर्म को व्यक्त करने वाले भगवान को नमस्कार है। इस दशा के धारक सिद्ध भगवान का मैं ध्यान करता हूँ; आप मेरे सभी अज्ञान नष्ट कर दीजिए।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त संरम्भ की काय से अनुमोदना नहीं करने वाले व्यक्त-धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२४।।

सोरठा : **लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाश के।**
ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूँ सिद्धपद।।१२५।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-लोभ-समारम्भ-नित्य-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त काय योग से समारम्भ करने की पद्धति का नाशकर, ध्रुव, अनन्त आनन्द को प्राप्त सिद्ध पद की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त समारम्भ को काय से नहीं करने वाले नित्य-सुख के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२५।।

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि।
पाया पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूँ सदा।।१२६।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-लोभ-समारम्भ-अकषायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त काय योग से समारम्भ नहीं कराने वाले; अपने कर्मों को नष्ट कर अकषाय पद प्राप्त करने वाले सिद्ध समूह की मैं सदा पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त समारम्भ को काय से नहीं कराने वाले अकषाय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२६।।

पूर्ववर्तनानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें।
पायो शौच स्वछन्द, नमूँ सिद्ध पद भक्ति युत।।१२७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-लोभ-समारम्भ-शौच-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रवृत्ति/लोभ-युक्त काय योग से समारम्भ में आनन्द नहीं मानने वाले, परिग्रह की इच्छा को नष्ट कर पूर्ण विकसित शौच को प्राप्त सिद्ध पद को भक्ति पूर्वक नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त समारम्भ की काय से अनुमोदना नहीं करने वाले शौच गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२७।।

दोहा : **काय द्वार आरम्भ की, लोभ उदय विधि नाश।**
नमों चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश।।१२८।।

ॐ ह्रीं अकृत-काय-लोभारम्भ-चिदात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ के उदय में होने वाले आरम्भ को काय के माध्यम से करने की पद्धति का नाश कर, शुद्ध ज्ञान के प्रकाशमय चैतन्यात्मक पद प्राप्त करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त आरम्भ को काय से नहीं करने वाले चिदात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२८।।

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय।
निज अवलम्बित पद लियो, नमूँ सदा तिन पाय।।१२९।।

ॐ ह्रीं अकारित-काय-लोभारम्भ-निरालंबाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ के उदय में होने वाली आरम्भ की प्रक्रिया को काय के माध्यम से नहीं कराने वाले, अपने आलम्बन से सिद्ध पद प्राप्त करने वाले भगवान के चरणों में हम सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त आरम्भ को काय से नहीं कराने वाले निरालम्ब के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२९।।

लोभी तन आरम्भ में, आनन्द रीति मेंट।
नमूँ सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ।।१३०।।

ॐ ह्रीं नानुमोदित-काय-लोभारम्भात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभ-युक्त शरीर से किए गए आरम्भ में आनन्दित होने की रीति को नष्ट कर, अपने आत्म-गुणों में श्रेष्ठ सिद्ध पद प्राप्त करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोभ-युक्त आरम्भ की काय से अनुमोदना नहीं करने वाले आत्मामय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३०।।

सवैया उन्तीसा : **जेते कछु पुद्गल परमाणु शब्दरूप,**
भये हैं, अतीत काल आगे होनहार हैं।
तिनको अनंत गुण करत अनंत बार,
ऐसै महा राशि रूप धरैं विसतार हैं।।

सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातम के,
मानो गुण गण उचरन अर्थधार हैं।
तौ भी इक समय के अनंत भाग आनंद कौं,
कहत न कहैं हम कौन परकार हैं।।१३१।।

ॐ ह्रीं अष्टाविंशत्यधिक-शत-गुण-युक्त-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जितने जो कुछ भी पुद्गल परमाणु शब्दरूप/भाषा वर्गणारूप परिणमित हो गए हैं; अभी हो रहे हैं और आगे होंगे; उनका अनन्त बार अनन्त गुणा करने से प्राप्त विस्तृत महा राशि भी यदि एकत्रित होकर सिद्ध परमात्मा के गुण-समूह का उच्चारण करने लगें; तो भी सिद्ध भगवान के एक समयवर्ती आनन्द के अनन्तवें भाग को भी कहने में समर्थ नहीं हैं; तब फिर हम तो उनका वर्णन कैसे कर सकते हैं? अर्थात् नहीं कर सकते हैं।

ॐ ह्रीं एक सौ अट्ठाईस गुण-युक्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३१।।

यहाँ 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नम:' इस मन्त्र की एक सौ आठ बार जाप कीजिए।

जयमाला

दोहा : **शिवगुण सरधा धार उर, भक्ति भाव है सार।**
केवल निज आनन्द करि, करूँ सुजस उच्चार।।१।।

अर्थ : मोक्ष के गुणों को श्रद्धा पूर्वक हृदय में धारण कर, एकमात्र अपने आनन्द के लिए सारभूत भक्ति-भाव पूर्वक उनके सुयश का उच्चारण करता हूँ।

पद्धड़ी: **जय मदन कदन मन करण नाश, जय शांतिरूप निज सुख विलास।**
जय कपट सुभट पट करन सूर, जय लोभ क्षोभ मद दम्भ चूर।।२।।

अर्थ : मदन/विषय-वासना को नष्ट करने वाले, मनरूपी हाथी का नाश करने वाले अथवा विषय-वासना रूपी पाप-भाव को उत्पन्न करने में कारण मन और इन्द्रियों का नाश करने वाले आपकी जय हो; शान्तिरूप अपने सुख में विलास करने वाले आपकी जय हो। कपटरूपी महा योद्धा को नष्ट करने के लिए शूरवीर आपकी जय हो; लोभ, क्षोभ, मद, दम्भ को चूर/पूर्णतया नष्ट करने वाले आपकी जय हो।

पर-परिणति सौं अत्यन्त भिन्न, निज परिणति सौं अति ही अभिन्न।
अत्यन्त विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष।।३।।

अर्थ : हे भगवान! आप पर-द्रव्यों के परिणमन से पूर्णतया पृथक् और अपनी परिणति से पूर्णतया अपृथक्/एकमेक हैं। आपके सभी विशेष/पर्यायें अत्यन्त विमल/शुद्ध हैं। आपने

सभी प्रकार के मल/विकारों/दोषों को शोध-शोध कर पूर्णतया नष्ट कर दिया है; किसी भी गुण की किसी भी पर्याय में रंचमात्र भी दोष शेष नहीं है।

मणि दीप सार निर्विघ्न ज्योत, स्वाभाविक नित्य उद्योत होत।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड।।४।।

अर्थ : उत्कृष्ट मणि-दीपों की बाधा-रहित, कालिमा-विहीन निर्विघ्न ज्योति के समान अपने स्वाभाविक प्रकाश से परिपूर्ण, प्रचण्ड, सम्पूर्ण तेजवान, प्रगट हुए केवलज्ञान-सम्पन्न आप तीनों लोकों के शिखर/अग्र भाग पर अखण्ड रूप से शोभायमान हैं।

मुनि-मन-मन्दिर कौ अन्धकार, तिस ही प्रकाश सौं नशत सार।
सो सुलभ रूप पावै निजार्थ, जिस कारण भव-भव भ्रमे व्यर्थ।।५।।

अर्थ : मुनिओं के मन रूपी मन्दिर का संशय आदि रूप अन्धकार इस सारभूत केवलज्ञान के प्रकाश से ही नष्ट होता है। निजार्थ/अपने शुद्धात्मा के आश्रय से इसे प्राप्त करना सरल होने पर भी प्राप्त नहीं कर पाने के कारण यह जीव व्यर्थ में ही भव-भव/अनेक-अनेक भवों में परिभ्रमण कर रहा है।

जो कल्प-काल में होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितन को उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत।।६।।

अर्थ : कल्पकाल/बीस कोड़ाकोड़ी सागर/दीर्घ काल बाद जो सिद्ध होने वाले थे; वे आपका ध्यान करने से क्षण-मात्र में सिद्ध पद प्राप्त कर लेते हैं। गिरे हुए भव्य जीवों के उद्धार में कारण होने से आपको 'हस्तावलम्ब' - यह नाम दिया जाता है।

तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नहिं पार पाह।
ज्यों भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास।।७।।

अर्थ : जैसे अभव्य जीवों का समूह संसार-समुद्र से पार नहीं होता है; उसका पुरुषार्थ, प्रयास व्यर्थ ही नष्ट हो जाता है; उसी प्रकार आपके गुणों के स्मरण रूपी अथाह समुद्र का, गणधर के समान सामर्थ्य-शाली भी पार नहीं पाते हैं; हम तो कैसे पार पाएंगे?

जिन मुख द्रहसौं निकसी अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग।
नय-सप्त-भंग-कल्लोल मान, तिहुँ लोक बही धारा प्रमान।।८।।

अर्थ : जिनेन्द्र भगवान के मुख/सर्वांगरूपी सरोवर से निकली हुई सिद्धान्त रूपी गंगा नदी की अखण्ड, अति वेगवान, नय-सप्तभंगरूपी लहरों से सहित, तीनों लोकों में बहने वाली धारा प्रामाणिक मानी गई है।

सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनन्द रसाल।
यातें जग में तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम।।९।।

अर्थ : अत्यधिक विस्तृत द्वादशांग वाणी को पढ़ने-सुनने से महा आनन्द प्रगट होता है; अत: जगत में इसका 'तीर्थ सुधाम' नाम सत्यार्थ/सार्थक कहलाता है।

सो तुम ही सौं है शोभनीक, नातर जल सम जु बहै सु ठीक।
निज पर आतम हित आत्म-भूत, जब सै है जब उतपत्ति सूत।।१०।।

अर्थ : यह सत्यार्थ तीर्थ आपके कारण ही शोभायमान है; अन्यथा तो जल के समान बहने वाला ही होता। यह अनादि से ही अपने और पर के आत्मकल्याण में आत्मभूत कारण है।

ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अगनि दाह।
त्यों आप महा मंगलस्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप।।११।।

अर्थ : जैसे महा शीतल बर्फ ही अग्नि-दाह को नष्ट करने में समर्थ है; उसी प्रकार महा मंगल स्वरूप आप ही सहजता से दूसरों के विघ्नों को नष्ट करने में समर्थ हैं।

है 'सन्त' दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावै पद प्रवीण।
तातैं मन-वच-तन भाव धार, तुम सिद्धनकूँ मम नमस्कार।।१२।।

अर्थ : पण्डित सन्तलालजी कहते हैं कि मैं दीन होने पर भी आपकी भक्ति में लीन होने से निश्चित ही मोक्ष-पद को प्राप्त करूँगा; अत: मन, वचन, काय पूर्वक भाव-भक्ति से आप सभी सिद्धों के लिए मेरा नमस्कार है।

दोहा : **जो तुम ध्यावें भावसौं, ते पावें निज भाव।**
अगनि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाव।।१३।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिक-शत-गुण-संयुक्त-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे अग्नि-पाक संयोग से/अग्नि में पकाए जाने पर सुवर्ण अपने शुद्ध स्वभाव/शुद्ध सुवर्णत्व को प्राप्त हो जाता है; उसी प्रकार भाव पूर्वक आपका ध्यान करने वाले अपने स्वभाव को प्राप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्ध भगवान को नमस्कार; एक सौ अट्ठाईस गुण-संयुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : **तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहौ जयवन्त।**
विघन हरण मंगल करण, तुम्हें नमैं नित सन्त।।१४।।

अर्थ : तीन लोक के चूड़ामणि/सर्वोत्तम पदार्थ आप सदा जयवन्त रहें। विघ्नों का हरण करने वाले, मंगल को करने वाले आपको सन्त कवि सदा नमन करते हैं।

इसप्रकार पंचम पूजन समाप्त हुई।।५।।

दो सौ छप्पन गुण-सहित षष्ठम पूजन

छप्पय : **ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे,**
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार', ऊपर-नीचे रेफ-युक्त और बिन्दु-सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमशः वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र-भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है।

अन्त में पुनः यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध यंत्र कर्म-शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह-समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा: **सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व) आदि गुणों से सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

इसप्रकार यन्त्र-स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं –

गीता : **अति नम्रता तिहुँ योग में जिन भक्ति निर्मल भावहीं।**
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं।।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं।
द्वै अर्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने जन्म-जरा-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अर्थ : मन, वचन, काय रूप तीनों योगों में अति नम्रता पूर्वक भगवान की भक्तिमय निर्मल भावोंरूपी गुप्त/अन्तरंग जल और तीर्थों से लाया गया अथवा पवित्रतामय प्रासुक, निर्मल जलरूपी प्रत्यक्ष/बहिरंग जल – इन दोनों द्रव्यों के संयोग से त्रैलोक्य पूज्य की पूजन करता हुआ दो सौ छप्पन नामों का उच्चारण कर उनका यशोगान करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए जन्म, जरा, मृत्यु विनाशन-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अति वास विषय न वासनायुत मलय शील सुभावहीं।
अरु चंदनादि सुगन्ध द्रव्य मनोज्ञ प्रासुक लावहीं।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

अर्थ : विषयों की अत्यधिक दुर्गन्धमय/तीव्र आसक्तिमय वासना से रहित शील स्वभावरूपी अन्तरंग चन्दन और लाए हुए मनोज्ञ, प्रासुक चन्दन आदि बहिरंग सुगन्धित द्रव्य – इन दोनों......करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;....संसार-ताप-विनाशन-हेतु चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं।
तिस सार अक्षय अखय स्वच्छ सुवास पुंज बनावहीं।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

अर्थ : मलिन मन/अशुभ भावों से पूर्णतया रहित, स्वच्छ, विशुद्ध परिणामों रूपी अन्तरंग अक्षत और उत्कृष्ट, अखण्ड, स्वच्छ, सुगन्धित पुंज बनाया गया बहिरंग अक्षत – इन दोनों ....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;...अक्षय पद की प्राप्ति-हेतु अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

मन पाग भक्त्यनुराग आनंद ताग माल पुरावहीं।
तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागवास सु लावहीं।।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं।
द्वै अर्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने काम-बाण-विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

अर्थ : आपकी भक्ति के अनुराग में मन को पाग कर/ओत-प्रोत कर उसे आनन्दरूपी धागे में पिरोकर बनाई गई मालारूपी अंतरंग पुष्प और लाए गए अत्यन्त सुगन्धित सुहाग, सुर, नाग जाति के कुसुमरूपी बहिरंग पुष्प - इन दोनों द्रव्यों के संयोग से त्रैलोक्य पूज्य की पूजन करता हुआ दो सौ छप्पन नामों का उच्चारण कर उनका यशोगान करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए काम-बाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

जिनभक्ति रस में तृप्तता मन आन स्वाद न चावहीं।
अंतर चरू बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावहीं।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

अर्थ : भगवान की भक्ति रूपी रस से तृप्तता/संतुष्टि के कारण अन्य स्वाद की इच्छा नहीं करने वाले/अन्य रागी-द्वेषी देवी-देवताओं या विषय-भोगों की ओर आकर्षित नहीं होनेवाले मनरूपी अंतरंग नैवेद्य और लाए गए मनोहारी, सरस चरुरूपी बहिरंग नैवेद्य - इन दोनों .... करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;....क्षुधा-रोग-विनाशन-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावहीं।
मणि दीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावहीं।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

अर्थ : अन्दर के मोहरूपी अन्धकार को नष्ट कर देने वाले सम्यक् श्रद्धा-सहित प्रज्वलित/सम्यग्ज्ञानमय दीपरूपी अंतरंग दीपक और भेंट धरते हुए मनोहारी तेजमय, जगमगाती हुई/देदीप्यमान ज्योति-संपन्न मणिमय दीपरूपी बहिरंग दीपक - इन दोनों.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;....मोहान्धकार-विनाशन-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु छावहीं।
गंधित दरव शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावहीं।।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं।
द्वै अर्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

अर्थ : मन रूपी घट में धर्म की प्रभावना रूपी धूप से प्रगट हुए आनन्दरूपी धूम्र से व्याप्त भावों मय अंतरंग धूप और अग्नि के साथ जलते हुए, नासिका को अति-प्रिय, सुगन्धित, शुद्ध द्रव्यों की धूपमय बहिरंग - इन दोनों द्रव्यों के संयोग से त्रैलोक्य-पूज्य की पूजन करता हुआ, दो सौ छप्पन नामों का उच्चारण कर उनका यशोगान करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अष्ट कर्म-दहन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावहीं।
रसना लुभावन कल्पतरु के सुर असुर मन भावहीं।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोक्ष-फल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

अर्थ : भक्तिरूपी वृक्ष में उत्पन्न हुए अनेक प्रकार के रस/भावों-युक्त शुभ चिन्तन रूपी अंतरंग फल और सुर-असुर के मन को रुचिकर, रसना को लुब्ध करने वाले कल्पवृक्ष के फलरूपी बहिरंग फल - इन दोनों ......करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;......मोक्ष-फल-प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

समकित विमल वसु अंग युत करि अर्घ अन्तर भावहीं।
वसु द्रव्य अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावहीं।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

अर्थ : आठ अंग-युक्त विमल सम्यक्त्व भावों रूपी अंतरंग अर्घ्य और हर्षित हो समर्पित कर रहा आठ द्रव्यमय बहिरंग अर्घ्य - इन दोनों .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; .....अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

गीता छन्द : **निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।

वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन; उज्ज्वल, अखण्डित अक्षत; मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित श्रेष्ठ दीपों का समूह; धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमश: होने वाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाशकर युगपत् / एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय; जन्मादि के दु:खों को नष्ट कर, असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्य पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य; अनन्त चतुष्टय के भण्डार, भगवान हमें अच्छी बुद्धि/ सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

दो सौ छप्पन गुण-सहित अर्घ्य

(इन अर्घ्यों में ज्ञानावरणादि आठ, उनकी उत्तर प्रकृतिआँ एक सौ अड़तालीस आदि कर्मों का अभाव कर सिद्ध हुए भगवान का गुणानुवाद किया जा रहा है। उनमें से पहले से लेकर छठवें पर्यन्त छह छन्दों द्वारा ज्ञानावरण और उसकी पाँचों उत्तर प्रकृतिओं के विनाशक सिद्ध भगवान का गुणगान किया जा रहा है।)

चौपाई : **मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंजन विधि संसारा।**
तिस हनि समरथ अतिशयरूपा, केवल पाय नमूँ शिव भूपा।।१।।

ॐ ह्रीं चिरन्तर-संसार-कारण-ज्ञान-निर्धूतोद्भूत-केवल-ज्ञानातिशय-संपन्नाय सिद्धाधिपतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनादि काल से चले आ रहे संसार में कर्म-बन्ध का मूल कारण, दु:ख-कारक

मिथ्यात्वरूपी अन्धकार है। उसे नष्ट कर सामर्थ्य-सम्पन्न, अतिशयरूप केवलज्ञान को प्राप्त कर शिव-स्वामी हुए भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चिरन्तर/अनादि-कालीन संसार के कारणभूत अज्ञान को पूर्णतया नष्ट कर प्रगट हुए अतिशय-सम्पन्न केवलज्ञानमय सिद्धाधिपति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१।।

मन-इन्द्रिय निमित मतिज्ञाना, योग देश तिष्ठत पद जाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।२।।

ॐ ह्रीं अभिनिबोध-वारक-विनाशकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने योग्य देश में स्थित पदार्थों को मन और इन्द्रिय के निमित्त से जानने वाले मति-ज्ञान संबंधी आवरण/मति-ज्ञानावरण के क्षयोपशम को पूर्णतया नष्ट कर अपने ज्ञान/केवलज्ञान का प्रकाश करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अभिनिबोध/मतिज्ञान को रोकने में कारणभूत/मति-ज्ञानावरण कर्म का विनाश करने वाले सिद्धाधिपति के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।२।।

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद बखाना।।क्षय...।।३।।

ॐ ह्रीं द्वादशांग-श्रुतावरण-कर्म-विमुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बारह अंगों संबंधी श्रुतज्ञान व्यक्त नहीं होने में निमित्त कारणरूप अनेक भेद-प्रभेद वाले श्रुत-ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम को.......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं द्वादशांग संबंधी श्रुतावरण कर्म से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३।।

है असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञान के भेद सु तेते।।क्षय...।।४।।

ॐ ह्रीं असंख्य-लोक-भेद-अवधि-ज्ञानावरण-विमुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : असंख्यात लोकाकाश के प्रदेशों-बराबर भेदों वाले अवधिज्ञान संबंधी आवरण/अवधि-ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम को........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं असंख्यात लोक-प्रमाण भेद वाले अवधि-ज्ञानावरण से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।४।।

है असंख्य परकार प्रमाना, मनपर्यय के भेद बखाना।।क्षय...।।५।।

ॐ ह्रीं असंख्य-प्रकार-मन:पर्यय-ज्ञानावरण-कर्म-विमुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : असंख्यात प्रमाण भेद वाले मन:पर्यय ज्ञान के भेदों संबंधी मन:पर्यय-ज्ञानावरण के क्षयोपशम को.............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं असंख्य प्रकार वाले मन:पर्यय-ज्ञानावरण कर्म से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५।।

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमानं।
केवल आवर्णी विधि नाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।६।।

ॐ ह्रीं निखिल-रूप-गुण-पर्याय-बोधक-केवल-ज्ञानावरण-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवल-ज्ञानावरण कर्म का नाश कर समस्त गुण-पर्यायों को एक साथ, वास्तविक रूप में प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा जानने वाले अपने ज्ञान/केवलज्ञान के प्रकाश से सम्पन्न सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सम्पूर्ण गुण-पर्यायों को जानने वाले केवलज्ञान संबंधी केवल-ज्ञानावरण कर्म से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।६।।

(अब, इन सातवें से लेकर सोलहवें छन्द पर्यन्त दश छन्दों द्वारा दर्शनावरण और उसकी नौ प्रकृतिओं के विनाशक सिद्ध भगवान की स्तुति की जा रही है। उनमें सर्व प्रथम चार दर्शनोपयोग संबंधी दर्शनावरण के विनाशक सिद्धों की स्तुति है।)

द्वारपती भूपति के ताईं, रोक रहै देखन दे नाहीं।
सोई दर्शनावरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।७।।

ॐ ह्रीं सकल-दर्शनावरण-कर्म-विनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे राजा से मिलने में द्वारपाल बाधा डालता है; उसी प्रकार पदार्थों के सामान्य अवलोकन में बाधक निमित्त दर्शनावरण कर्म है। उसका विनाश कर अपने ज्ञान/केवलज्ञान का प्रकाश करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सम्पूर्ण दर्शनावरण कर्म के विनाशक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७।।

मूर्तीक पद कौ प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवै परकाशन।
चक्षु-दर्शनावरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।८।।

ॐ ह्रीं चक्षु-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नेत्रों द्वारा मूर्तिक पदार्थों का सामान्य प्रतिभास करने वाले चक्षु दर्शन के बाधक चक्षु दर्शनावरण का विनाश कर अपना ज्ञान/केवलज्ञान प्रकाशित करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चक्षु-दर्शनावरण कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।८।।

दृग बिन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे।
अदृग-दर्शनावरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।९।।

ॐ ह्रीं अचक्षु-दर्शनावरण-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नेत्र के विना अन्य इन्द्रिय और मन के माध्यम से वस्तु-स्वरूप का सामान्य प्रतिभास करने वाले अचक्षु दर्शन में बाधक अचक्षु दर्शनावरण का विनाश कर अपना ज्ञान/केवलज्ञान प्रकाशित करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अचक्षु-दर्शनावरण से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।९।।

देश-काल-द्रव-भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सब ठानं।
अवधि-दर्श-आवरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।१०।।

ॐ ह्रीं अवधि-दर्शनावरण-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी जगह/तीनों लोकों में होने वाले; द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के प्रमाण-युक्त अवधि-दर्शन के बाधक अवधि-दर्शनावरण का विनाशकर स्व ज्ञान/केवलज्ञान प्रकाशित करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अवधि-दर्शनावरण से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०।।

बिन मर्याद सकल तिहुँ काल, होंय प्रगट घटपट तिंह हाल।
केवल दर्शनावरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।११।।

ॐ ह्रीं केवल-दर्शनावरण-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार की मर्यादा-रहित तीनों कालवर्ती अपने-अपने स्वरूप-सहित घट, पट आदि सभी पदार्थों को प्रगट प्रत्यक्ष देखने वाले केवल दर्शन के बाधक केवल दर्शनावरण का विनाश कर अपने ज्ञान/केवलज्ञान को प्रकाशित करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं केवल-दर्शनावरण से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११।।

(अब, पाँच निद्रा संबंधी दर्शनावरण के विनाशक सिद्ध भगवान की स्तुति करते हैं।)

बैठे खड़े पड़ै घुम्मरियां, देखै नहिं निद्रा की बिरियां।
निद्रा दर्शनावरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।१२।।

ॐ ह्रीं निद्रा-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निद्रा का समय नहीं होने पर भी नींद के कारण बैठे, खड़े हुए घुमरी लेने लगने/चक्कर आनेरूप नींद के निमित्त कारण निद्रा दर्शनावरण का विनाश कर केवलज्ञान प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं निद्रा कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२।।

सावधानि कितनी की जावै, रंच नेत्र उघड़न नहिं पावै।
निद्रा निद्रा कर्म विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।१३।।

ॐ ह्रीं निद्रानिद्रा-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनेक प्रकार से सावधानी की जाने पर भी नेत्रों को रंच-मात्र भी खोलने में समर्थ नहीं हो पाने वाले निद्रा में निमित्त कारणभूत निद्रा-निद्रा दर्शनावरण कर्म का विनाश कर केवलज्ञान प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं निद्रा-निद्रा कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३।।

मंदरूप निद्रा का आना, अवलोकै जाग्रतहि समाना।
प्रचला दर्शनावरण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।१४।।

ॐ ह्रीं प्रचला-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नींद में भी जागृत के समान देखनेरूप मन्द निद्रा आने में निमित्त कारणभूत प्रचला दर्शनावरण का विनाश कर केवलज्ञान प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रचला कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४।।

मुखसौं लार बहै अति भारी, हस्त पाद कंपत दुखकारी।
प्रचला-प्रचला वर्ण विनाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।१५।।

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचला-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मुख से लार बहने, गहरी नींद लगने, हाथ-पैर कपने लगने रूप दुःख-कारी निद्रा में निमित्त कारणभूत प्रचला-प्रचला कर्म का विनाश कर केवलज्ञान को प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रचला-प्रचला कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५।।

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशौ, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशौ।।१६।।

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धि-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नींद में ही सभी कार्य कर लेने वाली; कुछ विशिष्ट कार्यों को करने वाली विशिष्ट शक्ति-सम्पन्न भयंकर निद्रा में निमित्त कारणभूत स्त्यानगृद्धि कर्म का नाश कर केवलज्ञान प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धि कर्म-रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६।।

(अब, वेदनीय कर्म और उसकी दो प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान की आराधना सत्रह से उन्नीस - इन तीन छन्दों द्वारा कर रहे हैं।)

जे पदार्थ हैं इन्द्रिय योग, ते सब वेदे जिय निज जोग।
सोई नाम वेदनी होई, नमूँ सिद्ध तुम नासो सोई।।१७।।

ॐ ह्रीं वेदनीय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इन्द्रियों के विषय बनने-योग्य सभी पदार्थों को जीव अपनी-अपनी योग्यतानुसार भोगता है। उसमें निमित्तभूत वेदनीय कर्म का नाश करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं वेदनीय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७।।

रति के उदय भोग सुखकार, भोगै जिय शुभ विविध प्रकार।
साता भेद वेदनी होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय।।१८।।

ॐ ह्रीं साता-वेदनीय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यह जीव रति के उदय में सुख-कारक, शुभ, अनेक प्रकार के भोगों को भोगता हुआ साता प्राप्त करता है। उसमें निमित्तभूत साता वेदनीय कर्म को नष्ट करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं साता वेदनीय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८।।

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार।
एही भेद असाता होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय।।१९।।

ॐ ह्रीं असाता-वेदनीय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यह जीव अरति के उदय में इन्द्रियों के माध्यम से दुःख-कारक विषय-भोगों का वेदन करता हुआ असाता प्राप्त करता है। उसमें निमित्तभूत असाता वेदनीय कर्म को नष्ट करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं असाता-वेदनीय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९।।

(अब, मोहनीय कर्म और उसकी अट्ठाईस प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान की गौरव गाथा बीस से लेकर अड़तालीस पर्यन्त उन्तीस छन्दों द्वारा गा रहे हैं। उनमें सर्व प्रथम दर्शन-मोहनीय की तीन प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान का वर्णन है।)

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधि तैंसी जान।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय।।२०।।

ॐ ह्रीं मोह-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे मदिरा-पान से असावधानी होती है; उसी प्रकार मोहनीय कर्म के उदय में असावधानी होती है। उस कर्म के कारण आत्मा का लाभ/अपने स्वरूप की प्राप्ति नहीं होती है। उसे नष्ट करने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मोहनीय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०।।

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप तैं हो विपरीत।
पंच भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार।।२१।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व-कर्म-विनाशनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में तत्त्व के सत्य स्वरूप से विपरीत प्रतीति होती है; उस पाँच भेद वाले मिथ्यात्व का निवारण कर, सिद्ध हुए सुख-कारक भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व कर्म का विनाश करने वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१।।

प्रथमोपशम समकित जब गलै, मिथ्या समकित दोनों मिलै।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार।।२२।।

ॐ ह्रीं सम्यग्मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रथमोपशम सम्यक्त्व से दर्शनमोहनीय गलने/खण्डित होने पर सम्यक् और मिथ्या - दोनों के मिले हुए भाव रूप सम्यग्मिथ्यात्व भाव/कर्म प्रगट होता है। उस मिश्र भेद रूप मिथ्यात्व /दर्शनमोहनीय का निवारण कर सिद्ध हुए सुखकारक भगवान के लिए प्रणाम करता हूँ। ॐ ह्रीं सम्यग्मिथ्यात्व कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२।।

दर्शन में कुछ मल उपजाय, करै समल नहिं मूल नसाय।
सम्यक्-प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार।।२३।।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-प्रकृति-मिथ्यात्व-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्यग्दर्शन में कुछ मल/चल, मल, अगाढ़ दोष उत्पन्न होने; परन्तु मूल से नष्ट नहीं होने में कारणभूत सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्व/दर्शन-मोहनीय का निवारण कर सिद्ध हुए सुख-कारक भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सम्यक् प्रकृति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३।।

(अब, अनन्तानुबन्धी-चतुष्क से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

धर्म-मार्ग में उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार।।२४।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी-क्रोध-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में दोष-सहित मिथ्यात्व हो धर्म के मार्ग में रोष/क्रोध उत्पन्न होता है; उस अनन्त के साथ अनुबन्ध करने वाले अनन्तानुबन्धी क्रोध कर्म का निवारण कर सिद्ध हुए सुख-कारक भगवान के लिए प्रणाम है।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी क्रोध कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४।।

देव-धर्म-गुरुसों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार।।२५।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी-मान-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में मिथ्या श्रद्धान हो देव, धर्म, गुरु से अभिमान करता है; उस अनन्तानुबन्धी मान कर्म का निवारण कर सिद्ध हुए सुखकारक भगवान के लिए प्रणाम है।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी मान कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५।।

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, प्रणमूँ सिद्ध महा सुखकार।।२६।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी-माया-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में मिथ्यात्व हो जाने से धर्म की रीति/पद्धति/क्रियाओं में छल पूर्वक

प्रवृत्ति करता है; उस अनन्तानुबन्धी माया कर्म का निवारण कर सिद्ध हुए सुख-कारक भगवान के लिए प्रणाम है।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी माया कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६।।

लोभ उदय निर्मालय दर्ब, भक्षे महानिंद मति सर्व।
यह अनन्त अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार।।२७।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी-लोभ-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस लोभ के उदय में सम्पूर्ण बुद्धि, महा निन्दनीय/मिथ्यात्वरूप हो जाने से निर्माल्य द्रव्य का भक्षण/सेवन करता है; उस अनन्तानुबन्धी का निवारण कर सिद्ध हुए सुख-कारक भगवान के लिए प्रणाम है।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी लोभ कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७।।

(अब, अप्रत्याख्यानावरण-चतुष्क से रहित सिद्ध भगवान को नमस्कार करते हैं।)

सुन्दरी : **क्रोध करि अणुव्रत नहिं लीजिए, चरितमोह प्रकृति सु भनीजिए।**
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो।।२८।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण-क्रोध-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चारित्र-मोहनीय कर्म की अप्रत्याख्यानावरण क्रोध प्रकृति के उदय में अणुव्रत ग्रहण नहीं हो सकते हैं। उसका नाश कर हुए सिद्ध भगवान को नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण क्रोध से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८।।

मान करि अणुव्रत न हो कदा, रहै अव्रत युत दर्शन सदा।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो।।२९।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण-मान-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अप्रत्याख्यानावरण मान प्रकृति के उदय में अणुव्रत रूप परिणाम नहीं हो सकते हैं; सम्यग्दर्शन-सहित सदा अव्रत भाव ही रहते हैं। उसे नष्ट कर हुए सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण मान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९।।

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रता कौ जहँ उद्योत है।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो।।३०।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण-माया-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अप्रत्याख्यानावरण माया का उद्योत होने पर देशव्रती श्रावक नहीं हो सकते हैं। उसे नष्ट कर हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण माया से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०।।

मोह लोभ चरित जे जिय बसे, देशव्रत श्रावक नहिं ते लसे।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो।।३१।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण-लोभ-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस जीव में चारित्र-मोहनीय कर्म की अप्रत्याख्यानावरण लोभ प्रकृति का उदय रहता है; वह देशव्रती श्रावकरूप से सुशोभित नहीं होता है/उसके ये भाव नहीं होते हैं। उसे नष्ट कर हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण लोभ से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१।।

(अब, प्रत्याख्यानावरण-चतुष्क से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

अडिल्ल : **प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,**
देशव्रती सों सकल व्रत नाहीं धरे।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है।।३२।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण-क्रोध-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चारित्र-मोहनीय कर्म की प्रत्याख्यानावरण क्रोध प्रकृति के उदय में देशव्रत रूप आचरण हो जाने पर भी सकल व्रत धारण नहीं कर पाते हैं। उसका नाश कर शिव-धाम-प्राप्त करने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण क्रोध से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२।।

प्रत्याख्यानभिमान महत्तम शक्ति है,
जास उदय पूरण संयम अव्यक्त है।।चारितमोह...।।३३।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण-मान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चारित्र-मोहनीय कर्म की प्रत्याख्यानावरण मान नामक महा शक्ति-शाली प्रकृति के उदय में पूर्ण/सकल संयम अव्यक्त रहता है। उसका.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण मान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३।।

प्रत्याख्यानी माया मुनि-पद कों हतै,
श्रावक व्रत पूरण नहीं खंडे जासतैं।।चारितमोह...।।३४।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण-माया-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चारित्र-मोहनीय कर्म की प्रत्याख्यानावरण माया प्रकृति के उदय में श्रावक के व्रतों का पूर्ण खण्डन नहीं होने पर भी मुनि पद का पूर्ण घात हो जाता है। उसका...नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण माया से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४।।

श्रावक पद में जास लोभ कौ वास है,
प्रत्याख्यानी श्रुत में संज्ञा तास है।

चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है।।३५।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण-लोभ-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चारित्र-मोहनीय कर्म की जिस लोभ प्रकृति का वास/उसके उदय में होने वाले भाव श्रावक पद/देशव्रत में हैं; उसे आगम में प्रत्याख्यानावरण कहते हैं। उसका नाश कर शिव-धाम को प्राप्त हुए सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण लोभ से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५।।

(अब, संज्वलन-चतुष्क से रहित सिद्ध भगवान की वन्दना करते हैं।)

भुजंगप्रयात : **यथाख्यात चारित्र को नाश कारा,**
महाव्रत कौ जासमें हो उजारा।
यही संज्वलन क्रोध सिद्धान्त गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया।।३६।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-क्रोध-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यथाख्यात चारित्र को नष्ट करने वाले जिसमें महाव्रत प्रकाशित होते हैं; उसे ही सिद्धान्त में संज्वलन क्रोध कहा गया है। उसे नष्ट करने वाले सिद्ध भगवान के चरणों में नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संज्वलन क्रोध से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६।।

रहै संज्वलन रूप उद्योत जेतैं,
न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेतैं।
यही संज्वलन मान सिद्धान्त गाया, नमूँ सिद्ध....।।३७।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-मान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ तक संज्वलन मान प्रकाशित रहता है; वहाँ तक परिपूर्ण शुद्ध भाव नहीं होते हैं। उसे ही सिद्धान्त में संज्वलन मान कहा गया है। उसे .... नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संज्वलन मान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३७।।

बहै संज्वलन की जहाँ मंद धारा,
लहै है तहाँ शुक्लध्याना उभारा।
यही संज्वलन माया सिद्धान्त गाया, नमूँ सिद्ध....।।३८।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-माया-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ संज्वलन माया का मन्द उदय रहता है; वहाँ शुक्ल-ध्यान प्रगट हो जाता है। सिद्धान्त में उसे ही संज्वलन माया कहा गया है। उसे ...... नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संज्वलन माया से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३८।।

जहाँ संज्वलन लोभ है रंच नाहीं,
निजानंद को वास होवे तहाँ ही।
यही संज्वलन लोभ सिद्धान्त गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया।।३९।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-लोभ-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ संज्वलन लोभ रंच-मात्र भी नहीं है; वहीं निजानन्द का वास है/अपनी शाश्वत सत्ता में परिपूर्ण स्थिरता है। सिद्धान्त में उसे ही संज्वलन लोभ कहा गया है। उसे नष्ट करने वाले सिद्ध भगवान के चरणों में नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संज्वलन लोभ से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार है; अर्घ्यं...।।३९।।

(अब, नोकषायों से रहित सिद्ध भगवान की पूजन करते हैं।)

मोदक : **जो करि हास्य भाव जुत होतहिं, हास्य किये पर की यह पातहिं।**
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं।।४०।।

ॐ ह्रीं हास्य-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके कारण हास्य भाव होते ही दूसरों को पतित हुआ देखकर उसकी हँसी करता है। हे तीनों लोकों के नाथ! उस हास्य को आपने नष्ट कर दिया है; अत: हाथ जोड़कर, शीश झुकाकर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं हास्य कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०।।

प्रीत करै पर सों रति मानहिं, सो रति भेद विधी तिस जानहिं।।सो तुम...।।४१।।

ॐ ह्रीं रति-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके कारण दूसरों से प्रीति/स्नेह करता है, उसे चारित्र-मोहनीय कर्म का रति नामक भेद जानना चाहिए। हे जगन्नाथ! आपने उस रति कर्म को......करता हूँ।

ॐ ह्रीं रति कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१।।

जो परसों परसन्न न हो मन, आरति रूप रहै नित आनन।। सो तुम ...।।४२।।

ॐ ह्रीं अरति-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में मन दूसरों से प्रसन्न नहीं होता है, मुख सदा म्लान बना रहता है; उस अरति कर्म को हे जगन्नाथ! आपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अरति कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२।।

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सु शोकहिं। सो तुम ...।।।।४३।।

ॐ ह्रीं शोक-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इष्ट का वियोग हो जाने पर, जिस कर्म के उदय में खेदमय परिणामरूप शोक होता है; उस शोक को हे जगन्नाथ! आपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं शोक कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३।।

हो उद्वेग उच्चाटन रूपहिं, मन तन कंपित होत अरूपहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं।।४४।।

ॐ ह्रीं भय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में उद्वेग/घबराहट और उच्चाटन/अस्थिरता के कारण मन और तन कम्पित हो जाते हैं; उस भय नामक कर्म को हे जगन्नाथ! आपने नष्ट कर दिया है; अतः हाथ जोड़कर, शीश झुकाकर आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं भय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४।।

सवैया : जो पर कौ अपराध उघारत, जो अपनौ कछु दोष न जानै।
जो पर के गुण औगुण जानत, जो अपने गुण को प्रगटानै।।
सो जिनराज बखान जुगुप्सित, है जियनो विधि के वश ऐसौ।
हे भगवंत! नमूँ तुमकौं तुम, जीति लियौ छिन में अरि तैसौ।।४५।।

ॐ ह्रीं जुगुप्सा-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो दूसरों के अपराधों/दोषों को प्रकाशित करता है, परन्तु अपने किन्हीं भी दोषों को नहीं जानता है; जो अन्य के गुणों को अवगुणरूप में जानता है और अपने गुणों को दूसरों के लिए बताता रहता है; इन भावों को जिनेन्द्र भगवान ने जुगुप्सा कहा है। संसारी जीव इस कर्म के अधीन हैं। हे भगवान! आपने ऐसे शत्रु को भी क्षण भर में जीत लिया है; अतः आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं जुगुप्सा कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५।।

जो नर नारि रमावन की, निजसौं अभिलाष धरै मन माहीं।
सो अति ही परकाश हिये नित, काम की दाह मिटै छिन नाहीं।।
सो जिनराज बखान नपुंसक वेद हनौ विधि के वश ऐसौ।
हे भगवंत! नमूँ तुमकौं तुम, जीति लियौ छिन में अरि तैसौ।।४६।।

ॐ ह्रीं नपुंसक-वेद-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्त्री-पुरुषों को अपने साथ रमाने की अपने मन में इच्छा करता हुआ जो अत्यधिक उत्कण्ठा पूर्वक हृदय में विषय-वासना धारण कर, उससे उत्पन्न काम की दाह को क्षण मात्र के लिए भी नष्ट नहीं कर पाता है; उसे जिनेन्द्र भगवान ने नपुंसक वेद कहा है। इसके अधीन अनेक संसारी जीव हैं। हे भगवान! आपने ऐसे शत्रु को क्षण भर में जीत लिया है; अतः आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं नपुंसक वेद से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६।।

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरन से कछु आनन्द मानै।
किंचित काम जगै उर में नित, शांति सुभावन की सुधि ठानै।।
सो जिनराज, बखानत है, नर-वेद हनौ विधि के वश ऐसौ।
हे भगवंत! नमूँ तुमकौं, तुम जीत लियौ छिन में अरि तैसौ।।४७।।

ॐ ह्रीं पुरुष-वेद-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्त्री के साथ रमण करने का भाव मन में धारण करता हुआ जो दूसरों से कुछ आनन्द मानता है; मन में जागृत थोड़े से भी काम/विषय-वासना को सदा ही शान्त करने के लिए स्वभावों का/अच्छे भावों का अवलम्बन लेता है; उसे जिनेन्द्र भगवान ने पुरुष वेद कहा है। इसके अधीन अनेक संसारी जीव हैं। हे भगवान! आपने ऐसे शत्रु को क्षण भर में जीत लिया है; अत: आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पुरुष वेद से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७।।

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ़ न जानत कोई।
हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई।।
सो जिनराज बखानत है, तिय-वेद हनौ विधि के वश ऐसौ।
हे भगवंत! नमूँ तुमकौं, तुम जीति लियौ छिन में अरि तैसौ।।४८।।

ॐ ह्रीं स्त्री-वेद-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुरुष के साथ रमण करने में सुख मानने वाले जिसके अंतरंग रहस्य को कोई जान नहीं पाता है; हाव, भाव, विलास, लज्जा को मन में धारण किए हुए जो आतुरता पूर्वक प्रवर्तने पर भी तृप्त नहीं होती है; उसे जिनेन्द्र भगवान ने स्त्री वेद कहा है। अनेक संसारी जीव इसके वश में हैं। हे भगवान! आपने ऐसे शत्रु को क्षण भर में जीत लिया है; अत: आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्त्री वेद से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८।।

(अब, आयुष्क कर्म और उसकी चार प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान की स्तुति, उनन्चास से त्रेपन पर्यन्त पाँच छन्दों द्वारा करते हैं।)

वसन्ततिलका :

आयु प्रमाण दृढ़ बंधन और नाहीं,
गत्यानुसार थिति पूरण कर्ण नाहीं।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा।।४९।।

ॐ ह्रीं आयु-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गति के अनुसार स्थिति पूर्ण करने के लिए आयुष्क कर्म के समान अन्य कोई दृढ़

बंधन नहीं है। उसे भी नष्ट करने वाले हे देवों के नाथ! संसार से पार होने के लिए हाथ जोड़कर आपकी वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं आयु-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९।।

जो है कलेश अवधि सब होत जासौं,
तेतीस सागर रहे थिति नर्क तासौं।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा।।४९।।

ॐ ह्रीं नरकायु-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसकी अवधि/स्थिति पूर्णतया दुःखमय है; अतः जिसके कारण नरक में तेतीस सागर पर्यन्त दुःख भोगते हुए ही रहते हैं; उसे भी नष्ट करने वाले हे देवनाथ! संसार से पार होने के लिए हाथ जोड़कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं नरकायु से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०।।

याही प्रकार जितने दिन देव देही,
नासै अकाल नहिं जे सुर आयु से ही।।सोई....।।५१।।

ॐ ह्रीं देवायु-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इसी प्रकार अकाल में नष्ट नहीं होने से देवायु का उदय जितने काल तक रहता है; उतने काल तक देव का शरीर स्थिर रहता है। उसे भी ...... करता हूँ।

ॐ ह्रीं देव-आयु से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१।।

जासों करैं त्रियग की थिति आउ पूरी,
सोई कहो त्रिजग आयु महालघूरी।।सोई....।।५२।।

ॐ ह्रीं तिर्यंचायु-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके कारण उत्कृष्ट-जघन्य भेदों वाली तिर्यंच की स्थिति पूर्ण करता है; वही तिर्यग् आयुष्क है। उसे भी ..... करता हूँ।

ॐ ह्रीं तिर्यंच-आयु से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२।।

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको,
तेते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको।।सोई....।।४९।।

ॐ ह्रीं मनुष्यायु-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जब तक मनुष्य आयुष्क कर्म का उदय रहता है; तब तक मनुष्य रूप पर्याय को भोगना पड़ता है। उसे भी ...... करता हूँ।

ॐ ह्रीं मनुष्य-आयु से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३।।

(अब, नाम-कर्म और उसकी तेरानवें प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति चौवन से लेकर एक सौ छ्यालीस/सैंतालीस पर्यन्त तेरानवें/चौरानवें छन्दों द्वारा करते हैं। उनमें से सर्व प्रथम चार गति से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

पद्धड़ी : **जो करे जीव को बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार।**
सो नामकर्म तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उन भक्ति लीन।।५४।।

ॐ ह्रीं नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे चित्रकार अनेक प्रकार के चित्र बनाता है; उसी प्रकार जो जीव को अनेक प्रकार का करता है, वह नाम-कर्म है। उसे नष्ट करने वाले आपके लिए, मैं सदा हृदय से भक्ति में लीन होकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४।।

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय।
सो नरकगती तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन।।५५।।

ॐ ह्रीं नरक-गति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में नरक में जाकर नारकी का शरीर प्राप्त कर अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं; उस नरक गति नाम-कर्म का आपने नाश किया है। हृदय को भक्ति में लीन कर मैं सदा आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं नरक गति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५।।

जासों उपजे तिर्यंच जीव, रहै ज्ञानहीन मल युत सदीव।
सो तिर्यग्गति तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन।।५६।।

ॐ ह्रीं तिर्यंच-गति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में तिर्यंच में उत्पन्न होकर यह जीव सदा ही ज्ञान में हीन और मल-युक्त रहता है; उस तिर्यंच गति का आपने नाश किया है। हृदय को भक्ति में लीन कर मैं सदा आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं तिर्यंच गति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६।।

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊँच ताको उद्योत।
सो मानुष गति तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन।।५७।।

ॐ ह्रीं मनुष्य-गति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में उच्चता-निम्नता सहित मनुष्य होता है; उस मनुष्य गति नाम-कर्म का आपने नाश कर दिया है। हृदय को भक्ति में लीन कर मैं सदा आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मनुष्य गति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७।।

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय।
सो देवगती तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन।।५८।।

ॐ ह्रीं देव-गति-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में चार प्रकार के देव पद को प्राप्त कर विषयातुरता को मिटाने के उपाय रूप में भोगों को निरन्तर भोगता है; उस देव गति का आपने नाश कर दिया है।

ॐ ह्रीं देव गति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८।।

(अब, पाँच जाति से रहित सिद्ध भगवान का यशोगान करते हैं।)

कामिनी-मोहन/लक्ष्मीधरा :

एक ही भाव सामान्य का पावना, जीव की जाति कों भेद सो गावना।
होत जो थावरा एक इन्द्री कहौ, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहौ।।५९।।

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय-जाति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय से जीव एक जैसे सामान्य भाव को प्राप्त होता है, वह जीव की जाति का भेद है। उसमें स्थावर एक इन्द्रिय जाति वाले हैं। उसे नष्ट करने वाले सिद्धों के चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय जाति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९।।

फर्स के साथ में जीभ जो आ मिले, पाँयसों आपने आप भूपर चले।
गामिनी कर्म सो दोय इन्द्री कहौ, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहौ।।६०।।

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रिय-जाति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दो इन्द्रिय जाति नामक नाम-कर्म के उदय में स्पर्शन के साथ जीभ/रसन इन्द्रिय भी मिल जाती है; पैरों से अपने आप पृथ्वी पर चलते हुए गमन करते हैं। उसे नष्ट करने वाले सिद्धों के चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं दो इन्द्रिय जाति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०।।

नाक हो और दो आदि के जोड़ में, हो उदय चालना योगसों दोल में।
गामिनी कर्म सो तीन इन्द्री कहौ, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहौ।।६१।।

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रिय-जाति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीन इन्द्रिय जाति नामक नाम-कर्म के उदय में पूर्वोक्त स्पर्शन और रसन के साथ दो नथुनों वाली नाक/घ्राण इन्द्रिय और मिल जाती है; विहायोगति के उदय में, योग के अनुसार गमन करते हैं। उसे नष्ट करने वाले सिद्धों के चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं तीन इन्द्रिय जाति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१।।

आँख हो नाक हो जीभ हो फर्श हो, कान के शब्द का ज्ञान जामें न हो।
गामिनी कर्म सो चार इन्द्री कहौ, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहौ।।६२।।

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रिय-जाति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चार इन्द्रिय जाति नामक नाम-कर्म के उदय में गमन क्रिया-युक्त स्पर्शन, जीभ, नाक, आँख होती है; परन्तु कान नहीं होने से शब्दों का ज्ञान उन्हें नहीं होता है। उसे नष्ट करने वाले सिद्धों के चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं चार इन्द्रिय जाति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२।।

कान भी आ मिले जीव आ जाति में, हो असंज्ञी सुसंज्ञि दो भाँति में।
गामिनी कर्म की पंच इन्द्री कहौ, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहौ।।६३।।

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रिय-जाति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पाँच इन्द्रिय जाति नामक नाम-कर्म के उदय में गमन क्रिया-युक्त पूर्वोक्त चार/स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु के साथ कान भी मिल जाते हैं। इन पाचों इन्द्रिय-सम्पन्न जीवों के असंज्ञी और सुसंज्ञी/संज्ञी - ये दो भेद हैं। उसे नष्ट करने वाले सिद्धों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं पाँच इन्द्रिय जाति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३।।

(अब, पाँच शरीर से रहित सिद्ध भगवान की पूजन करते हैं।)

लावनी : **हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्म की प्रकृति भनी।**
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृति के उदय तनी।।
भये अकाय अमूरति आनंद, पुंज चिदातम ज्योति धनी।
नमूँ तुम्हें कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी।।६४।।

ॐ ह्रीं औदारिक-शरीर-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो उदार/स्थूल, प्रगट है; वह औदारिक है। औदारिक शरीर नामक नाम-कर्म की प्रकृति के उदय में यह जीव औदारिक शरीर प्राप्त करता है। हे भगवान! आप समस्त रोगों के स्थानभूत शरीर को नष्ट कर अकाय, अमूर्तिक, आनन्द के पुंज, चेतनात्मक ज्योति के स्वामी/सर्वज्ञ हो गए हैं। आपको दोनों हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं औदारिक शरीर से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४।।

निज शरीर को अणिमादिक करि, बहु प्रकार प्रणमाय वरे।
वैक्रिय तन कहलावे है यह, देव नारकी मूल धरे।
भये अकाय अमूरति आनंद, पुंज चिदातम ज्योति धनी।
नमूँ तुम्हें कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी।।६५।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक-शरीर-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वैक्रियिक शरीर नामक नाम-कर्म की प्रकृति के उदय में मुख्य रूप से देव और

नारकिओं को प्राप्त होने वाला; स्वयं को अणिमा आदि अनेक प्रकार से परिणमित कराने की क्षमता वाला, वैक्रियिक शरीर कहलाता है। हे भगवान! आप समस्त रोगों के स्थानभूत शरीर को नष्ट कर अकाय, अमूर्तिक, आनन्द के पुंज, चेतनात्मक ज्योति के स्वामी हो गए हैं। आपको दोनों हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक शरीर से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५।।

धवल वर्ण शुभ योगी संशय-हरण अहारक का पुतला।
जो प्रमत्त गुणथानक मुनि के, देह औदारिक सों निकला।।
भये अकाय अमूरति आनंद, पुंज चिदातम ज्योति धनी।
नमूँ तुम्हें कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी।।६६।।

ॐ ह्रीं आहारक-शरीर-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म की आहारक शरीर नामक प्रकृति के उदय में प्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिराज के औदारिक शरीर से आहारक का धवल-वर्णी, शुभ योगी, पुतला संशय का निवारण करने आदि के लिए निकलता है। हे भगवान! आप समस्त रोगों के स्थानभूत शरीर को नष्ट कर अकाय, अमूर्तिक, आनन्द के पुंज, चेतनात्मक ज्योति के स्वामी हो गए हैं। दोनों हाथ जोड़कर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आहारक शरीर से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६।।

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करण।
तैजस नाम शरीर शास्त्र में, गावत हैं नहिं तेज वरण।।भये...।।६७।।

ॐ ह्रीं तैजस-शरीर-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म की तैजस शरीर नामक प्रकृति के उदय में बनने वाले; पौद्गलिक शरीर/औदारिक आदि और कार्मण वर्गणा से बने कार्मण शरीर में तेज उत्पन्न करने वाले शरीर को शास्त्रों में तैजस शरीर कहते हैं। इसके विना तेजस्वी वर्ण नहीं होता है। हे भगवान!....करता हूँ।

ॐ ह्रीं तैजस शरीर से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७।।

पुद्गलीक वरगणा जीवसों, एक क्षेत्र अवगाही है।
नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहै।।भये...।।६८।।

ॐ ह्रीं कार्मण-शरीर-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म की कार्मण शरीर नामक प्रकृति के उदय में जो पौद्गलिक वर्गणाएँ जीव के साथ एक क्षेत्र में रहते हुए नवीन कर्म-बन्ध में मूल कारण होती हैं; उन्हें कार्मण शरीर कहते हैं। हे भगवान!.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं कार्मण शरीर से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८।।

(अब, पाँच संघात से रहित भगवान की गुण-गाथा गाते हैं।)

इन्द्रवज्रा : **जेते प्रदेशा तन बीच आवैं, सारे मिलैं जोड़ न छिद्र पावैं।**
संघात नामा जिय देह जानौ, पूजूँ तुम्हैं सिद्ध यह कर्म हानौ।।६९।।

ॐ ह्रीं औदारिक-संघात-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शरीर के बीच में जितने प्रदेश आते हैं, वे सभी पूर्णतया छिद्र-रहित रूप में परस्पर मिल-जुड़ जाते हैं। यही उस शरीर संबंधी संघात है। इस कर्म को नष्ट करने वाले सिद्ध भगवान की, मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं औदारिक संघात से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९।।

वैक्रिय के जोड़ जो होत ताही, संघात नामा जिन वैन माहीं।।संघात....।।७०।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक-संघात-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वैक्रियिक शरीर के जोड़मय प्रदेशों का परस्पर मिल-जुलकर छिद्रों से पूर्णतया रहित हो जाने को जिनेन्द्र भगवान की वाणी में वैक्रियिक शरीर संघात कहा है। इस कर्म....करता हूँ।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक संघात से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०।।

ऐसे प्रकारा तन में अहारा, संधी मिलाया कर वेतसारा।।संघात....।।७१।।

ॐ ह्रीं आहारक-संघात-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इसी प्रकार आहारक शरीर में संधिओं को मिलाकर पूर्णतया छिद्र-रहित करने वाला आहारक शरीर संघात है। इस कर्म.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं आहारक संघात से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१।।

तेजस्स के अंग उपंग सारे, संधी मिलाया तिस माँहि धारे।।संघात....।।७२।।

ॐ ह्रीं तैजस-संघात-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तैजस शरीर के सभी अंग-उपांगों की संधि मिलाकर, उन्हें पूर्णतया छिद्र-रहित करने वाला तैजस शरीर संघात है। इस कर्म......करता हूँ।

ॐ ह्रीं तैजस संघात से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२।।

ज्ञानादि आवर्ण वो कर्म-काया, ताको मिलाया श्रुत माँहि गाया।।संघात....।।७३।।

ॐ ह्रीं कार्मण-संघात-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानावरण आदि कर्मों की काय को मिलाकर छिद्र-रहित करने वाला कार्मण शरीर संघात नाम-कर्म है - ऐसा श्रुत में बताया गया है। इस कर्म......करता हूँ।

ॐ ह्रीं कार्मण संघात से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३।।

(अब, पाँच बन्धन से रहित सिद्ध भगवान का यशोगान करते हैं।)

चौबोला : **पुद्गलीक वर्गणा जोग तैं, जब जिय करत अहारा।**
प्रणवावे तिनकौ एकत्र करि, बंध उदय अनुसारा।।
यही औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा।।७४।।

ॐ ह्रीं औदारिक-बन्धन-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जब जीव योग के कारण पुद्गल वर्गणाओं को ग्रहण कर बन्ध के उदयानुसार एकत्रित कर परिणमाता है, तब उसे औदारिक शरीर बन्धन कहते हैं। हे भगवान! आप उसका छेदन कर पूर्ण सुनिश्चित, अबन्ध, अनुपम दशा को प्राप्त हुए हैं। हृदय में भक्ति को धारण कर/भक्ति-भाव पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं औदारिक बन्धन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४।।

वैक्रियिक तन परमाणु मिल, परस्परा अनिवारा।
हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा।।
वैक्रियिक बन्धन तुमने यह, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा।।७५।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक-बन्धन-छेदकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वैक्रियिक शरीर परमाणुओं का मिलकर परस्पर में बाधा-रहित हो स्कन्ध पर्यायरूप परिणमित हो जाना, वैक्रियिक शरीर बन्धन है। उसका छेदन कर सुनिश्चित, अबन्धमय, काय-रहित, अनुपम दशा को प्राप्त सिद्ध भगवान की, भक्ति पूर्ण हृदय से पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक बन्धन का छेद करने वाले सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५।।

मुनि शरीर सों बाहिज निसरे, संशय नाशनहारा।
ताको मिलैं प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा।।
यही आहारक बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा।।७६।।

ॐ ह्रीं आहारक-बन्धन-छेदकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संशय का निवारण करने आदि के लिए मुनि के शरीर से बाहर निकलने वाले प्रदेशों/परमाणुओं का परस्पर में संबंधित रहना, आहारक शरीर बन्धन है। उसका छेदन कर सुनिश्चित, अबन्धमय, काय-रहित अनुपम दशा को प्राप्त सिद्ध भगवान की, भक्ति पूर्ण हृदय से पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आहारक बन्धन का छेद करने वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६।।

दीप्त जोति जो कारमाण की, रहै निरन्तर लारा।
जहाँ तहाँ नहिं बिखरैं किन ज्यों, बहै एक ही धारा।।
तैजस नामा बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा।।७७।।

ॐ ह्रीं तैजस-बन्धन-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कार्मण आदि शरीरों में दीप्ति लाने वाले तैजस शरीर के यहाँ-वहाँ बिखरे कणों को बहती हुई एक धारा के समान निरन्तर बाँधने वाला, तैजस शरीर बन्धन है। उसका छेदन कर सुनिश्चित अबन्धमय, काय-रहित, अनुपम दशा को प्राप्त सिद्ध भगवान की, भक्ति-पूर्ण हृदय से पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं तैजस बन्धन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७।।

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, पुद्गल जाति पसारा।
एक क्षेत्र अवगाही जियको, दुविधि भाव करतारा।।
कारमाण यह बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा।।७८।।

ॐ ह्रीं कार्मण-बन्धन-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जीव के शुभ-अशुभ - ये दो भाव होने में कारणभूत, पूर्णतया पुद्गल जातिमय, ज्ञानावरण आदि द्रव्य-कर्मों का एकत्रित रह एक क्षेत्र-अवगाही बना रहना, कार्मण शरीर बन्धन है। उसका छेदन कर सुनिश्चित, अबन्धमय, काय-रहित, अनुपम दशा को प्राप्त सिद्ध भगवान की, भक्ति पूर्ण हृदय से पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं कार्मण बन्धन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८।।

(अब, छह संस्थान से रहित सिद्ध भगवान का गौरव गाते हैं।)

रोला : **तन आकृत संस्थान आदि समचतुर बखानो,**
ऊपर तले समान यथाविधि सुन्दर जानो।।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ, भव्यनि प्रति सुखप्रद।।७९।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्र-संस्थान-विमुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शरीर की आकृति को संस्थान कहते हैं। ऊपर-नीचे समान, नपे-तुले के तुल्य सुडोल, सुन्दर आकार को पहला समचतुरस्र संस्थान कहा गया है। इस विपरीत स्वरूप का त्याग कर, अपने आत्म-पद को प्राप्त, कल्याण के बीजभूत कारण, भव्यों को सुख देने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं समचतुरस्र संस्थान से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९।।

ऊपर से हौ थूल तले हौ न्यून देह जिस,
परिमण्डल निग्रोध नाम वरणो सिद्धांत तिस।।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ, भव्यनि प्रति सुखप्रद।।८०।।

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डल-संस्थान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस शरीर का आकार बरगद के वृक्ष-समान ऊपर मोटा और नीचे पतला होता है, उसे सिद्धान्त में न्यग्रोध परिमण्डल कहते हैं। इस विपरीत स्वरूप का त्याग कर, अपने आत्म-पद को प्राप्त, कल्याण के बीजभूत कारण, भव्यों को सुख देनेवाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं न्यग्रोध-परिमण्डल संस्थान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९।।

नीचै सै हौ थूल न्यून होवै उपराँही,
बामई सम वामीक देह जिन आज्ञा माँही।।यह....।।८१।।

ॐ ह्रीं वामीक-संस्थान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस शरीर का आकार सर्प आदि की वाँमी/निवास-स्थान के समान, नीचे मोटा और ऊपर पतला होता है; उसे जिनेन्द्र भगवान वामीक/स्वाति संस्थान कहते हैं। इस विपरीत......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्वाति संस्थान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१।।

जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी,
कुब्ज नाम संस्थान ताहि बरणैं जिन वानी।।यह....।।८२।।

ॐ ह्रीं कुब्जक-संस्थान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो जीव कूबड़मय आकार वाले शरीर को प्राप्त करते हैं, उसे जिनवाणी कुब्जक संस्थान कहती हैं। इस विपरीत......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कुब्जक संस्थान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२।।

लघुसौं ठिगना रूप एम तन होवे जाकौ,
वामन है परसिद्ध लोक में कहिये ताकौ।।यह....।।८३।।

ॐ ह्रीं वामन-संस्थान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसका शरीर लघु/अत्यन्त छोटा/ठिगना है, उसे लोक में प्रसिद्ध वामन संस्थान कहते हैं। इस विपरीत......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं वामन संस्थान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३।।

जित तित बहु आकार कहीं नहिं हो इकसारूँ,
हुँडक अति असुहान पाप फल प्रगट उघारूँ।।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ, भव्यनि प्रति सुखप्रद।।८४।।

ॐ ह्रीं हुण्डक-संस्थान-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ-तहाँ अनेक प्रकार का आकार होना, कहीं भी एक समान आकार नहीं होना, यह असुहावना, पाप का फल प्रगट रूप में बताने वाला, हुण्डक संस्थान है। इस विपरीत स्वरूप का त्याग कर, अपने आत्म-पद को प्राप्त, कल्याण के बीजभूत कारण, भव्यों को सुख देने वाले सिद्ध भगवान के लिए नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं हुण्डक संस्थान से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४।।

(अब, तीन अंगोपांग से रहित सिद्ध भगवान की वन्दना करते हैं।)

लक्ष्मीधरा :

जीव आपभाव सों जु कर्म की क्रिया करेत,
अंग वा उपंग सौ शरीर के उदय समेत।
सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास।।८५।।

ॐ ह्रीं औदारिकांगोपांग-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जीव अपने भावों से जैसे कर्म की क्रिया करता है; उसी प्रकार कर्म का बन्ध होने पर शरीर के उदयानुसार अंग और उपांग होते हैं। उनमें से औदारिक शरीर संबंधी अंग-उपांग का नाश कर सिद्ध रूप हो, बाधाओं से रहित निवास प्राप्त करने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं औदारिक अंगोपांग से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५।।

देव नारकी शरीर मांस रक्त से न होत,
तास को अनेक भाँति आप दे सकै उद्योत।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास।।८६।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिकांगोपांग-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : देवों और नारकिओं के, मांस-रक्त से रहित शरीर अपने आप ही अनेक आकार-प्रकारों में परिणमित हो जाते हैं। उस वैक्रियिक शरीर के अंगोपांगों का नाश कर सिद्ध रूप हो, बाधाओं से रहित निवास प्राप्त करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं वैक्रियिक अंगोपांग से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६।।

साधु के शरीर मूल-तें कढ़े प्रसंसयोग,
संस को विध्वंसकार केवली सु लेत भोग।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास।।८७।।

ॐ ह्रीं आहारकांगोपांग-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मुनिराजों के मूल शरीर से निकलने वाले, प्रशंसा के योग्य, संशय का विध्वंस करने वाले, केवली के पाद-मूल पर्यन्त जाने वाले आहारक शरीर के अंग-उपांगों का नाश कर सिद्धरूप हो, बाधाओं से रहित निवास प्राप्त करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आहारक अंगोपांग से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७।।

(अब, छह संहननों से रहित सिद्ध भगवान की आराधना करते हैं।)

गीता : **संहनन बन्धन हाड़ होय अभेद वज्र सो नाम है,**
नाराच कीली वृषभ डोरी बाँधने को ठाम है।
है आदि कौ जौ संहनन जिम वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ परम आनन्दधार हो।।८८।।

ॐ ह्रीं वज्रर्षभ-नाराच-संहनन-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार से वज्र के समान; संहनन, बन्धन, हड्डिआँ, नाराच, कीली, वृषभ/वेष्टन, बाँधने के साधनरूप डोरी इत्यादि वज्र के समान अभेद्यरूप वज्र वृषभ नाराच संहनन नामक प्रथम बन्ध का त्याग कर परम आनन्द सम्पन्न हो, हे भगवान! आप बन्ध-रहित निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं वज्र वृषभ नाराच संहनन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८।।

ज्यों वज्र की कीली ठुकी हो हाड़ संधी में जहाँ,
सामान्य वृषभ जु जेवरी ताकरि बँधाई हो तहाँ।
है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनन्दधार हो।।८९।।

ॐ ह्रीं वज्रनाराच-संहनन-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें हड्डिओं के सन्धि-स्थानों में वज्र की कीली ठुकी है, सामान्य वृषभ/वेष्टन और सामान्य जेवरी/डोरी से बँधे हों, वह वज्रनाराच नामक दूसरा संहनन है। इस बन्ध का त्याग कर परम आनन्द-सम्पन्न हो, आप बन्ध-रहित निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं वज्रनाराच संहनन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९।।

नहिं वज्र की हो वृषभ अरु, नाराच भी नहीं वज्र हो,
सामान्य कीली करि ठुकी, सब हाड़ वज्र समान हो।
है तीसरा संहनन जो, नाराच ही परकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनन्दधार हो।।९०।।

ॐ ह्रीं नाराच-संहनन-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें सभी हड्डिआँ वज्र के समान होने पर भी वृषभ और नाराच वज्र के नहीं हैं तथा सन्धिओं में सामान्य कीलें ही ठुकी हैं, वह नाराच नामक तीसरा संहनन है। इस बन्ध का त्याग कर अबन्ध में रहने वाले आप परम आनन्द से सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं नाराच संहनन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०।।

हो जड़ित छोटी कीलिका, सो संधि हाड़ों की जबै,
कछु ना विशेषण वज्र के, सामान्य ही होवे सबै।
है चौथवाँ संहनन जो, नाराच अर्ध प्रकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनन्दधार हो।।९१।।

ॐ ह्रीं अर्ध-नाराच-संहनन-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें हड्डिओं की संधिआँ छोटी कीलों से जड़ित हैं, हड्डी आदि कुछ भी वज्र के नहीं हैं, सभी सामान्य ही हैं, वह अर्ध-नाराच नामक चौथा संहनन है। इस बन्ध का त्याग कर अबन्ध में रहने वाले आप परम आनन्द से सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं अर्ध-नाराच संहनन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१।।

जो परस्पर करि जड़ित होवे, संधि हाड़न की जहाँ,
नहिं कीलिका सौं ठुकी होवे, साल संधी के तहाँ।
है पाँचवाँ संहनन जो, कीलक नाम कहाय हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनन्दधार हो।।९२।।

ॐ ह्रीं कीलिक-संहनन-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें हड्डिओं के संधि-स्थान परस्पर जुड़े रहते हैं; उनमें कीलें ठुकी नहीं होती हैं, वह कीलिक नामक पाँचवाँ संहनन है। इस बन्ध का त्याग कर अबन्ध में रहने वाले आप परम आनन्द से सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं कीलिक संहनन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२।।

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे, संधि हाड़ोंमय सही,
केवल नसासों होय बेढी, मांससों लतपत रही।

अंतिम स्फाटिक संहनन यह, हीन शक्ति असार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनन्दधार हो।।९३।।

ॐ ह्रीं स्फाटिक-संहनन-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हड्डी आदि कुछ छिद्र-युक्त और कुछ मिली हुई होती हैं, हड्डिओं की संधिआँ मात्र नसों से वेष्टित और मांस से लथ-पथ होती हैं, वह असम्प्राप्ता-सृपाटिका नामक अंतिम छठवाँ संहनन है। इस बन्ध का त्याग (अभाव) कर अबन्ध में रहने वाले आप परम आनन्द से सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं असंप्राप्ता सृपाटिका संहनन से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३।।

(अब, पाँच वर्णों से रहित सिद्ध भगवान के गुण गाते हैं।)

दोहा : **वर्ण विशेष न स्वेत है, नामकर्म तन धार।**
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ, ताहि कर्मरज टार।।९४।।

ॐ ह्रीं श्वेत-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट श्वेत वर्ण आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं श्वेत नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४।।

वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।९५।।

ॐ ह्रीं पीत-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट पीत वर्ण आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पीत नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५।।

वर्ण विशेष न रक्त है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।९६।।

ॐ ह्रीं रक्त-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट रक्त/लाल वर्ण आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं रक्त/लाल नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६।।

वर्ण विशेष न हरित है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।९७।।

ॐ ह्रीं हरित-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट हरित वर्ण आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं हरित नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७।।

वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ, ताहि कर्मरज टार।।९८।।

ॐ ह्रीं कृष्ण-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट कृष्ण वर्ण आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कृष्ण नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८।।

(अब, दो गन्धों से रहित सिद्ध भगवान को नमस्कार करते हैं।)

गंध विशेष न शुभ कहो, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।९९।।

ॐ ह्रीं सुगन्ध-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाई जाने वाली विशिष्ट शुभ गन्ध/सुगन्ध आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सुगन्ध नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९।।

गंध विशेष न अशुभ है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।१००।।

ॐ ह्रीं दुर्गन्ध-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाई जाने वाली विशिष्ट अशुभ गन्ध/दुर्गन्ध आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं दुर्गन्ध नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००।।

(अब, पाँच रसों से रहित सिद्ध भगवान की स्तुति करते हैं।)

स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।१०१।।

ॐ ह्रीं तिक्त-रस-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट तिक्त/तीखा स्वाद आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं तिक्त रस से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१।।

स्वाद विशेष न कटुक है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।१०२।।

ॐ ह्रीं कटुक-रस-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट कटुक/कड़वा स्वाद आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कटुक रस से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२।।

स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ.....।।१०३।।

ॐ ह्रीं आम्ल-रस-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट आम्ल/खट्टा स्वाद आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आम्ल रस से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०३।।

स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ, ताहि कर्मरज टार।।१०४।।

ॐ ह्रीं मधुर-रस-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट मधुर स्वाद आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मधुर रस से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०४।।

स्वाद विशेष न कषाय है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।१०५।।

ॐ ह्रीं कषाय-रस-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट कषायला स्वाद आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कषाय रस से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०५।।

(अब, आठ प्रकार के स्पर्शों से रहित भगवान की यशोगाथा गाते हैं।)

फर्स विशेष न नर्म है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ...।।१०६।।

ॐ ह्रीं मृदुत्व-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट नरम/कोमल स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मृदुत्व स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०६।।

फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।१०७।।

ॐ ह्रीं कठिन-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट कठिन/कठोर स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कठिन स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०७।।

फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ...।।१०८।।

ॐ ह्रीं गुरु-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट भारी स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं गुरु स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०८।।

फर्स विशेष न अगुरु है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ, ताहि कर्मरज टार।।१०९।।

ॐ ह्रीं लघु-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट अगुरु/हल्का स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लघु स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०९।।

फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ...।।११०।।

ॐ ह्रीं शीत-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट शीत/ठण्डा स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शीत स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११०।।

फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ....।।१११।।

ॐ ह्रीं उष्ण-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला विशिष्ट उष्ण/गर्म स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं उष्ण स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१११।।

फर्स विशेष न चिकण है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ...।।११२।।

ॐ ह्रीं स्निग्ध-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला चिकना स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चिक्कण स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११२।।

फर्स विशेष न रूक्ष है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ...।।११३।।

ॐ ह्रीं रूक्ष-स्पर्श-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम-कर्म के उदय में धारण हुए शरीर में पाया जाने वाला रूखा स्पर्श आपमें नहीं है। उस कर्मरूपी रज को दूर कर स्वच्छ स्वरूपी हुए आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं रूक्ष स्पर्श से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११३।।

(अब, चार गत्यानुपूर्वी कर्म से रहित सिद्ध भगवान का गुण-गान करते हैं।)

मरहठा : **हो जो प्रजाप्त वर, पणइन्द्रीधर, जाय नर्क निरधार।**
विग्रहसु चाल में, अंतराल में, धरैं पूर्व आकार।।

सो नर्क नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार।।११४।।

ॐ ह्रीं नरक-गत्यानुपूर्वी-छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर्याप्तकों में श्रेष्ठ/विशिष्ट आयु-सम्पन्न पाँचों इन्द्रियों को धारण करने वाले का नरक जाना निश्चित हो जाने पर/नरक आयुष्क कर्म बँध जाने पर नरक जाते समय विग्रह गति वाले अन्तराल में आत्म-प्रदेशों का आकार पूर्व पर्याय के समान रहता है। इसमें कारणभूत कर्म को गणधर-देव, नरक गत्यानुपूर्वी नाम-कर्म कहते हैं। आपने उसे नष्ट कर शिव/सिद्ध गति प्राप्त कर ली है। भव से पार होने के लिए हम आपको नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं नरक गत्यानुपूर्वी के छेदक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११४।।

निजकाय छाँडकरि, अंत समय मरि, होय तिर्यग अवतार।
विग्रहसु चाल में, अन्तराल में, धरैं पूर्व आकार।।
सो तिर्यंच नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार।।११५।।

ॐ ह्रीं तिर्यंच-गत्यानुपूर्वी-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्त समय में शरीर को छोड़, मरण कर, तिर्यंच पर्याय में जन्म लेते समय विग्रह गति वाले अन्तराल में आत्मा के प्रदेशों का आकार पूर्व पर्याय के समान रहता है। इसमें कारणभूत कर्म को गणधर-देव, तिर्यंच गत्यानुपूर्वी नाम-कर्म कहते हैं। उसे नष्ट कर शिव गति पाने वाले आपको, भव से पार होने के लिए हम नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं तिर्यंच गत्यानुपूर्वी से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११५।।

हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुजगति सार।
विग्रहसु चाल में अन्तराल में धरै पूर्व आकार।।
सो मनुष्य नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार।।११४।।

ॐ ह्रीं मनुष्य-गत्यानुपूर्वी-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुभ-अशुभ-युक्त मिश्र परिणाम वाले या मोक्ष जाने वाले के सारभूत मनुष्य गति को प्राप्त करते समय विग्रह गति वाले अन्तराल में आत्मा के प्रदेशों का आकार पूर्व पर्याय के समान रहता है। इसमें कारणभूत कर्म को गणधर-देव, मनुष्य गत्यानुपूर्वी नामकर्म कहते हैं। उसे नष्ट कर शिव गति पाने वाले आपको भव से पार होने के लिए हम नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं मनुष्य गत्यानुपूर्वी से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११६।।

समकित सों मर वा कलेश करि, धरहिं देवगति चार।
विग्रहसु चाल में, अंतराल में, धरै पूर्व आकार।।
सो देव नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार।।११७।।

ॐ ह्रीं देव-गत्यानुपूर्वी-विमुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्यक्त्व पूर्वक मरण कर वैमानिक या संक्लेश को धारण कर चारों प्रकार के देवों में जन्म लेने वाले आत्मा के प्रदेशों का आकार विग्रह गति वाले अन्तराल में पूर्व पर्याय के समान रहता है। इसमें कारणभूत कर्म को गणधर-देव, देव गत्यानुपूर्वी नामकर्म कहते हैं। उसे नष्ट कर शिव गति पाने वाले आपको, भव से पार होने के लिए हम नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं देव गत्यानुपूर्वी से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११७।।

(अब, नामकर्म की अपिण्ड प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान की स्तुति करते हैं।)

त्रोटक : **तनभार भए निज घात ठनै, तिसकी कछु विधि ऐसी जु बनै।**
अपघात सुकर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भए तसु मूल हनौ।।११८।।

ॐ ह्रीं अपघात-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस नामकर्म के उदय में शरीर का आकार कुछ इसप्रकार का भारी आदि होता है; जिससे अपना ही घात हो जाता है/स्वयं के लिए ही बाधक बन जाता है; उसे सिद्धान्त में अपघात/उपघात कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अपघात नामकर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११८।।

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनि को निर्मूल करै।
परघाति सु कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भए तिस मूल हनौ।।११९।।

ॐ ह्रीं परघात-नामकर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में अन्य प्राणिओं को प्राण-रहित करने, कष्ट देने में कारणभूत विष आदि अनेक नाम वाले पदार्थ शरीर में होते हैं, उसे सिद्धान्त में परघात नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं परघात नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११९।।

अति तेजमई परदीप्त महा, रवि-बिंब विषै जिय भूमि लहा।
यह आतप कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भए तिस मूल हनौ।।१२०।।

ॐ ह्रीं अति-तेजमयी-आतप-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सूर्य के विमान में स्थित पृथ्वी-कायिक जीवों के शरीर में जिसके कारण अत्यधिक

तेजमय महा-दीप्ति होती है, उसे सिद्धान्त में आतप नामक नाम-कर्म कहा है। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं आतप नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२०।।

परकासमई जिम बिंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह इसी।
द्युति नाम सुकर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भए तिस मूल हनौ।।१२१।।

ॐ ह्रीं उद्योत-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चन्द्रमा के विमान में स्थित पृथ्वी-कायिक जीवों के शरीर जिस कारण प्रकाशमय होते हैं; उसे सिद्धान्त में द्युति/उद्योत नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं उद्योत नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२१।।

तन की थिति कारण स्वास गहै, स्वर अन्तर बाहर भेद वहै।
यह स्वास सुकर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२२।।

ॐ ह्रीं श्वास-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में शरीर की स्थिति में कारणभूत, अन्दर ग्रहण होने, बाहर छोड़ने रूप में प्रवाह-शील स्वर के माध्यम से श्वासोच्छ्वास होता है, उसे सिद्धान्त में श्वास/उच्छ्वास नाम-कर्म कहा गया है। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं श्वास कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२२।।

शुभ चाल चलैं अपनी जिसमें, शशि ज्यों नभ सोहत है तिसमें।
नभ में गति कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२३।।

ॐ ह्रीं (प्रशस्त) विहायोगति-नामकर्म-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसप्रकार चन्द्रमा आकाश में गमन करता हुआ सुशोभित होता है; उसी प्रकार जिसके उदय में अपनी चाल/गति शुभ होती है, उसे सिद्धान्त में प्रशस्त विहायोगति नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं प्रशस्त विहायोगति नाम-कर्म से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२३।।

(यहाँ अप्रशस्त विहायोगति संबंधी छन्द उपलब्ध नहीं हुआ है; अतः अनुवादक ने स्वयं बनाकर यह दिया है; धृष्टता के लिए उसे क्षमाकर, शोधार्थी शोध कर मूल ही देने का प्रयास कर, उसे अनुग्रहीत करेंगे।)

अपनी हो चाल अशुभ जिसमें, ज्यों ऊँट न सोहत है तिसमें।
नभ में गति कर्म सिद्धान्त भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२४।।

ॐ ह्रीं अप्रशस्त-विहायोगति-नाम-कर्म-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस प्रकार ऊँट का चलना सुशोभित नहीं होता है; उसीप्रकार जिसके उदय में अपनी चाल/गति अशुभ होती है, उसे सिद्धान्त में अप्रशस्त विहायोगति नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अप्रशस्त विहायोगति नामकर्म से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२४।।

इक इन्द्रिय जात विरोध मई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई।
त्रस नाम सुकर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२४।।

ॐ ह्रीं त्रस-नाम-कर्म-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक इन्द्रिय जाति को छोड़कर शेष चार इन्द्रिय जातिओं की जिसमें स्वाभाविक प्राप्ति होती है, उसे सिद्धान्त में त्रस नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं त्रस नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२४।।

इक इन्द्रिय जातहिं पावत है, अरु शेष न ताहि धरावत है।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२५।।

ॐ ह्रीं स्थावर-नाम-कर्म-विमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में एक इन्द्रिय जाति ही प्राप्त होती है, अन्य इन्द्रियों को धारण नहीं करता है, उसे सिद्धान्त में स्थावर नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं स्थावर नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२५।।

पर में परवेश न आप करैं, पर को निज में नहिं थाप धरैं।
यह बादर कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२६।।

ॐ ह्रीं बादर-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में प्राप्त शरीर का दूसरों में प्रवेश नहीं होता है और दूसरों का इसमें प्रवेश नहीं होता है, उसे सिद्धान्त में बादर नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं बादर नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२६।।

जल सों दवसों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै पर को न हरै।
यह सूक्षम कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२७।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में प्राप्त शरीर जल से, अग्नि से नष्ट नहीं होता है; सभी स्थानों पर

रहता हुआ भी दूसरों को कष्ट/बाधा नहीं देता है, उसे सिद्धान्त में सूक्ष्म नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म नामक नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२७।।

जिसतैं परिपूरणता करि है, जिन शक्ति समान उदय धरि है।
पर्याप्त सुकर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२८।।

ॐ ह्रीं पर्याप्त-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में प्राप्त शरीर आदि की पूर्णता होती है, अपनी शक्ति के अनुसार पर्याप्तिआँ पूर्ण विकसित हो जाती हैं, उसे सिद्धान्त में पर्याप्ति नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं पर्याप्त नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२८।।

परिपूरणता नहिं धार सकै, यह होत सभी साधारण कै।
अपरयापति कर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१२९।।

ॐ ह्रीं अपर्याप्त-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में प्राप्त शरीर पूर्णता धारण नहीं कर पाता है, सभी साधारण/लब्ध्यपर्याप्तक/क्षुद्रभव-धारिओं के होता है, उसे सिद्धान्त में अपर्याप्त नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अपर्याप्त नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२९।।

जिम लोह न भार धरै तन में, जिम आक न फूल उड़ै वन में।
है अगुरुलघु यह भेद भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१३०।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघु-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में शरीर न तो लोहे के समान अत्यधिक भारी होता है और न ही वन में उड़ने वाले आक के फूल-सम अत्यधिक हल्का होता है, उसे नाम-कर्म का अगुरुलघु नामक भेद कहा गया है। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अगुरुलघु नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३०।।

इक देह विषैं इक जीव रहै, इकलौ तिसकौ सब भोग लहै।
परतेक सुकर्म सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१३१।।

ॐ ह्रीं प्रत्येक-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में एक शरीर में एक ही जीव रहता है, वह अकेले ही उस संबंधी सभी भोगों को प्राप्त करता है; उसे सिद्धान्त में प्रत्येक नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं प्रत्येक नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३१।।

इक देह विषैं बहु जीव रहैं, इक साथ सभी तिस भोग लहैं।
यह भेद निगोद सिद्धांत भनौ, जग पूज्य भये तिस मूल हनौ।।१३२।।

ॐ ह्रीं साधारण-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में अनेकों जीव एक शरीर में रहते हुए सभी एक साथ ही उस संबंधी सभी भोगों को प्राप्त करते हैं, उसे सिद्धान्त में निगोद/साधारण नामक नाम-कर्म कहते हैं। आप उसे मूल से ही नष्ट कर जगत्पूज्य हो गए हैं।

ॐ ह्रीं साधारण नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३२।।

उपेन्द्रवज्रा : **चलै न जो धातु तजै न वासा, यथाविधि आप धरै निवासा।**
यही प्रकारा थिर नाम भासौ, नमामि देवं तिस देह नासौ।।१३३।।

ॐ ह्रीं स्थिर-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में धातुएँ (रस, रुधिर, मांस, मेद, हाड़, मज्जा, शुक्ररूप धातु और वात, पित्त, कफ, शिरा, स्नायु, चर्म, उदराग्निरूप उपधातु) चंचल नहीं होती हैं, अपना स्थान नहीं छोड़तीं, अपने-अपने योग्य स्थान पर स्थिर रहती हैं; उसे स्थिर नामक नाम-कर्म कहते हैं। उस शरीर को नष्ट करने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्थिर नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३३।।

अनेक थानं मुख गौण धातं, चलंति धारं निजवासघातं।
यही प्रकाराऽथिर नाम भासौ, नमामि देवं तिस देह नासौ।।१३४।।

ॐ ह्रीं अस्थिर-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में शरीर की धातु-उपधातु अपना स्थान छोड़कर अनेक स्थानों पर अनेक रूपों में चंचल रहती हुईं अपना घात करती हैं; उसे अस्थिर नामक नाम-कर्म कहते हैं। उस शरीर को नष्ट करने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अस्थिर नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३४।।

यथाविधि देह विशाल सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै।
यही प्रकारा शुभ नाम भासौ, नमामि देवं तिस देह नासौ।।१३५।।

ॐ ह्रीं शुभ-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में शरीर अत्यधिक सुडोल, शोभनीय, मुख आदि सभी अंग मोहक होते हैं; उसे शुभ नामक नामकर्म कहते हैं। उस शरीर को नष्ट करने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शुभ नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३५।।

असुन्दराकार शरीर माँहीं, लखौं जहाँ सों विडरूप ताँहीं।
यही प्रकाराऽशुभ नाम भासौ, नमामि देवं तिस देह नासौ।।१३६।।

ॐ ह्रीं अशुभ-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में असुन्दर/बेडोल आकार वाले शरीर में जहाँ देखो वहीं/प्रत्येक अंग-उपांग विद्रूप लगता है, उसे अशुभ नामक नाम-कर्म कहते हैं। उस शरीर को नष्ट करने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अशुभ नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३६।।

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी।
सुभग ताको यह भेद भासौ, नमामि देवं तिस देह नासौ।।१३७।।

ॐ ह्रीं सुभग-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में जीव लोक में उत्तम अनेक भावों को धारण करता है, सभी उस पर अत्यधिक प्रीति करते हैं, उसे सुभग नामक नाम-कर्म कहते हैं। उस शरीर को नष्ट करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सुभग नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३७।।

धरै अनेका गुण तौ न जासौं, करैं कभी प्रीति न कोई तासौं।
दुर्भग ताको यह भेद भासौ, नमामि देवं तिस देह नासौ।।१३८।।

ॐ ह्रीं दुर्भग-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनेकों गुण होने पर भी जिस कर्म के उदय में कभी भी कोई भी उससे प्रीति नहीं करता है, उसे दुर्भग नाम-कर्म कहते हैं। उस शरीर का नाश करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं दुर्भग नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३८।।

पद्धड़ी : **ध्वनि बीन भाँति ज्यों मधुर बैन, निसरै पिक आदिक सुरस दैन।**
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूँ निज शीस लाय।।१३९।।

ॐ ह्रीं सुस्वर-नाम-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में ध्वनि बीन के समान मधुर और निकलने वाले वचन कोयल के समान सुरीले, आनन्द-दाई होते हैं, उसे सुस्वर नाम-कर्म कहते हैं। आपने उसे नष्ट किया है। अपना शीश झुकाकर आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं सुस्वर नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३९।।

गर्दभस्वर जैसो कहौ भास, तैसो रव अशुभ कहौ सु भास।
यह दुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूँ निज शीस लाय।।१४०।।

ॐ ह्रीं दु:स्वर-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में ध्वनि गर्दभ/गधे के समान हो, आवाज अशुभ प्रतीत होती है, उसे दु:स्वर नाम-कर्म कहते हैं। आपने उसे नष्ट किया है। हम अपना शीश झुकाकर आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं दु:स्वर नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४०।।

अडिल्ल : **होत प्रभामइ कांति महा रमणीक जू।**
जग जन मन भावन माने यह ठीक जू।।
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहौ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहौ।।१४१।।

ॐ ह्रीं आदेय-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में महा-रमणीक, प्रभामय कांति-युक्त शरीर मन-मोहक लगता है; यह अच्छा है - ऐसा सभी के मन स्वीकार करते हैं; इस आदेय नामक प्रकृति का नाश कर आपने अपना पद प्राप्त किया है। हे जगन्नाथ! हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारे पापों को नष्ट कीजिए।

ॐ ह्रीं आदेय नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४१।।

रूखो मुख को वरण लेश नहिं कांति हौ।
रूखे केश नखाकृति तन बढ़ भाँति हौ।।
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहौ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहौ।।१४२।।

ॐ ह्रीं अनादेय-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में पूर्णतया कांति से रहित मुख का वर्ण रूखा; केश/बाल, नाखूनों की आकृति, शरीर आदि अनेक प्रकार से रूखे होते हैं, उस अनादेय प्रकृति का नाशकर आपने अपना पद प्राप्त किया है। हे जगन्नाथ! हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारे पापों को नष्ट कीजिए।

ॐ ह्रीं अनादेय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४२।।

होत गुप्त गुण तौ भी जग में विस्तरैं।
जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करैं।।

यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहौ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहौ।।१४३।।

ॐ ह्रीं यश:-प्रकृति-छेदकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुण गुप्त/अव्यक्त होने पर भी जिस कर्म के उदय में जगत में फैल जाते हैं, संसारी जीव सुयश का उच्चारण करते हुए उसकी स्तुति करते हैं; इस यशस्कीर्ति प्रकृति का विनाश कर आपने स्वाभाविक यश प्राप्त किया है। हे जगन्नाथ! हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारे पापों को नष्ट कीजिए।

ॐ ह्रीं यश:प्रकृति का छेदन करने वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४३।।

जासु गुणन को औगुण कर सब ही ग्रहैं।
करत काज परशंसित पण निंदित कहैं।।
अपयश प्रकृति विनाश सुभावी यश लहौ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहौ।।१४४।।

ॐ ह्रीं अयश:-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस कर्म के उदय में सभी जन गुणों को भी अवगुणों के रूप में ग्रहण करते हैं, प्रशंसा-योग्य कार्य करने पर भी निन्दा करते हैं; उस अयशस्कीर्ति प्रकृति का विनाश कर आपने स्वाभाविक पद प्राप्त किया है। हे जगन्नाथ! हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारे पापों को नष्ट कीजिए।

ॐ ह्रीं अयश: नाम-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४४।।

योग थान नेत्रादिक ज्यों के त्यों बनौं।
रचित चतुर कारीगर करते हैं जनौं।।
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहौ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहौ।।१४५।।

ॐ ह्रीं निर्माण-नाम-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चतुर शिल्पी द्वारा की गई रचना के समान जिस कर्म के उदय में नेत्रादि अपने-अपने योग्य स्थान में सुव्यवस्थित बनते हैं, उस निर्माण नामकर्म का विनाश कर आपने स्वाभाविक पद प्राप्त किया है। हे जगन्नाथ! हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारे पापों को नष्ट कीजिए।

ॐ ह्रीं निर्माण कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४५।।

पंचकल्याणक चौंतिस अतिशय राजही।
प्रातिहार्य वसु समोसरण द्युति छाजही।।

तीर्थंकर विधि विभव नाश निजपद लहौ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहौ।।१४६।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-प्रकृति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके उदय में पंच कल्याणक, चौंतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य, देदीप्यमान समवसरण से सुशोभित होते हैं, उस तीर्थंकर प्रकृतिरूपी विभव/विकृत भव का नाश कर आपने अपना पद प्राप्त किया है। हे जगन्नाथ! हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारे पापों को नष्ट कीजिए।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर प्रकृति से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४६।।

(अब, गोत्र कर्म और उसकी दो प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान के गुण गाते हैं।)

चाल छंद : **जो कुम्भकार की नाई, छिन घट छिन करत सुराई।**
सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१४७।।

ॐ ह्रीं गोत्र-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षण में घड़े, क्षण में सुराही बनाने वाले कुम्भकार के समान उच्च-नीच प्रवृत्तिओं में कारणभूत गोत्र कर्म को आपने नष्ट कर दिया है। हम आप सुखकारक की पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं गोत्र-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४७।।

लोकनि में पूज्य प्रधाना, सब करत विनय सनमाना।
यह ऊँच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१४८।।

ॐ ह्रीं उच्च-गोत्र-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके कारण लोक में पूज्य, प्रधान होने से सभी विनय, सम्मान करते हैं; उस उच्च गोत्र-कर्म को नष्ट करने वाले सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं उच्च गोत्र-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४८।।

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरै अति हीना।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१४९।।

ॐ ह्रीं नीच-गोत्र-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके कारण अत्यन्त हीन आचरण होने से सभी कमीना कहते हैं; उस नीच गोत्र-कर्म को नष्ट करने वाले सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं नीच गोत्र-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४९।।

(अब, अन्तराय कर्म और उसकी पाँच प्रकृतिओं से रहित सिद्ध भगवान की भक्ति करते हैं।)

ज्यों दे न सके भण्डारी, परधन को हो रखवारी।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५०।।

ॐ ह्रीं अन्तराय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे दूसरों के धन का रक्षक भण्डारी/खजांची उसे दूसरों को दे नहीं सकता है; उसके समान ही कार्य करने वाले अन्तराय कर्म को नष्ट करने वाले सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अन्तराय-कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५०।।

हो दान देन कै भावा, दे सकै न कोटि उपावा।
दानांतराय परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५१।।

ॐ ह्रीं दानांतराय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दान देने के भाव होने पर भी और करोड़ों उपाय करने पर भी जिस कर्म के उदय में दान नहीं दे पाते हैं, उस दानान्तराय कर्म को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं दानान्तराय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५१।।

मन दान लेन को भावै, दातार प्रसंग न पावै।
लाभांतराय परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५२।।

ॐ ह्रीं लाभांतराय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दान लेने का मन होने पर भी दाता का प्रसंग नहीं बनने में कारणभूत लाभान्तराय कर्म को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं लाभान्तराय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५२।।

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाय न अवसर योगा।
भोगांतराय परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५३।।

ॐ ह्रीं भोगांतराय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुष्प आदि को भोगने की इच्छा होने पर भी योग्य अवसर प्राप्त नहीं हो पाने में कारणभूत भोगान्तराय को नष्ट करने वाले सुखकारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं भोगान्तराय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५३।।

तिय आदि बारम्बारा, नहिं भोग सकै हितकारा।
उपभोगांतराय परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५४।।

ॐ ह्रीं उपभोगांतराय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनुकूल स्त्री आदि को बारम्बार नहीं भोग सकने में कारणभूत उपभोगान्तराय को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं उपभोगांतराय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५४।।

चेतन निज बल प्रकटावै, यह योग कबहुँ नहिं पावै।
वीर्यांतराय परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५५।।

ॐ ह्रीं वीर्यान्तराय-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चेतन/जीव को अपना बल प्रगट करने का अवसर कभी भी प्राप्त नहीं होने में कारणभूत वीर्यान्तराय कर्म को नष्ट करने वाले सुखकारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्यान्तराय कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५५।।

(अब, कर्मों के भेद-प्रभेदों से रहित सिद्ध भगवान की आराधना करते हैं।)

ज्ञानावरणादिक नामी, निज काज उदय परिणामी।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५६।।

ॐ ह्रीं अष्ट-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने-अपने उदय के अनुसार फल देने वाले कर्म के प्रसिद्ध नाम-युक्त ज्ञानावरणादि आठ भेदों को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अष्ट कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५६।।

इक सौ अड़ताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५७।।

ॐ ह्रीं एकशताष्ट-चत्वारिंशत्-कर्म-प्रकृति-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सत्ता को धारण करने वाली, एक सौ अड़तालीस उत्तर भेद वाली सभी कर्म प्रकृतिओं को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं एक सौ अड़तालीस कर्म प्रकृतिओं से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५७।।

परणाम भेद संख्याता, जो वचन योग में आता।
संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५८।।

ॐ ह्रीं संख्यात-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परिणाम के भेद से वचनों द्वारा कहे जाने-योग्य संख्यात भेद-सम्पन्न कर्म को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं संख्यात कर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५८।।

है वचनन सौं अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई।
विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१५९।।

ॐ ह्रीं असंख्यात-कर्म-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परिणाम भेद द्वारा वचनों से नहीं कहे जाने-योग्य, दु:ख-दाई, असंख्यात भेद-युक्त कर्मों को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं असंख्यात कर्मों से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५९।।

अविभाग प्रछेद अनन्ता, जो केवलज्ञान लहन्ता।
यह कर्म अनन्त परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१६०।।

ॐ ह्रीं अनन्त-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवलज्ञान द्वारा ज्ञात होने-योग्य फल की अपेक्षा अनन्त अविभाग प्रतिच्छेदमय अनन्त कर्मों को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त कर्मों से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६०।।

सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्षम भाव धरंता।
विधि नन्तानन्त परजारा, हम पूज रचौ सुखकारा।।१६१।।

ॐ ह्रीं अनन्तानन्त-कर्म-रहिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अत्यधिक सूक्ष्म भाव/दशा को धारण कर कर्मरूप से परिणमित परमाणुओं की अपेक्षा अनन्तानन्त भेद-युक्त अनन्तानन्त कर्मों को नष्ट करने वाले, सुख-कारक सिद्ध भगवान की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्तानन्त कर्मों से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६१।।

(अब, परिपूर्ण स्वरूप-स्थिरता के बल पर प्रगट हुए परिणामों की प्रधानता द्वारा सिद्ध भगवान की पूजन करते हैं।)

मोतियादाम : **न हो परिणाम विषैं कछु खेद, सदा इकसौ प्रणवै बिन भेद।**
निजाश्रित भाव रमैं सुखधाम, करूँ तिस आनन्द कों परणाम।।१६२।।

ॐ ह्रीं आनन्द-स्वभावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अभेद रूप से सदा एक समान परिणमन करने वाले आपके परिणामों में कुछ भी खेद नहीं है अथवा अभेदरूप से सदा एक समान परिणमन होते रहने पर भी परिणमन, वस्तु मात्र का स्वभाव होने के कारण उस नित्य परिणमन से आपको कुछ भी खेद नहीं होता है। आप निजाश्रित/स्वाधीन सुख के धाममय भावों में रमण करते हैं। आपके उस आनन्द को हम प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं आनन्द स्वभावी सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६२।।

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषनि तैं सब ही बिन खेद।
पराश्रितता बिन आनन्द धर्म, नमूँ तिन पाय लहूँ पद शर्म।।१६३।।

ॐ ह्रीं आनन्द-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : खेद से पूर्णतया रहित, पराधीनता के विना ही सभी विशेषताओं-सम्पन्न परिणामों के सभी भेदों को धारण करने वाले आप आनन्दरूप धर्ममय हैं। सुखमय पद प्राप्त करने के लिए मैं आपके चरणों में नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आनन्द धर्मात्मक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६३।।

न हौ परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसै निज आनन्द भाव।
यहीं वरणौ परमानन्द धर्म, नमूँ तिन पाय लहूँ पद शर्म।।१६४।।

ॐ ह्रीं परमानन्द-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य के संयोग की निमित्तता में होने वाले विभावों से पूर्णतया रहित आप सदा अपने आनन्द भाव में निवास करते हैं, यही परमानन्द धर्म का वर्णन है। सुखमय पद प्राप्त करने के लिए मैं आपके चरणों में नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं परमानन्द धर्मात्मक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६४।।

कबहुँ परसौं कछु द्वेष न होत, कबहुँ पुनि हर्ष विशेष न होत।
रहैं निज ही निज भावन लीन, नमूँ पद साम्य सुभाव सु लीन।।१६५।।

ॐ ह्रीं साम्य-स्वभावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आपको पर से कभी भी रंच-मात्र भी द्वेष नहीं होता है, कभी भी राग भी नहीं होता है; आप सदैव अपने ही भावों में लीन रहते हैं। साम्य स्वभाव में भली-भाँति लीन आपके चरणों में नमस्कार है।

ॐ ह्रीं साम्य स्वभाव-सम्पन्न सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६५।।

निजाकृति में नहिं लेश कषाय, अमूरति शांतिमई सुखदाय।
आकुलता बिन साम्य स्वरूप, नमूँ तिनकौं नित आनन्द रूप।।१६६।।

ॐ ह्रीं साम्य-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने स्वरूप में पूर्णतया कषाय से रहित, अमूर्तिक, शान्तिमई, सुख-दाई, आकुलता से रहित, साम्य स्वरूप, आनन्दरूप आपके लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं साम्य स्वरूप सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६६।।

अनन्त गुणातम द्रव्य पर्याय, यही विधि आप धरैं बहु भाय।
सभी कुमति करि हो अलखाय, नमूँ जिनबैन भली विधि गाय।।१६७।।

ॐ ह्रीं अनन्त-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य अनन्त गुणात्मक-अनन्त पर्यायात्मक है। इसी स्वरूप को आप पूर्ण रुचि पूर्वक धारण करते हैं/आप सदैव इसमें ही संतुष्ट हैं। सभी मिथ्या-ज्ञानी आपको नहीं जानते हैं।

जिन–बैन/जिनेन्द्र भगवान की वाणी/जिन–वाणी आपका स्वरूप भली–भाँति बता रही हैं। आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनन्त गुणात्मक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६७।।

अनन्त गुणातम रूप कहाय, गुणी–गुण भेद सदा प्रणमाय।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूँ तिनकौं पद पाइ अनूप।।१६८।।

ॐ ह्रीं अनन्त–गुण–स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुण–भेदों के अनुसार सदा परिणमित होता हुआ गुणी, अनन्त गुणात्मक कहा गया है। आप सदा स्वच्छ महा गुणरूप अनुपम दशा को प्राप्त हुए हैं। आपके चरणों में नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनन्त गुण स्वरूप सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६८।।

अभेद सुभेद अनेक सु एक, धरौ इन आदिक धर्म अनेक।
विरोधित भावन सौं अविरुद्ध, नमूँ जिन आगम की विधि शुद्ध।।१६९।।

ॐ ह्रीं अनन्त–धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप अभेद/भेद–रहित, सुभेद/भेद–सहित, अनेक, एक इत्यादि अनेक धर्मों को धारण करते हैं। परस्पर विरुद्ध जैसे प्रतीत होने वाले भावों को भी (स्याद्वाद शैली द्वारा) अविरुद्ध रूप में सिद्ध करने वाली, जिनागम की शुद्ध पद्धति को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अनन्त धर्मात्मक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६९।।

रहै धर्मी निज धर्म सरूप, न हो परदेशन सौं अन्यरूप।
चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरौ प्रणमूँ मन भक्ति स्वरूप।।१७०।।

ॐ ह्रीं अनन्त–धर्म–स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रदेशों से अन्य रूप नहीं होता हुआ धर्मी सदा धर्म स्वरूप रहता है। चिदातम/चैतन्य स्वभावी आत्मा के सभी धर्म चैतन्यात्मक हैं। इस स्वरूप को धारण करने वाले आपको, भक्ति–युक्त मन से प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त धर्म स्वरूप–युक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७०।।

चौपाई : **हीनाधिक नहिं भाव विशेष, आतमीक आनन्द हमेश।**
सम स्वभाव सोई सुखराज, प्रणमूँ सिद्ध मिटै भववास।।१७१।।

ॐ ह्रीं सम–स्वभावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हीनता–अधिकता से पूर्णतया रहित भाव–विशेष/पर्यायों वाले, सदैव आत्मीक आनन्द रूप, सुख के भण्डार समतामय स्वभाव–सम्पन्न सिद्ध भगवान को, संसार का वास समाप्त करने के लिए प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं सम–स्वभावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७१।।

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायौ निज आनन्द विशाल।
साम्य सुधारस को निज भोग, नमूँ सिद्ध सन्तुष्ट मनोग।।१७२।।

ॐ ह्रीं संतुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इष्ट-अनिष्ट के भ्रम-जाल से पूर्णतया रहित, अपने अनन्त आनन्द को प्राप्त, समतारूपी सुधारस का सदा भोग करते हुए सब ओर से संतुष्ट मनोज्ञ सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संतुष्ट सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७२।।

पर पदार्थ कौ इच्छुक नाहिं, सदा सुखी स्वातम पद माहिं।
मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमूँ राजत सम सन्तोष।।१७३।।

ॐ ह्रीं सम-संतोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर-पदार्थों की इच्छा से पूर्णतया रहित, अपने आत्मा रूपी पद में सदा सुखी, सम्पूर्ण राग और द्वेष को समाप्त करनेवाले, समता और सन्तोष से शोभायमान सिद्ध भगवान को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं सम-संतोषमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७३।।

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय।
शुद्ध निरंजन समगुण लहौ, नमूँ सिद्ध परकृत दुख दहौ।।१७४।।

ॐ ह्रीं साम्य-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोह के उदय में होने वाले सभी भावों को नष्ट कर, (नोकर्म, द्रव्यकर्म, भावकर्मरूप) पौद्गलिक पर्यायों को समाप्त कर, शुद्ध, निरंजन, समता आदि गुणों को प्राप्त; पर की निमित्तता में/पर-लक्ष्य से होने वाले सम्पूर्ण दु:खों को दग्ध कर देने वाले सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं साम्य-गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७४।।

निजपद सों थिरता नहिं तजैं, स्वानुभूत अनुभव निज भजैं।
निराबाध तिष्ठैं अविकार, साम्यस्थाई गुण भण्डार।।१७५।।

ॐ ह्रीं साम्यस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने पद/आत्मा में स्थिरता को नहीं छोड़ने वाले, अपने अनुभूत अनुभव का सदा भजन करने वाले/सदा आत्मानुभव रूप ही परिणमित, बाधाओं से रहित, विकारों से विमुक्त, स्थायी गुणों के भण्डार आप साम्यमय ही विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं साम्यस्थ सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७५।।

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठैं समधार।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पाइयौ, भक्ति सहित हम शीश नाइयौ।।१७६।।

ॐ ह्रीं साम्य-कृत्याकृत्य-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भव संबंधी/लौकिक/संसार को बड़ाने वाले कार्यों का निवारण कर, समता को धारण कर अचल रूप में विराजमान; कृत्य/करने-योग्य, अकृत्य/नहीं करने-योग्य में साम्य गुण को प्राप्त करने वाले सिद्ध भगवान को, हम भक्ति-सहित शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं कृत्य-अकृत्य में साम्य गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७६।।

झूलना : **भूल नहीं भय करैं, छोभ नाहीं धरैं, गैर की आस को त्रास नाहीं धरैं।**
शरण काकी चहै, सबन को शरण है, अन्य की शरण बिन नमूँ ताही वरैं।।

ॐ ह्रीं अनन्य-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७७।।

अर्थ : भूलकर/कभी भी/किसी भी रूप में भय नहीं करने वाले, क्षोभ को धारण नहीं करने वाले, अन्य की आशा संबंधी कष्ट को नहीं सहने वाले, सभी को शरणभूत होने से अन्य किसी की भी शरण नहीं चाहने वाले सिद्ध भगवान को सर्व-श्रेष्ठ शरण रूप में स्वीकार कर, अन्य की शरण के विना ही मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्य शरणभूत सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७७।।

द्रव्य षट् में नहीं, आप गुण आप ही, आप में राजते सहज नीकौ सही।
स्वगुण अस्तित्वता, वस्तु की वस्तुता, धरत हौ मैं नमूँ आप ही कौ स्वता।।

ॐ ह्रीं अनन्य-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७८।।

अर्थ : हे भगवान! आप छह द्रव्यों में नहीं; वरन् अपने ही गुणों में स्वयं ही सहजरूप में भली-भाँति विराजमान हैं। अपने गुणों की विद्यमानता, वस्तु की वस्तुता को धारण करने वाले आपको ही, हम स्वतः नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्य गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७८।।

गैर से गैर हो आपमें रमाइयो, स्व चतुर खेत में वास तिन पाइयो।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो, मैं तुम्हें भक्तियुत शीश निज नाइयो।।

ॐ ह्रीं अनन्य-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७९।।

अर्थ : अन्य से अन्य हो/पर-पदार्थों को परत्वरूप से स्वीकार कर, उनसे भेद विज्ञान कर स्वयं में लीन रहने वाले आप, स्व-चतुष्टयमय अपने क्षेत्र में निवास करते हुए धर्म के भण्डार हो, परम पद को प्राप्त हुए हैं। मैं आपको भक्ति पूर्वक शीष झुकाता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्य धर्ममय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७९।।

साधना जबतईं, होत है तबतईं, दोऊ परमाण को काज जामें नहीं।
आप निजपद लियो, तिन जलांजलि दियो, अन्य नहीं चहत निज शुद्धता में लियो।।

ॐ ह्रीं परिमाण-विमुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८०।।

अर्थ : जब तक साधना होती रहती है, तब तक दोनों परिमाण/काल और भाव की सीमा का उसमें कर्म नहीं होता है/कुछ प्रयोजन नहीं रहता। आपने अपना पद प्राप्त कर उन्हें जलांजलि दे दी है/समाप्त कर दिया है। अपनी शुद्धता को प्राप्त कर लेने वाले आप अन्य की चाह नहीं करते हैं।

ॐ ह्रीं परिमाण से विमुक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८०।।

तोमर : **दृग ज्ञान पूरणचन्द्र, अकलंक ज्योति अमन्द।**
निरद्वन्द ब्रम्हस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप।।१८१।।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८०।।

अर्थ : परिपूर्ण दर्शन-ज्ञान-सम्पन्न, पूर्ण चन्द्रमा के समान कलंक-रहित, उत्कृष्ट ज्योति स्वरूप, निर्द्वन्द्व, ब्रम्ह स्वरूप, चिद्रूप सिद्ध भगवान की सदा पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह स्वरूप सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८१।।

सब ज्ञानमयी परिणाम, वर्णादि को नहिं काम।।निरद्वन्द...।।१८२।।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानमई समस्त परिणामों से सम्पन्न, वर्णादि से पूर्णतया रहित, निर्द्वन्द्व,....करता हूँ।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८२।।

निज चेतनागुण धार, बिन रूप हो अविकार।।निरद्वन्द.....।।१८३।।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह-चेतनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने चेतना गुण को धारण करने वाले, अरूपी, अविकारी, निर्द्वन्द्व,.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं ब्रम्ह चेतनरूप सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८३।।

सुन्दरी : **अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा।**
कहत हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमूँ सिद्ध सदा तिन पायजी।।१८४।।

ॐ ह्रीं शुद्ध-स्वभावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने से भिन्न पर-पदार्थों से सदा पृथक् ही रहने के कारण पर-निमित्तक विभाव कभी भी नहीं होते हैं; अत: मुनिजन आपको शुद्ध स्वभावी कहते हैं। हम उन सिद्ध भगवान के चरणों में सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं शुद्ध स्वभावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८४।।

पर प्रणामन सों नहिं मिलत हैं, निज प्रणामन सों नहिं चलत हैं।
शुद्ध परिणामी तुम पद नमूँ, नमत तुम पद सब अघ को दमूँ।।१८५।।

ॐ ह्रीं शुद्ध-पारिणामिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर-द्रव्य के परिणामों से अथवा पर के लक्ष्य से होने वाले अपने विभावमय पर-भावों से नहीं मिलने वाले, अपने परिणामों से चलित नहीं होने वाले शुद्ध परिणामी सिद्ध भगवान को नमस्कार है। आपके चरणों में नमन करते हुए सभी पापों का दमन कर दूँ।

ॐ ह्रीं शुद्ध पारिणामिक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८५।।

वस्तुता व्यवहार नहीं ग्रहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै।
शुद्ध रूप न ताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है।।१८६।।

ॐ ह्रीं अशुद्ध-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : व्यवहार नय वस्तु के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान नहीं कराता है; वह उप-स्वरूप या असत्यार्थ का प्रतिपादन करता है; अत: उसके द्वारा निर्विकल्प समाधि के लिए आराधना करने-योग्य शुद्धरूप साध्य नहीं है।

ॐ ह्रीं अशुद्ध-रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८६।।

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभव में विकलप नहिं कोऊ।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम निज पद परतीत हो।।१८७।।

ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्ध-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वानुभव/आत्मानुभव में द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिक - इन दोनों नयों संबंधी किसी भी प्रकार का विकल्प नहीं है। शुद्ध-अशुद्ध से अतीत/रहित सिद्ध भगवान को नमन करने से अपने पद/आत्मा की प्रतीति होती है।

ॐ ह्रीं शुद्ध-अशुद्ध से रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८७।।

चौपाई/बेसरी : **क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उघारो।**
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१८८।।

ॐ ह्रीं अनन्त-दृग्स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षायोपशमिक अवलोकन/दर्शनोपयोग को टाल कर, अपने गुण को क्षायिक रूप में प्रगट कर, आपने सकल चराचर को/समस्त लोकालोक को एक साथ देख लिया है। विशेष हर्षित मन से मैं आपका ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त दृग/दर्शन स्वरूप सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८८।।

जब पूरण अवलोकन पायौ, तब पूरण आनन्द उपायौ।
अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१८९।।

ॐ ह्रीं अनन्त-दृगानन्द-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जब पूर्ण अवलोकन/अनन्त दर्शन प्राप्त किया; तभी पूर्ण आनन्द/अनन्त सुख प्रगट हो गया – ऐसा अविनाभाव संबंध आपके पद में स्वयं दिखाई देता है। विशेष हर्षित मन से मैं आपका ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त दृगानन्द स्वभावी सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८९।।

नाश सु पूर्वक हो उतपादा, सत लक्षण परिणति मरजादा।
क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९०।।

ॐ ह्रीं अनन्त-दृगुत्पादकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्पाद/नवीन पर्याय का प्रगट होना, नाश/व्यय/पूर्व पर्याय के अभाव पूर्वक होता है – यह 'सत्' लक्षण वाले के परिणमन की मर्यादा है/द्रव्य में उत्पाद, व्यय पूर्वक होता है – यह वस्तु का स्वरूप है। क्षायोपशमिक भाव का अभाव कर क्षायिक प्रगट करने वाले आपका, विशेष हर्षित मन से मैं ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त दृग उत्पादक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९०।।

नित्य रूप निज चित पद माहीं, अन्य रूप पलटन कौ नाहीं।
द्रव्य-दृष्टि में यह गुण देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९१।।

ॐ ह्रीं अनन्त-ध्रुवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नित्य रूप अपने चेतन पद में अन्य रूप परिवर्तन नहीं होता है। द्रव्य-दृष्टि में इस गुण/विशेषता को देखने वाले आपका, मैं विशेष हर्षित मन से ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त ध्रुवमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९१।।

कर्म नाश जो स्व-पद पावै, रञ्चमात्र फिर अन्त न आवै।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९२।।

ॐ ह्रीं अव्यय-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्म के नाश में प्राप्त हुए स्व-पद का कभी भी रंचमात्र भी अन्त नहीं होता है; यह अव्यय गुण आपमें देखकर विशेष हर्षित मन से आपका मैं ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अव्यय भावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९२।।

पर नहिं व्यापै तुम पद माँहीं, पर में रमण भाव तुम नाहीं।
निज करि निज में निज लय देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९३।।

ॐ ह्रीं अनन्त-निलयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके पद में पर व्याप्त नहीं होता है, पर में रमण करने का भाव आपके नहीं है। अपने से, अपने में, अपने गुणों को देखने वाले आपका, मैं विशेष हर्षित मन से ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त निलय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९३।।

शंखनारी : **अनंताभिधानो गुणाकार जानौ। धरौ आप सोई, नमूँ मान खोई।।१९४।।**

ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त नामों वाले गुणों का आकार/स्वरूप जानने वाले, उन्हें स्वयं ही धारण करने वाले आपको, मान खोकर/विनम्र होकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त आकार वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९४।।

अनंता स्वभावा विशेषन उपावा। धरौ आप सोई, नमूँ मान खोई।।१९५।।

ॐ ह्रीं अनन्त-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विशेषताओं को प्रगट करने वाले अनन्त स्वभावों को स्वयं ही.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनन्त स्वभाव वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९५।।

विनाकाररूपा यह चिन्मयस्वरूपा। धरौ आप सोई, नमूँ मान खोई।।१९६।।

ॐ ह्रीं चिन्मय-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आकार के विना/निराकार रूप वाले, चिन्मय/चैतन्य स्वरूप को स्वयं ही...करता हूँ।

ॐ ह्रीं चिन्मय स्वरूप वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९६।।

सदा चेतना में, न हो अन्यता में। धरौ आप सोई, नमूँ मान खोई।।१९७।।

ॐ ह्रीं चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सदा चेतनामय ही रहने वाले, कभी भी अन्य रूप नहीं होने वाले, स्वयं को ही धारण करने वाले आपको, मान खोकर/विनम्र होकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं चिद्रूप स्वरूप वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९७।।

दोहा : **जो कुछ भाव विशेष हैं, सब चिद्रूपी धर्म।**
असाधारण पूरण भये, नमत नशें सब कर्म।।१९८।।

ॐ ह्रीं चिद्रूप-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके सभी चिद्रूपी/चैतन्यमय धर्म रूप विशेष, असाधारण भाव असाधारण रूप में परिपूर्ण व्यक्त हो गए हैं। आपको नमन करने से सभी कर्म नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं चिद्रूप धर्म वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९८।।

परकृति व्याधि विनाशकैं, निज अनुभव की प्राप्त।
भई नमूँ तिनकौ लहूँ, यह जगवास समाप्त।।१९९।।

ॐ ह्रीं स्वानुभवोपलब्धि-रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर-पदार्थों की निमित्तता में होने वाली व्याधिओं का विनाश कर, अपने आत्म-अनुभव को प्राप्त कर लेने वाले आपको संसार-वास की समाप्ति के लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं स्वानुभव उपलब्धि-रम सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९९।।

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभव की डोर।
गहौ लहौ थिरता रहौ, रमण ठौर नहीं और।।२००।।

ॐ ह्रीं स्वानुभूति-रताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आवरण-रहित अपने ज्ञान/केवलज्ञान द्वारा अपने अनुभव की डोर को ग्रहण कर स्थिरता पूर्वक अपने में ही रहते हैं; रमण करने-योग्य अन्य कोई स्थान नहीं है।

ॐ ह्रीं स्वानुभूति-रत सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२००।।

सरवोत्तम लौकीक रस-सुधा कुरस सब त्याग।
निज पद परमामृत रसिक, नमूँ चरण बड़भाग।।२०१।।

ॐ ह्रीं परमामृत-रताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक के सर्वोत्तम रस सुधा/अमृत आदि और सभी कुरसों का त्याग कर, अपने पद रूपी परमामृत के रसिक, बड़े भाग्य-शाली आपके चरणों में नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं परमामृत रस सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०१।।

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान।
जान निजानन्द परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान।।२०२।।

ॐ ह्रीं परमामृत-तुष्टाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विषय रूपी अमृत को विष के समान अरुचिकर, अरस, अशुभ, असुहावने जानकर सिद्ध भगवान निजानन्द रूपी परम रस में संतुष्ट हैं।

ॐ ह्रीं परमामृत तुष्ट सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०२।।

शंकातीत अतीतसों, धरैं प्रीति निज माँहि।
अमल हिये संतनि प्रिये, परम प्रीति नमुँ ताहि।।२०३।।

ॐ ह्रीं परम-प्रीताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अतीत के संबंध में शंकाओं से रहित, अपने में प्रीति धारण करने वाले, निर्मल हृदयी संतों के लिए प्रिय आपको परम प्रीति पूर्वक नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम प्रीत सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०३।।

अक्षय आनन्द भाव युत, नित हितकार मनोग।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग।।२०४।।

ॐ ह्रीं परम-वल्लभ-योगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त आनन्द स्वभाव में संयुक्त, आत्मा का हित करने वाले, मनोज्ञ, सज्जन मन के उत्कृष्ट बल्लभ/प्रिय आपका योग दुर्जनों के लिए दुर्लभ है।

ॐ ह्रीं परम बल्लभ योग-युक्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।२०४।।

शब्द गन्ध रस फरस नहिं, नहीं वरण आकार।
बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार।।२०५।।

ॐ ह्रीं अव्यक्त-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श, वर्ण, आकार आदि से पूर्णतया रहित आप! सुनिश्चित गुप्त भावमय होने से हमारी बुद्धि आपका पार नहीं पा सकती है।

ॐ ह्रीं अव्यक्त भावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०५।।

सर्व दर्वसों भिन्न हैं, नहिं अभिन्न तिहुँ काल।
नमूँ सदा परकाश धर, एकहि रूप विशाल।।२०६।।

ॐ ह्रीं एकत्व-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी द्रव्यों से पूर्णतया भिन्न रहने वाले आप तीनों कालों में कभी भी उनसे अभिन्न नहीं होते हैं। सदा एक ही रूप विशाल प्रकाश को धारण करने वाले आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व-स्वरूपमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०६।।

सर्व दर्वसों भिन्नता, निज गुण निज में वास।
नमुँ अखण्ड परमातमा, सदा सुगुण की राश।।२०७।।

ॐ ह्रीं एकत्व-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी द्रव्यों से पूर्णतया पृथक्, अपने गुणमय अपने में निवास करने वाले, सदा सुगुणों के भण्डार, अखण्ड परमात्मा के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व गुणमय परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०७।।

सर्व दर्व परिणामसौं, मिलै न निज परिणाम।
नमूँ निजानन्द ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम।।२०८।।

ॐ ह्रीं एकत्व-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी द्रव्यों के परिणामों से अपने परिणाम नहीं मिलने वाले, निजानन्द ज्योति-घन, सदा अभिराम/सुन्दरता-सम्पन्न उदय वाले सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व भावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०८।।

चौपाई : **पर संयोग तथा समवाय, यह संवाद न हो द्वै भाय।**
नित्य अभेद एकता धरौ, प्रणमूँ द्वैत भाव तुम हरौ।।२०९।।

ॐ ह्रीं द्वैत-भाव-विनाशकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर का संयोग और समवाय संबंध का कथन उचित नहीं है। नित्य अभेद एकता को धारण करने वाले, द्वैत-भाव का हरण करने वाले आपको प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं द्वैत-भाव-विनाशक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०९।।

पूर्व पर्याय नासियो सोई, जाकौ फिर उतपात न होई।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम।।२१०।।

ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन पूर्व पर्यायों का नाश हो गया है, उनका फिर कभी भी उत्पाद नहीं होता है। अव्यय, अविनाशी, सुन्दर, शाश्वत रूप सुख-धाम के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शाश्वत सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१०।।

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव।अव्यय...।।२११।।

ॐ ह्रीं शाश्वत-प्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निर्विकार, निर्मल, उत्कृष्ट प्रभावमय निज-भाव के नित्य प्रकाशमय, अव्यय, अविनाशी, सुन्दर, शाश्वत रूप सुख-धाम के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शाश्वत प्रकाशमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२११।।

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरौ निज ज्ञान।अव्यय....।।२१२।।

ॐ ह्रीं शाश्वतोद्योताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पूर्णतया आवरण-रहित सूर्य-बिम्ब के समान नित्य उद्योतमय अपने ज्ञान को धारण करने वाले, अव्यय, अविनाशी, सुन्दर, शाश्वत रूप सुख-धाम के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शाश्वत उद्योतमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१२।।

ज्ञानानंद सुधाकर चन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द।अव्यय....।।२१३।।

ॐ ह्रीं शाश्वतामृत-चन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान-आनन्द रूपी अमृत के लिए चन्द्रमा के समान उत्कृष्ट, परिपूर्ण ज्योति से शोभायमान, अव्यय, अविनाशी, सुन्दर, शाश्वत रूप सुख-धाम के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शाश्वत अमृत-चन्द्र सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१३।।

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरविच्छेद अभेद अपार।अव्यय....।।२१४।।

ॐ ह्रीं शाश्वतामूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विच्छेद-रहित, अभेद, अपार, ज्ञानानन्द रूपी अमृत को धारण करने वाले, अव्यय, अविनाशी, सुन्दर, शाश्वत रूप सुख-धाम के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शाश्वत अमूर्ति सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१४।।

पद्धड़ी : **मन–इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्षम नाम सरूप तेह।**
मनपर्यय जाकूँ नाहिं पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय।।२१५।।

ॐ ह्रीं परम–सूक्ष्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नाम और स्वरूप दोनों ही सूक्ष्म होने के कारण जिसे मन और इन्द्रियों द्वारा प्रवृत्ति करने वाला ज्ञान तथा मन:पर्यय ज्ञान भी नहीं जान पाता है, उस परम सूक्ष्म नामक सुगुण के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम सूक्ष्म सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१५।।

बहु राशि नभोदर में समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकौं न पाय।
इकसौं इककौं बाधा न होहि, सूक्षम अविकाशी नमों सोहि।।२१६।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आकाशरूपी उदर में बहुत राशि समाई/अनन्तानन्त द्रव्य रहते होने पर भी स्थूल प्रत्यक्ष/सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष उन्हें जान नहीं पाता है। सिद्ध भगवान इसी प्रकार सिद्धालय में रहते होने पर भी उन्हें परस्पर एक–दूसरे से बाधा नहीं होती है। उन सूक्ष्म अवकाशी सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म अवकाशमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१६।।

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाँहिं, हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहिं।
सो राजत हो सूक्षम स्वरूप, नमहूँ तुम सूक्षम गुण अनूप।।२१७।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म–गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुणी/द्रव्य के समान ही उसके गुण होने से ध्वनि/आवाज/शब्द को आकाश का गुण कहना, उचित नहीं है। आप सूक्ष्म स्वरूप में विराजमान हैं। अनुपम सूक्ष्म गुण–सम्पन्न आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१७।।

तुम त्याग द्वैतता कौ प्रसंग, पायौ एकाकी छबि अभंग।
जाकौ कबहूँ अनुभव न होय, नमुँ परमरूप है गुप्त सोय।।२१८।।

ॐ ह्रीं परम–रूप–गुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्वैतपने के प्रसंग का त्याग कर आपने अखण्डित एकत्व–भाव को प्राप्त कर लिया है। जिसका कभी भी अनुभव नहीं होता है, उस परम रूप गुप्त सम्पन्न आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम रूप गुप्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१८।।

त्रोटक : **सर्वार्थविमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा।**
इनके सुख को एक सीम सही, तुम आनंद कौ पर अन्त नहीं।।२१९।।

ॐ ह्रीं निरवधि-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मन और इन्द्रियों की शक्ति के अनुसार सर्वार्थसिद्धि विमान के अहमिन्द्रों द्वारा जो भोग भोगे जाते हैं, उनके सुख की एक सीमा है; परन्तु आपके आनन्द का अन्त नहीं है।

ॐ ह्रीं निरवधि सुखमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१९।।

जगजीवनि कौ नहिं भाग्य यहै, निज शक्ति उदय करि व्यक्ति लहै।
तुम पूरण क्षायकभाव लहौ, इम अन्त बिना गुणरास गहौ।।२२०।।

ॐ ह्रीं निरवधि-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपनी शक्तिओं का पूर्ण विकास कर पाने रूप भाग्य संसारी जीवों का नहीं है; उनकी शक्तिआँ तो कर्म के उदयानुसार ही व्यक्त होती हैं। आपने क्षायिक भाव पूर्ण प्रगट कर लिया है। इसप्रकार आप अन्त के विना/अनन्त गुणों के भण्डार हैं।

ॐ ह्रीं निरवधि गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२०।।

भवि-जीव सदा यह रीति धरें, नित नूतन पर्य विभाव धरें।
तिस कारण को सब व्याधि दहौ, तुम पाइ सुरूप जु अन्त न हौ।।२२१।।

ॐ ह्रीं निरवधि-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भवों को धारण करने वाले जीव नित्य नवीन विभाव पर्यायों को धारण करने की परम्परा सदा ग्रहण करते रहते हैं। आपने उसकी कारणभूत सभी व्याधिओं को नष्ट कर अन्त-रहित/अनन्त स्वरूप प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं निरवधि स्वरूपमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२१।।

अवधि मनपर्य सु ज्ञान महा, द्रव्यादि विषैं मरजाद लहा।
तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहौ जिस अन्त नहीं।।२२२।।

ॐ ह्रीं अतुल-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अवधि, मनःपर्ययज्ञान रूप विशाल क्षायोपशमिक सम्यग्ज्ञान द्रव्यादि संबंधी मर्यादा सम्पन्न हैं। आपने उसका उल्लंघन कर स्वभावमय, अनन्त निज-बोध प्रगट कर लिया है।

ॐ ह्रीं अतुल ज्ञानमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२२।।

तिहुँ काल तिहूँ जग के सुख कौ, कर वार अनंत गुणा इनकौ।
तुम एक समय सुख की समता, नहिं पाय नमूँ मन आनंदता।।२२३।।

ॐ ह्रीं अतुल-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों कालों और तीनों लोकों के (इन्द्रिय) सुख का अनन्त बार अनन्त गुणा करने पर भी वह आपके एक समय के सुख की समानता/बराबरी नहीं कर पाता है। मैं आनन्दित मन से आपको नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अतुल सुखमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२३।।

नाराच : **सर्व जीव राश के, सुभाव आप जान हौ।**
आपके सुभाव अंश, और कौ न ज्ञान हौ।।
सो विशुद्ध भाव पाय, जासकौ न अन्त हो।
राजहौ सदीव देव, चरणदास 'सन्त' हो।।२२४।।

ॐ ह्रीं अतुल-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप सम्पूर्ण जीव-राशि के स्वभाव जानते हैं। आपके स्वभाव के अंश को भी अन्य कोई भी (क्षायोपशमिक) ज्ञान नहीं जानता है। आपने उस विशिष्ट शुद्ध-भाव को प्राप्त किया है, जिसका कभी अन्त नहीं है। आप उससे सदैव शोभायमान हैं। सन्त कवि कहते हैं कि हे देव! मैं आपके चरणों का दास हूँ।

ॐ ह्रीं अतुल भावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२४।।

आपकी गुणौघ वेलि फैलि है अलोकलों।
शेष से भ्रमाय पत्र की न पाय नोंकलों।।सो विशुद्ध....।।२२५।।

ॐ ह्रीं अतुल-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके गुणों के समूह रूप बेलि/लता अलोकाकाश जितनी विस्तृत है। (इसकी अनन्तता के अन्त को प्राप्त करने में) शेषनाग भी भ्रमित हुए पत्ते की नोंक को भी प्राप्त करने में समर्थ नहीं हो पाते हैं। आपने...........दास है।

ॐ ह्रीं अतुल गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२५।।

सूर्य कौ प्रकाश एक-देश वस्तु भास ही।
आपकौ सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश ही।।सो विशुद्ध....।।२२६।।

ॐ ह्रीं अतुल-प्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सूर्य के प्रकाश से एक देश वस्तुएँ/कुछ स्थान विशेष के पदार्थ/पदार्थ के कुछ अंश ही भासित होते हैं; परन्तु आपके केवलज्ञान रूपी सूर्य के प्रकाश से समस्त पदार्थ समग्र रूप से प्रकाशित होते हैं। आपने...........दास है।

ॐ ह्रीं अतुल प्रकाशमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२६।।

तास रूप कौ गहौ न फेरि जास नाश हो।
स्वात्मवास में विलास आस त्रास नाश हो।।

सो विशुद्ध भाव पाय, जासकौ न अन्त हो।
राजहौ सदीव देव, चरणदास 'सन्त' हो।।२२७।।

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसका पुनः कभी नाश नहीं होता है, आपने उस रूप को ग्रहण किया है। अपने आत्मा में वास करते/स्थिर रहते हुए आशाओं संबंधी कष्ट या आशा और कष्ट समाप्त हो जाने से आप आनन्दित हैं। कभी भी नष्ट नहीं होने वाले विशुद्ध भाव को प्राप्त आप सदैव शोभायमान हैं। हे देव! सन्त आपके चरणों का दास है।

ॐ ह्रीं अचल सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२७।।

सोरठा : **मोहादिक रिपु जीत, निजगुण निधि सहजै लहौ।**
विलसौ सदा पुनीत, अचल रूप वन्दों सदा।।२२८।

ॐ ह्रीं अचल-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोहादि शत्रुओं को जीत कर आपने अपने गुणों की निधि सहज ही प्राप्त कर ली है। सदा पवित्र अचल रूप में शोभायमान आपकी सदा वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं अचल गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२८।।

उत्तम क्षाइक भाव, क्षय उपशम सब गये विनशि।
पायो सहज सुभाव, अचल रूप वन्दों सदा।।२२९।।

ॐ ह्रीं अचल-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्तम क्षायिक भाव प्रगट हो जाने से क्षायोपशमिक आदि सभी भाव नष्ट हो गए हैं। अचल रूप सहज स्वभाव को प्राप्त आपकी मैं सदा वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचल स्वभाव वाले सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२९।।

अथिर रूप संसार त्याग सुथिर निजरूप गहि।
रहौ सदा अविकार, अचल रूप वन्दों सदा।।२३०।।

ॐ ह्रीं अचल-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अस्थिर रूप संसार का त्याग कर, सुस्थिर निजरूप को ग्रहण कर, अचल रूप में सदा अविकारी रहने वाले आपकी सदा वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचल स्वरूपमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३०।।

मोतियादाम : **निराश्रित स्वाश्रित आनंदधाम, परै परसौं न परै कछु काम।**
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृन्द।।२३१।।

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य की अधीनता से रहित, अपने आश्रित, आनन्द के धाम, पर के साथ संबंध

से पूर्णतया रहित, अपार, बन्धु से रहित, बन्ध से रहित, सर्वोत्तम सिद्ध भगवान के चरणों की, सुख-समूह-प्राप्ति-हेतु वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं निरालम्ब सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३१।।

अराग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट संयोग न इष्ट वियोग।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृन्द।।२३२।।

ॐ ह्रीं आलम्ब-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : राग-रहित, दोष-रहित, शोक-रहित, भोग-रहित, अनिष्ट-संयोग और इष्ट-वियोग से रहित, अपार, अबन्धु, अबन्ध, सर्वोत्तम सिद्ध भगवान के चरणों की, सुख-समूह-प्राप्ति-हेतु वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं आलम्ब-रहित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३२।।

अजीव न जीव न धर्म-अधर्म, न काल आकाश लहै तिस धर्म।अबिन्दु...।।२३३।।

ॐ ह्रीं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके द्वारा धारण किए गए धर्म को अजीव, अन्य जीव, धर्म, अधर्म, काल, आकाश द्रव्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं। अपार,.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं निर्लेप सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३३।।

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय।अबिन्दु...।।२३४।।

ॐ ह्रीं निष्कषायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वर्णरहित, इन्द्रियरहित, रूपरहित, कायरहित, संयमता-रहित, कषायरहित, अपार, ...करता हूँ।

ॐ ह्रीं निष्कषाय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३४।।

न हो परसौं रुष-राग विभाव, निजातम में अवलीन स्वभाव।अबिन्दु...।।२३५।।

ॐ ह्रीं आत्म-रतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर के प्रति राग, द्वेषरूप विभाव से रहित आप अपने आत्म-स्वभाव में लीन हैं। अपार,.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं आत्म-रति सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३५।।

दोहा : **निज स्वरूप में लीनता, ज्यों जल पुतली खार।**
गुप्त-स्वरूप नमूँ सदा, लहूँ भवार्णव पार।।२३६।।

ॐ ह्रीं स्वरूप-गुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे नमक की पुतली जल में घुल जाती है; उसी प्रकार आप अपने स्वरूप में लीन, गुप्त-स्वरूप हैं। संसार-सागर से पार होने के लिए मैं आपको सदा नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं स्वरूप गुप्त सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३६।।

जो हैं सो हैं और नहिं, कछु निश्चय-व्यवहार।
शुद्ध द्रव्य परमातमा, नमूँ शुद्धता धार।।२३७।।

ॐ ह्रीं शुद्ध-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निश्चय-व्यवहार से रहित आत्मा जैसा है, उसी प्रकार है। उस शुद्धता को धारण करने वाले शुद्ध द्रव्यमय परमात्मा को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शुद्ध द्रव्य सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३७।।

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव-भव छेद कराय।
असंसार पद को नमूँ, यह भव वास नशाय।।२३८।।

ॐ ह्रीं असंसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पूर्व और उत्तर भवों की संतति-स्वरूप समस्त भवों का अभाव कर असंसार पद को प्राप्त सिद्ध भगवान के लिए, यह संसार-वास समाप्त करने-हेतु नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं असंसारमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३८।।

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच : **हरो सहाय कर्ण को, सुभोगता विवर्ण को।**
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही।।२३९।।

ॐ ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भोगों में सहायक इन्द्रियों को पूर्णतया समाप्त कर, अमूर्तिक, एक, अपने आत्मा के आनन्द को प्राप्त कर, उसे ही आप भोगते हैं।

ॐ ह्रीं स्व आनन्दमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३९।।

न हो विभावता कदा, स्वभाव में सुखी सदा।निजातमीक...।।२४०।।

ॐ ह्रीं स्वानन्द-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपको कभी विभाव नहीं होता है; आप स्वभाव में सदा सुखी हैं। एक...भोगते हैं।

ॐ ह्रीं स्व-आनन्द-भावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४०।।

अछेद रूप सर्वथा, उपाधि की नहीं व्यथा।निजातमीक....।।२४१।।

ॐ ह्रीं स्वानन्द-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सर्वथा/पूर्णतया अखण्ड रूप आपको उपाधि का कष्ट नहीं है। एक.....भोगते हैं।

ॐ ह्रीं स्व-आनन्द-स्वरूपमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४१।।

दुभेदता न वेद हो, सचेतना अवेद हो।निजातमीक....।।२४२।।

ॐ ह्रीं स्वानन्द-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप द्रव्य और भाव - दो भेद वाले तीनों वेदों से रहित स्व-चेतनामय ही हैं। एक अपने आत्मा के आनन्द को प्राप्त कर, उसे ही आप भोगते हैं।

ॐ ह्रीं स्व-आनन्द गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४२।।

न अन्य की परवाह है, अचाह है, न चाह है।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही।।२४३।।

ॐ ह्रीं स्वानन्द-संतोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य के आकर्षण से पूर्णतया रहित आपको किसी की भी इच्छा नहीं है, आप पर से पूर्ण निरपेक्ष हैं। एक स्वयं के आनन्द को प्राप्त कर आप उसमें ही संतुष्ट हैं।

ॐ ह्रीं स्व-आनन्द-सन्तोषमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४३।।

सोरठा : **रागादिक परिणाम, हैं कारण संसार के।**
नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४४।।

ॐ ह्रीं शुद्ध-भाव-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : रागादि परिणाम संसार के कारण हैं। उनका नाश कर सुख-धाम को प्राप्त हुए सिद्ध भगवान को, संसार के भय का हरण करने के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं शुद्ध-भाव पर्यायमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४४।।

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियौ निज धर्म को।
स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४५।।

ॐ ह्रीं स्वतंत्र-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : औदयिकभाव का विनाश कर, अपने आत्मीक गुणों को प्रकाशित कर अपने धर्म को प्रगट करने वाले सिद्ध भगवान को संसार के भय का हरण करने के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्वतंत्र धर्ममय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४५।।

निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमात्मा।
राजत हैं शिवभूप, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४६।।

ॐ ह्रीं आत्म-स्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने गुण और पर्यायरूप स्वयं सिद्ध परमात्मामय शिवभूप रूप में आप शोभायमान हैं। संसार के भय का हरण करने के लिए आपको सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आत्म-स्वभावमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४६।।

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई।
राजे हैं सुख खानि, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४७।।

ॐ ह्रीं परम-चित्-परिणामाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विमल, स्पष्ट, आत्म-ज्ञानरूप स्वाभाविक परिणतिमय सुख की खदान स्वरूप आप शोभायमान हैं। संसार के भय का हरण करने के लिए आपको सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम चित् परिणाममय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४७।।

दर्श-ज्ञानमय धर्म, चेतन धर्म प्रगट कहौ।
भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४८।।

ॐ ह्रीं चिद्रूप-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्कृष्ट भेद-अभेद रूप में दर्शन-ज्ञानमय धर्मों को धारण करने वाले आप प्रगट/स्पष्टतया चेतन धर्मी हैं। संसार का भय समाप्ति-हेतु आपको सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चिद्रूप धर्ममय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४८।।

दर्श-ज्ञान-गुणसार, जीवभूत परमातमा।
राजत सब परकार, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४९।।

ॐ ह्रीं चिद्रूप-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दर्शन, ज्ञान आदि सारभूत गुणों के कारण जीवभूत परमात्मा सभी प्रकार से शोभायमान आपको, संसार का भय समाप्त करने के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चिद्रूप गुणमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४९।।

अष्ट कर्म मल जार, दीप्तरूप निज पद लहौ।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५०।।

ॐ ह्रीं परम-स्नातकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अष्ट कर्मरूपी मल को जलाकर, स्वच्छ सुवर्ण के समान कांति-युक्त अपने पद को प्राप्त करने वाले आपको, संसार का भय समाप्त करने के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं परम स्नातक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५०।।

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान विन।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५१।।

ॐ ह्रीं स्नातक-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : (द्रव्य-कर्म और भाव-कर्म) दोनों कर्मों के कारण होने वाले अनेक प्रकार के व्यवधानों/बाधाओं में कारणभूत रागादि मल का शोधन कर शुद्ध प्रतिबोध को प्राप्त सिद्ध भगवान को, संसार का भय समाप्त करने के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्नातक धर्ममय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५१।।

विधि आवरण विनाश, दर्श-ज्ञान परिपूर्ण हो।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५२।।

ॐ ह्रीं सर्वावलोकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आवरण कर्मों का विनाश कर लोकालोक को प्रकाशित करने वाले दर्शन-ज्ञान से परिपूर्ण आपको, संसार का भय समाप्त करने के लिए सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सर्व अवलोकी सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५२।।

निजकर निज में वास, सर्व लोक सौं भिन्नता।
पायो शिव सुख-रास, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५३।।

ॐ ह्रीं लोकाग्र-स्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण लोक से भिन्नता पूर्वक/भेद विज्ञान कर अपने से अपने में निवास कर शिवसुख का समूह पाने वाले आपको, संसार का भय समाप्त करने-हेतु सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोकाग्र-स्थित सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५३।।

ज्ञान-भान की जोति, व्यापक लोकालोक में।
दर्शन बिन उद्योग, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५४।।

ॐ ह्रीं लोकालोक-व्यापकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानरूपी सूर्य की ज्योति सम्पूर्ण लोकालोक में व्यापक होने के कारण परिश्रम किए विना ही उसे देखने वाले आपको, संसार का भय समाप्त करने-हेतु सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोकालोक-व्यापक सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५४।।

जो कछु धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय।
लेश न भाव कलेश, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५५।।

ॐ ह्रीं आनन्द-विधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप जो कुछ भी धारण करते हैं, वह सबका सब विशेष आनन्दमय है। उसमें क्लेश-भाव रंच-मात्र भी नहीं है। संसार का भय समाप्त करने के लिए मैं सदा आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आनन्द विधानमय सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५५।।

जिस आनन्द कौ पार, पावत नहिं यह जगत जन।
सो पायौ हितकार, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२५६।।

ॐ ह्रीं आनन्द-पूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यह संसारी प्राणी जिसका पार प्राप्त नहीं कर सकता है; उस हितकारी आनन्द को प्राप्त करने वाले आपको, संसार का भय समाप्त करने-हेतु मैं सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आनन्द-पूर्ण सिद्ध परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५६।।

दोहा : **इत्यादिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त।**
तिन पद आठों दरव सों, पूजत हैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षट्पंचाशदधिक-द्विशत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने महार्घ्यं...।

अर्थ : इसप्रकार आनन्द आदि अनन्त गुणों के धारक अनन्त सिद्ध भगवान के चरणों की आठों द्रव्यों से सन्त सदा पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; दो सौ छप्पन गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यहाँ 'ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः' - इस मन्त्र का एक सौ आठ बार जाप कीजिए।

जयमाला

दोहा : **थावर शब्द विषय धरै, त्रस थावर पर्याय।**
यौ न होय तौ तुम सुगुण, हम किह विधि वर्णाय।।१।।
तिस पर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान।
बालक जल शशि-बिंब कौं, चहत ग्रहण निज पान।।२।।

अर्थ : थावर/स्थूल/स्कन्ध रूप परिणमित शब्द स्थावर और त्रस पर्याय को विषय बनाते हैं/उनके द्वारा इन पर्यायों का वर्णन हो जाता है। (सिद्ध भगवान भी पहले इन पर्यायों में थे; अतः भूत-नैगम-नय से इन पर्यायों की अपेक्षा उनका गुण-गान कर लेते हैं।) यदि ऐसा नहीं होता तो हम आपके सुगुणों का वर्णन किसप्रकार कर सकते थे? नहीं कर पाते।

अथवा जैसे स्थावर जीव शब्द को विषय नहीं बना पाते हैं (क्योंकि उनके कर्णेन्द्रिय नहीं है); स्थावर उसी भव में त्रस पर्याय धारण नहीं कर सकते हैं (क्योंकि वे दोनों सप्रतिपक्ष हैं); उसी प्रकार हम आपके सुगुणों का वर्णन किसप्रकार कर सकते हैं?।।१।।

जैसे बालक, जल में विद्यमान चन्द्रमा के बिम्ब/प्रति-बिम्ब को अपने हाथ से पकड़ना चाहता है; उसी प्रकार मैं भी जो कुछ भी कह रहा हूँ; वह सब मात्र भक्ति-वश ही कह रहा हूँ; (आपके गुणों का वर्णन कर पाना तो असम्भव ही है)।।२।।

पद्धड़ी : **जय पर-निमित्त व्यवहार त्याग, पायौ निज शुद्ध-स्वरूप भाग।**
जय जग पालन बिन जगत देव, जय दयाभाव बिन शांति भेव।।१।।

अर्थ : हे भगवान! आपने पर-निमित्त/दूसरों की निमित्तता में होने वाले व्यवहार का त्याग कर भाग्य-शाली अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त कर लिया है; आपकी जय हो। जगत का पालन किए विना जगत के देव हुए आपकी जय हो; दया भाव के विना शान्ति-स्वरूप हुए आपकी जय हो।

पर सुख-दुख करण कुरीति टार, पर सुख-दुख-कारण शक्ति धार।
पुनि पुनि नव नव नित जन्म रीत, बिन सर्व लोक थापी पुनीत।।२।।

अर्थ : दूसरों को सुखी-दुःखी करने की कुरीति/मिथ्या परम्परा को नष्ट कर देने पर भी आप दूसरों के सुख-दुःख में निमित्त कारण होने की शक्ति धारण करते हैं। पुनः-पुनः नए-

नए जन्म लेने की पद्धति का सदा के लिए अन्त कर देने के बाद आपने सम्पूर्ण लोक में पवित्रता की स्थापना की है।

जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण वास।
शयनासन आदि क्रिया-कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप।।३।।

अर्थ : रासलीला, भोग, विलास अथवा अपने विभाव भावों की विविधता में रसिकता, रमणता का नाश कर, स्वाभाविक अपने पद/आत्मा में रमण करते हुए वास करने वाले; शयन, आसन आदि क्रिया-कलापों को छोड़कर सदा सुखी, शिवरूप हुए आपकी जय हो।

बिन कामदाह नहिं नार भोग, निरद्वन्द, निजानंद मगन योग।
वरमाल आदि शृंगार रूप, बिन शुद्ध निरंजन पद अनूप।।४।।

अर्थ : कामदाह/विषय-सेवन रूपी आग नहीं होने से नारी के भोग से रहित, द्वन्द्व से रहित, अपने आत्मानन्द में मग्न, स्वयं में ही संतुष्ट, उत्कृष्ट माला आदि शृंगारमय रूप/आकार के विना शुद्ध, निरंजन, अनुपम पद को आपने प्राप्त कर लिया है।

जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुंज चिद्रूपसार।
उपकरण हरण दव सलिलधार, निज शक्ति प्रभाव उदय अपार।।५।।

अर्थ : धर्म के संबंध में उत्पन्न हुए भ्रमरूपी वन को नष्ट करने के लिए कुल्हाड़ी के समान, प्रकाश के पुंज, सारभूत चिद्रूपता-सम्पन्न, मन या विभाव-भावों रूप दावानल को समाप्त करने/बुझाने के लिए जल की धारा के समान, अपनी शक्ति/सामर्थ्य से प्रभावशाली अनन्त पद को प्राप्त हुए आपकी जय हो।

नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहिं काल अन्त, लहो अन्त सोउ।
पर तुम गुण रास अनंत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग।।६।।

अर्थ : आकाश की सीमा नहीं है, तथापि यदि हो तो हो जाए; काल का अन्त नहीं है, तथापि यदि हो तो हो जाए; परन्तु आपके गुणों की राशि का अनन्तवाँ भाग भी अवधि का त्याग कर/अनन्त काल पर्यन्त अक्षय रूप में सुशोभित रहता है।

आनन्द जलधि धारा-प्रवाह, विज्ञानसुरी मुखद्रह अथाह।
निज शांति सुधारस परम खान, समभाव बीज उत्पत्ति थान।।७।।

अर्थ : आपके मुख रूपी द्रह/विशाल सरोवर से निकली हुई विज्ञान-सुरी/सर्वज्ञ अनुसारिणी वाणी/दिव्यध्वनि रूपी नदी का अथाह धारा प्रवाह आनन्दरूपी समुद्र में समा रहा है। आप शान्ति रूपी अमृत रस की उत्कृष्ट खदान और समताभाव रूपी बीज के उत्पत्ति स्थान हैं।

निज आत्मलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश।
दृग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव।।८।।

अर्थ : अपने आत्मा में लीनता के बल पर सम्पूर्ण विकल्पों का नाश हो शुद्धोपयोग परिणति का प्रकाश हो गया है। दर्शन, ज्ञान आदि असाधारण स्वभावों से सम्पन्न आपमें, स्पर्श आदि अन्य के गुणों का पूर्णतया अभाव है।

निज गुण पर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम।
अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध।।९।।

अर्थ : अपने गुण-पर्याय समुदाय के स्वामी आपने अव्यय/अविनाशी, अबाध/बाधा-रहित, स्वयं-सिद्ध, उपलब्धिरूप प्रसिद्ध धर्मीमय (अनुमान ज्ञान के अंगों में से धर्मी/पक्ष के तीन भेदों में से प्रमाण सिद्ध/कार्यरूप धर्मीमय) अखण्ड पदरूप परम-धाम/शाश्वत सिद्ध पद को प्राप्त कर लिया है।

एकाग्ररूप चिन्ता निरोध, जे ध्यावैं पावैं स्वयं बोध।
गुणमात्र 'सन्त' अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप।।१०।।

अर्थ : एकाग्र रूप चिन्ता के निरोध पूर्वक जो आपका ध्यान करते हैं, वे अपना ज्ञान/केवलज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। सन्त कवि कहते हैं कि मात्र गुणों में अनुराग रूप यह भाव मुझे आपके समान अनुपम, सिद्ध पद देने वाला हो जाए।

दोहा : **सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मंत्रराज है सार।**
सर्व सिद्धि दातार है, सर्व विघन हर्तार।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं षड्पंचाशदधिक-द्विशत-दलोपरि-स्थित-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सिद्ध भगवान के सुगुणों का स्मरण सभी सिद्धिओं को देने वाला, सम्पूर्ण विघ्नों का हरण करने वाला, सारभूत महा-मन्त्र राज है।

ॐ ह्रीं अर्हं दो सौ छप्पन दल के ऊपर स्थित सिद्धों के लिए नमस्कार, अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहो जयवन्त।
विघन हरण मंगल करण, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'।।१२।।

अर्थ : हे भगवान! तीन लोक के चूड़ामणि! आप सदा जयवन्त वर्तें। विघ्नों का हरण करने वाले, मंगल करने वाले आपको, सन्त सदा नमस्कार करते हैं।

इसप्रकार षष्ठम पूजन समाप्त हुई।

पाँच सौ बारह गुण–सहित सप्तम पूजन

छप्पय : **ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजै,**
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग कौ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक–पंचशत–गुण–संयुक्ताय श्रीसिद्ध–परमेष्ठिन्! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार' ऊपर–नीचे रेफ–युक्त और बिन्दु–सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमशः वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र–भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है।

अन्त में पुनः यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध यंत्र कर्म–शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह–समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण–संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा : **सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।**
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

(इति यंत्र स्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व) आदि गुणों से सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

(इसप्रकार यन्त्र–स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।)

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं :-

चाल बारहमासा : **सुर मणि-कुम्भ क्षीर भर धारत, मुनि मन शुद्ध प्रवाह बहावहिं।**
हम दोऊ विधि लायक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहिं।।
शक्ति सारु सामान्य नीरसों, पूजूँ हूँ शिव-तिय के स्वामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-सहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने जन्म-जरा-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : देव-गण मणिओं के कलशों में क्षीर सागर का जल भरकर धारा देते हैं, मुनि-गण मन में शुद्ध भावों का प्रवाह बहाकर आपकी पूजन करते हैं। हे भगवान! हम इन दोनों विधि के योग्य नहीं हैं; आप कृपा कीजिए जिससे हम अपने भावों द्वारा संसार-सागर का किनारा प्राप्त कर लें। पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण करते हुए हम शक्ति के अनुसार सामान्य जल द्वारा सुख-धामी, शिवरूपी स्त्री के स्वामी की पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए जन्म, जरा, रोग-विनाशन-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

न तु कोऊ चन्दन न तु कोऊ केसरि, भेंट किये भव पार भयो है।
केवल आप कृपा-दृग ही सौं, यह अथाह दधि पार लयो है।।
रीति सनातन भक्तन की लख, चन्दन की यह भेंट धरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : न तो कोई चन्दन चढ़ाकर और न ही कोई केशर चढ़ाकर संसार से पार हुआ है; एक-मात्र आपकी कृपा-दृष्टि से ही इस अथाह संसार-सागर से पार हुए हैं। सनातन/प्राचीन भक्तों की पद्धति को देखकर मैं भी चन्दन की यह भेंट रख रहा हूँ तथा सुख-धामी भगवान के पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;.....संसार ताप-विनाशन-हेतु चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

इन्द्रादिक पद हू अनवस्थित, दीखत अन्तर रुचि न करैं हैं।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपद की चाह धरैं हैं।।
तातैं अक्षत सौं अनुरागी, हूँ सो तुम पद पूज करामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।३।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इन्द्रादि पदों की अस्थिरता देखकर उनके प्रति अन्तरंग प्रीति नहीं रही है; एक-मात्र एक, स्वच्छ, अखण्डित, अक्षय पद की मैं कामना करता हूँ; इसीलिए अक्षत से अनुरागी हुआ हूँ और पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण करता हुआ हे सुख-धामी! आपके चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अक्षय-पद-प्राप्ति-हेतु अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

पुष्प-बाण सौं ही मन्मथ-जग, विजई जग में नाम धरावे।
देखहु अद्भुत रीति भक्त की, तिस ही भेंट धर काम हनावे।।
शरणागत की चूक न देखी, तातैं पूज्य भये शिरनामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।४।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने काम-बाण-विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुष्प-बाणों के कारण ही मन्मथ/विषय-वासनाओं के प्रतीक कामदेव ने विश्व में जग-विजयी नाम प्राप्त किया है। भक्तों की अद्भुत रीति तो देखो कि उसकी ही भेंट चढ़ाकर काम को नष्ट करना चाहते हैं। आपने शरणागत की इस भूल को नहीं देखा/देखकर अनदेखा कर दिया है; अत: आप पूज्य हो गए हैं। मैं इन सुख-धामी को शिर झुकाता हुआ इनके पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;......काम-बाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

हनन असाता पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेंटन लायौ।
भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भवकारण भाव सतायौ।।
मम उद्यम करि कहा आप ही, सौ एकाकी अर्थ लहामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बहुत अधिक मात्रा में एकत्रित होकर भी चरु, असाता के कष्ट को नष्ट करने में समर्थ नहीं है; अत: यह चरु/नैवेद्य आपको समर्पित करने के लिए लाया हूँ। हे स्वामी! भक्त के संसार के कारण और सताने वाले उसके अभिमान को आप नष्ट कर देते हैं। मेरे पुरुषार्थ से क्या होना है? आप ही संसार से पार करने वाले हैं; अत: मात्र इस एक ही प्रयोजन से आपकी पूजन कर रहा हूँ। हे सुखधामी! आपके पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;....क्षुधा-रोग-विनाशन-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी।।
मोह अन्ध विनसौ तिह कारण, दीपनि सौं अरचौं अभिरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।६।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परिपूर्ण ज्ञानानन्द घन, ज्योतिमय, विमल गुणात्मक शुद्ध स्वरूपी हे भगवान! आप पूज्य हैं, हम पूजक हैं। आपको पाकर प्रगट हुए विवेक/भेद-विज्ञानरूपी अनुपम प्रकाश से मोहरूपी अन्धकार नष्ट हो गया है; उस कारण दीपों से पूजन करता हुआ अभिरामी, सुख-धामी आपके पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए मोहान्धकार-विनाशन-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

धूप भरै उघरे प्रजरे मणि, हेम धरें तुम पद पर वारूँ।
बार बार आवर्त जोरि करि, धार धार निज शीश न हारूँ।।
धूम्र धार-सम तन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।७।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सुवर्ण-निर्मित धूप-घड़ों में व्यक्त हुई प्रज्वलित मणिओं को लेकर आपके चरणों में समर्पित करता हुआ, हाथ जोड़कर बारम्बार आवर्त करता हुआ, अपने शीश पर धारण कर-करके मैं थकता नहीं हूँ। धुएँ की धारा के समान रोमांचित शरीर के आठों अंगों को हर्षित हो झुका रहा हूँ तथा हे सुखधामी! आपके पाँच सौ बारह संख्या वाले नामों का उच्चारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;.......अष्ट कर्म-दहन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

तुम हो वीतराग निज पूजन, वन्दन थुति परवाह नहीं है।
अरु अपने सम भाव बहै कछु, पूजा फल की चाह नहीं है।।
तौ भी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।८।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोक्ष-फल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! वीतरागी होने से आपको अपनी पूजन, वन्दना, स्तुति आदि से कोई

प्रयोजन नहीं है और मुझमें कुछ सम-भाव विद्यमान होने से मुझे पूजा के फल की कामना नहीं है; तथापि फल से पूजन करना, फल-दाई होने के कारण अनिर्वार रूप में निजानन्द प्राप्त करने की इच्छा करता हूँ और सुख-धामी भगवान के पाँच सौ बारह संख्या वाले नामों का उच्चारण करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए मोक्षफल-प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रंक कहा कर है।
ज्यौं मयूरध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन बिलम न धर है।।
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुँ मुदामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।९।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने सर्व-सुख-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे मयूर की ध्वनि सुनकर रंच-मात्र भी विलम्ब किए विना सर्प, अपने बिल में विलीन हो/छिप जाते हैं; उसी प्रकार आप जैसे स्वामी के चरणों की सेवा करने वाले का यह दुष्ट, निर्बल कर्म क्या कर सकता है? कुछ नहीं; अत: अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक आपके चरणों का अर्घ्य उतारता हुआ, यश का उच्चारण/यशोगान कर रहा हूँ और सुख-धामी आपके पाँच सौ बारह संख्या-युक्त नामों का उच्चारण कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;.......सर्व-सुख-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

गीता : **निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।**
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँगुण गेह, द्यो हम शुभ मती।।१०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंच-शत-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने पूर्ण-पद-प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन; उज्ज्वल अखण्डित अक्षत, मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय, नैवेद्य; प्रज्वलित श्रेष्ठ दीपों का समूह;

धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमश: होने वाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाशकर युगपत्/एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय, जन्मादि के दु:खों को नष्ट कर, असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्य-पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी, मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य; अनन्त चतुष्टय के भण्डार भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए पूर्ण पद-प्राप्ति-हेतु महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

पाँच सौ बारह गुणों के अर्घ्य

(इनमें अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी की भक्ति की गई है। उनमें से सर्व प्रथम एक से एक सौ दो पर्यन्त प्रारम्भिक एक सौ दो छन्दों द्वारा अरहन्त भगवान का यशोगान किया जा रहा है। जो इसप्रकार है -)

अर्ध जोगीरासा : **लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकासी।**
भव्यनि मन तम मोह विनाशक, बन्दूँ शिव-थल वासी।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हते नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों में पूज्य, प्रधान, प्रकाशमान केवलज्ञान ज्योति द्वारा भव्यों के मन का मोहरूपी अन्धकार नष्ट करने वाले, शिव-स्थान में निवास करने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१।।

सुर नर मुनि मन कुमुदनि मोदन, पूरण चन्द्र समाना।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, बन्दूँ श्री भगवाना।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : देवों, मनुष्यों, मुनिओं के मन रूपी कुमुदों को विकसित करने के लिए पूर्ण चन्द्रमा के समान; गर्भ और जन्म के उत्सव से सम्पन्न अरहन्त हुए श्री भगवान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् जात के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२।।

केवल-दर्श-ज्ञान-किरणावलि, मंडित तिहुँ जग चन्दा।
मिथ्यातप हर जल आदिक करि, बन्दूँ पद अरविन्दा।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवल दर्शन, केवल ज्ञान रूपी किरणों के समूह से मण्डित आप तीनों लोकों के मिथ्यात्वरूपी ताप को नष्ट करने के लिए प्रारम्भ से ही जगत में चन्द्रमा के समान हैं। आपके चरण कमलों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् चिद्रूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥३॥

घातिकर्म रिपु जारि छारकर, स्वचतुष्टय पद पायो।
निजस्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद सिर नायो॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूप-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : घाति कर्म रूपी शत्रुओं को जला, भस्म कर अपना चतुष्टय/अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्यरूपी अनन्त चतुष्टय पद प्राप्त अपने चिद्रूप गुणात्मक स्वरूप को प्राप्त भगवान के लिए हम शिर झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् चिद्रूप गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥४॥

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल-भानु उगायो।
भव्यन को प्रतिबोध उधारे, बहुरि मुक्ति पद पायो॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानावरण रूपी पटल को उघाड़कर, केवलज्ञान रूपी सूर्य प्रगट कर, भव्यों को प्रतिबोध/सम्बोधन दे उनका उद्धार करने के बाद आपने मुक्ति-पद प्राप्त किया है।

ॐ ह्रीं अर्हत् ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥५॥

धर्म-अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर-रेखा।
बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिन में देखा॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : धर्म और अधर्म तथा इन दोनों के फलों को आप हाथ की रेखाओं के समान देख रहे हैं। इस विषय की प्रतीति द्वारा आपने इन्हें बतलाया है। यह गुण हे जिनेन्द्र भगवान! आपमें ही देखा है।

ॐ ह्रीं अर्हत् दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥६॥

मोह महा दृढ़ बंध उघारो, कर विषतन्तु समाना।
अतुल बली अरहंत कहायो, पाय नमूँ शिवथाना॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हाथ के विष-तन्तु के समान आपने मोहरूपी महा-दृढ़ बन्धन को नष्ट कर दिया है; अत: अतुल/अनन्त बली/वीर्यवान अरहन्त कहलाकर मोक्ष का स्थान प्राप्त कर लिया है; आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥७॥

युगपत लोकालोक विलोकन, है अनन्त दृगधारी।
गुप्त रूप शिवमग दरसायौ, तिनपद धोक हमारी।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शन-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त दर्शन के धारी हे भगवान! आपने एक साथ लोक-अलोक को देखते हुए गुप्त रूप मोक्ष-मार्ग को प्रगट किया है। आपके चरणों में हम धोक देते हैं/नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् दर्शन गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।८।।

घट पटादि सब परकाशत जद, हो रवि-किरण पसारा।
तैसो ज्ञान-भान अरहत को, ज्ञेय अनन्त उघारा।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञान-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सूर्य की किरणों का प्रसार होने पर जैसे घड़े, वस्त्र आदि सभी पदार्थ प्रकाशित हो जाते हैं; उसी प्रकार अरहन्त भगवान केवलज्ञान रूपी सूर्य द्वारा अनन्त ज्ञेयों को प्रकाशित कर रहे हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् ज्ञान गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।९।।

आसन शयन पान भोजन बिन, दीप्त देह अरहंता।
ध्यान वान कर तान हान विधि, भए सिद्ध भगवंता।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्य-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आसन/बैठना, शयन/सोना, पान/पीना, भोजन आदि के विना ही अरहन्त का शरीर दीप्तिवान है। ध्यानरूपी बाण को हाथ से खींचकर कर्मों को नष्ट कर आप सिद्ध भगवान हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् वीर्य गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१०।।

सप्त तत्त्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई।
ताकरि भव्य जीव संबोधे, नमूँ भये सिद्ध सोई।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्व-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आपने संशय को नष्ट कर सात तत्त्व, छह द्रव्य आदि सभी भेदों को जानकर; उससे भव्य जीवों को सम्बोधन देकर सिद्ध दशा प्राप्त कर ली है; आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् सम्यक्त्व गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११।।

ध्यान सलिल सों धोय लोभमल, शुद्ध निजातम कीनौ।
परम शौच अरहंत स्वरूपी, पाय नमूँ शिव लीनौ।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्शौच-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ध्यान रूपी जल से लोभरूपी मल को धोकर, अपने आत्मा को शुद्ध कर, परम

शौच/पवित्र अरहन्त स्वरूपी बन शिव पद पा लेने वाले आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् शौच गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२।।

नय-प्रमाण श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी।
प्रगटायो परतक्ष ज्ञान में, नमूँ भये शिव-थानी।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : नय, प्रमाण रूप श्रुतज्ञान के बारह भेद रूप जिनवाणी को प्रत्यक्ष/केवलज्ञान में प्रगट कर शिव-धामी हुए भगवान को हम नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् द्वादशांग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३।।

मन-इन्द्रिय बिन सकल चराचर, जुगपद करि प्रकटायो।
यह अरहंत मती कहलायो, बन्दूँ तिन शिव पायो।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हदभिन्न-बोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मन और इन्द्रिय के विना ही सम्पूर्ण चराचर द्रव्यों को एक साथ प्रगट कर 'अरहन्त मति' नाम प्राप्त कर शिव पद पाने वाले भगवान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् अभिन्न-बोधक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४।।

अनुभव सम नहीं होत दिव्यध्वनि, ताको भाग अनन्ता।
जानो गणधर यह श्रुत अवधी, पाय नमूँ अरहंता।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतावधि-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दिव्यध्वनि अनुभव के समान नहीं होती है, उसके अनन्तवें भाग होती है और गणधर उसे श्रुत की सीमा या श्रुत और अवधि ज्ञान पूर्वक जानते हैं। इन अरहन्त भगवान के चरणों में हम नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् श्रुत-अवधि गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५।।

सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल-सागर माँही।
एक भयो अरहंत अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हदवधि-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सर्वावधि ज्ञान या सभी प्रकार की निधिओं की वृद्धि और प्रवाह-शीलता एकमात्र अरहन्त भगवान रूप समुद्र में ही होती है। इस अवधि को प्राप्त कर सिद्ध हुए को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् अवधि गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६।।

अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा।
यह अरहंत पाय मन-पर्यय, नमूँ भए भवपारा।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हच्छुद्ध-मनःपर्यय-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अत्यन्त विशुद्धता मय विपुल-मति को प्राप्त कर पूर्वोक्त विधि से मन:पर्यय द्वारा अरहन्त पद प्राप्त कर संसार से पार हुए भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्लीं अर्हत् शुद्ध मन:पर्यय भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७।।

मोह मलिनता जग जिय नाशैं, केवलता गुण पावैं।
सर्व शुद्धता पाय, नमत हैं, हम, अरहंत कहावैं।।१८।।

ॐ ह्लीं अर्हत्केवल-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसारी जीवों में पाई जाने वाली मोहरूपी मलिनता को नष्ट कर, केवलत्व गुण पा सभी प्रकार की शुद्धता को प्राप्त कर 'अरहन्त' कहलाने वाले भगवान के लिए हम नमन करते हैं।

ॐ ह्लीं अर्हत् केवल गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८।।

मोह-जनित सो रूप विरूपी, तिस बिन केवलरूपा।
श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, बन्दूँ हौ शिवभूपा।।१९।।

ॐ ह्लीं अर्हत्केवल-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोह के कारण होने वाले विद्रूप/कुरूप मय रूप से रहित केवलज्ञान मय रूप-सम्पन्न सर्वोत्तम रूपवान अरहन्त हो शिव के स्वामी हुए भगवान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्लीं अर्हत् केवल-स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१९।।

तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल-दरशन पायौ।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भाव सहित शिरनायौ।।२०।।

ॐ ह्लीं अर्हत्केवल-दर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उसके विरोधी दर्शनावरण कर्म को जीत कर आपने केवल-दर्शन प्राप्त किया है। इस गुण-सहित आपके चरणों में भाव-सहित शिर झुकाकर नमन करते हैं।

ॐ ह्लीं अर्हत् केवल-दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०।।

निर-आवरण करण बिन जाकौ, शरण हरण नहीं कोई।
केवल-ज्ञान पाय शिव पायौ, पूजत हैं हम सोई।।२१।।

ॐ ह्लीं अर्हत्केवल-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आवरण से रहित/निरावरण, इन्द्रियों से रहित/अतीन्द्रिय, शरण की आवश्यकता से रहित/असहाय, हरण से रहित/अविनाशी केवल-ज्ञान को प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करने वाले की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्लीं अर्हत् केवल-ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१।।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज हि गोखुर मानो।
केवल बल अरहन्त नमें हम, शिव थल बास करानो।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवल-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अगम्य, किनारों से रहित संसार-सागर को गोखुर के समान अत्यन्त सहजता से पार कर केवल बल-सम्पन्न हो, शिव-स्थान में वास कर लेने वाले अरहन्त भगवान को हम नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् केवल-वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२।।

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी।
मंगलमय अरहंत सर्वदा, नमूँ मुक्ति पदधारी।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार के अपने विघ्नों का निवारण करने वाले, दूसरों के भी विघ्नों को नष्ट करने वाले, मंगलमय, मुक्ति पद के धारक अरहन्त भगवान को सर्वदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३।।

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, छाइक मंगलकारी।
यह अरहंत दर्श पायो मैं, नमूँ भये शिवकारी।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चक्षु आदि सभी बाधाओं को नष्ट कर, मंगल-कारी, शिव-कारक, क्षायिक दर्शन को प्राप्त कर सिद्ध होने वाले अरहन्त को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४।।

निज पर संशय आदि पाय बिन, निरावरण विकसानौं।
मंगलमय अरहंत ज्ञान है, बन्दूँ शिव सुख थानौं।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने और पर के संबंध में संशय आदि के विना ही, आवरण-रहित, पूर्ण विकसित, मंगलमय, शिव-सुख के स्थान, अरहन्त के ज्ञान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५।।

पर कृत जरा आदि संकट बिन, अतुल बली अर्हंता।
नमूँ सदा शिवकारी के संग, सुखसौं केलि करंता।।२६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दूसरों (शरीर, कर्मोदय आदि) के कारण आने वाले जरा/वृद्धावस्था आदि संकटों

से रहित, अनन्त बल-शाली, मोक्षरूपी स्त्री के साथ सदा सुख पूर्वक केली/रमण करने वाले अरहन्त भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६।।

पापरूप एकान्त पक्ष बिन, सर्व तत्त्व परकाशी।
द्वादशांग अरहन्त कह्यो मैं, नमूँ भये शिववासी।।२७।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पापरूप एकान्त पक्ष से रहित, सभी तत्त्वों को प्रकाशित करने वाले, द्वादशांग रूप जिनवाणी कहने वाले; शिव-वासी हो गए अरहन्त भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल द्वादशांग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७।।

बिन प्रतक्ष अनुमान सुबाधित, सुमतिरूप परिणामा।
मंगलमय अरहंतमती मैं, नमूँ देउ शिवधामा।।२८।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-अभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रत्यक्ष से रहित, अनुमान से अबाधित, सुमतिरूप परिणाम वाले, मंगलमय अरहन्त भगवान के मति/ज्ञान को मैं नमन करता हूँ। आप मुझे शिव-धाम/मोक्ष दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल अभिनिबोधक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८।।

नय-विकलप श्रुत-अंग पक्ष के, त्यागी हैं भगवन्ता।
ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमूँ अरहंता।।२९।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-श्रुतात्मक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : श्रुतज्ञान के अंग/भेद, विकल्पात्मक, सापेक्ष नय के त्यागी; ज्ञाता, दृष्टा, वीतराग रूप में विख्यात अरहन्त भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल श्रुतात्मक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९।।

मंगलमय सर्वावधि जाकरि, पावैं पद अरहंता।
बन्दूँ ज्ञान प्रकाश नाश भव, शिव थल वास करंता।।३०।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलावधि-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिससे अरहन्त पद की प्राप्ति होती है, वह सर्वावधि ज्ञान मंगलमय है। ज्ञान का प्रकाश कर, भव का नाश कर, मोक्ष स्थान में निवास करने वाले भगवान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल अवधिज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०।।

वर्धमान मनपर्य ज्ञान करि, केवल-भानु उगायो।
भव्यनि प्रति शुभ मार्ग बतायौ, नमूँ सिद्ध पद पायौ।।३१।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-मनःपर्यय-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सदा बड़ने वाले मन:पर्यय ज्ञान द्वारा केवलज्ञान रूपी सूर्य प्रगट कर, भव्यों के लिए शुभ मार्ग बताकर सिद्ध पद पाने वाले भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल मन:पर्यय ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।३१।।

जा बिन और अज्ञान सकल, जग कारण बंध प्रधाना।
नमूँ पाय अरहंत मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना।।३२।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-केवल-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस ज्ञान के विना सम्पूर्ण संसार के सभी ज्ञान, अज्ञान और बन्ध के प्रधान कारण हैं; उस मंगलमय केवलज्ञान से अरहन्त और मुक्ति पद की प्राप्ति हुई है। उसे नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल केवलज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२।।

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमइ राजैं।
केवलरूप नमूँ सब अघहर, श्री अरहन्त विराजैं।।३३।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-केवल-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आवरण-रहित, खेद-रहित, निरन्तर, बाधा-रहित, सब पापों को नष्ट करने वाले, देदीप्यमान केवलज्ञान से सुशोभित श्री अरहन्त भगवान को हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल केवल स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३।।

चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया।
श्री अरहन्त नमूँ शिववासी, इह जग पाप नशाया।।३४।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-केवल-दर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चक्षु आदि सब भेदों रूपी विघ्नों को नष्ट कर, क्षायिक दर्शन को प्राप्त कर, संसार के सब पापों को नष्ट कर शिववासी हुए श्री अरहन्त के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल केवलदर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४।।

जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूँ कियो जग अन्ता।।३५।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-केवल-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत के मंगल/लोक में मंगल कहलाने वाले सभी, विघ्नरूप हैं। संसार का अन्त करने वाले मात्र एक अरहन्त भगवान ही मंगलमय और सभी मंगलों को देने वाले हैं, उन्हें नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल केवलज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५।।

केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा।
सो अरहन्त सिद्ध पद पायो, नमूँ पाय भवपारा।।३६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-केवल-रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परम/सर्वाधिक बलशाली शत्रुओं को नष्ट करने वाला केवलरूप महा मंगलमय है। उसे प्राप्त कर भव से पार हुए अरहन्त-सिद्ध पद प्राप्त करने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल केवल-रूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६।।

शुद्धातम निज धर्म प्रकाशी, परमानन्द विराजैं।
सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूँ शिवालय राजैं।।३७।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुद्धात्मा के आश्रय से अपने धर्म को प्रकाशित कर परमानन्द रूप से शोभायमान, शिवालय में विराजमान, परम मंगलमय अरहन्त को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७।।

सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्म स्वरूपा।
सो अरहन्त भये परमातम, नमूँ त्रियोग निरूपा।।३८।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-धर्म-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण विभावोंमय विघ्नों को नष्ट कर, मंगल धर्म स्वरूप, तीनों योगों से रहित, अमूर्तिक हुए अरहन्त परमात्मा को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल धर्म स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८।।

सर्व जगत सम्बन्ध विघन नहिं, उत्तम मंगल सोई।
सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिव सुख होई।।३९।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें संसार-संबंध वाले सभी विघ्न नहीं हैं; वही उत्तम मंगल है। शिव-वासी हुए ऐसे अरहन्त भगवान की पूजन करने से शिव-सुख होता है।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल उत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९।।

लोकातीत विलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी।
लोक शिखर सुखरूप बिराजैं, तिनपद धोक हमारी।।४०।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक से अतीत, तीनों लोकों में पूज्य, विजेता, लोकोत्तम गुणों के धारक, लोक

के शिखर पर सुख पूर्वक विराजमान भगवान के चरणों में हम धोक देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०।।

लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्री जिनपद सों न्यारे।
तिनको त्याग भये शिव बन्दूँ, काटो बन्ध हमारे।।४१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्लोकोत्तम-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोकाश्रित/लोक में जिन्हें अच्छा कहा जाता है, वे सभी गुण विभाव हैं और जिन-पद से पृथक् हैं। उनका त्याग कर मुक्त हुए भगवान की हम वन्दना करते हैं; आप हमारे बन्धन को काट दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१।।

मिथ्या मति कर सहित ज्ञान, अज्ञान जगत में सारो।
ता विनाशि अरहन्त कह्यो, लोकोत्तम पूज हमारो।।४२।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत में मिथ्या मान्यताओं-सहित जितना जो भी ज्ञान है, वह सभी अज्ञान/मिथ्याज्ञान है। उसे नष्ट कर आप लोकोत्तम अरहन्त कहलाते हैं और हमारे पूज्य हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२।।

क्षायक दरशन है अरहन्ता, और लोक में नाहीं।
सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई।।४३।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अरहन्त भगवान के जो क्षायिक दर्शन है, वह लोक में अन्य किसी के नहीं है। लोक में उत्तम, सुख-दायक वे अरहन्त भगवान शिव-वासी हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३।।

कर्मबली ने सब जग बाँध्यो, ताहि हनो अरहन्ता।
यह अरहन्त वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनन्ता।।४४।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मरूपी बलवान ने सम्पूर्ण जगत को बाँध लिया है। उसे अरहन्त भगवान ने नष्ट कर दिया है। अरहन्त भगवान ने इस लोकोत्तम वीर्य को प्राप्त कर अनन्त-कालीन सिद्ध पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४।।

अक्षातीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला।
यह अरहन्त नमूँ शिवनायक, पाऊँ भवदधि कूला।।४५।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनि-बोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इन्द्रियों से रहित ज्ञान, लोक में उत्तम परमात्म पद का मूल है। इससे सहित शिव के नायक अरहन्त भगवान को नमस्कार है; जिससे मैं संसार-सागर का किनारा प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम आभिनिबोधक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५।।

परमावधि ज्ञान सुखखानी, केवलज्ञान प्रकाशी।
यहै अवधि अरहन्त नमूँ मैं, संशय तम को नाशी।।४६।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधि-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सुख की खदान, केवलज्ञान को प्रकाशित करने वाले, संशयरूपी अन्धकार को नष्ट करने वाले परमावधि ज्ञानरूप अवधिमय अरहन्त भगवान के लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम अवधिज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६।।

जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवल के माँहीं।
साक्षात् शिवरूप नमों मैं, अन्य लोक में नाहीं।।४७।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-मन:पर्यय-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मन:पर्यय ज्ञान को धारण कर केवलज्ञान प्रगट करने वाले साक्षात् शिवरूप अरहन्त भगवान को नमस्कार है। उनके समान कोई दूसरा, लोक में नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम मन:पर्यय ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४७।।

तीन लोक में सार सु श्री-अरहन्त स्वयंभू ज्ञानी।
नमूँ सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी।।४८।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवल-ज्ञान-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों में सारभूत श्री अरहन्त भगवान स्वयंभू, ज्ञानी, सदा शिवरूप, भव्य जीवों के लिए सुख-दायक हैं। आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवलज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८।।

सर्वोत्तम तिहुँ लोक प्रकाशित, केवल ज्ञान स्वरूपी।
सो अरहन्त नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।४९।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवल-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सर्वोत्तम, तीनों लोकों के प्रकाशक केवलज्ञान-स्वरूपी, शिव-नायक, सुख-प्रद, सारभूत, अनुपम अरहन्त भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवलज्ञान स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९।।

ज्ञान तरंग अभंग बहै, लोकोत्तम धार अरूपी।सो...।।५०।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवल-पर्यायाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तरंगित, अखण्डित, लोकोत्तम, अरूपी, प्रवाहित ज्ञान की धारा-सम्पन्न, शिव-नायक, सुख-प्रद, सारभूत, अनुपम अरहन्त भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवल पर्याय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०।।

सहित असाधारण गुण-पर्यय, केवलज्ञान सरूपी।
सो अरहन्त नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।५१।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवल-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : असाधारण गुण-पर्याय से सहित केवलज्ञान-स्वरूपी, शिव-नायक, सुख-प्रद, सारभूत, अनुपम अरहन्त भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवल द्रव्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५१।।

जगजिय सर्व अशुद्ध कह्यो, इक केवल शुद्ध सरूपी।सो....।।५२।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार के सभी जीव अशुद्ध कहे गए हैं। मात्र एक आप शुद्ध स्वरूपी हैं। उन शिव-नायक, सुख-प्रद, सारभूत, अनुपम अरहन्त भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५२।।

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सरूपी।सो....।।५३।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवल-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार के सभी जीव अनेक प्रकार की कुरूपतामय हैं। मात्र एक आप स्वयं सुरूपी हैं। उन शिव-नायक,......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवल स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५३।।

हीनाधिक धिक् धिक् जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी।सो...।।५४।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-ध्रुव-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार के सभी प्राणी हीन-अधिकता-सम्पन्न होने से धिक्कारने-योग्य हैं। एक ध्रुवरूपी आप ही धन्य हैं। उन शिव-नायक,....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम ध्रुव भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५४।।

दोहा : **संसारिन के भाव सब, बन्ध हेत वरणाय।**
मुक्तिरूप अरहंत के, भाव नमूँ सुखदाय।।५५।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसारिओं के सभी भाव बन्ध के कारण कहे गए हैं। अरहन्तों के मुक्तिरूप सुख-दायक भावों को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५५।।

कबहुँ न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश।
मुक्तिरूप प्रणमूँ सदा, नाशैं विघन विशेष।।५६।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-स्थिर-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मुक्तिरूप, समस्त विघ्नों को नष्ट कर देने वाले, कभी भी विभावमय नहीं होने वाले, स्थिर-भावी जिनेश को सदा प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम स्थिर भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५६।।

जा सेवत वेवत सुसुख, सो सर्वोत्तम देव।
शिववासी नाशी त्रिजग-फाँसी नमहूँ एव।।५७।।

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिनकी सेवा/उपासना करने से आत्मीक सुख की प्राप्ति होती है, वे ही सर्वोत्तम देव हैं। शिव में निवास करने वाले; त्रिजग की फाँसी/जन्म, जरा, मृत्यु को नष्ट करने वाले इन भगवान के लिए ही नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५७।।

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चै सो सुखरास।
शरण स्वरूपी जिन नमूँ, करैं सदा शिववास।।५८।।

ॐ ह्रीं अर्हच्छरण-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन्होंने आपका ध्यान किया, उन्होंने वास्तव में सुख का भण्डार प्राप्त किया। सदा शिव में वास करने वाले, शरण-स्वरूपी जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हत् शरण-स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५८।।

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निहचै सुख अविकार।
उत्तमभावी शिव नमूँ, शिवध्याऊँ सुखकार।।५९।।

ॐ ह्रीं अर्हदुत्तमभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन्होंने आपका ध्यान किया, उन्होंने वास्तव में सम्पूर्ण विकारों से पूर्णतया रहित सुख को प्राप्त किया। मैं उत्कृष्ट रूप से परिणमित हुए सिद्ध भगवान को नमन करता हूँ और सुख-कारक उन्हीं सिद्ध का ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हत् उत्तम-भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५९।।

पद्धड़ी : **स्वाभाविक गुण अरहंत गाय, जासों पूरण शिवसुख लहाय।**
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।६०।।

ॐ ह्रीं अर्हद्गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अरहन्त भगवान के स्वाभाविक गुणों का गान करने से परिपूर्ण शिव-सुख की प्राप्ति होती है। सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो हम आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् गुण शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०।।

बिन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहन्त जोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।६१।।

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञान-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवलज्ञान के विना मुक्ति नहीं होती है। श्री अरहन्त भगवान ने उसे प्राप्त कर लिया है। सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो हम आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् ज्ञान शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६१।।

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यौ है शिव-मारग असेव।हम शरण....।।६२।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शन-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सर्वज्ञ देव ने प्रत्यक्ष देखकर, सेवन नहीं किए मोक्ष-मार्ग को बताया है। सन्त....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् दर्शन शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६२।।

संसार विषम बन्धन उछेद, अरहन्त वीर्य पायो अखेद।हम शरण....।।६३।।

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्य-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अरहन्त भगवान ने संसार के विषम बन्धनों का छेदन करके खेद से रहित वीर्य प्राप्त कर लिया है। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् वीर्य शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६३।।

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत, हो जिसतें शिवसुख दे अभीत।हम शरण..।।६४।।

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाय श्रुत-गण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार की कुमति/मिथ्या-ज्ञान का अभाव होने पर जिनमत की प्रतीति होने से वह पूर्णतया भय-रहित शिव-सुख देता है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् द्वादशांग श्रुत-गण-शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६४।।

अनुमानादिक साधित विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान।हम शरण....।।६५।।

ॐ ह्रीं अर्हदाभिनिबोधकाय शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनुमानादि ज्ञान, साधन के माध्यम से पदार्थों का ज्ञान करते हैं। अरहन्त का ज्ञान उन्हें प्रत्यक्ष जानता है। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् आभिनिबोधक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६५।।

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव।हम शरण...।।६६।।

ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुत-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिनेन्द्र भगवान द्वारा कथित श्रुत को सुनकर भव्य जीव सदैव अविनाशी मोक्ष पद प्राप्त करते हैं। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् श्रुत शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६६।।

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधी शिवसुख कराय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।६७।।

ॐ ह्रीं अर्हदवधि-बोध-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रतिपक्षी सभी कषायों को जीतकर शिव-सुख को प्राप्त कराने वाले अवधिज्ञान को आपने प्राप्त कर लिया है। सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो, हम आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् अवधि-बोध शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६७।।

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिव वास देत।हम शरण....।।६८।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मन:पर्यय-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो मुनि श्वेत परिणाम/शुक्ल ध्यान धारण करते हैं, उन्हें मन:पर्यय ज्ञान शिव का निवास देता है। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् मन:पर्यय शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६८।।

आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान।हम शरण...।।६९।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवली जिन के व्यक्त हुआ आवरण-रहित, प्रत्यक्ष ज्ञान/केवलज्ञान साक्षात् शिवरूप है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् केवल शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।६९।।

मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावैं शिव-सुख निश्चय अबाध।हम शरण...।।७०।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवल-शरण-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवलज्ञानी-जिन की आराधना करके मुनि वास्तव में बाधाओं से रहित शिव-सुख प्राप्त करते हैं। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् केवल शरण स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७०।।

शिव-सुखदायक निज आत्म-ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान।हम शरण...।।७१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवल-धर्म-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शिव-सुख को देने वाला, निज, महान आत्म-ज्ञान मात्र जिनेन्द्र भगवान ही प्राप्त करते हैं। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् केवल धर्म शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७१।।

यह केवल गुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाव।हम शरण..।।७२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवल-गुण-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा का स्वभाव यह केवल गुण अरहन्तों के लिए शिव-सुख का उपाय है। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् केवल गुण शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७२।।

संसाररूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्तिकार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।७३।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार रूप सम्पूर्ण विघ्नों को टालकर श्री जिनेन्द्र ने मोक्ष-कारक मंगल गुणों को ग्रहण किया है। सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो, हम आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल गुण शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७३।।

छय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता बिन जिन ज्ञानी शिव सरूप।हम शरण....।।७४।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-ज्ञान-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षायोपशमिक ज्ञान विघ्न रूप है। इसके विना जिनेन्द्र भगवान का ज्ञान शिव-स्वरूप है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल ज्ञान शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७४।।

अरहंत दर्श मंगल स्वरूप, तासौं दरशै शिव-सुख अनूप।हम शरण....।।७५।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-दर्शन-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अरहन्त भगवान का दर्शन मंगल-स्वरूप है, उससे अनुपम शिव-सुख दिखाई देने लगता है। सन्त....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल दर्शन शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७५।।

अरहंत बोध है मंगलीक, शिव-मारग प्रति वरते अलीक।हम शरण....।।७६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-बोध-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अरहन्त भगवान का मांगलिक बोध/ज्ञान मोक्ष-मार्ग में अलीक/रूढ़ी-रहित/निर्णयात्मक रूप में प्रवृत्ति करता है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल बोध शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७६।।

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार।हम शरण....।।७७।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-केवल-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप अपने अखण्ड, अव्यय, अनन्त ज्ञान-आनन्द के प्रवाह को धारण करते हुए वर्तते हैं। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् मंगल केवल शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७७।।

जा बिन तिहुँ लोक न और मान, भव सिंधु तरण तारण महान।हम शरण....।।७८।।

ॐ ह्रीं अर्हद्गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके विना तीनों लोकों में और कोई भी महान, संसार-सागर से पार उतारने वाला नहीं है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् गुण शरण के लिए नमस्कार, अर्घ्यं...।।७८।।

जा बिन तिहुँ जग उत्तम सु नाय, भवि जीवन की सुचता कराय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।७९।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिनके विना तीन लोक उत्तम नहीं लगता, जो भव्य जीवों को पवित्र करते हैं; सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो, हम आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।७९।।

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल।हम शरण....।।८०।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-गुण-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप संसार जाल को नष्ट करने में स्वाभाविक रूप से भव्यों के प्रति दयालु हैं। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम गुण शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।८०।।

तुम बिन समरथ तिहुँ लोक माँहि, भवसिंधु उतारण और नाहिं।हम शरण...।।८१।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-वीर्य-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार-सागर से पार उतारने के लिए तीनों लोकों में आपके विना और कोई भी समर्थ नहीं है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम वीर्य शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।८१।।

बिन परिश्रम तारणतरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय।हम शरण...।।८२।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-वीर्य-गुण-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप विना परिश्रम के ही लोकोत्तम, अद्भुत शक्ति-सम्पन्न, तारण-तरण हैं। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम वीर्य गुण शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२।।

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश।हम शरण....।।८३।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-द्वादशांग-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रसिद्धि से रहित, अल्पज्ञता का आभास देने वाले कुनय का विनाश कर आप मोक्ष-मार्ग के प्रकाशक हैं। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम द्वादशांग शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।८३।।

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ-सत कारण प्रकाश।हम शरण....।।८४।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण कुनय, कुपक्ष, कुसाध्यों का नाश कर आपने सत्यार्थ, सत् कारणों को प्रकाशित किया है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम आभिनिबोधक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।८४।।

मिथ्यात्व प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधी को प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।८५।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधि-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मिथ्यात्व प्रकृति-सहित अवधि का विनाश कर आपने लोकोत्तम अवधि को प्रकाशित किया है। सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो, हम आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम अवधि शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।८५।।

मनपर्यय शिव मंगल कहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय।हम शरण...।।८६।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-मनःपर्यय-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोक्ष के लिए मंगल-स्वरूप मनःपर्यय को प्राप्त करने वाले, लोकोत्तम श्रीगुरु कहलाते हैं। सन्त......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम मनःपर्यय शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६।।

आवरणतीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जग में प्रधान।हम शरण...।।८७।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-केवलज्ञान-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आवरण से रहित प्रत्यक्ष ज्ञान/केवलज्ञान जगत में प्रधान और सेवनीय है। सन्त.... करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम केवलज्ञान शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७।।

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अन्तर लोकोत्तम ज्ञानरूप।हम शरण....।।८८।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-विभूति-प्रधान-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे जिनेन्द्र भगवान! देवों द्वारा किया गया बाह्य वैभव भी अनुपम है और आपका अंतरंग वैभव भी लोकोत्तम ज्ञानरूप है। सन्त.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम विभूति प्रधान शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८।।

रतनत्रय निमित मिलौ अबाध, पाया निज आनन्द धर्म साध।हम शरण....।।८९।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तम-विभूति-धर्म-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बाधाओं से रहित रत्नत्रय का निमित्त/कारण मिल जाने से धर्म की साधना कर आपने अपना आनन्द प्राप्त कर लिया है। सन्त....करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम विभूति धर्म शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९।।

सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो कर सब प्रकृति अभाव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय।।९०।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमानन्त-चतुष्टय-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने सम्पूर्ण प्रकृतिओं का अभाव कर सुख, ज्ञान, वीर्य, दर्शन स्वभाव प्राप्त कर लिया है। सन्त कवि कहते हैं कि मन, वचन, काय पूर्वक आपकी शरण ग्रहण कर आनन्दित हो, हम आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् लोकोत्तम अनन्त चतुष्टय शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०।।

अडिल्ल :

दर्श ज्ञान सुख बल निजगुण ये चार हैं,
आतमीक परधान विशेष अपार हैं।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायँ नमन यातैं करा।।९१।।

ॐ ह्रीं अर्हदनन्त-गुण-चतुष्टयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा में दर्शन, ज्ञान, सुख, वीर्य – ये चार गुण प्रधान, विशेष और अनन्त हैं। इनके कारण ही सिद्ध परमेश्वर पूज्य हैं। हम भी इन गुणों की प्राप्ति के लिए आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् अनन्त गुण चतुष्टय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१।।

क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञानकला हरी,
पूरण ज्ञायक स्वयं बुद्धि श्रीजिनवरी।।इनहीं....।।९२।।

ॐ ह्रीं अर्हन्निज-ज्ञान-स्वयंभुवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बाधित होने वाली क्षायोपशमिक ज्ञान की कला का विनाश कर स्वयं-बुद्धिमय परिपूर्ण ज्ञायक का श्री जिनेन्द्र भगवान ने वरण किया है। इनके......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् निज ज्ञान स्वयम्भू के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२।।

जनमत ही दश अतिशय शासन में कही,
स्वयं शक्ति भगवान आप तिन को लही।।इनहीं....।।९३।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशय-स्वयंभुवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान आपने अपनी शक्ति द्वारा ही जन्म से दश अतिशय प्राप्त किए हैं – ऐसा जिन-शासन/जिनागम में कहा गया है। इनके......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् दश अतिशय स्वयंभू के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३।।

ये दश अतिशय घातिकर्म कौ छय करैं,
महा विभव को पाय मोक्ष नारी वरैं।।इनहीं...।।९४।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवलज्ञान संबंधी ये दश अतिशय घाति-कर्म का क्षय करते हैं। इस महा वैभव को प्राप्त कर आप मोक्ष-लक्ष्मी का वरण करते हैं। इनके कारण ही सिद्ध परमेश्वर पूज्य हैं। हम भी इस गुण की प्राप्ति के लिए आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् दश अतिशय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४।।

केवल विभव उपाय प्रभू जिन पद लियौ,
चौदह अतिशय देवन करि सेवन कियौ।।इनहीं...।।९५।।

ॐ ह्रीं अर्हद्देवकृत-चतुर्दशातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवल संबंधी वैभव को प्रगट कर प्रभु ने जिन-पद को प्राप्त किया और देवों द्वारा किए गए चौदह अतिशयों का सेवन किया। इनके.........करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत् देवकृत चौदह अतिशय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५।।

चौंतिस अतिशय जे पुराण बरणे महा,
मुक्ति समाज अनूपम श्री गुरु ने कहा।।इनहीं...।।९६।।

ॐ ह्रीं अर्हच्चतुस्त्रिंशत-अतिशय-विराजमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुराणों में वर्णित, महान चौंतीसों अतिशयों को श्री गुरुओं ने मोक्ष-समान/समूह और अनुपम कहा है। इनके.........करते हैं।

ॐ ह्रीं चौंतीस अतिशय-युक्त विराजमान अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।९६।।

डालर : **लोकालोक अणु सम जानौ, ज्ञानानंत सुगुण पहिचानौ।**
सो अरहंत सिद्धपद पायौ, भाव सहित हम शीश नवायौ।।९७।।

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानानन्द-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें लोक और अलोक अणु के समान ज्ञात होते हैं, उस अनन्त ज्ञानरूपी सुगुण से जिनकी पहिचान होती है, उन अरहन्त ने सिद्ध पद प्राप्त कर लिया है। हम भाव-सहित शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञान-आनन्द गुणमय अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।९७।।

समरस सुस्थिर भाव उघारा, युगपत लोकालोक निहारा।सो अरहंत...।।९८।।

ॐ ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्त-ध्येयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : समता रसमय सुस्थिर भाव को प्रगट कर एक साथ लोक-अलोक को जानने वाले अरहन्त ने.................झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त ध्येयमय ध्यान-सम्पन्न अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८।।

इक इक गुण का भाव अनन्ता, पर्ययरूप सो है अरहन्ता।सो अरहंत....।।९९।।

ॐ ह्रीं अर्हदनंत-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रत्येक गुण के अनन्त भावमय पर्याय रूप से शोभित अरहन्त ने.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त गुणमय अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।९९।।

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
सो अरहंत सिद्धपद पायौ, भाव सहित हम शीश नवायौ।।१००।।

ॐ ह्रीं अर्हत्तप-अनन्त-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चौरासी लाख उत्तर गुणों से सहित चारित्र के सम्पूर्ण भेदों को प्रकाशित करने वाले अरहन्त भगवान ने सिद्ध पद प्राप्त कर लिया है। हम भाव-सहित शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं तप अनन्त गुणमय अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१००।।

आतम शक्ति जास करि छीनी, तास नास प्रभुताई लीनी।सो अरहंत....।।१०१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्म-शक्ति जिनसे क्षीण हो रही थी, उन्हें नष्ट कर प्रभुता प्राप्त कर लेने वाले अरहन्त भगवान ने सिद्ध पद प्राप्त कर लिया है। हम भाव-सहित शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अरहन्त परमात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०१।।

निज गुण निज ही माँहि समाया, गणधरादि वरनन न कराया।सो अरहंत....।।१०२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्स्वरूप-गुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने गुण अपने में ही समाहित होने से गणधर भी उनका वर्णन नहीं कर सकते हैं। उन अरहन्त भगवान ने सिद्ध पद प्राप्त कर लिया है। हम भाव-सहित शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं स्वरूप-गुप्त अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०२।।

(अब एक सौ तीन से लेकर दो सौ दो पर्यन्त सौ छन्दों द्वारा सिद्ध परमेष्ठी का गुणानुवाद करते हैं; वे इसप्रकार हैं -)

दोधक : **जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई।**
लोक शिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुमकौं प्रणमामी।।१०३।।

ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो सुख-दाई अपने आत्मा की साधना करते हैं, वे जगत के ईश्वर सिद्ध कहलाते हैं। उन लोक-शिरोमणि शिव-स्वामी को मैं भाव-सहित प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०३।।

सर्व विशुद्ध विरूप सरूपी, स्वातम-रूप विशुद्ध अनूपी।लोक....।।१०४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-स्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी ओर से विशुद्ध, रूपादि से रहित-स्वरूपी, अपने आत्मा-रूप, विशेष शुद्ध, अनुपम, लोक-शिरोमणि शिव-स्वामी को मैं भाव-सहित प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०४।।

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा।
लोक शिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुमकौं प्रणमामी।।१०५।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर के आश्रय से होने वाले समस्त विभावों का निवारण कर, अपने आश्रय से व्यक्त होने वाले, सभी बाधाओं से रहित, अनन्त गुणों से सम्पन्न लोक-शिरोमणि, शिव-स्वामी को भाव-सहित प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध गुणों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०५।।

आकुलता सब ही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी।लोक....।।१०६।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-ज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार की आकुलता को नष्ट कर, लोकालोक को प्रकाशित करने वाले ज्ञायक, लोक-शिरोमणि,.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०६।।

जीव अजीव लखैं अविचारा, हो नहिं अन्तर एक प्रकारा।लोक....।।१०७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-दर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : किसी भी प्रकार का अन्तर किए विना, एक ही प्रकार/रूप में, विना विचार के ही जीव-अजीव को देखने वाले लोक-शिरोमणि,.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्ध दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०७।।

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी।लोक....।।१०८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-शुद्ध-सम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्तरंग-बहिरंग भेदों को प्रगट कर, सदा सुख-कारक, विशेष शुद्ध दर्शन-सम्पन्न लोक-शिरोमणि,.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक्त्व-युक्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१०८।।

एक अणु मल कर्म लजावै, सोय निरंजनता नहिं पावै।लोक....।।१०९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-निरंजनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लज्जित करने वाले एक अणुमात्र मल और कर्म की विद्यमानता में निरंजनता प्राप्त नहीं होती है। लोक-शिरोमणि,.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं निरंजन सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१०९।।

अर्धरोला : **चारों गति कौ भ्रमण नाशकर थिरता पाई।**
निजस्वरूप में लीन, अन्य सों मोह नशाई।।११०।।

ॐ ह्रीं सिद्धाचल-पद-प्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने चारों गतिओं का परिभ्रमण नष्ट कर स्थिरता प्राप्त की है और अपने स्वरूप में लीनता से अन्य के प्रति मोह नष्ट कर दिया है।

ॐ ह्रीं अचल पद-प्राप्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११०।।

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायौ।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायौ।।१११।।

ॐ ह्रीं संख्यातीत-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने रत्नत्रयमय आराधना द्वारा साध्यभूत अपने शिव-पद को प्राप्त कर लिया है और संख्या-भेद का उल्लंघन कर शिवालय में निवास कर लिया है।

ॐ ह्रीं संख्यातीत सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१११।।

असंख्यात मरजाद, एक ताहू सौ बीते।
विजयी लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते।।११२।।

ॐ ह्रीं असंख्यातीत-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : असंख्यात की मर्यादा से भी रहित हो हे विजय-लक्ष्मी के नाथ! आपने महा-बल से सभी कर्मों को जीत लिया है।

ॐ ह्रीं असंख्यातीत सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११२।।

काल आदि मर्याद अनादि-सों इह विधि जारी।
भए अनन्त दिगम्बर साधु जे शिवपद धारी।।११३।।

ॐ ह्रीं अनन्त-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : काल की आदि-अनादि मर्यादा वाले/स्थिति आदि के सादि, अनादि बन्ध आदि रूप सम्पूर्ण कर्मों को जलाकर अनन्त दिगम्बर साधु शिवपद के धारक हुए हैं।

ॐ ह्रीं अनन्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११३।।

पुष्करार्ध सागर लौं, जो जल थान बखानौ।
देव सहाय उपाइ ऊर्ध्व-गति गमन करानौ।।११४।।

ॐ ह्रीं जल-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुष्करार्ध द्वीप के समुद्र पर्यन्त कहे गए जल स्थानों को देवों की सहायता से प्राप्त कर, वहाँ से ऊर्ध्व गति गमन/सिद्ध पद को प्राप्त किया है।

ॐ ह्रीं जल-सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११४।।

वन गिरि नगर गुफादि सर्व थल सौं शिव पाई।
सिद्धक्षेत्र सब ठौर बखानत श्री जिनराई।।११५।।

ॐ ह्रीं स्थल-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वन, पर्वत, नगर, गुफा आदि सभी स्थलों से मोक्ष प्राप्त किया होने से जिनेन्द्र भगवान ने सभी स्थानों को सिद्ध क्षेत्र कहा है।

ॐ ह्रीं स्थल सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११५।।

नभ ही में जिन शुक्लध्यान-बल कर्म नसाए।
आउ पूर्ण वश ततछिन, ही शिववास लहाए।।११६।।

ॐ ह्रीं गगन-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुक्ल-ध्यान के बल से आकाश में ही कर्मों का नाश कर, आयु पूर्ण हो जाने के कारण तत्काल ही आपने शिव-धाम प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं गगन सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११६।।

आयु स्थिति सम अन्य कर्म-कारण परदेशा।
परसैं पूरण लोक आत्म केवली जिनेशा।।११७।।

ॐ ह्रीं समुद्घात-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य कर्मों की स्थिति, आयु कर्म की स्थिति के समान करने के लिए केवली जिनेन्द्र के आत्म-प्रदेश सम्पूर्ण लोक का स्पर्श करते हैं।

ॐ ह्रीं समुद्घात सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११७।।

केवलि जिन बिन समुद्घात, शिववास लिया है।
स्वत: स्वभाव समान, अघाति कर्म किया है।।११८।।

ॐ ह्रीं असमुद्घात-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अघाति कर्मों की स्थिति स्वाभाविक रूप में ही समान होने के कारण केवली जिन ने समुद्घात के विना ही शिव-वास प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं असमुद्घात सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११८।।

उल्लाला : **तिन विशेष अतिशय रहित, सामान्य केवली नाम है।**
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद प्रणाम है।।११९।।

ॐ ह्रीं साधारण-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विशेष अतिशयों से रहित होने के कारण 'सामान्य केवली' नाम प्राप्त कर सिद्ध हुए भगवान के चरणों में तीनों योगों पूर्वक प्रणाम है।

ॐ ह्रीं साधारण सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।११९।।

त्रिभुवन में नहीं पावतो, जो जिन गुण अभिराम हैं।सिद्ध भये....।।१२०।।

ॐ ह्रीं असाधारण-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों में अन्यत्र नहीं पाए जाने वाले सुन्दर गुणों को प्राप्त कर....प्रणाम है।

ॐ ह्रीं असाधारण सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२०।।

गर्भ कल्याणक आदि युत, तीर्थंकर सुखधाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद प्रणाम है।।१२१।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गर्भ-कल्याणक आदि से सहित, सुख के धाम तीर्थंकर होकर सिद्ध हुए भगवान के चरणों में तीनों योगों पूर्वक प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२१।।

तीर्थंकर के समय में, केवली जिन अभिराम हैं।सिद्ध भये....।।१२२।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-अन्तर-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीर्थंकर के काल में जिन केवलिओं ने सुन्दर सिद्ध पद प्राप्त किया है। उनके....करते हैं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर अन्तर सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२२।।

पंच शतक पच्चीस पुनि, धनुष काय अभिराम है।सिद्ध भये....।।१२३।।

ॐ ह्रीं उत्कृष्टावगाहन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शरीर की पाँच सौ पच्चीस धनुष ऊँची, सुन्दर उत्कृष्ट अवगाहना से सिद्ध...करते हैं।

ॐ ह्रीं उत्कृष्ट अवगाहन-सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२३।।

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यवगाहन नाम है।सिद्ध भये....।।१२४।।

ॐ ह्रीं मध्यमावगाहन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रारम्भ की/उत्कृष्ट और अन्त की/जघन्य अवगाहना की मध्यवर्ती मध्यम अवगाहनाओं से सिद्ध.....करते हैं।

ॐ ह्रीं मध्यम-अवगाहन सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२४।।

तीन अर्ध तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय हैं।सिद्ध भये.....।।१२५।।

ॐ ह्रीं जघन्यावगाहन-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : केवली के शरीर की साढ़े तीन हाथ ऊँची जघन्य अवगाहना से सिद्ध.....करते हैं।

ॐ ह्रीं जघन्य-अवगाहन सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२५।।

देव निमित्त मिलौ जहाँ, त्रिजग केवली धाम है।सिद्ध भये....।।१२६।।

ॐ ह्रीं त्रिजग-लोक-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : देवों का निमित्त मिलने पर तिर्यक् संबंधी तीनों लोकों से सिद्ध......करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिजग लोक सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२६।।

षट्विध परिणति काल की, तिन अपेक्ष यह नाम है।सिद्ध भये....।।१२७।।

ॐ ह्रीं षड्विध-काल-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : छह प्रकार के काल-परिवर्तनों की अपेक्षा भेद-युक्त सभी कालों में सिद्ध..करते हैं।

ॐ ह्रीं षट् विधि काल सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२७।।

अन्त समय उपसर्ग तैं, शुकल ध्यान अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद प्रणाम है।।१२८।।

ॐ ह्रीं उपसर्ग-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आयु के अन्त समय में उपसर्ग आने पर सुन्दर शुक्ल-ध्यान द्वारा सिद्ध हुए भगवान के चरणों में तीनों योगों से प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं उपसर्ग सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२८।।

पर-उपसर्ग मिलै नहीं, स्वत: शुक्ल सुख धाम है।सिद्ध भये....।।१२९।।

ॐ ह्रीं निरुपसर्ग-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दूसरों द्वारा किए गए उपसर्ग के विना ही स्वयं कल्याण-कारी शुक्ल-ध्यान से सिद्ध हुए भगवान के चरणों में तीनों योगों से प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं निरुपसर्ग सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१२९।।

अन्तर द्वीप मही जहाँ, देवन के अभिराम है।सिद्ध भये....।।१३०।।

ॐ ह्रीं अन्तरद्वीप-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : देवों द्वारा ले जाए गए अन्तर्द्वीपों की भूमि से सुन्दर सिद्ध.....करते हैं।

ॐ ह्रीं अन्तर द्वीप सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३०।।

देव गये ले सिंधु जब, कर्म छयो तिंह ठाम है।सिद्ध भये....।।१३१।।

ॐ ह्रीं उदधि-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : देवों द्वारा ले जाए गए समुद्र के स्थान से सिद्ध ....करते हैं।

ॐ ह्रीं उदधि सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३१।।

भुजंगप्रयात :

धरैं जोग आसन गहैं शुद्धताई,
न हो खेद ध्यानाग्नि सौ कर्म छाई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम: सिद्ध काजा।।१३२।।

ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासन-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : योग्य आसन धारण कर, शुद्धता को ग्रहण कर, खेद-रहित हो ध्यानाग्नि द्वारा कर्मों का क्षय कर निजानन्द से सुसज्जित, मोक्ष के गौरव हुए सिद्ध राजा/भगवान को अपना कार्य सिद्ध करने के लिए नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अपनी स्थिति-आसनमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३२।।

महा शांत मुद्रा पलौथी लगाये,
कियो कर्म कौ नाश ज्ञानी कहाये।

भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम: सिद्ध काजा।।१३३।।

ॐ ह्रीं पर्यंकासन-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा शान्त मुद्रा स्वरूप पालथी लगाकर, कर्मों का नाश कर ज्ञानी कहलाकर निजानन्द से सुसज्जित, मोक्ष के गौरव हुए सिद्ध भगवान के लिए अपना कार्य सिद्ध करने हेतु नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं पर्यंकासन सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३३।।

लहै आदि कौ संहनन पुरुष देही,
लखायौ परारंभ में भाव ते ही।।भये सिद्ध....।।१३४।।

ॐ ह्रीं पुंवेद-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रथम/वज्र-वृषभ-नाराच संहनन-युक्त पुरुष शरीर प्राप्त कर, प्रारम्भ में उससे भेद की भावना भाते हुए आत्म-स्थिरता द्वारा निजानन्द से सुसज्जित,.....करते हैं।

ॐ ह्रीं पुरुष वेद सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३४।।

खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा,
गह्यो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्ममोहा।भये सिद्ध....।।।।१३५।।

ॐ ह्रीं क्षपक-श्रेणी-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सर्व प्रथम दर्शन-मोहनीय संबंधी सात कर्मों का क्षय कर बाद में शुद्ध/क्षपक-श्रेणी को ग्रहण कर सम्पूर्ण मोह कर्म का क्षय कर, निजानन्द से सुसज्जित,.....करते हैं।

ॐ ह्रीं क्षपक/क्षायिक श्रेणी सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३५।।

समय एक में एक वासौ अनंता,
धरो आठ तापा यही भेद अन्ता।भये सिद्ध....।।१३६।।

ॐ ह्रीं एक-समय-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक समय में कम से कम एक और अधिक से अधिक एक सौ आठ जीव सिद्ध होते हैं - यह कहा गया है। यही उसका अन्तिम भेद है। निजानन्द से सुसज्जित.....करते हैं।

ॐ ह्रीं एक समय-सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३६।।

किसी देश में वा किसी काल माहीं,
गिनै दो समय में तथा अन्तराई।भये सिद्ध....।।१३७।।

ॐ ह्रीं द्वि-समय-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : किसी देश या किसी काल में धारा प्रवाही दो समय पर्यन्त और दो समय के अन्तर से निजानन्द द्वारा सुसज्जित.....करते हैं।

ॐ ह्रीं दो समय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३७।।

समय एक दो तीन धाराप्रवाही,
कियो कर्म छय अन्तरा होय नाहीं।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा।।१३८।।

ॐ ह्रीं त्रि-समय-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्तराय से रहित, धारा-प्रवाह एक, दो, तीन समय पर्यन्त कर्म क्षय कर निजानन्द से सुसज्जित, मोक्ष के गौरव हुए सिद्ध राजा के लिए अपना कार्य सिद्ध करने-हेतु नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं तीन समय-सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३८।।

हुवे हैं सु होंगे सु हो हैं अबारी,
त्रिकालं सदा मोक्ष पंथा विहारी।भये सिद्ध....।।१३९।।

ॐ ह्रीं त्रि-काल-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो सिद्ध हो गए हैं, आगे होंगे और अभी हो रहे हैं; उन त्रिकालवर्ती, मोक्ष-मार्ग में सदा विहार करने वाले, निजानन्द से सुसज्जित,.....करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिकाल सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१३९।।

तिहूँ लोक के शुद्ध सम्यक्त्व धारी,
महा भार संजम धरैं हैं अबारी।भये सिद्ध....।।१४०।।

ॐ ह्रीं त्रि-लोक-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुद्ध सम्यक्त्व के धारक तीनों लोकों के जीव संयम रूपी महा-भार को धारण कर शीघ्र ही निजानन्द से सुसज्जित,.....करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिलोक सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४०।।

मरहठा : **तिहुँ लोक निहारा, सब दुखकारा, पापरूप संसार।**
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अविकार।।
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१४१।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों में दिखाई देने वाले, सभी दुःखों को करने वाले, पाप रूप संसार का त्याग कर, सुलभ/सरलता से प्राप्त, सुखमय, विकार-रहित सिद्ध हो गए हैं। हे तीनों लोकों के नायक, मंगल को देने वाले, मंगलमय, सुख-कारक, पापों को नष्ट करने वाले, संसार-ताप का हरण करने के लिए चन्द्रमा के समान आपको, मैं तीनों काल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगलमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४१।।

तिहुँ कर्म-कालिमा, लगी जालिमा, करै रूप दुखदाय।
तुम ताको नाशो, स्वयं प्रकाशो, स्वातम रूप सुभाय।।
हे जगत्रय-नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१४२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-स्वरूपेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : (द्रव्य-कर्म, भाव-कर्म, नो-कर्मरूप) तीनों प्रकार की कर्म-कालिमामय जाली, आत्मा पर लगकर उसका रूप दु:ख-दायक कर रही है। आपने उसे नष्ट कर स्वयं अपने आत्मरूप स्वभाव को प्रकाशित किया है। हे तीनों लोकों के नायक, मंगल को देने वाले, मंगलमय, सुख-कारक, पापों को नष्ट करने वाले, संसार-ताप का हरण करने के लिए चन्द्रमा के समान आपको, मैं तीनों काल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल-स्वरूप सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४२।।

तिहुँ जग के प्राणी, सब अज्ञानी, फँसे मोह जंजाल।
हो तिहुँ जगत्राता, पूरण ज्ञाता, तुम ही इक खुशहाल।।हे जगत्रय....।।१४३।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-ज्ञानेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों के सभी अज्ञानी प्राणी मोह के जंजाल में फँसे हुए हैं। तीनों लोकों के त्राता/रक्षक, परिपूर्ण ज्ञाता एक आप ही पूर्णतया आनन्दित हैं। हे तीनों.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल-ज्ञानमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४३।।

यह मोह अँधेरी, छई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाय।
तुम ताहि उघारो, सकल निहारो, युगपत आनंददाय।।हे जगत्रय....।।१४४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-दर्शनेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यह मोहरूपी घने अन्धकार का प्रबल पटल सर्वत्र छाया हुआ है। आनन्द-दायक आपने उसे उघाड़/नष्ट कर सभी को एक साथ देख लिया है। हे तीनों.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल-दर्शनमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४४।।

निजबंधन डोरी, छिन में तोरी, स्वयं शक्ति परकाश।
निरभय निरमोही, परम अछोही, अन्तरायविधि नाश।।हे जगत्रय....।।१४५।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-वीर्येभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने बन्धन रूपी डोरी को क्षण भर में तोड़कर अपनी शक्तिओं को प्रकाशित कर, अन्तराय कर्म का नाश कर निर्भय, निर्मोही, उत्कृष्ट, क्षोभ-रहित या अखण्डित अवस्था प्राप्त की है। हे तीनों......करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल-वीर्यमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४५।।

जाके प्रसादकर, सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय।
रुष-राग निवारा, सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय।।
हे जगत्रय-नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१४६।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-सम्यक्त्वेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके प्रसाद से सम्पूर्ण चर-अचर अपने से भिन्न प्रतीति में आने के कारण, राग-द्वेष का निवारण, सुख का विस्तार, आकुलता का विनाश हो जाता है; उस सम्यक्त्व से सहित हे तीनों लोकों के नायक, मंगल को देने वाले, मंगलमय, सुख-कारक, पापों को नष्ट करने वाले, संसार-ताप का हरण करने के लिए चन्द्रमा के समान आपको, मैं तीनों काल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल-सम्यक्त्वमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४६।।

अस्पर्श अमूरति, चिनमय मूरति, अरस अलिंग अनूप।
मन अक्ष अलक्षं, ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाह स्वरूप।।हे जगत्रय...।।१४७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगलावगाहनेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप स्पर्श से रहित, अमूर्तिक, चैतन्य-मूर्ति, रस-रहित, लिंग-रहित, अनुपम, मन और इन्द्रियों से ज्ञात नहीं होने वाले, ज्ञान से प्रत्यक्ष होने वाले, शुभ अवगाह-स्वरूप हैं। हे तीनों.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल-अवगाहनमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४७।।

अव्यक्त स्वरूपं, अमल अनूपं, अलख अगम असमान।
अवगाह उदर धर, वास परस्पर, भिन्न भिन्न परमान।।हे जगत्रय...।।१४८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-सूक्ष्मत्वेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप व्यक्त-स्वरूप, अमल, अनुपम, अलख/अदृश्य/दिखाई नहीं देने वाले, अगम्य, असमान/असाधारण/विशेष, अपने अवगाह/असंख्यात प्रदेशों के आकार रूप उदर/पेट में परस्पर निवास करते हुए भी पृथक्-पृथक् प्रमाण-सम्पन्न हैं। हे तीनों.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल सूक्ष्मत्वमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४८।।

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश।
विधि गोत्र नाशकर, पूरण पदधर, असंबाध परकाश।।हे जगत्रय...।।१४९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-अगुरुलघुभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनुभूति में विलास करने वाले, समता रूपी रस के भण्डार आपने हीनाधिक कर्मों का नाश कर, गोत्र कर्म को नष्ट कर, सम्पूर्ण बाधाओं से रहित, प्रकाशमय पूर्ण पद को धारण कर लिया है। हे तीनों....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अगुरुलघु मंगलमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१४९।।

पुद्गल कृत सारी, विविध प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार।
सब भाँति निवारी, निज सुखकारी, पायो पद अविकार।।
हे जगत्रय-नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१५०।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगलाव्याबाधितेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने पुद्गल द्वारा किए गए, अनेक प्रकार के समस्त द्वैत भाव के अधिकार को सभी प्रकार से नष्ट कर, अपने सुख-कारक, विकार-रहित पद को प्राप्त कर लिया है। हे तीनों लोकों के नायक, मंगल को देने वाले, मंगलमय, सुख-कारक, पापों को नष्ट करने वाले, संसार-ताप का हरण करने के लिए चन्द्रमा के समान आपको, मैं तीनों काल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अव्याबाध-मंगलमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५०।।

अवगाह प्रणामी, ज्ञानारामी, दर्शन-वीर्य अपार।
सूक्षम अवकाशं, अज अविनाशं, अगुरुलघु सुखकार।।हे जगत्रय...।।१५१।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगलाष्ट-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अवगाह, ज्ञान रूपी उद्यान में केली करने वाले, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य, सूक्ष्म, जन्म से रहित और विनाश से रहित शाश्वत निवास/अव्याबाध, अगुरुलघु, सुख-कारक भगवान को प्रणाम है। हे तीनों......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अष्ट-गुण-मंगलमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५१।।

शुद्धातम सारं, अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिवार।
निज गुणपरधानं, सम्यक ज्ञानं, आदि अन्त अविकार।।हे जगत्रय.....।।१५२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-अष्ट-स्वरूपेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुद्धात्मा के सार/द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म से पूर्णतया-रहित शुद्धात्मा; सारभूत आठ गुणमय, शिव-स्वरूप, अनिवार/समस्त बाधाओं से रहित, अपने गुणों से प्रधान, सम्यग्ज्ञान-सम्पन्न; आदि-अन्त अविकार/सर्वत्र, सर्वथा विकार-रहित; हे तीनों...करता हूँ।

ॐ ह्रीं अष्ट मंगल-स्वरूपी सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५२।।

मंगल अरहन्तं, अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्टगुण भास।
ये ही बिलसावैं, अन्य न पावैं, असाधारण परकाश।।हे जगत्रय..।।१५३।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-अष्ट-प्रकाशकेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मंगल, पूज्य, अष्टम भूमि पर रहने वाले, स्वत:-सिद्ध आठ गुणों से शोभायमान, अन्य को प्राप्त नहीं होने वाले इन्हीं गुणों में विलास-शील, असाधारण प्रकाशमय हे तीनों....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अष्ट मंगल प्रकाशक सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५३।।

निर आकुलताई, सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम।
संसार निवारण, बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम।।
हे जगत्रय-नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१५४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-मंगल-धर्मेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आकुलता से पूर्णतया-रहित, अनन्त सुखमय, संसार का निवारण करने वाले, उत्कृष्ट शुद्ध परिणाम बन्ध के विनाशक हैं। यही सुख-धाम धर्म है। हे तीनों लोकों के नायक, मंगल को देने वाले मंगलमय, सुख-कारक, पापों को नष्ट करने वाले, संसार-ताप का हरण करने के लिए चन्द्रमा के समान आपको, मैं तीनों काल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगल धर्ममय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१५४।।

चूलिका : **तीन काल तिहुँ लोक में, तुम गुण और न माहिं लखाने।**
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने।।१५५।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तम-गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों कालों और तीनों लोकों में आपके समान गुण अन्य में दिखाई नहीं देते हैं। लोकोत्तम, प्रसिद्ध हे सिद्धराज! आप सुख से सुसज्जित कहे गए हैं।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम गुणमय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५५।।

लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने।लोकोत्तम...।।१५६।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों के शिर पर मणिओं के छत्र-समान आप तीनों लोकों में श्रेष्ठ, पूज्य, प्रधान, लोकोत्तम, प्रसिद्ध हे सिद्धराज! आप सुख से सुसज्जित कहे गए हैं।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५६।।

अमल अनूपम तेजघन, निरावरण निजरूप प्रमाने।लोकोत्तम...।।१५७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तम-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप मल से रहित, अनुपम, तेज-घन, निरावरण, निजरूप-प्रमाण, लोकोत्तम...गए हैं।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम स्वरूप सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५७।।

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाने।लोकोत्तम...।।१५८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तम-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप लोक-अलोक को प्रकाशित कर, लोक/लौकिक भावों से अतीत हो प्रत्यक्ष प्रमाण/केवलज्ञान-सम्पन्न, लोकोत्तम,.....गए हैं।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम ज्ञानमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५८।।

सकल दर्शनावरण बिन, पूरन-दरसन जोत उगाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने।।१५९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तम-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण दर्शनावरण कर्म के विना आप पूर्ण दर्शन ज्योति को प्रगट करने वाले, लोकोत्तम, प्रसिद्ध हैं। हे सिद्धराज! आप सुख से सुसज्जित कहे गए हैं।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम दर्शनमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१५९।।

अतुल अतीन्द्रिय वीर्यकर, भोग तिनैं शिवनारि अघाने।लोकोत्तम...।।१६०।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तम-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अतुल/अनन्त वीर्य द्वारा मोक्षरूपी स्त्री को भोगते हुए तृप्ति-सम्पन्न, लोकोत्तम, प्रसिद्ध हैं। हे सिद्धराज! आप सुख से सुसज्जित कहे गए हैं।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम वीर्यमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६०।।

त्रोटक : **बिन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोक विषैं हितु हो।**
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करौ शरणागत हैं।।१६१।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लोकोत्तम-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे भगवान! आप विना कारण ही सभी के मित्र हैं, लोक में सर्वोत्तम हित-कारक हैं। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव-वास कीजिए।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६१।।

तुम रूप अनूपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये।इनहीं...।।१६२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-स्वरूप-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके अनुपम रूप का ध्यान करने से अपने स्वच्छ हृदय में अपना रूप दिखाई दे जाता है। इन्हीं......कीजिए।

ॐ ह्रीं स्वरूप शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६२।।

निरभेद अछेद विकासित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं।इनहीं.....।।१६३।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-दर्शन-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप भेद से रहित, छेद/खण्ड से रहित, परिपूर्ण विकासमय और लोक-अलोक को प्रकाशित करने वाले हैं। इन्हीं.....कीजिए।

ॐ ह्रीं दर्शन शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६३।।

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वन्द्व अबंध अभय अजई।इनहीं....।।१६४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-ज्ञान-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप बाधा-रहित, अगाध/अनन्त प्रकाश/ज्ञानमय, द्वन्द्व-रहित, बन्ध-रहित, भय-रहित, अजेय हैं। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं ज्ञान शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६४।।

हितकारण तारण-तरण कहै, अप्रमाद प्रमाद प्रकाशन है।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करौ शरणागत हैं।।१६५।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-वीर्य-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हित के कारण और तारण-तरण कहलाने वाले आप पूर्णतया प्रमाद-रहित होने पर भी प्रमाद के (स्वरूप, भेद-प्रभेद आदि के) प्रकाशक हैं। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव-वास कीजिए।

ॐ ह्रीं वीर्य शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६५।।

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्त्व प्रबोध लहा।इनहीं.... ।।१६६।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-सम्यक्त्व-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने अविरुद्ध, विशेष शुद्ध, महा प्रसिद्ध, अपने आत्म-तत्त्व के प्रकृष्ट बोध को प्राप्त कर लिया है। इन्हीं.....कीजिए।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६६।।

जिनकौ पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार-प्रवाह बहै अति ही।इनहीं....।।१६७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-अनन्त-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके पूर्व-अपर/पहले-पश्चात् का अन्त नहीं है/आप अनादि से अनन्त काल पर्यन्त नित्य धारा प्रवाह रूप से सतत प्रवाहित हैं/स्थाईत्व के साथ परिणमन-शील हैं। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव-वास कीजिए।

ॐ ह्रीं अनन्त शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६७।।

कबहूँ नहिं अन्त समावत है, सु अनन्त-अनन्त कहावत है।इनहीं....।।१६८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-अनन्तानन्त-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका किसी भी रूप में कभी भी अन्त नहीं आता है; अत: आप अनन्तानन्त कहलाते हैं। इन्हीं.....कीजिए।

ॐ ह्रीं अनन्तानन्त शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६८।।

तिहुँ काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषैं थिर भाव सदा।इनहीं...।।१६९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-त्रिकाल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप तीनों कालों में सु सिद्ध/स्वयं से ही भली-भाँति सिद्ध, महा सुख देने वाले अपने स्वरूप में सदा स्थिर-स्वभावी हैं। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं त्रिकाल शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१६९।।

तिहुँ लोक शिरोमणि पूजि महा, तिहुँ लोक प्रकाशक तेज कहा।इनहीं....।।१७०।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-त्रिलोक-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों में शिरोमणि, महा-पूज्य आप तीनों लोकों के प्रकाशक तेज कहे गए हैं। इन्हीं.....कीजिए।

ॐ ह्रीं त्रिलोक शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७०।।

गिनती परमाण जु लोक धरै, परदेश समूह प्रकाश करै।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करौ शरणागत हैं।।१७१।।

ॐ ह्रीं सिद्धासंख्यात-लोक-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गिनती के परिमाण को धारण करने वाले/असंख्यात प्रदेशी लोक के प्रदेश-समूह को आप प्रकाशित करते हैं। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव-वास कीजिए।

ॐ ह्रीं असंख्यात लोक शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७१।।

पूर्वापर एकहि रूप लसै, नित लोक सिंहासन वास बसै।इनहीं...।।१७२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-ध्रौव्य-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पहले और पश्चात् एक ही रूप में शोभायमान आप सदा लोक के सिंहासन पर निवास करते हैं। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं ध्रौव्य-गुण शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७२।।

जगवास प्रजाय विनाश कियौ, अब निश्चय रूप विशुद्ध भयौ।इनहीं...।।१७३।।

ॐ ह्रीं सिद्धोत्पाद-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार में रहने रूप पर्याय का विनाश कर अब आप वास्तव में विशेष/परिपूर्ण शुद्ध हो गए हैं। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं उत्पाद-गुण-शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७३।।

परद्रव्य थकी रुष-राग नहीं, निज भाव बिना कहुँ लाग नहीं।इनहीं....।।१७४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-साम्य-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपको पर-द्रव्य के प्रति राग-द्वेष नहीं है और अपने भाव के विना कहीं लगाव नहीं है। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव-वास कीजिए।

ॐ ह्रीं साम्य-गुण शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७४।।

बिन कर्म-कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं।इनहीं....।।१७५।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-स्वच्छ-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मरूपी कलंक के विना विराजमान आप अति स्वच्छ महा-गुणों से शोभायमान हैं। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव-वास कीजिए।

ॐ ह्रीं स्वच्छ-गुण-शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७५।।

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहाँ, रुष–राग कलेश प्रवेश न ह्वाँ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करौ शरणागत हैं।।१७६।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–स्वस्थित–गुण–शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वहाँ मन, इन्द्रिय आदि की व्याधि नहीं है और द्वेष, राग, क्लेश आदि का प्रवेश नहीं है। इन्हीं गुणों में मेरा मन आसक्त है। मुझ शरणागत का आप शिव–वास कीजिए।

ॐ ह्रीं स्वस्थित गुण–शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७६।।

निजरूप विषैं नित मगन रहैं, पर योग–वियोग न दाह लहैं।इनहीं....।।१७७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–समाधि–गुण–शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने रूप में सदा मग्न रहने वाले आपमें पर–पदार्थ संबंधी संयोग–वियोगमय दाह नहीं है। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं समाधि–गुण–शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७७।।

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ।इनहीं...।।१७८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–व्यक्त–गुण–शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : श्रुतज्ञान और मतिज्ञान – ये दोनों आपके जिन गुणों को प्रकाशित करते हैं, वे सभी व्यक्त गुण हैं। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं व्यक्त–गुण–शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७८।।

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न गुह्य कहा।इनहीं....।।१७९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–अव्यक्त–गुण–शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रत्यक्ष, अतीन्द्रिय महा भावों को मन और इन्द्रिय वाला ज्ञान जान नहीं पाता है; अत: अव्यक्त कहा है। इन्हीं....कीजिए।

ॐ ह्रीं अव्यक्त–गुण–शरणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७९।।

मालिनी :
निजगुणवर स्वामी शुद्धसंबोधनामी।
परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा।।
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं।।१८०।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–गुण–स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने श्रेष्ठ गुणों के स्वामी, शुद्ध सम्यग्ज्ञान के लिए प्रसिद्ध, अन्य के गुणों से पूर्णतया रहित, शेष रहे एक ही/क्षायिक भाव वाले, भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें शाश्वत सुख से परिपूर्ण करने वाले आपकी मन, वचन, काय लगाकर भक्ति–भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं गुण–स्वरूप सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८०।।

सब विधि–मल जारा बन्ध–संसार टारा।
जगजिय हितकारा उच्चता पाय सारा।।
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं।।१८१।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–परमात्म–स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण कर्मरूपी मल को जला देने वाले, बन्धरूपी संसार को नष्ट कर देने वाले, जगत–जीवों के हित–कारक, समस्त उच्चता को प्राप्त भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें शाश्वत सुख से परिपूर्ण करने वाले आपकी मन, वचन, काय लगाकर भक्ति–भाव पूर्वक पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं परमात्म–स्वरूप सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८१।।

पर–परिणति–खण्डं भेदबाधा–विहण्डं।
शिवसदन निवासी नित्य स्वानंदरासी।।मनवचतन...।।१८२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–खण्ड–स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर–परिणति का खण्डन करने वाले, भेदरूपी बाधा को नष्ट करने वाले, शिव–सदन में रहने वाले, नित्य अपने आनन्द के भण्डार, भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें......रहा हूँ।

ॐ ह्रीं खण्ड–स्वरूपमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८२।।

चितसुखविलसानं आकुलं भावहानं।
निज अनुभवसारं द्वैतसंकल्पटारं।।मनवचतन....।।१८३।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–चिदानन्द–स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चेतनात्मक सुख में विलास करने वाले, आकुलतामय भाव को नष्ट करने वाले, सारभूत आत्मानुभव से द्वैत–संकल्प को टालने वाले, भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें.....रहा हूँ।

ॐ ह्रीं चिदानन्द स्वरूप सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८३।।

परकरणनिवारं भाव संभाव धारं।
निज अनुपम ज्ञानं सुक्खरूपं निधानं।।मनवचतन....।।१८४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–सहजानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर–सापेक्ष भावों का निवारण करने वाले, समतामय भावों को धारण करने वाले, अपने अनुपम ज्ञान–सुख स्वरूप के निधान, भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें....रहा हूँ।

ॐ ह्रीं सहज आनन्दमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८४।।

विधिवश सब प्रानी हीन–आधिक्य ठानी।
तिसकरण निमूलापाय रूपाधरूला।।
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं।।१८५।।

ॐ ह्रीं सिद्धाच्छेद–रूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्म के कारण सभी प्राणी हीन–अधिकतामय दशाएँ धारण करते हैं। उनके कारणभूत पापरूप सभी भावों को निर्मूल/पूर्णतया नष्ट करने वाले, भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें शाश्वत सुख से परिपूर्ण करने वाले आपकी मन, वचन, काय लगाकर भक्ति–भाव पूर्वक पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं अच्छेदरूप सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८५।।

जब लग परजाया भेद नाना धराया।
इक शिवपद माहीं भेद आभास नाहीं।।मनवचतन....।।१८४।।

ॐ ह्रीं सिद्धाभेद–गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जब तक पर्याय दृष्टि अथवा संसार पर्याय है, तब तक अनेक प्रकार के भेद–भाव होते हैं। मात्र एक मोक्ष पद में भेदों का आभास नहीं है। भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें....रहा हूँ।

ॐ ह्रीं अभेद गुणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८६।।

अनुपम गुणधारी लोक संभावटारी।
सुरनरमुनि ध्यावैं सो नहीं पार पावैं।।मनवचतन....।।१८७।।

ॐ ह्रीं सिद्धानुपम–गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनुपम गुणों के धारक, लौकिक भावों/सांसारिक विकृतिओं को नष्ट करने वाले आपका देव, मनुष्य, मुनि ध्यान करते हुए भी पार नहीं पाते हैं। भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें.....रहा हूँ।

ॐ ह्रीं अनुपम गुणमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८७।।

अनुभव में सरसै धार आनंद वरसै।
अनुपम रस सोई स्वाद जासौ न कोई।।मनवचतन...।।१८८।।

ॐ ह्रीं सिद्ध–अमृत–तत्त्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा के सरस अनुभव में से आनन्द की धारा बरसती है। इस अनुपम रस के समान और किसी का स्वाद नहीं है। भव्य जीवों के भव–भय को नष्ट करने वाले, उन्हें.....रहा हूँ।

ॐ ह्रीं अमृत तत्त्वमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१८८।।

सब श्रुत विस्तारा जास माहीं उजारा।
यह निजपद जानौ आत्म संभावमानौ।।
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं।।१८९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-श्रुत-प्राप्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण श्रुत-ज्ञान के विस्तार में जो प्रकाशित है/जिसका वर्णन है, यह निज पद ही जानिए या आत्मा का सम-भाव ही मानिए। भव्य जीवों के भव-भय को नष्ट करने वाले, उन्हें शाश्वत सुख से परिपूर्ण करने वाले आपकी मन, वचन, काय लगाकर भक्ति-भाव पूर्वक पूजन कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं श्रुत-प्राप्त सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१८९।।

दोधक : **जीव-अजीव सबै प्रतिभासी, केवल जोति लहौ तम नाशी।**
सिद्ध-समूह नमूँ शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई।।१९०।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-केवल-प्राप्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण अज्ञान अन्धकार को नष्ट कर जीव और अजीव - सभी को प्रकाशित करने वाली केवल ज्योति को प्राप्त सिद्ध-समूह को, समस्त पाप-समूह को नष्ट करने के लिए शिर झुकाकर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं केवल-प्राप्त सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९०।।

चेतनरूप प्रदेश बिराजै, आकृतिरूप अलिंग सु छाजै।सिद्ध-समूह....।।१९१।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-साकार-निराकाराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चैतन्याकार/ज्ञानाकाररूप में विराजमान आपके प्रदेश अलिंग/किसी विशिष्ट चिन्ह से रहित रूप में शोभायमान हैं। समस्त पाप....करते हैं।

ॐ ह्रीं साकार-निराकार सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९१।।

नाहिं गहैं पर आश्रय जानौ, सो अवलम्ब बिना पद मानौ।सिद्ध-समूह....।।१९२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-निरालम्बाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसमें पर का आश्रय ग्रहण नहीं किया जाता है, उसे अवलम्ब से रहित निरालम्ब पद मानना चाहिए। समस्त पाप.....करते हैं।

ॐ ह्रीं निरालम्ब सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९२।।

राग-विषाद बसै नहिं जामैं, जोग वियोग भोग नहिं तामैं।सिद्ध-समूह....।।१९३।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-निष्कलंकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिनमें राग, विषाद/द्वेष नहीं हैं; उनमें संयोग, वियोग, भोग नहीं हैं। समस्त पाप-समूह को नष्ट करने के लिए शिर झुकाकर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं निष्कलंक सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९३।।

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म-समूह विनाश भयो है।
सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई।।१९४।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-तेज:-संपन्नाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान का प्रभाव प्रकाशित हो जाने से कर्म के समूह का विनाश हो गया है। समस्त पाप-समूह को नष्ट करने के लिए हम सिद्ध-समूह को शिर झुकाकर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं तेज-सम्पन्न सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९४।।

आतम लाभ निराश्रित पाया, द्वैत विभाव समूल नसाया।सिद्ध-समूह.....।।१९५।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-आत्म-संपन्नाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने अपने आश्रय से ही आत्मा का लाभ प्राप्त किया है और द्वैत आदि विभावों के समूह को नष्ट कर दिया है। समस्त पाप......करते हैं।

ॐ ह्रीं आत्म-सम्पन्न सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९५।।

मोतियादाम : **चहूँ गति काय-स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष।**
भजौ मन आनन्दसों शिवनाथ, धरौ चरणांबुज कौ निज माथ।।१९६।।

ॐ ह्रीं सिद्धागर्भ-वासाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चारों गतिआँ, काय/शरीर आदि का स्वरूप प्रत्यक्ष जानने वाले, मोक्ष-महल में वास करने वाले, अनुपम, अलक्ष/अदृश्य/दिखाई नहीं देने वाले शिव-स्वामी के चरण-कमलों में अपना शिर रखकर हे मन! उनका आनन्द से भजन कीजिए।

ॐ ह्रीं अगर्भ-वासमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९६।।

निजानन्द श्रीयुत ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय।भजौ मन....।।१९७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-लक्ष्मी-संतृप्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निजानन्दरूपी अंतरंग लक्ष्मी से सहित, अथाह/अनन्त ज्ञान से सुशोभित, प्राप्त सुख में तृप्त रहने वाले शिव-स्वामी......कीजिए।

ॐ ह्रीं लक्ष्मी संतर्पक सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९७।।

सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद कीन।भजौ मन.....।।१९८।।

ॐ ह्रीं सिद्धान्तराकाराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आत्मा के स्वभाव में अन्तर्लीन/पूर्णतया स्थिर, विभावरूपी परातम/अपने से पृथक् स्वरूप को सर्वांग नष्ट कर देने वाले शिव-स्वामी.....कीजिए।

ॐ ह्रीं अन्तर आकार सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९८।।

जहाँ लग द्वेष प्रवेश न होय, तहाँ लग सार रसायन होय।भजौ मन....।।१९९।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-सार-रसाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ तक द्वेष प्रविष्ट नहीं होता है, वहाँ तक सारभूत रसायन रहता है। शिव-स्वामी के चरण-कमलों में अपना शिर रखकर हे मन! उनका आनन्द से भजन कीजिए।

ॐ ह्रीं सार-रसमय सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१९९।।

जिसौ निरलेप हुए विषतुंव्य, तिसौ जग अग्र निराश्रय लुंब्य।
भजौ मन आनन्दसों शिवनाथ, धरौ चरणांबुज कौ निज माथ।।२००।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-शिखर-मण्डनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे विष/कड़वी तुम्बी निर्लेप हो ऊपर आ जाती है; उसीप्रकार लोक के अग्रभाग में आप, आश्रय से पूर्णतया रहित हो विराजमान हैं। शिव-स्वामी के चरण-कमलों में शिर रखकर हे मन! आनन्द से भजन कीजिए।

ॐ ह्रीं शिखर-मण्डन सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२००।।

तिहूँ जग शीश बिराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य।भजौ मन....।।२०१।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-त्रिलोकाग्र-निवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विश्व के शिरोमणि होने से आप नित्य तीनों लोकों के शिखर पर विराजमान हैं; शेष सभी दशाएँ अनित्य हैं। शिव-स्वामी.....कीजिए।

ॐ ह्रीं त्रिलोकाग्र-निवासी सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०१।।

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद।भजौ मन....।।२०२।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-स्वरूप-गुप्तेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप शरीर से रहित, रूप-रहित, अदृश्य, वेद-रहित, अपने आत्मा में सदा विच्छेद-रहित/अखण्ड रूप में लीन हैं। शिव-स्वामी.....कीजिए।

ॐ ह्रीं स्वरूप-गुप्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०२।।

(अब, दो सौ तीन से लेकर तीन सौ दो पर्यन्त सौ छन्दों द्वारा सूरि/आचार्य परमेष्ठी का गुणगान करते हैं।)

अडिल्ल :

ऋषभ आदि चितधारि प्रथम दीक्षा धरी,
केवलज्ञान उपाय धर्मविधि उच्चरी।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं।।२०३।।

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इस युग की आदि में राजा ऋषभ देव ने सिद्ध भगवान को मन में धारण कर सर्वप्रथम दीक्षा लेकर, केवलज्ञान प्राप्त कर धर्म की विधि का उच्चारण किया/दिव्य-ध्वनि द्वारा धर्मोपदेश दिया। अपने स्वरूप में स्थिति करना ही चारों प्रकार के कर्म-बन्ध को नष्ट करने का उपाय है। सुख-कारक सिद्ध भगवान परमार्थ आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं सूरिओं/आचार्यों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०३।।

निज ही निज उर धार हेत सामर्थ है,
आत्मशक्ति कर व्यक्ति करण विधि व्यर्थ है।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं।।२०४।।

ॐ ह्रीं सूरि-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप स्वयं ही स्वयं को हृदय में धारण करने के लिए समर्थ हैं। आत्मा की शक्तिआँ व्यक्त हो जाने पर इन्द्रिय और कर्म व्यर्थ हो जाते हैं। अपने स्वरूप में स्थिर रहना ही चारों प्रकार के कर्म-बन्ध को नष्ट करने का उपाय है। सुख-कारक सिद्ध भगवान परमार्थ आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०४।।

साधन साधक साध्य भाव सबही गयौ,
भेद अगोचर रूप महासुख संचयौ।निजस्वरूप....।।२०५।।

ॐ ह्रीं सूरि-स्वरूप-गुप्तेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके साधन, साधक, साध्य भाव - ये सभी समाप्त हो गए हैं। आपके, भेदों से अगोचर रूप महा सुख का संचय हुआ है। अपने......आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं स्वरूप गुप्त सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०५।।

तत्त्वप्रतीत निजात्मरूप अनुभव कला,
पायो सत्यानंद कुमारग दलमला।निजस्वरूप.....।।२०६।।

ॐ ह्रीं सूरि-सम्यक्त्व-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तत्त्व की प्रतीति अपने आत्मरूप के अनुभव की कला है। आपने सत्य आनन्द को पाकर कुमार्ग के समूह को नष्ट कर दिया है। अपने.....आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०६।।

वस्तु अनंत धर्म परकाशक ज्ञान है,
एकपक्ष हट गृहित निपट असुहान है।निजस्वरूप....।।२०७।।

ॐ ह्रीं सूरि-ज्ञान-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका ज्ञान वस्तु के अनन्त धर्मों का प्रकाशक है। हठ/दुराग्रह पूर्वक एक पक्ष को स्वीकार करना निपट असुहावना/महा विपरीतता है। अपने स्वरूप में स्थिर रहना ही चारों प्रकार के कर्म-बन्ध को नष्ट करने का उपाय है। सुख-कारक सिद्ध भगवान परमार्थ आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञान-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०७।।

वस्तुधर्म सामान्य ताहि अवलोकना,
शुद्ध निजातमधर्म ताहि नहिं लोपना।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं।।२०८।।

ॐ ह्रीं सूरि-दर्शन-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : वस्तु के सामान्य धर्म का अवलोकन करते हुए आप अपने आत्मा के शुद्ध धर्म का लोप नहीं करते हैं। अपने स्वरूप में स्थिर रहना ही चारों प्रकार के कर्म-बन्ध को नष्ट करने का उपाय है। सुख-कारक सिद्ध भगवान परमार्थ आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०८।।

अतुल अकम्प अखेद शुद्ध परिणति धरैं,
जगतरूप व्यापार न इक छिन आदरैं।निजस्वरूप....।।२०९।।

ॐ ह्रीं सूरि-वीर्य-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अतुल/अनन्त, अकम्प, अखेद, शुद्ध परिणति को धारण कर संसाररूप व्यापार/शुभाशुभ भावों को रंचमात्र भी स्वीकार नहीं करते हैं। अपने.....आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२०९।।

षट्त्रिंशत गुण सूरि मोक्षफल पाइयो,
तातैं हम इन गुणकर ही जश गाइयो।निजस्वरूप....।।२१०।।

ॐ ह्रीं सूरि-षट्त्रिंशत्-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : छत्तीस गुण-सम्पन्न आचार्य मोक्ष का फल प्राप्त करते हैं; अत: हम इन गुणों द्वारा ही उनका यश गा रहे हैं। अपने.....आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं छत्तीस गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१०।।

पंचाचार आचार साध शिवपद लियौ,
वास्तव में ये गुण निज में परगट कियौ।निजस्वरूप....।।२११।।

ॐ ह्रीं सूरि-पंचाचार-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने आचरण में पंचाचारों को साधकर मोक्ष-पद प्राप्त किया है। वास्तव में ये गुण अपने में ही प्रगट किए हैं। अपने.....आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं पंचाचार-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२११।।

गुण समुदाय सरूप द्रव्य आतम महा,
परसौं भिन्न अभेद निजातम पद लहा।निजस्वरूप....।।२१२।।

ॐ ह्रीं सूरि-द्रव्य-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा गुण-समुदाय-स्वरूप महा द्रव्य है। पर से भिन्न, अपने अभेद आत्मा का पद प्राप्त कर लिया है। अपने.......आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं द्रव्य-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१२।।

वीतराग परणति रचही सुखकार जू,
परम शुद्ध स्वयं सिद्ध भयो अनिवार जू।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं।।२१३।।

ॐ ह्रीं सूरि-पर्याय-गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने वीतरागमय सुख-कारक परिणति की रचना की है/सुखमय वीतरागता प्रगट की है और परम शुद्ध, बाधा-रहित, स्वयं-सिद्ध हो गए हैं। अपने स्वरूप में स्थिर रहना ही चारों प्रकार के कर्म-बन्ध को नष्ट करने का उपाय है। सुख-कारक सिद्ध भगवान परमार्थ आचार्य हैं।

ॐ ह्रीं पर्याय-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१३।।

चंचला : **आप सुक्खरूप हो सु, और सौख्यकार होत,**
ज्यूँ घटादि को प्रकाशकार है सुदीप जोत।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान।।२१४।।

ॐ ह्रीं सूरि-मंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे दीपक की ज्योति स्वयं को प्रकाशित करती हुई घट आदि को प्रकाशित करती है; उसी प्रकार आप स्वयं सुख-स्वरूप हैं और दूसरों के लिए सुख-कारक हैं। आचार्य धर्म का प्रकाश, सिद्ध धर्मरूप जानकर - इसप्रकार अभेद पक्ष में दोनों को एक ही मानकर, मैं उन्हें त्रिकाल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंगलमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१४।।

संस अंश भान, वस्तु भाव को प्रकाशमान,
ज्ञान इन्द्रिया अनिन्द्रिया कहै उभै प्रमाण।।सूरि धर्म....।।२१५।।

ॐ ह्रीं सूरि-ज्ञान-मंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानरूपी सूर्य द्वारा संशय का अंश भी/संपूर्ण संशय नष्ट हो वस्तु का स्वभाव प्रकाशमान है। इन्द्रिय और अनिन्द्रिय - दोनों प्रकार के ज्ञान प्रमाण कहे गए हैं। आचार्य .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्ञान मंगलमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१५।।

लोक उत्तमा सु वसु कर्म को प्रसंग टार,
शुद्ध बुद्ध रिद्ध पाय लोक वेदना निवार।।सूरि धर्म...।।२१६।।

ॐ ह्रीं सूरि-लोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुद्ध बुद्धि ऋद्धि को प्राप्त कर, लोक/संसार की वेदना का निवारण कर, आठों कर्मों

का प्रसंग टालकर आप लोक में उत्तम हुए हैं। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्ञान-मंगलमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१६।।

लोकभीत सों अतीत आदि अन्त एक रूप,
लोक में प्रसिद्ध सर्व भाव को अनूप भूप।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान।।२१७।।

ॐ ह्रीं सूरि-ज्ञान-लोकोत्तमेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लौकिक भयों से पूर्णतया रहित, आदि-अन्त में एक रूप, लोक में प्रसिद्ध सभी भावों के आप अनुपम राजा हैं। आचार्य धर्म का प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जानकर - इसप्रकार अभेद पक्ष में दोनों को एक ही मानकर, मैं उन्हें त्रिकाल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्ञान-लोकोत्तम-सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१७।।

बीच में न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय,
या अबाध धर्म को प्रकाश में करै सहाय।।सूरि धर्म....।।२१८।।

ॐ ह्रीं सूरि-दर्शन-लोकोत्तमेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्तराय से पूर्णतया रहित, बाधा-रहित धर्म का प्रकाश करने में सहायक, स्वयं ही सुख स्वरूपता को धारण करते हैं। आचार्य....करता हूँ।

ॐ ह्रीं दर्शन-लोकोत्तम सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१८।।

मोह भार को निवार, शुद्ध चेतना सुधार,
यही वीर्यता अपार लोक में प्रशंसकार।।सूरि धर्म....।।२१९।।

ॐ ह्रीं सूरि-वीर्य-लोकोत्तमेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोह के भार का निवारण करने वाली, शुद्ध चेतना को भली-भाँति धारण करने वाली, यह अनन्त वीर्यता लोक में प्रशंसनीय है। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं वीर्य-लोकोत्तम सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२१९।।

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान,
सप्त तत्व को बखान, मोक्षमार्ग को निधान।।सूरि धर्म....।।२२०।।

ॐ ह्रीं सूरि-केवल-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोहरूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए तेजस्वी सूर्य के समान, सात तत्त्व का व्याख्यान करने वाला, मोक्ष-मार्ग का निधान, केवली भगवान द्वारा बताया गया धर्म महान है। आचार्य......करता हूँ।

ॐ ह्रीं केवल-धर्ममय सूरी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२०।।

शील आदि पूर भेद, कर्म के कलाप नाम,
आत्म-शक्ति को प्रकाश शुद्ध चेतना विलास।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान।।२२१।।

ॐ ह्रीं सूरि-तपेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शील आदि भेदों से परिपूर्ण, कर्मों के समूह को नष्ट करने वाली, आत्म-शक्ति को प्रकाशित करने वाली शुद्ध चेतना में आप विलास करते हैं। आचार्य धर्म का प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जानकर - इसप्रकार अभेद पक्ष में दोनों को एक ही मानकर, मैं उन्हें त्रिकाल नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं तपमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२१।।

लोक चाह की न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह,
शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह।।सूरि धर्म.....।।२२२।।

ॐ ह्रीं सूरि-परम-तपेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लौकिक चाह की दाह से रहित, द्वेष के प्रवेश से विहीन, आप शुद्ध चेतना के प्रवाह की अथाह वृद्धता को धारण करते हैं। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं परम-तपमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२२।।

मोह कौ न जोर जाय, घोर आपदा नसाय,
घोरतें तपो सु लोक-शीश जाय मुक्ति पाय।।सूरि धर्म....।।२२३।।

ॐ ह्रीं सूरि-तपो-घोर-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोह का जोर जिनमें नहीं है, जिन्होंने घोर आपत्तिओं का नाश कर दिया है, उन्होंने घोर तप के द्वारा सिद्धलोक में जाकर मोक्ष प्राप्त कर लिया है। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं घोर तपो गुण सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२३।।

कामिनी-मोहन :

वृद्ध पर वृद्ध गुण गहन नित हो जहाँ,
शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहाँ।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये।।२२४।।

ॐ ह्रीं सूरि-घोर-गुण-पराक्रमेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ गुणों की सदा वृद्धि पर वृद्धि होते-होते गहन/सघन वृद्धि हो जाती है; वहाँ उनकी शाश्वत पूर्णता और सातिशयता हो जाती है। सिद्धान्त के पारगामी हो मोक्ष-धामी/सिद्ध हो गए आचार्यों के लिए, मैं हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं घोरगुण-पराक्रममय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२४।।

एक सम-भाव सम और नहीं ऋद्धि है,
सर्व ही ऋद्धि जाके भये सिद्ध है।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये।।२२५।।

ॐ ह्रीं सूरि-ऋद्धि-ऋषिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : समता-भाव के समान अन्य कोई ऋद्धि नहीं है। जिससे सभी ऋद्धिआँ प्रगट हो सिद्ध हो जाते हैं। सिद्धान्त के पारगामी हो मोक्ष-धामी होने वाले आचार्यों के लिए, मैं हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं ऋद्धि-ऋषिमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२५।।

जोग के रोक से कर्म का रोक हो,
गुप्त साधन किये साध्य शिवलोक हो।सूरि सिद्धांत....।।२२६।।

ॐ ह्रीं सूरि-सुयोगिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : योग को रोकने से कर्म रुक जाते हैं। यह गुप्त साधन करने से साध्यरूप शिव-लोक प्राप्त हो जाता है। सिद्धान्त के.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुयोगीमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२६।।

ध्यान-बल कर्म के नाश को हेतु है,
कर्म को नाश शिववास ही देत है।सूरि सिद्धांत....।।२२७।।

ॐ ह्रीं सूरि-ध्यानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ध्यान का बल कर्मों के नाश का हेतु है और कर्मों का नाश शिव-वास ही देता है। सिद्धान्त के.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं ध्यानमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२७।।

पंचधाचार में आत्म अधिकार है,
बाह्य आधार-आधेय सुविकार है।सूरि सिद्धांत....।।२२८।।

ॐ ह्रीं सूरि-धात्रिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पाँच प्रकार के आचारों में आत्मा का अधिकार है/पंचाचारों का वास्तविक आधार, आत्मा है; बाह्य आधार-आधेय तो विकार-सहित हैं। सिद्धान्त के.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं धातामय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२८।।

सूर सम आप परतेज करतार है,
सूर ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है।सूरि सिद्धांत....।।२२९।।

ॐ ह्रीं सूरि-पात्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सूर्य के समान स्व और पर को तेजमय करने वाले आचार्य ही सुख-कारक मोक्ष-निधि के पात्र हैं। सिद्धान्त के....करता हूँ।

ॐ ह्रीं पात्र सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२२९।।

बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदात्मा,
आप थिर रूप हैं सूर परमात्मा।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये।।२३०।।

ॐ ह्रीं सूरि-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आचार्य परमात्मा बाह्य में छत्तीस गुणों का पालन करते हुए अन्दर में अपने अभेदात्मा में स्थिरता रूप हैं। सिद्धान्त के पारगामी हो मोक्ष-धामी होने वाले आचार्यों के लिए मैं हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं गुण-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३०।।

ज्ञान उपयोग में स्वस्थिता शुद्धता,
पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही बुद्धता।सूरि सिद्धांत....।।२३१।।

ॐ ह्रीं सूरि-धर्म-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके ज्ञानोपयोग में स्वस्थता, शुद्धता, पूर्ण चारित्रता, परिपूर्ण बुद्धता है। सिद्धान्त के......करता हूँ।

ॐ ह्रीं धर्म-गुण-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३१।।

शरण, दुख हरण, पर आप ही शर्ण हैं,
आपनें कार्य में आपही कर्ण हैं।सूरि सिद्धांत...।।२३२।।

ॐ ह्रीं सूरि-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपकी शरण दूसरों के दुःखों को हरण करने वाली होने पर भी आप अपनी ही शरण में हैं; अपने कार्य के आप स्वयं ही कारण/साधन हैं। सिद्धान्त के.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३२।।

दोहा : **ज्यों कंचन बिन कालिमा, उज्ज्वल रूप सुहाय।**
त्योंही कर्म-कलंक बिन, निज स्वरूप दरसाय।।२३३।।

ॐ ह्रीं सूरि-स्वरूप-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे कालिमा से रहित उज्ज्वल रूप वाला सुवर्ण सुशोभित होता है; उसी प्रकार कर्म-कलंक से रहित, प्रगट अपना स्वरूप देखने-योग्य है।

ॐ ह्रीं स्वरूप-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३३।।

भेदाभेद सु नय थकी, एक हि धर्म विचार।
पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार।।२३४।।

ॐ ह्रीं सूरि-धर्म-स्वरूप-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक ही/प्रत्येक धर्म का नय की अपेक्षा भेद-अभेद रूप विचार कर प्रगट हुए सम्यग्ज्ञान/केवलज्ञान द्वारा आचार्य ने संसार-सागर से अपना उद्धार कर लिया है।

ॐ ह्रीं धर्म-स्वरूप-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३४।।

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन।
पूरण-ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि सुधीन।।२३५।।

ॐ ह्रीं सूरि-ज्ञान-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य सम्पूर्ण विकल्पों को छोड़कर मात्र अपने पद में लीन आप आचार्य ने यह स्वाधीन पूर्ण ज्ञान स्वरूप प्रगट कर लिया है।

ॐ ह्रीं ज्ञान-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।२३५।।

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त।
पूरण-सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त।।२३६।।

ॐ ह्रीं सूरि-सुख-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : इन्द्रिय-जनित सुखाभास का त्याग कर महान आचार्य परिपूर्ण, स्वाधीन सुखमय अपने आत्मा की साधना कर सुखवान हो गए हैं।

ॐ ह्रीं सुख-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३६।।

अनेकांत तत्त्वार्थ के, ज्ञाता सूरि महान।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण।।२३७।।

ॐ ह्रीं सूरि-दर्शन-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनेकान्तमय तत्त्वार्थ के ज्ञाता महान आचार्यों ने निरावरण अपने स्वरूप की प्रतीति कर निर्वाण पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं दर्शन-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३७।।

मोहादिक रिपु नाशिके, सूर्य महा सामर्थ।
शिव भामनि भरतार नित, रमै साध निज अर्थ।।२३८।।

ॐ ह्रीं सूरि-वीर्य-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा सामर्थ्य-सम्पन्न आचार्य मोहादि शत्रुओं को नष्ट कर, अपने प्रयोजन को सिद्ध कर भरतार/स्वामी बन मोक्षरूपी स्त्री के साथ सदा रमण करते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३८।।

पद्धड़ी : **जिन निज-आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करैं पर पाप छीन।**
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर।।२३९।।

ॐ ह्रीं सूरि-मंगल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन्होंने अपने आत्मा को सम्पूर्ण पापों से पूर्णतया रहित किया है, वे सन्त दूसरों के

पाप क्षीण करते हैं। मोक्ष-मार्ग प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं मंगल-शरण सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२३९।।

रत्नत्रय जीव सुभाव भाय, भवि पतित उधारण हो सहाय।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर।।२४०।।

ॐ ह्रीं सूरि-धर्म-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जीव के स्वभावभूत रत्नत्रयरूप परिणमित होकर आप पतित भव्य जीवों के उद्धार में सहायक हैं। मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं धर्म-शरण सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४०।।

तपकर ज्यों कंचन अग्नि जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग।शिवमग...।।२४१।।

ॐ ह्रीं सूरि-तप-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे अग्नि के संयोग से तपकर सुवर्ण-पाषाण पूर्ण शुद्ध कंचन हो जाता है; उसी प्रकार स्वरूप-स्थिरता रूप ध्यानाग्नि में तपकर आत्मा शुद्ध, मनोज्ञ, अपने आत्म-पद को प्राप्त कर लेता है। मोक्ष-मार्ग.....करते हैं।

ॐ ह्रीं तप शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४१।।

एकाग्र-चित्त चिन्ता निरोध, पावैं अबाध शिव आत्मबोध।शिवमग...।।२४२।।

ॐ ह्रीं सूरि-ध्यान-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चित्त को एकाग्र कर चिन्ताओं का निरोध हो, बाधा-रहित, शिव/कल्याण/मोक्षमय आत्म-बोध की प्राप्ति होती है। मोक्ष-मार्ग....करते हैं।

ॐ ह्रीं ध्यान-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४२।।

केवलज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरंजन पद सुखाइ।शिवमग...।।२४३।।

ॐ ह्रीं सूरि-सिद्ध-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने केवलज्ञानादि विभूति-सम्पन्न, सुख-दाई, शुद्ध, निरंजन पद को प्राप्त कर लिया है। मोक्ष-मार्ग....हैं।

ॐ ह्रीं सिद्ध-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४३।।

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक माँहिं, या सम दूजो सुखदाय नाहिं।शिवमग...।।२४४।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिलोक-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हे तीनों लोकों के स्वामी! तीनों लोकों में आपके समान सुख-दायक अन्य कोई दूसरा नहीं है। मोक्ष-मार्ग.....हैं।

ॐ ह्रीं त्रिलोक-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४४।।

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुँ काल भव्य पावैं निर्वाण।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर।।२४५।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिकाल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आगे आने वाले भविष्य-काल, व्यतीत हो गए भूत-काल और वर्तमान - इसप्रकार तीनों कालों में भव्य जीव निर्वाण प्राप्त करते हैं। मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिकाल-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४५।।

मधि अधो ऊर्ध्व तिहुँ जगतमाँहि, सब जीवन सुखकर और नाहिं।शिवमग..।।२४६।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिजगन्मंगलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मध्य, अधो, ऊर्ध्व - इन तीनों लोकों में सभी जीवों को सुख-कारक आपके समान और कोई नहीं है। मोक्ष-मार्ग.....करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिजगत-मंगल सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४६।।

तिहुँ लोकमाँहि सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप।शिवमग..।।२४७।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिलोक-मंगल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों में पाप को हरण करने वाले सत्यार्थ मंगल, सुख-कारक आप हैं। मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिलोक-मंगल-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४७।।

उत्तम मंगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव-सुख-स्वरूप।शिवमग...।।२४८।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिजगन्मंगलोत्तम-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्तम, मंगल, परमार्थरूप आपने शिव-सुख स्वरूप प्रगट कर संसार के दु:ख नष्ट कर दिए हैं। मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिजगत-मंगल, उत्तम, शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४८।।

शरणागत दुखनाशन महान, तिहुँ जग हितकारण सुख निधान।शिवमग....।।२४९।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिजगन्मंगल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप शरण में आने वालों के दु:ख नष्ट करने में महान, तीनों लोकों में हित के कारण और सुख के निधान हैं। मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिजगत मंगल-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२४९।।

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक पूज्य, शरणागत प्रतिपालन अदूज्य।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर।।२५०।।

ॐ ह्रीं सूरि-त्रिलोक-मण्डन-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों के स्वामी, तीनों लोकों में पूज्य आपके समान, शरण में आए हुए का प्रतिपालन करने वाला और कोई दूसरा नहीं है। मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने के लिए सूर्य-समान, आनन्द से परिपूर्ण आचार्यों की हम शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ ह्रीं त्रिलोक-मण्डन-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५०।।

अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, संसारातीत विमोहमुक्त।शिवमग...।।२५१।।

ॐ ह्रीं सूरि-ऋद्धि-मण्डल-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अव्यय/व्यय-रहित, अपूर्व सामर्थ्य से सम्पन्न, संसार से अतीत और मोह से पूर्णतया रहित, मुक्त हैं। मोक्ष-मार्ग....करते हैं।

ॐ ह्रीं ऋद्धि-मण्डल-शरणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५१।।

त्रोटक : **निज रूप अनूप लखें सुख हो, जग में यह मंत्र महान कहो।**
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा।।२५२।।

ॐ ह्रीं सूरि-मन्त्र-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : 'जिनेन्द्र भगवान के अनुपम रूप का दर्शन करने से सुख होता है' - जगत में यह महान मन्त्र कहा गया है। हृदय में भक्ति धारण कर मैं, सुख-दाई, शिव में वास करने वाले गणराज/आचार्य को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्त्र स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५२।।

जिम नागदेव वश मंत्र विधि, भव वास हरण तुम नाम निधि।धरि भक्ति....।।२५३।।

ॐ ह्रीं सूरि-मंत्र-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे मन्त्र विधि से नागदेव/सर्प वश में हो जाते हैं; उसी प्रकार आपकी नाम रूपी निधि से संसार का वास समाप्त हो जाता है। हृदय में.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्त्र गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५३।।

जगमोहित जीव न पावत है, यह मंत्र सु धर्म कहावत है।धरि भक्ति...।।२५४।।

ॐ ह्रीं सूरि-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : धर्म कहलाने वाला यह मन्त्र, जगत में मोहित होने वाला जीव प्राप्त नहीं कर पाता है। हृदय में....करता हूँ।

ॐ ह्रीं धर्ममय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५४।।

चिदरूप चिदातम भाव धरैं, गुण सार यही अविरुद्ध करैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा।।२५५।।

ॐ ह्रीं सूरि-चैतन्य-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुणों में सार, विरुद्धता से रहित, चिद्रूप, चिदात्मक भाव को आप धारण करते हैं। हृदय में भक्ति धारण कर मैं, सुख-दाई शिव में वास करने वाले गणराज/आचार्य को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं चैतन्य स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५५।।

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानंद हो।धरि भक्ति...।।२५६।।

ॐ ह्रीं सूरि-चिदानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप विकार-रहित, चिदात्मक, आनन्दमय, परमात्मा, परमानन्द-सम्पन्न हैं। हृदय में......करता हूँ।

ॐ ह्रीं चिदानन्दमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५६।।

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करैं, सुखरूप निराकुलता सु धरैं।धरि भक्ति...।।२५७।।

ॐ ह्रीं सूरि-ज्ञानानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने ज्ञान के अनुसार प्रकाश करते हुए आप सुखरूप निराकुलता धारण करते हैं। हृदय में....करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्ञानानन्दमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५७।।

धरि योग महा शम भाव गहैं, सुख राशि महा शिववास लहैं।धरि भक्ति....।।२५८।।

ॐ ह्रीं सूरि-शम-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : योग धारण कर महा शम/समता भाव को ग्रहण किए आप सुख की महा-राशि-सम्पन्न शिव-वास को प्राप्त हुए हैं। हृदय में.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं शम-भावमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५८।।

सम भाव महा गुण धारत हैं, निज आनंद भाव निहारत हैं।धरि भक्ति...।।२५९।।

ॐ ह्रीं सूरि-तपो-गुणानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम-भाव रूपी महा गुण को धारण करने वाले आप अपने आनन्दमय भावों को देखते रहते हैं। हृदय में.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं तपो गुणानन्दमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२५९।।

शिवसाधन को विधिनाश कहा, विधिनाशन को तप कर्ण महा।धरि भक्ति..।।२६०।।

ॐ ह्रीं सूरि-तपो-गुण-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मों के नाश को मोक्ष का साधन और तपरूपी महान कारण को कर्मों के नाश का साधन कहा गया है। हृदय में.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं तपो गुण-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६०।।

निज आत्म विषैं नित मगन रहैं, जग के सुख मूल न भूलि चहैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा।।२६१।।

ॐ ह्रीं सूरि-हंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आत्मा में सदा मग्न रहने वाले आप संसार के मूल सुखों को भूलकर भी नहीं चाहते हैं। मैं भक्ति-युक्त हृदय से, सुख-दाई, शिव में वास करने वाले आचार्य को प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं हंसरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६१।।

वनवास उदास सदा जगतैं, पर आस न खास विलास रतैं।धरि भक्ति....।।२६२।।

ॐ ह्रीं सूरि-हंस-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत से उदास हो वन में वास करने वाले आप, अन्य की आशा से पूर्णतया रहित हो अपने विशिष्ट स्वभाव में विलास करते हुए स्थिर हैं। मैं भक्ति.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं हंस-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६२।।

निज नाम महागुण मंत्र धरैं, छिन मात्र जपे भवि आश वरैं।धरि भक्ति...।।२६३।।

ॐ ह्रीं सूरि-मंत्र-गुणानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महागुणमय मन्त्र को धारण करने वाला आपका नाम क्षण मात्र भी जपने से भव्य जीवों की आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं। मैं भक्ति.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्त्र गुणानन्दमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६३।।

परमोत्तम सिध परियाय कही, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म मही।धरि भक्ति...।।२६४।।

ॐ ह्रीं सूरि-सिद्धानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परम, उत्तम सिद्ध पर्याय अति शुद्ध, प्रसिद्ध, सुख-स्वरूप की भूमि कही गई है। मैं भक्ति......करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धानन्दमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६४।।

माला : **सूरि निजभेद कियो परसैं,**
भये मुक्त मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं।।टेक।।
शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै।
मिथ्यातम हरि भवि आनंद करि अनुभव भाव दरसै।।सूरि...।।

ॐ ह्रीं सूरि-अमृत-चन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६५।।

अर्थ : पर से अपनी भिन्नता कर मुक्त हुए आचार्य के लिए मैं दोनों हाथ जोड़कर शीश झुकाकर नमन करता हूँ। चन्द्रमा के समान सरस शीतल ज्ञान कलाओं द्वारा सन्ताप के समूह

का निवारण करने वाले, मिथ्यात्वरूपी अन्धकार का हरण कर भव्य जीवों को आनन्दित कर आप अनुभव/आत्मानुभव रूपी भाव को दिखाते हैं।

ॐ ह्रीं अमृत-चन्द्र सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६५।।

पूरणचन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान-सुधा बरसै।
भवि चकोर नित चाहत नित मनु चरण जोति परसै।।
सूरि निजभेद कियो परसैं,
भये मुक्त मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं।।टेक।।

ॐ ह्रीं सूरि-सुधा-चन्द्र-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६६।।

अर्थ : परिपूर्ण चन्द्रमा के स्वरूप-समान कलाओं को धारण करने वाले आप ज्ञानरूपी अमृत बरसाते हैं। नित्य आपकी इच्छा करने वाला भव्य जीवों का मनरूपी चकोर मानो आपकी चरण ज्योति का ही स्पर्श कर रहा है। पर से अपनी भिन्नता कर मुक्त हुए आचार्य के लिए मैं दोनों हाथ जोड़कर, सदा शीश झुकाकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुधा-चन्द्र-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६६।।

जगजिय ताप निवारण कारण विलसैं अन्तर सैं।
देव सुधा सम गुण निवाहकर, सकल चराचर सैं।।सूरि....।।टेक।।

ॐ ह्रीं सूरि-सुधा-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६७।।

अर्थ : संसारी जीवों के ताप का निवारण करने में कारण होने पर भी आप अपने अन्दर/आत्मा में ही विलास करते हैं। हे देव! आपके गुण सकल चर-अचर/त्रस-स्थावर जीवों का निर्वाह करने के लिए अमृत-समान हैं। पर से.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुधा-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६७।।

जा धुनि सुनि संशय विनसै जिम ताप मेघ वरसैं।
मनहुँ कमल मकरंद वृन्द अलि पाय सुधारस सैं।।सूरि....।।टेक।।

ॐ ह्रीं सूरि-सुधा-ध्वनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६८।।

अर्थ : जैसे मेघ बरसने से ताप नष्ट हो जाता है; उसी प्रकार आपकी ध्वनि सुनने से संशय नष्ट हो जाते हैं। जैसे कमल का मकरन्द/पराग पाकर अलिवृन्द/भ्रमरों के समूह तृप्त हो जाते हैं; उसीप्रकार आपकी अमृतमयी ध्वनि से भव्य जीव तृप्त हो जाते हैं। पर से....करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुधा-ध्वनिमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६८।।

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसैं,
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसैं।।

सूरि निजभेद कियो परसैं,
भये मुक्त मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं।।टेक।।

ॐ ह्रीं सूरि-अमृत-ध्वनि-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६९।।

अर्थ : जैसे बादलों की गर्जना से होने वाली ध्वनि को सुनकर मयूर हर्षित होता है; उसीप्रकार अजर, अमर, सुख-दायक आपकी ध्वनि को सुनकर मन प्रसन्न हो जाता है और हृदय से भय नष्ट हो जाते हैं। पर से अपनी भिन्नता कर मुक्त हुए आचार्य के लिए मैं दोनों हाथ जोड़कर, सदा शीश झुकाकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अमृत-ध्वनि-स्वरूपमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२६९।।

चकोर : **जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास।**
द्रव्य कहावत है सु अनन्त, स्वभाव धरे निज आत्म विलास।।
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूँ वसु जाम।।२७०।।

ॐ ह्रीं सूरि-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो अपने गुणों और पर्यायों का वरण करता है, जिसके अपने धर्मों का विनाश नहीं होता है, जो अनन्त स्वभावों को धारण करता है, अपने आत्म/स्वरूप में विलास करता है, उसे द्रव्य कहते हैं। जो आचार्य कहलाकर/पद धारण कर, कर्मों को नष्ट कर, अपने आत्मा को प्राप्त कर शिव-धाम को गए हैं/सिद्ध हो गए हैं; उन सदा सुन्दर हुए आत्माराम के लिए सुख की इच्छा से आठों याम/चौबीसों घण्टे/सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं द्रव्यमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७०।।

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यों रवि जोति रहै नित ताप।
त्यों निज ज्ञानकला परिपूरण, राजत हो निज करण सु आप।।सूरि कहाय...।।२७१।।

ॐ ह्रीं सूरि-गुण-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे चन्द्रमा की ज्योति सदा शीतल रहती है, सूर्य की ज्योति सदा तापवान रहती है; उसी प्रकार अपने ही साधन से आप अपनी परिपूर्ण ज्ञान-कला में सुशोभित हैं। जो आचार्य .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं गुण-द्रव्यमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७१।।

हो अविनाश अनूपमरूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान।
पै न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परिमाण।।सूरि...।।२७२।।

ॐ ह्रीं सूरि-पर्यायाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे समुद्र की लहरें सदा अपनी सीमा में रहती हैं; उसी प्रकार अविनाश, अनुपम रूप, ज्ञानमय अपने स्वभाव में सदा क्रीड़ा करते/परिणमते हुए आप अपनी सीमा को नहीं छोड़ते हैं, उसमें ही रहते हैं। जो आचार्य....करता हूँ।

ॐ ह्रीं पर्यायमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७२।।

जे कछु द्रव्य तनो गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माहीं।
ताकरि द्रव्य सरूप कहावत, है अविनाश नमैं हम ताई।।
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूँ वसु जाम।।२७३।।

ॐ ह्रीं सूरि-द्रव्य-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य में जितने जो कुछ भी गुण हैं, वे सभी गुण आत्मा में मिल गए हैं; अतः उसे द्रव्य-स्वरूप कहते हैं। उस अविनाशी को हम नमन करते हैं। आचार्य पद धारण कर, कर्मों को नष्ट कर, अपने आत्मा को प्राप्त कर जो सिद्ध हो गए हैं; उन सदा सुन्दर हुए आत्माराम के लिए सुख की इच्छा से मैं सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं द्रव्य स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७३।।

जा गुण में गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर।
सो गुण रूप सदा निवसैं हम पूजत हैं करके कर जोर।।सूरि....।।२७४।।

ॐ ह्रीं सूरि-गुण-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक गुण में कोई अन्य गुण नहीं रहता है, वे सदा अपने द्रव्य में ही रहते हैं, अन्य स्थानों में नहीं रहते हैं, उन गुणरूप ही आप सदा निवास करते हैं; हम हाथ जोड़कर उनकी पूजन करते हैं। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं गुण-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७४।।

जो परिणाम धरैं तिनसों, तिनमैं करहैं वरतैं तिस रूप।
सो पर्याय उपाय बिना नित, आप विराजत हैं सु अनूप।।सूरि...।।२७५।।

ॐ ह्रीं सूरि-पर्याय-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप जिस पर्याय को धारण करते हैं; उसमें उस समय, उस रूप होकर प्रवृत्ति करते हैं। इसप्रकार आप प्रयत्न के विना ही अनुपम रूप में उस पर्यायरूप विराजमान हैं। आचार्य .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं पर्याय-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७५।।

हो नित ही परिणाम समय प्रति, सो उत्पाद कहौ भगवान।
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुण का उत्पाद महान।।सूरि...।।२७६।।

ॐ ह्रीं सूरि-गुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रति समय जो परिणाम होता है, उसे भगवान उत्पाद कहते हैं। आपने अपने उस भाव का प्रकाश कर लिया है। यह गुण का महान उत्पाद है। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं गुण-उत्पादमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७६।।

ज्यों मृतिका निज रूप न छाँडत, है घटमाँहि अनेक प्रकार।
सो तुम जीव स्वभाव धरो नित, मुक्त भए जगवास निवार।।
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूँ वसु जाम।।२७७।।

ॐ ह्रीं सूरि-ध्रुवगुणोत्पादाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : घड़े आदि अनेक प्रकार की होने पर भी जैसे मिट्टी अपने स्वभाव को नहीं छोड़ती है; उसीप्रकार आप जगत-वास का निवारण कर, मुक्त हो गए होने पर भी सदा जीव स्वभाव को धारण करते हैं। आचार्य पद धारण कर, कर्मों को नष्ट कर, अपने आत्मा को प्राप्त कर जो सिद्ध हो गए हैं; उन सदा सुन्दर हुए आत्माराम के लिए सुख की इच्छा से मैं सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं ध्रुव-गुण उत्पादमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७७।।

ये जग में सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार।
ते सब त्याग भये शिवरूप, अबंध अमन्द महा सुखकार।।सूरि....।।२७८।।

ॐ ह्रीं सूरि-व्यय-गुणोत्पादाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत में जितने भी पराश्रित रूप, अनेक प्रकार के सभी विभाव-भाव हैं; उन सभी का त्याग कर आप बन्ध-रहित, तेजस्वी, महा सुख-कारक शिवरूप हो गए हैं। आचार्य .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं व्यय-गुण-उत्पादमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७८।।

जे जग में षट्-द्रव्य कहे, तिनमें इक जीव सुज्ञान स्वरूप।
और सभी बिन-ज्ञान कहे, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूप।।सूरि...।।२७९।।

ॐ ह्रीं सूरि-जीव-तत्त्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत में जाति की अपेक्षा जो छह द्रव्य कहे गए हैं, उनमें से मात्र जीव सुज्ञान-स्वरूप है, शेष सभी ज्ञान-रहित कहे गए हैं। आप सदा अनुपम ज्ञान से सुशोभित हैं। आचार्य .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं जीव-तत्त्वमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२७९।।

ज्ञान सुभाव धरौ नित ही, नहिं छाँड़त हो कबहुँ निज वान।
ये ही विशेष भयो सबसौं, नहीं औरन में गुण ये परधान।।
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूँ वसु जाम।।२८०।।

ॐ ह्रीं सूरि-जीव-तत्त्व-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप सदा ज्ञान स्वभाव को धारण करते हैं, अपनी मर्यादा कभी भी नहीं छोड़ते हैं। सभी से आपमें यही विशेषता है, अन्य में ये प्रधान गुण नहीं हैं। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं जीव-तत्त्व-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८०।।

हो कर्तादि अनेक सुभाव, निजातम मैं पर मैं अनिवार।
सो पर कौ न लगाव रहौ, निज ही निजकर्म रहौ सुखकार।।सूरि ....।।२८१।।

ॐ ह्रीं सूरि-निज-स्वभाव-धारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आत्मा में और पर में निवारण नहीं किए जाने वाले कर्ता आदि अनेक स्वभाव होने से पर का लगाव नहीं रहा है। सुख-कारक स्वयं में ही स्वयं का कर्म कर रहे हैं। आचार्य पद धारण कर, कर्मों को नष्ट कर, अपने आत्मा को प्राप्त कर जो सिद्ध हो गए हैं; उन सदा सुन्दर हुए आत्माराम के लिए सुख की इच्छा से मैं सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं निज-स्वभाव-धारक सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८१।।

द्रव्य तथापि, विभाव दोऊ विधि, कर्म प्रवाह बहै बिन आद।
ते सब एक भये थिररूप, निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद।।सूरि....।।२८२।।

ॐ ह्रीं सूरि-आस्रव-विनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यद्यपि जीव द्रव्य में विभाव के कारण दोनों प्रकार के/द्रव्य-भाव कर्मों का प्रवाह अनादि से चला आ रहा है; तथापि शुद्ध-स्वभावी अपने आत्मा के प्रसाद से वे सभी एक हो स्थिर/नष्ट हो गए हैं। आचार्य.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं आस्रव-विनाशमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८२।।

मोदक : **बंध दऊ विधि के दुख कारण, नाश कियो भवपार उतारण।**
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर।।२८३।।

ॐ ह्रीं सूरि-बंध-तत्त्व-विनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दुःख के कारणभूत दोनों प्रकार के कर्म-बन्ध को नष्ट कर, अपने ज्ञान की कला द्वारा संसार-सागर से पार उतारनेवाले आचार्य हो सिद्ध हुए आपके लिए मैं मन में धारणकर प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं बन्ध-तत्त्व-विनाशमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८३।।

संवरतत्त्व महा सुख देत हि, आस्रव रोकन को यह हेत हि। सूरि भये....।।२८४।।

ॐ ह्रीं सूरि-संवर-तत्त्व-सहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा-सुख देने वाला संवर तत्त्व आस्रव को रोकने का कारण है। अपने....करता हूँ।

ॐ ह्रीं संवर-तत्त्व-सहित सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८४।।

ज्यूँ मणि दीप अडोल अनूपही, संवर तत्त्व निराकुलरूप ही।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर।।२८५।।

ॐ ह्रीं सूरि-संवर-तत्त्व-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे मणिओं के दीप अडोल/अकम्प और अनुपम ही होते हैं; उसी प्रकार संवर तत्त्व निराकुल रूप ही है। अपनी महान ज्ञान-कला द्वारा सिद्ध हुए आचार्यों को मन में धारण कर मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं संवर-तत्त्व-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८५।।

संवर के गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सु ध्यावत।सूरि भये...।।२८६।।

ॐ ह्रीं सूरि-संवर-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो मुनि शुद्ध स्वभाव का भली-भाँति ध्यान करते हैं, वे मुनि संवर के गुणों को प्राप्त करते हैं। अपनी...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं संवर-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८६।।

संवर धर्मतनी शिव पावहिं, संवर धरम तहाँ दरशावहिं।सूरि भये....।।२८७।।

ॐ ह्रीं सूरि-संवर-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संवर धर्म से मोक्ष पद प्राप्त होता है और वह संवर धर्म वहाँ ही देदीप्यमान है। अपनी.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं संवर-धर्ममय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८७।।

दोहा : **एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप।**
नमूँ निरजरा तत्त्व सो, पायो सिद्ध अनूप।।२८८।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरा-तत्त्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एकदेश और सर्वदेश - दोनों प्रकार की निर्जरा मोक्ष-स्वरूप है। इस निर्जरा तत्त्व से अनुपम सिद्ध दशा प्राप्त करने वाले आचार्यों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं निर्जरा-तत्त्वमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८८।।

शुद्ध सुभाव जहाँ तहाँ कहौ कर्म को नाश।
एक निरजरा तत्त्व का, रूप कियौ परकाश।।२८९।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरा-तत्त्व-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ शुद्ध स्वभाव है, वहाँ कर्मों का नाश कहा गया है - इसप्रकार आपने निर्जरा तत्त्व का एक स्वरूप प्रकाशित किया है।

ॐ ह्रीं निर्जरा-तत्त्व-स्वरूपी सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२८९।।

कोटि जन्म के विघन सब, सूखे तृण सम जान।
दहे निर्जरा अग्नि सौं, इह गुण है परधान।।२९०।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरा-गुण-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : करोड़ों जन्मों के सम्पूर्ण विघ्नों को आपने सूखे तृण/घास के समान जानकर निर्जरा रूप अग्नि से जला दिया है। आपका यह प्रधान गुण है।

ॐ ह्रीं निर्जरा-गुण-स्वरूपी सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९०।।

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म।
धर्मी सोई आत्मा, एक हि रूप सुपर्म।।२९१।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरा-धर्म-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने/आत्म-बल से कर्मों को खिपाना/नष्ट करना, निर्जरा धर्म कहा गया है। एकरूप रहने वाला सुपरम/सर्वोत्तम वही आत्मा धर्मी है।

ॐ ह्रीं निर्जरा-धर्म-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९१।।

समय समय गुणश्रेणि का, खिरै कर्म बल ध्यान।
ये सम्बन्ध निवार करि, करै मुक्ति सुख पान।।२९२।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरानुबंधाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्म-ध्यान के बल से प्रति समय गुण-श्रेणी के अनुसार कर्म खिरते हैं। इस संबंध का निवारण कर आप मोक्ष के सुख का पान करते हैं।

ॐ ह्रीं निर्जरा-अनुबंधमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९२।।

अतुल शक्ति थिर भाव की, सो प्रगटी तुम माहिं।
यही निर्जरा रूप है, नमूँ भक्ति कर ताहि।।२९३।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरा-तत्त्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्थिर भाव की अतुल शक्ति आपमें प्रगट हो गई है। यही निर्जरारूप है। उसे भक्ति पूर्वक नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं निर्जरा-स्वरूपमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९३।।

सर्व कर्म के नाश बिन, लहै न शिव-सुखरास।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश।।२९४।।

ॐ ह्रीं सूरि-निर्जरा-प्रतीताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण कर्मों का नाश हुए विना शिव-सुख की राशि प्राप्त नहीं होती है। वास्तव में आपने ही प्रतीत/प्रतीति कर निर्जरा का प्रकाश किया है।

ॐ ह्रीं निर्जरा-प्रतीतमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९४।।

सकल कर्ममल नाशतैं, शुद्ध निरंजन रूप।
ज्यों कंचन बिन, कालिमा, राजैं मोक्ष अनूप।।२९५।।

ॐ ह्रीं सूरि-मोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे कालिमा से रहित कंचन सुशोभित होता है; उसी प्रकार सम्पूर्ण कर्म-मल के नाश से शुद्ध, निरंजनरूप, अनुपम मोक्ष सुशोभित होता है।

ॐ ह्रीं मोक्षमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९५।।

द्रव्य-भाव दोनों सु विधि, करैं जगत में वास।
द्वैविध बन्ध उखारिकैं, भये मुक्त सुखरास।।२९६।।

ॐ ह्रीं सूरि-बन्ध-मोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य-कर्म और भाव-कर्म - दोनों कर्म संसार में वास करते हैं। आप दोनों प्रकार के बन्ध नष्ट कर मुक्ति-सुख की राशि हो गए हैं।

ॐ ह्रीं बन्ध से मोक्षमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९६।।

पर विकलप सुख दुख नहीं, अनुभव निज आनन्द।
जन्म-मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कंद।।२९७।।

ॐ ह्रीं सूरि-मोक्ष-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपको अन्य के विकल्पों संबंधी सुख-दुःख नहीं हैं। आत्मानन्द का अनुभव करने वाले आप जन्म-मरण की विधि का नाशकर शिव-सुख के कन्दरूप में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं मोक्ष-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९७।।

जहाँ न दुख को लेश है, उदय कर्म अनुसार।
सो शिवपद पायो महा, नमूँ भक्ति उर धार।।२९८।।

ॐ ह्रीं सूरि-मोक्ष-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मों के उदयानुसार होनेवाले दुःखों का जहाँ लेश-मात्र भी नहीं है, उस महान शिव-पद को आपने प्राप्त कर लिया है। हृदय में भक्ति धारण कर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं मोक्ष-गुणमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९८।।

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध हैं, तिनसों नित्त प्रबन्ध।
जे जगवास विलास दुख, तिनकूँ नमूँ अबन्ध।।२९९।।

ॐ ह्रीं सूरि-मोक्षानुबंधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो मोक्ष के प्रसिद्ध सुगुणों से सदा प्रबन्ध रूप/प्रकृष्ट रूप से संबंधित हैं; संसार-वास के विलास/सुख और दुःख से अबन्ध/पूर्णतया रहित हैं; उन्हें नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मोक्ष-अनुबन्धमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।२९९।।

जैसी निज तन आकृति, तज कीनौं शिववास।
ते तैंसैं नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश।।३००।।

ॐ ह्रीं सूरि-मोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने अन्तिम शरीर की जैसी आकृति है, शरीर का त्याग कर देने के बाद उसी प्रकार की आकृति में सदा शिव-वास करते हुए आप अचल, ज्ञानानन्दमय प्रकाश -सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं मोक्ष-अनुप्रकाशमय सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३००।।

क्षयोपशम परिणाम कर, साधन निज का रूप।
वा निजपद में लीनता, ये ही गुप्त-स्वरूप।।३०१।।

ॐ ह्रीं सूरि-स्वरूप-गुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षायोपशमिक परिणामों द्वारा अपने स्वरूप का साधन कर अपने पद में लीनता – यही आपका गुप्त स्वरूप है।

ॐ ह्रीं स्वरूप-गुप्त सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०१।।

इन्द्रियजनित न दुख जहाँ, सदा निजानन्दरूप।
निर-आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप।।३०२।।

ॐ ह्रीं सूरि-परमात्म-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ इन्द्रिय-जनित दुःख नहीं है, उस सदा अपने आत्मानन्दरूप, निराकुल, स्वाधीनता-सम्पन्न शुद्ध-स्वरूप में आप वर्तते हैं।

ॐ ह्रीं परमात्म-स्वरूप सूरिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०२।।

(अब, तीन सौ तीन से चार सौ दो पर्यन्त सौ छन्दों द्वारा उपाध्याय परमेष्ठी की भक्ति करते हैं। जो इसप्रकार है-)

रोला :

संपूरण श्रुत-सार निजातम बोध लहानौं,
निज अनुभव शिवमूल मानुँ उपदेश करानौं।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।३०३।।

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण श्रुत के सार अपने आत्मा का ज्ञान प्राप्त कर आपने, मोक्ष का मूल मानकर आत्मा के अनुभव का उपदेश दिया है। जैसे सूर्य, अन्धकार का हरण करता है; उसीप्रकार शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले पाठक/उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०३।।

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी,
तत्त्व-ज्ञान सों लहै निजातम पद सुखदानी।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।३०४।।

ॐ ह्रीं पाठक-मोक्ष-मण्डनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोक्ष के मूल आत्म-ज्ञान को प्रगट करने वाला ही श्रुत-ज्ञानी है। तत्त्व-ज्ञान से सुख-दाई अपने आत्म-पद की प्राप्ति होती है। अन्धकार का हरण करने वाले सूर्य के समान, शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मोक्ष-मण्डन पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०४।।

भवसागर तें भव्य जीव तारण अनिवारा।
तुममें यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा।।शिष्यन....।।३०५।।

ॐ ह्रीं पाठक-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप स्वयं अनिवार संसार-सागर से पार हो जाने के कारण भव्य जीवों को भी उससे पार करने का गुण आपमें अधिक है। अन्धकार......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं गुणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०५।।

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरौ तद्रूप अनूपी।
हीनाधिक बिन अचल विराजत शुद्ध सरूपी।।शिष्यन....।।३०६।।

ॐ ह्रीं पाठक-गुण-स्वरूपेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दर्शन, ज्ञान स्वभाव को धारण करने वाले आप उनसे तद्रूप हो अनुपम, हीनता-अधिकता से रहित, शुद्ध स्वरूपी, अचल विराजमान हैं। अन्धकार.......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं गुण-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०६।।

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है।
तिहूँ काल प्रति अन्य भाव नहिं ग्रहण करै है।।शिष्यन....।।३०७।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने गुण और पर्यायों को अखण्डित रूप में नित्य धारण करने वाले आप तीनों कालों में/कभी भी अन्य के भावों को ग्रहण नहीं करते हैं। अन्धकार का हरण करने वाले सूर्य के समान, शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पाठक द्रव्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०७।।

सहभावी गुण सार जहाँ परभाव न लेसा।
अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा।।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।३०८।।

ॐ ह्रीं पाठक-गुण-पर्यायेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सारभूत सहभावी गुणों में पर-भावों का लेश भी नहीं है। अगुरुलघु गुण के परिणामों/परिणमन से वस्तु का विशिष्ट सद्भाव रहता है। अन्धकार का हरण करने वाले सूर्य के समान, शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं गुण-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०८।।

गुण समुदायी द्रव्य याहि तैं निरगुण नाहीं।
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं।।शिष्यन....।।३०९।।

ॐ ह्रीं पाठक-गुण-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य, गुणों का समुदाय होने से वह निर्गुण नहीं है। वे सभी अनन्त गुण सदा आपके पद में विराजमान हैं। अन्धकार.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं गुण-द्रव्यमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३०९।।

सत सरूप सब द्रव्य सधै नीके अबाधकर।
सो तुम सत्य सरूप विराजौ द्रव्य भाव धर।।शिष्यन....।।३१०।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्य-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पूर्णतया निर्बाध रूप से सभी द्रव्य सत् स्वरूप सिद्ध हैं। आप अपने द्रव्य-भाव को धारण कर सत्य स्वरूप में विराजमान हैं। अन्धकार........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं द्रव्य-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१०।।

जे जे हैं परनाम बिना परनामी नाहीं।
परनामी परनाम एक ही हैं तुम माहीं।।शिष्यन.....।।३११।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्य-पर्यायाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कोई भी परिणाम परिणामी के विना नहीं होता है। आपमें परिणामी और परिणाम एक ही हैं। अन्धकार............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं द्रव्य-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३११।।

अगुरुलघु पर्याय शुद्ध परनाम बखानी।
निज सरूप में अन्तरगत श्रुतज्ञान प्रमानी।।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।३१२।।

ॐ ह्रीं पाठक-पर्याय-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अगुरुलघु की पर्यायों को शुद्ध परिणमन कहा गया है। वह अपने स्वरूप में ही गर्भित है – ऐसा श्रुत-ज्ञान से प्रमाणित है। अन्धकार का हरण करने वाले सूर्य के समान, शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं पर्याय-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१२।।

जगतवास सब पापमूल जिय को दुखदाई।
ताको नाशन हेतु कह्यौ शिव मूल उपाई।।शिष्यन....।।३१३।।

ॐ ह्रीं पाठक-मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जीव के लिए संसार का वास सभी पापों का मूल और दुःख-दाई है। उसे नष्ट करने का उपाय एक-मात्र मोक्ष ही कहा है। अन्धकार..........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मंगलमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१३।।

जहाँ न दुख को लेश सर्वथा सुख ही जानौं।
सोई मंगल गुण तुममें प्रत्यक्ष लखानौं।।शिष्यन....।।३१४।।

ॐ ह्रीं पाठक-मंगल-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ दुःख का लेश भी नहीं है, उसे ही सर्वथा/सर्वांगीण सुख जानना चाहिए। वह मंगल गुण आपमें प्रत्यक्ष दिखाई देता है। अन्धकार..........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मंगल-गुणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१४।।

औरन मंगलकरन आप मंगलमय राजैं।
दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजैं।।शिष्यन....।।३१५।।

ॐ ह्रीं पाठक-मोक्ष-मण्डनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दूसरों का मंगल करने वाले आप मंगलमय रूप में सुशोभित हैं। आपके दर्शन करने से सारभूत सुख मिलता है और सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। अन्धकार.....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मंगल-गुण-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१५।।

आदि अंत अविरुद्ध शुद्ध मंगलमय मूरति।
निज सरूप में बसैं सदा परभाव विदूरित।।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।३१६।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्य-मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आदि-अन्त विरुद्धता-रहित, शुद्ध, मंगलमय मूर्ति आप, पर-भावों को पूर्णतया नष्ट कर, सदा अपने स्वरूप में वास करते हैं। अन्धकार का हरण करने वाले सूर्य के समान, शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं द्रव्य-मंगल पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१६।।

जितनी परणति धरौ सबहि मंगलमय रूपी।
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी।।शिष्यन....।।३१७।।

ॐ ह्रीं पाठक-मंगल-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप जितनी भी परिणति/पर्यायों को धारण करते हैं, वे सभी मंगलमय रूप हैं। आप अन्य अवस्थिति को नष्ट कर, उन्हीं रूप, अनुपम दशाओं के धारक हैं। अन्धकार.....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मंगल-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१७।।

निश्चय वा विवहार सर्वथा मंगलकारी।
जग जीवन के विघन विनाशन सर्व प्रकारी।।शिष्यन....।।३१८।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्य-पर्याय-मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप निश्चय या व्यवहार – सभी प्रकार से मंगल-कारक हैं और संसारी जीवों के सभी प्रकार के विघ्नों का सभी प्रकार से विनाश करने वाले हैं। अन्धकार.....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं द्रव्य-मंगल-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१८।।

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानौ।
वचन अगोचर कह्यो तथा निर्दोष कहानौ।।शिष्यन....।।३१९।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्य-गुण-पर्याय-मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : प्रमाण की विषयभूत वस्तु का भेदाभेद, उसका सर्वस्व कहा गया है। इसे ही वचन-अगोचर और निर्दोष भी बताया गया है। अन्धकार......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं द्रव्य, गुण, पर्याय-मंगलमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३१९।।

सब विशेष प्रतिभासमान मंगलमय भासैं।
निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशैं।।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।३२०।।

ॐ ह्रीं पाठक-स्वरूप-मंगलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निर्विकल्प, आनन्दरूप अनुभूति के प्रकाश में प्रतिभासित होने वाले सभी विशेष मंगलमय भासित होते हैं। अन्धकार का हरण करने वाले सूर्य के समान, शिष्यों के अज्ञान का हरण करने वाले उपाध्याय के गुणों को प्रगट कर, सिद्ध हुए भगवान के लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं स्वरूप-मंगल पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२०।।

पायत्ता : निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।३२१।।

ॐ ह्रीं पाठक-मंगलोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो विघ्नों से पूर्णतया रहित और अन्य की अधीनता से पूर्णतया रहित होता है, लोक में वही उत्तम और मंगल है। श्रुत में आपके अनन्त गुण गाए/बताए गए हैं; उनकी श्रद्धा करके हम आपको शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं मंगलोत्तम पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२१।।

जगजीवन को हम देखा, तुम ही गुण सार विशेषा।तुम गुण.....।।३२२।।

ॐ ह्रीं पाठक-गुण-लोकोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जगत के जीवों को हमने देखा है। उनमें से आपके ही गुण विशेष सारभूत हैं। श्रुत में..........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं गुण-लोकोत्तम पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२२।।

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा।तुम गुण....।।३२३।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्रव्य-लोकोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : छह द्रव्यों द्वारा रचित इस सम्पूर्ण जगत में आपका रूप ही उत्तम देखा है। श्रुत में ......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं द्रव्य लोकोत्तम पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२३।।

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई।तुम गुण.....।।३२४।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने अपने ज्ञान की शुद्धता प्रगट कर ली है; जिससे यह प्रभुत्व है। श्रुत में....झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञानमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२४।।

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम प्रानी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।३२५।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्ञान-लोकोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसारी जीव अपूर्ण ज्ञानी हैं; लोक में उत्तम प्राणी आप ही हैं। श्रुत में आपके अनन्त गुण गाए गए हैं; उनकी श्रद्धा करके हम आपको शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञान-लोकोत्तम पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२५।।

युगपत निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा।तुम गुण....।।३२६।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने दर्शन के एक भेद/केवल दर्शन को प्रगट कर एक साथ अभेदरूप में सभी कुछ देख लिया है। श्रुत में...........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शनमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२६।।

हम सोवत हैं नित मोही, निरमोह लखे तुमको ही।तुम गुण....।।३२७।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-लोकोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : हम सदा मोह में सो रहे/मग्न हैं; आपको ही निर्मोह देखा है। श्रुत में......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-लोकोत्तम पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।३२७।।

दृगवंत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा।तुम गुण.....।।३२८।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दृगवंत/दर्शनवान, महा सुख-कारक आप महान ज्ञान से सम्पन्न और विकारों से पूर्णतया रहित हैं। श्रुत में........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२८।।

निरंशस अनन्त अबाधा, निज बोधन भाव अराधा।तुम गुण....।।३२९।।

ॐ ह्रीं पाठक-सम्यक्त्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संशय से रहित, अन्त-विहीन, बाधाओं से मुक्त अपने ज्ञान/रत्नत्रय स्वभाव की आपने आराधना की है। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३२९।।

सम्यक्त्व महासुखकारी, निज गुणस्वरूप अविकारी।तुम गुण....।।३३०।।

ॐ ह्रीं पाठक-सम्यक्त्व-गुण-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : निज गुण-स्वरूप, विकारों से पूर्णतया रहित सम्यक्त्व महा सुख-कारक है। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व गुण स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।३३०।।

निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।३३१।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : खेद से रहित, छेद से रहित, अखण्ड, वेद से रहित आप सुखरूप वीर्यमय हैं। श्रुत में आपके अनन्त गुण गाए गए हैं; उनकी श्रद्धा कर हम आपको शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्यमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३१।।

निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त प्रदेशा।तुम गुण....।।३३२।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपना भोग करने में आपको रंच-मात्र भी कष्ट नहीं होता है; यह आपका सम्पूर्ण अनन्त वीर्य है। श्रुत में...........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-गुणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३२।।

परनाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेस कदाही।तुम गुण....।।३३३।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आपमें भली-भाँति स्थिर परिणामों में कभी भी क्लेश उत्पन्न नहीं होता है। श्रुत में.............झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३३।।

द्रव्य भाव लह्यौ तुम जैसो, पावै जगजन नहिं ऐसो।तुम गुण.....।।३३४।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने जैसा द्रव्य-भाव प्राप्त किया है; उसप्रकार संसारी जीव प्राप्त नहीं कर पाते हैं। श्रुत में......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-द्रव्यमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३४।।

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनंद सुभाव सु जीवत।तुम गुण.....।।३३५।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-गुण-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अपने ज्ञानरूपी सुधारस/अमृत को पीते हुए आनन्द-स्वभाव में जीवित रहते हैं। श्रुत में......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-गुण-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३५।।

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा।तुम गुण.....।।३३६।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके दर्शन में विशेष-रहित अनन्त स्वभाव दिखाई देते हैं। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-पर्यायमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३६।।

इकबार लखे सबही कौ, तद्रूप निजातम ही कौ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।३३७।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-पर्याय-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप एक बार में ही सभी को और उस रूप अपने आत्मा को भी देख लेते हैं। श्रुत में आपके अनन्त गुण गाए गए हैं; उनकी श्रद्धा कर हम आपको शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-पर्याय-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३७।।

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं।तुम गुण....।।३३८।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्ञान-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चिद्रूप अपने आत्मा में स्पर्श आदि गुण नहीं हैं। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञान-द्रव्य पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३८।।

शरणागत दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला।तुम गुण.....।।३३९।।

ॐ ह्रीं पाठक-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शरणागत के लिए दीन-दयाल/सभी प्रकार से सन्तुष्ट करने वाले आपकी विशाल भावों से हम पूजन करते हैं। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३३९।।

जिनशरण गही शिव पायौ, इम शरण महा गुण गायौ।तुम गुण.....।।३४०।।

ॐ ह्रीं पाठक-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन्होंने आपकी शरण ग्रहण की; उन्होंने मोक्ष प्राप्त किया - इस शरण का ऐसा महा गुण गाया गया है। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं गुण-शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४०।।

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै।तुम गुण.....।।३४१।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्ञान-गुण-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनुभव अपने आत्मा का ज्ञान कराता है - यह ज्ञान शरण कहलाती है। श्रुत में.........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं ज्ञान-गुण-शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४१।।

दृग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना।तुम गुण.....।।३४२।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका दर्शन-मात्र या श्रद्धान वास्तव में मोक्ष का निवास कराता है। श्रुत में........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।३४२।।

निरभेद स्वरूप अनूपा, है शर्ण तनी शिव भूपा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।३४३।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-स्वरूप-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भेद-रहित, अनुपम स्वरूप-सम्पन्न आपकी शरण मोक्ष का राजा/स्वामी बनाती है। श्रुत में आपके अनन्त गुण गाए गए हैं; उनकी श्रद्धा कर हम आपको शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दर्शन-स्वरूप शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४३।।

निजआत्म-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया।तुम गुण....।।३४४।।

ॐ ह्रीं पाठक-सम्यक्त्व-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने अपने आत्मा का स्वरूप देखा/माना है; इस कारण शिव-पद प्राप्त किया है। श्रुत में............झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४४।।

आतम-स्वरूप सरधाना, तुम शरण गह्यौ भगवाना।तुम गुण.......।।३४५।।

ॐ ह्रीं पाठक-सम्यक्त्व-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्म-स्वरूप का श्रद्धान करने वाले हे भगवान! हमने आपकी शरण ग्रहण की है। श्रुत में............झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४५।।

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं।तुम गुण......।।३४६।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आत्मा के साधन में पुरुषार्थ छूटता नहीं है। श्रुत में...........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-शरण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४६।।

आतम शकती प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै।तुम गुण......।।३४७।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-स्वरूप-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जब जीव अपने आत्मा की शक्ति प्रगट करता है, तब अपने स्वरूप को प्राप्त करता है। श्रुत में............झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-स्वरूप शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४७।।

परमातम वीर्य महा है, पर निमित न लेश तहाँ है।तुम गुण......।।३४८।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-परमात्म-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परमात्मा में महान वीर्य है; उसमें पर-निमित्त का लेश भी नहीं है। श्रुत में........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं वीर्य-परमात्मा-शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४८।।

श्रुत द्वादशांग जिनवानी, निश्चल शिववास करानी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।३४९।।

ॐ ह्रीं पाठक-द्वादशांग-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : श्रुतरूप द्वादशांगमय जिनवाणी वास्तव में शिव का वास कराती है। श्रुत में आपके अनन्त गुण गाए गए हैं; उनकी श्रद्धा कर हम आपको शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं द्वादशांग-शरणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३४९।।

दश पूर्व महा जिनवाणी, निश्चल अघहर सुखदानी।तुम गुण.....।।३५०।।

ॐ ह्रीं पाठक-दश-पूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दश पूर्वरूप महा जिनवाणी वास्तव में पापों को नष्ट करने वालीं और सुख को देने वालीं हैं। श्रुत में...........झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं दश-पूर्वांग पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५०।।

दश चार पूर्व जिनवाणी, निश्चय शिववास करानी।तुम गुण....।।३५१।।

ॐ ह्रीं पाठक-चतुर्दश-पूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चौदह पूर्वरूप जिनवाणी वास्तव में शिव-वास कराती हैं। श्रुत में.......झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं चतुर्दश-पूर्वांग पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५१।।

निज आत्म चर्ण प्रकटावै, आचार अंग कहलावै।तुम गुण.....।।३५२।।

ॐ ह्रीं पाठकाचारांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो अपने आत्मा में चरण/प्रवृत्ति प्रगट करता है, वह आचारांग कहलाता है। श्रुत में............झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं आचारांग पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५२।।

रेखता : **विविध शंकादि तुम टारी, निरन्तर ज्ञान आचारी।**
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३५३।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्ञानाचाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनेक प्रकार की शंका आदि रूपी अन्धकार को टालकर, निरन्तर ज्ञान का आचरण करने वाले, पूर्ण श्रुत-ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं ज्ञानाचार पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५३।।

पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया।पूर्ण....।।३५४।।

ॐ ह्रीं पाठक-तपसाचाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पराश्रित भावों को विनष्ट कर, सुस्थिर निजरूप को दिखाने वाले, पूर्ण श्रुत-ज्ञान..........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं तप आचार पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५४।।

मुक्तपद दैन अनिवारी, सर्व बुध चर्ण आचारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३५५।।

ॐ ह्रीं पाठक-रत्नत्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनिवार्य रूप से मुक्ति पद देने वाले, ज्ञान-पोषक सम्पूर्ण प्रवृत्तिओं का आचरण करने वाले अथवा सभी ज्ञानिओं के चरण-हेतु अनुकरणीय आचरण करने वाले, पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं रत्नत्रयमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५५।।

शुद्ध सुरत्नत्रय धारी, निजातमरूप अविकारी।पूर्ण......।।३५६।।

ॐ ह्रीं पाठक-रत्नत्रय-सहायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शुद्ध वास्तविक/सम्यक् रत्नत्रय धारण करने वाले, विकारों से पूर्णतया रहित अपने आत्मारूप, पूर्ण श्रुत ज्ञान..........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं रत्नत्रय-सहाय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५६।।

ध्रौव्य पंचम-गती पाई, जन्म पुनि मर्ण छुटकाई।पूर्ण.....।।३५७।।

ॐ ह्रीं पाठक-ध्रुव-असंसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जन्म और मरण से छूटकर ध्रुवतामय पंचम-गति प्राप्त करने वाले, पूर्ण श्रुत ज्ञान.......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संसार-रहित ध्रुव पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५७।।

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई।पूर्ण.....।।३५८।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अधिकतामय, अनुपम-रूप-सम्पन्न असाधारण अपना पद प्राप्त करने वाले, पूर्ण श्रुत ज्ञान............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५८।।

आन तुम सम न गुण होई, कह्यौ एकत्व गुण सोई।पूर्ण.....।।३५९।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके समान गुण अन्य में नहीं हैं; इसे ही एकत्व गुण कहते हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान.......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व गुण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३५९।।

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोइ परमात्म कहलाया।पूर्ण....।।३६०।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन्होंने आनन्दमय अपना पूर्ण पद प्राप्त कर लिया है, वे ही परमात्मा कहलाते हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान..............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व परमात्मा पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६०।।

उच्चगत मोक्ष का दाता, एक निजधर्म विख्याता।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३६१।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उच्च-गतिरूप मोक्ष को देने वाला मात्र एक अपना/आत्म-धर्म है - ऐसा विख्यात/प्रसिद्ध है। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व धर्म पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६१।।

जु तुम चेतनता परकासी, न पावैं ऐसी जगवासी।पूर्ण.....।।३६२।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसी चेतनता आपने प्रकाशित की है, उसप्रकार की चेतनता संसारी जीव प्राप्त नहीं कर पाता है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व-चेतन पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६२।।

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो।पूर्ण....।।३६३।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-चेतन-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान-दर्शन स्वरूपी आप असाधारण अनुपम हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व चेतन स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६३।।

गहैं नित निज चतुष्टय कौं, मिलैं कबहूँ नहीं पर सौं।पूर्ण....।।३६४।।

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्व-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप सदा अपने चतुष्टय को ही ग्रहण करते हैं; पर से कभी भी नहीं मिलते हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान..........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं एकत्व द्रव्य पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।३६४।।

स्वपद अनुभूत सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी।पूर्ण....।।३६५।।

ॐ ह्रीं पाठक-चिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सुख-राशिमय अपने पद की अनुभूति चिदानन्द भाव को प्रकाशित करती है। पूर्ण श्रुत ज्ञान................नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चिदानन्द पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६५।।

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो।पूर्ण......।।३६६।।

ॐ ह्रीं पाठक-सिद्ध-साधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्तिम पुरुषार्थ की साधना करने वाले आप जन्म, मरण आदि के नाशक हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान..........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सिद्ध साधक पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६६।।

स्व आतम ज्ञान दरशाया, ये पूरण ऋद्धि पद पाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३६७।।

ॐ ह्रीं पाठक-ऋद्धि-पूर्णाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने अपने आत्म-ज्ञान को प्रगट किया है - यह पूर्ण ऋद्धि पद प्राप्त कर लिया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं ऋद्धि-पूर्ण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६७।।

सकल विधि मूरछा त्यागी, तुम्हीं निरग्रंथ बड़भागी।पूर्ण....।।३६८।।

ॐ ह्रीं पाठक-निर्ग्रन्थाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार की मूर्छा के त्यागी आप ही निर्ग्रन्थ और बड़े भाग्य-शाली हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं निर्ग्रन्थ पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६८।।

निजाश्रित अर्थ जानाहीं, अबाधित अर्थ तुम माहीं।पूर्ण....।।३६९।।

ॐ ह्रीं पाठकार्थ-विधानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आश्रित पदार्थों को जानने वाले आपमें पदार्थ, बाधाओं से रहित हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान...........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्थ विधान पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३६९।।

न फिर संसार पद पाया, अपूरब बन्ध बिनसाया।पूर्ण.....।।३७०।।

ॐ ह्रीं पाठक-संसाराननुबन्धाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : बन्ध का अपूर्व विनाश कर देने वाले आपने पुन: संसार पद प्राप्त नहीं किया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संसार-रहित अनुबन्धमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७०।।

आप कल्याणमय राजौ, सकल जगवास दुख त्याजौ।पूर्ण....।।३७१।।

ॐ ह्रीं पाठक-कल्याणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार-वास के समस्त दु:खों का त्यागकर, कल्याणमय आप सुशोभित हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान...........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कल्याणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७१।।

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी।पूर्ण....।।३७२।।

ॐ ह्रीं पाठक-कल्याण-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्व और पर के हित-कारक, गुण-धारक परम कल्याणमय आप, विकारों से पूर्णतया रहित हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान.....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कल्याण-गुणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७२।।

अहित परिहार पद जो है, परम कल्याण तासों है।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३७३।।

ॐ ह्रीं पाठक-कल्याण-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो पद अहित का परिहार करता है, वही परम कल्याणमय है। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कल्याण-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७३।।

स्वसुख द्रव्याश्रये माहीं, जहाँ कछु पर निमित्त नाहीं।पूर्ण....।।३७४।।

ॐ ह्रीं पाठक-कल्याण-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने द्रव्य के आश्रय से प्रगट हुए अपने सुख में पर की निमित्तता रंच-मात्र भी नहीं है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कल्याण-द्रव्यमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७४।।

जोहै सोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला।पूर्ण....।।३७५।।

ॐ ह्रीं पाठक-तत्त्व-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपमें जो जैसा है, वह अनन्त काल तक उसी प्रकार रहेगा; अन्य प्रकार से होने वाले भावों और कर्मों को आपने नष्ट कर दिया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं तत्त्व गुणमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७५।।

रहें नित चेतना माहीं, कहैं चिद्रूप मुनि ताहीं।पूर्ण....।।३७६।।

ॐ ह्रीं पाठक-चिद्रूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो अपनी चेतना में रहते हैं, उन्हें मुनि चिद्रूप या चिद्रूप मुनि कहते हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान.......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चिद्रूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७६।।

सर्वथा ज्ञान परिणामी, प्रकट है चेतना नामी।पूर्ण....।।३७७।।

ॐ ह्रीं पाठक-चेतनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सर्वथा ज्ञानमय परिणमन होने से आपका चेतना नाम प्रगट है। पूर्ण श्रुत ज्ञान...नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चेतन पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७७।।

नहीं अन्यत्व भेदा है, गुणी गुण निर-विछेदा है।पूर्ण....।।३७८।।

ॐ ह्रीं पाठक-चेतना-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुणी और गुणों में विच्छेद नहीं होने के कारण उनमें अन्यत्व भेद नहीं है। पूर्ण श्रुत ज्ञान......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं चेतना गुण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७८।।

घटाघट वस्तु परकाशी, धरैं हैं जोति प्रतिभाशी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३७९।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्योति-प्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : घट-अघट/घड़े-अघड़े (घड़े से भिन्न सभी); अथवा घटित होने वाले वर्तमान-घटित नहीं होने वाले भूत-भविष्य संबंधी वस्तुओं को प्रकाशित करने वाली देदीप्यमान ज्योति को आप धारण करते हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं ज्योति प्रकाशमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३७९।।

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धों का।पूर्ण....।।३८०।।

ॐ ह्रीं पाठक-दर्शन-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सिद्ध भगवान के एक साथ सभी वस्तुओं का सामान्य रूप से अवलोकन करने वाला, दर्शन है। पूर्ण श्रुत ज्ञान...........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं दर्शन-चेतन पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८०।।

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुति में प्रगट सारा।पूर्ण....।।३८१।।

ॐ ह्रीं पाठक-ज्ञान-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानरूपी द्युति/कांति में विशेषणों से युक्त, आकार-सहित सभी प्रत्यक्ष प्रतिबिम्बित हो रहे हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान.............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं ज्ञान-चेतन पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८१।।

ज्ञान सौ जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है।पूर्ण....।।३८२।।

ॐ ह्रीं पाठक-जीव-चिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान से ही इस जीव की प्रसिद्धि है। इस ज्ञान से जीव का कथंचित् भेद, समवाय और स्वामित्व है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं जीव चिदानन्द पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८२।।

चराचर वस्तु स्वाधीना, समय एकहि में लख लीना।पूर्ण....।।३८३।।

ॐ ह्रीं पाठक-वीर्य-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी स्वाधीन चर-अचर पदार्थों को आपने अपने स्वाधीन स्वभाव से एक ही समय में देख लिया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं वीर्य-चेतन पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८३।।

सकल जीवों के सुख कारन, शरण तुमही हो अनिवारन।पूर्ण....।।३८४।।

ॐ ह्रीं पाठक-सकल-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी जीवों को सुख के कारण और निर्बाध शरण आप ही हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं सकल शरण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८४।।

तुम्हीं त्रयलोक हितकारी, अद्विती शर्ण बलिहारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३८५।।

ॐ ह्रीं पाठक-त्रैलोक्य-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों के हित-कारक, अद्वितीय शरणमय आपकी बलिहारी/अपार महिमा है। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्य शरण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८५।।

तुम्हारी शर्ण तिहुँ काला, करन जग जीव प्रतिपाला।पूर्ण....।।३८६।।

ॐ ह्रीं पाठक-त्रिकाल-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों कालों में संसारी जीवों का प्रतिपालन करने वाली आपकी ही शरण है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं त्रिकाल शरण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८६।।

शरण अनिवार सुखदाई, प्रगट सिद्धान्त में गाई।पूर्ण....।।३८७।।

ॐ ह्रीं पाठक-त्रिमंगल-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपकी शरण, बाधाओं से पूर्णतया रहित और सुख-दाई है - ऐसा जिनागम में स्पष्ट रूप से बताया गया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं त्रि-मंगल शरण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८७।।

लोक में धर्म विख्याता, सो तुमही में है सुखसाता।पूर्ण....।।३८८।।

ॐ ह्रीं पाठक-लोक-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक में प्रसिद्ध, सुख-शान्तिमय धर्म आपमें ही है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.......नमस्कार है।

ॐ ह्रीं लोक-शरण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८८।।

जोग बिन आस्रवै नाहीं, भये निर आस्रवा ताही। पूर्ण....।।३८९।।

ॐ ह्रीं पाठकास्रवावेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : योगों के विना आस्रव नहीं होने के कारण आप निरास्रवी हो गए हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान ....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आस्रव-अवेद-पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३८९।।

आस्रव कर्म का खोना, कार्य था आपना होना।पूर्ण....।।३९०।।

ॐ ह्रीं पाठकास्रव-विनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मों के आस्रवों को पूर्णतया समाप्त करने से ही अपना कार्य होता है। पूर्ण श्रुत ज्ञान ....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आस्रव-विनाशक पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९०।।

तत्त्व निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३९१।।

ॐ ह्रीं पाठक-आस्रवोपदेश-छेदकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तत्त्वों का निर्बाध उपदेश देने वाले आपने कर्मों का प्रवेश पूर्णतया समाप्त कर दिया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आस्रव-छेदक-उपदेशमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९१।।

प्रकृति सब कर्म की चूरी, भाव मल नाश दुख पूरी।पूर्ण....।।३९२।।

ॐ ह्रीं पाठक-बंध-अन्तकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दु:खों से परिपूर्ण सम्पूर्ण भाव मलों को नष्ट कर आपने कर्मों की समस्त प्रकृतिओं को समाप्त कर दिया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं बन्ध-अन्तक पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९२।।

न फिर संसार अवतारा, बन्ध-विधि अन्त कर डारा।पूर्ण....।।३९३।।

ॐ ह्रीं पाठक-बंध-मुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मों के बन्ध का पूर्णतया अन्त कर दिया होने से आपका पुन: कभी भी संसार में अवतार/जन्म नहीं होता है। पूर्ण श्रुत ज्ञान...........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं बन्ध-मुक्त पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९३।।

आस्रव कर्म दुखदाई, रुके संवर ये सुखदाई।पूर्ण....।।३९४।।

ॐ ह्रीं पाठक-संवराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दु:ख-दायक कर्मों का आस्रव, सुख-दायक संवर से रुकता है; अथवा दु:ख-दायक कर्मों का आस्रव/आना, रुकना ही सुख-दायक संवर है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.....नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संवरमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९४।।

सर्वथा जोग विनसाया, स्व-संवररूप दरशाया।पूर्ण....।।३९५।।

ॐ ह्रीं पाठक-संवर-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार का योग पूर्णतया नष्ट कर आपने अपने संवररूप को प्रदर्शित किया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.............नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संवर-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९५।।

कलुषता भाव में नाहीं, भये संवर करण ताहीं।पूर्ण....।।३९६।।

ॐ ह्रीं पाठक-संवर-करणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भावों में कलुषता नहीं होने के कारण आप संवर के साधन हुए हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं संवर-कारण पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९६।।

कुपरणति राग-रुष नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया।।३९७।।

ॐ ह्रीं पाठक-निर्जरा-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : खोटी परिणति रूप राग-द्वेष को नष्ट कर आपने निर्जरारूप प्रतिभासित किया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान रूपी बल को प्राप्त सत्यार्थ उपाध्यायों के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं निर्जरा-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९७।।

काम-देव दाह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा।पूर्ण....।।३९८।।

ॐ ह्रीं पाठक-कंदर्पच्छेदकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कामरूपी दावाग्नि से सारा संसार जल रहा है; आपने उसे पूर्णतया नष्ट कर दिया है। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कन्दर्प-छेदक पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९८।।

चहूँ विध बंध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा।पूर्ण....।।३९९।।

ॐ ह्रीं पाठक-कर्म-विस्फोटकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपने चारों प्रकार के कर्म-बन्धों को पूर्णतया नष्ट कर दिया है; इसे ही परिपूर्ण विस्फोटक कहते हैं। पूर्ण श्रुत ज्ञान.........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं कर्म-विस्फोटक पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।३९९।।

दऊ विधि कर्म का खोना, सोई है मोक्ष का होना।पूर्ण....।।४००।।

ॐ ह्रीं पाठक-मोक्षाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : दोनों प्रकार के/द्रव्य-कर्मों, भाव-कर्मों का पूर्णतया नष्ट हो जाना ही मोक्ष का होना है। पूर्ण श्रुत ज्ञान...........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मोक्ष पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४००।।

द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूँ शिवरूप सुखकारा।पूर्ण....।।४०१।।

ॐ ह्रीं पाठक-मोक्ष-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य और भाव मलों को पूर्णतया नष्ट कर देने वाले, शिवरूप, सुख-कारक आपके लिए नमस्कार है। पूर्ण श्रुत ज्ञान...........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं मोक्ष-स्वरूप पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०१।।

अरति-रति पर-निमित्त खोई, आत्म-रति है प्रगट सोई।पूर्ण....।।४०२।।

ॐ ह्रीं पाठक-आत्म-रतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य की निमित्तता में होने वाली अरति/अप्रीति, रति/प्रीति को पूर्णतया नष्ट कर आपने आत्म-रति/परिपूर्ण स्वरूप-स्थिरता प्रगट की है। पूर्ण श्रुत ज्ञान........नमस्कार है।

ॐ ह्रीं आत्म-रतिमय पाठकों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०२।।

(अब, चार सौ तीन से लेकर पाँच सौ सात पर्यन्त एक सौ पाँच छन्दों द्वारा साधु परमेष्ठी की स्तुति करते हैं। जो इसप्रकार है –)

लोलतरंग तथा बड़ी चौपाई : **अठाईस मूल सदा गुण धारी, सो सब साधु वरैं शिवनारी।**
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४०३।।

ॐ ह्रीं सर्व-साधुभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सदा अट्ठाईस मूल-गुणों के धारक सभी साधु मोक्ष रूपी स्त्री का वरण करते हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं सभी साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०३।।

मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये।साधु...।।४०४।।

ॐ ह्रीं सर्व-साधु-गुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जितने भी मूल-गुण और उत्तर-गुण कहे गए हैं; उन सभी गुणों का पालन करने वाले साधु कहलाते हैं। मोक्ष.............करें।

ॐ ह्रीं गुणमय सभी साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०४।।

साधुन के गुण साधुहि जानैं, होत गुणी गुण ही परमानैं।साधु...।।४०५।।

ॐ ह्रीं सर्व-साधु-गुण-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : गुणी, गुण के ही प्रमाण/बराबर होने से साधुओं के गुण साधु ही जानते हैं। मोक्ष.....करें।

ॐ ह्रीं गुण-स्वरूप सभी साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०५।।

नेम थकी शिववास करै जो, द्रव्य थकी शिवरूप करै जो।साधु...।।४०६।।

ॐ ह्रीं सर्व-साधु-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : द्रव्य की अपेक्षा जो सदा शिव रूप हैं; वे नियम आदि के द्वारा शिव-वास करते हैं। मोक्ष..........करें।

ॐ ह्रीं द्रव्यमय सभी साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०६।।

जीव सदा चित भाव विलासी, आपही आप सधै शिवरासी।साधु...।।४०७।।

ॐ ह्रीं सर्व-साधु-गुण-द्रव्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सदा चिद्भाव में विलास करने वाले जीव को अपने आप ही शिव-राशि सध/प्राप्त हो जाती है। मोक्ष..........करें।

ॐ ह्रीं गुण-द्रव्यमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०७।।

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभासी।साधु...।।४०८।।

ॐ ह्रीं साधु-गुण-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपनी प्रकाशित ज्ञानमई ज्योति में सभी भेद, विशेष प्रतिभासित होते हैं। मोक्ष....करें।

ॐ ह्रीं ज्ञान-गुणमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०८।।

एकहि बार लखाय अभेदा, दर्शन को सब रोग विछेदा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४०९।।

ॐ ह्रीं साधु-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार की बाधाओं से पूर्णतया रहित दर्शन से आप सभी को, एक ही साथ, अभेदरूप में देख लेते हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं दर्शनमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४०९।।

आपहि साधन साध्य तुम्हीं हो, एक अनेक अबाध तुम्हीं हो।साधु...।।४१०।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्य-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप स्वयं ही साधन, साध्य, एक, अनेक आदि बाधा-रहित भाव-सम्पन्न हैं। मोक्ष ....करें।

ॐ ह्रीं द्रव्य-भाव साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।४१०।।

चेतनता निजभाव न छारे, रूप स्पर्श आदि न धारैं।साधु...।।४११।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्य-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अपने चेतनता आदि भावों को छोड़ते नहीं हैं और रूप, स्पर्श आदि भावों को धारण नहीं करते हैं। मोक्ष........करें।

ॐ ह्रीं द्रव्य-स्वरूप सभी साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४११।।

जो उत्पाद भये इकबारा, सो निरबाध रहै अविकारा।साधु...।।४१२।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो यह एक बार (मोक्ष-दशा की प्रगटता रूप) उत्पाद हुआ है; वह बाधाओं से पूर्णतया रहित, अविकारी रूप में सदा रहता है। मोक्ष...........करें।

ॐ ह्रीं वीर्यमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१२।।

है परनाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम साधु भये शिवगामी।साधु...।।४१३।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्य-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परिणाम और परिणामी अभिन्न/अभेद/एकरूप हो जाने से आप साधु शिव-गामी हो गए हैं। मोक्ष........करें।

ॐ ह्रीं द्रव्य-पर्याय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१३।।

जो गुण वा परियाय धरो हौ, सो निज माहिं अभिन्न वरौ हौ।साधु...।।४१४।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्य-गुण-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप जो भी गुण या पर्याय धारण करते हैं; उन्हें स्वयं से अभिन्न/एकरूप ही स्वीकार करते हैं। मोक्ष......करें।

ॐ ह्रीं द्रव्य-गुण-पर्यायमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१४।।

मंगलमय तुम नाम कहावै, लेतहि नाम सु पाप नसावै।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४१५।।

ॐ ह्रीं साधु-मंगलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका नाम मंगलमय कहलाता है; जिसे लेते ही पापों का नाश हो जाता है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं मंगलमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१५।।

मंगल रूप अनूपम सोहै, ध्यान किये नित आनन्द होहै।साधु...।।४१६।।

ॐ ह्रीं साधु-मंगल-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मंगलरूप अनुपम शोभा-सम्पन्न आपका सदा ध्यान करने से सदा आनन्द होता है। मोक्ष..............करें।

ॐ ह्रीं मंगल-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१६।।

पाप मिटै तुम शरण गहै तैं, मंगल शरण कहाय लहै तैं।साधु...।।४१७।।

ॐ ह्रीं साधु-मंगल-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपकी शरण ग्रहण करने से पाप समाप्त हो जाते हैं; अत: आपकी शरण लेना मंगल कहलाता है। मोक्ष.........करें।

ॐ ह्रीं मंगल-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।४१७।।

देखत ही सब पाप नसे हैं, आनन्द मंगलरूप लसे हैं।साधु...।।४१८।।

ॐ ह्रीं साधु-मंगल-दर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपको देखते ही सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और मंगलरूप आनन्द सुशोभित होता है। मोक्ष..........करें।

ॐ ह्रीं मंगल-दर्शन-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१८।।

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटैं तिनही के।साधु...।।४१९।।

ॐ ह्रीं साधु-मंगल-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो मुनि आपको भली-भाँति जानते हैं; उन्हीं के पाप-समूह नष्ट होते हैं। मोक्ष.....करें।

ॐ ह्रीं मंगल-ज्ञानमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४१९।।

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मंगल ज्योति धरौ रवि का सा।साधु...।।४२०।।

ॐ ह्रीं साधु-ज्ञान-गुण-मंगलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञानमई गुणों की राशि-सम्पन्न आप सूर्य के समान मंगल ज्योति के धारक हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं ज्ञान-गुण-मंगल साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२०।।

मंगल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनन्ता पाप गलाया।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४२१।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्य-मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अनन्त काल के पापों को नष्ट कर आपने ही अपने मंगल वीर्य को प्रदर्शित किया है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं वीर्य-मंगल साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२१।।

वीर्य महा सुखरूप निहारा, पाप बिना नित ही अविकारा।साधु...।।४२२।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्य-मंगल-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पापों से पूर्णतया रहित, सदैव अविकारी, महा सुखरूप वीर्य को आपने प्राप्त किया है। मोक्ष.........करें।

ॐ ह्रीं वीर्य-मंगल-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२२।।

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थहिं मोक्ष लहामी।साधु...।।४२३।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्य-परम-मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मंगल वीर्य आदि महा-गुणधारी आपने अपने ही पुरुषार्थ से मोक्ष प्राप्त किया है। मोक्ष.........करें।

ॐ ह्रीं वीर्य-परम-मंगल साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२३।।

वीर्य स्वाभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा।साधु...।।४२४।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्य-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अपने स्वाभाविक परिपूर्ण वीर्य द्वारा कर्मों को नष्ट कर संसार से पार हो गए हैं। मोक्ष........करें।

ॐ ह्रीं वीर्य-द्रव्य साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२४।।

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई।साधु...।।४२५।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों के सम्पूर्ण पदार्थों को देखने वाले आपके समान उत्तम, अन्य कोई नहीं है। मोक्ष............करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२५।।

लोक सभी विधि बन्धन माहीं, तुम सम रूप धरे ते नाहीं।साधु...।।४२६।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार के कर्म-बन्धनों से सहित संसारी जीवों में से कोई भी आपके समान रूप का धारक नहीं है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-गुण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२६।।

लोकन के गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४२७।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-गुण-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसारी जीवों के गुण पाप और क्लेशमय होने से यहाँ आपके समान रूप अन्य किसी का नहीं है। मोक्ष............करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-गुण-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२७।।

लोक-अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी।साधु...।।४२८।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक और अलोक को देखने वाले आप ही प्रसिद्ध, श्रेष्ठ, अभिरामी/सुन्दर उत्तम द्रव्य हैं। मोक्ष.......करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-द्रव्य-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२८।।

लोक सभी षट्द्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया।साधु...।।४२९।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-द्रव्य-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : छह द्रव्यों से रचित इस सम्पूर्ण लोक में हमने आपको ही उत्तम द्रव्यरूप में प्राप्त किया है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-द्रव्य-स्वरूप-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४२९।।

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषैं अरु को है।साधु...।।४३०।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका चित्त ज्ञानमई होने से उत्तम रूप में सुशोभित है, लोक में ऐसा और कोई भी नहीं है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम ज्ञानमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३०।।

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा।साधु...।।४३१।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-ज्ञान-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका ज्ञान-स्वरूप स्वभाव लोक में उत्तम है - ऐसा सभी कहते हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-ज्ञान-स्वरूप-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३१।।

देखन में कछु आड़ न आवै, लोग तनी सब उत्तम गावै।साधु...।।४३२।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण लोक को देखने में आपके लिए कुछ बाधा नहीं आती है; अतः सभी आपको लोक में उत्तम कहते हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-दर्शन-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३२।।

देखन जानन भाव धरै हौ, उत्तम लोक के हेतु गहै हौ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४३३।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-ज्ञान-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप देखने-जानने रूप भाव को धारण करते हैं; अतः लोक उत्तमता के लिए आपको ग्रहण करते हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम ज्ञान-दर्शनमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३३।।

जाकर लोकशिखर पद धारा, उत्तम धर्म कह्यौ जग सारा।साधु....।।४३४।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक के शिखर पर जाकर पद धारण करने वाले आपने सम्पूर्ण जगत के लिए उत्तम धर्म कहा है। मोक्ष...............करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-धर्ममय-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३४।।

धर्म स्वरूप निजातम माँही, उत्तम लोक विषैं ठहराई।साधु....।।४३५।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-धर्म-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने आत्मा में ही धर्म-स्वरूप होने वाले को लोक में उत्तम ठहराया गया/कहा जाता है। मोक्ष.........करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-धर्म-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३५।।

अन्य सहाय न चाहत जाकौ, उत्तम लोक कहै बल ताकौ।साधु....।।४३६।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो अन्य का सहयोग नहीं चाहता है, उसे लोक में उत्तम बल कहते हैं। मोक्ष.....करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-वीर्यमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३६।।

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा।साधु....।।४३७।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-वीर्य-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्तम वीर्य स्वरूप को देखने वाले आपने सभी प्रकार की बाधाओं से पूर्णतया रहित मोक्ष का साधन किया है। मोक्ष...........करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-वीर्य-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३७।।

पूरण आत्मकला परकाशी, लोक विषैं अतिशय अविनाशी।साधु....।।४३८।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तमातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोक में आपने अतिशय, अविनाशी, परिपूर्ण आत्म-कला का प्रकाश किया है। मोक्ष...........करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम अतिशय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३८।।

राग–विरोध न चेतन माँही, ब्रम्ह कह्यौ जग उत्तम ताही।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४३९।।

ॐ ह्रीं साधु–लोकोत्तम–ब्रम्ह–ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिस चेतन/आत्मा में राग–द्वेष नहीं हैं, उसे ही लोक में उत्तम ब्रम्ह कहते हैं। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम ब्रम्ह ज्ञान साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४३९।।

ज्ञान–स्वरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रम्ह प्रकाश अटोला।साधु....।।४४०।।

ॐ ह्रीं साधु–लोकोत्तम–ब्रम्ह–ज्ञान–स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान–स्वरूप, अकम्प, स्थिर, पूर्ण ब्रम्ह का प्रकाश अन्य के सम्पर्क से रहित, पूर्णतया बाधा–रहित है। मोक्ष...........करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम ब्रम्ह–ज्ञान–स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४०।।

राग विरोध जयो शिवगामी, आतम अनातम अन्तरजामी।साधु....।।४४१।।

ॐ ह्रीं साधु–लोकोत्तम–जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा और अनात्मा को जानने वाले आप राग और द्वेष को जीतकर मोक्ष–गामी हो गए हैं। मोक्ष.......करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम–जिन–साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४१।।

भेद बिना गुण–भेद धरौ हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हौ।साधु....।।४४२।।

ॐ ह्रीं साधु–लोकोत्तम–गुण–सम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भेद के विना गुण–भेद को धारण करने वाले आप सांख्य आदि सभी कुवादिओं के पक्ष का हरण करते हैं। मोक्ष............करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम–गुण–सम्पन्न साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४२।।

साधत आतम पुरुष सखाई, उत्तम पुरुष कह्यौ जग ताई।साधु....।।४४३।।

ॐ ह्रीं साधु–लोकोत्तम–पुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप आत्मा के श्रेष्ठ पुरुषार्थ को साधते हैं; अतः लोक में उत्तम पुरुष कहलाते हैं। मोक्ष........करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम पुरुष साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४३।।

साधु समान न दीनदयाला, शरण गहै सुख होत विशाला।साधु....।।४४४।।

ॐ ह्रीं साधु–लोकोत्तम–शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : साधु परमेष्ठी के समान अन्य कोई दीन–दयालु नहीं है; उनकी शरण ग्रहण करने से विशाल/अनन्त सुख प्रगट होता है। मोक्ष ......करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम–शरण–साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।४४४।।

जे जन साधु शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।।४४५।।

ॐ ह्रीं साधु-लोकोत्तम-गुण-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिन्होंने साधु परमेष्ठी की शरण ग्रहण की है; उन्होंने कल्याणमय आनन्द आदि लब्धिओं को प्राप्त किया है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं लोकोत्तम-गुण-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४५।।

साधुन के गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे।साधु....।।४४६।।

ॐ ह्रीं साधु-गुण-द्रव्य-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : साधु परमेष्ठी के गुण-द्रव्य का चिन्तन करने से महा सुख होता है और आपकी शरण-ग्रहण करने की बुद्धि प्रगट होती है। मोक्ष को साधने वाले वे सभी साधु हमारे पापों को नष्ट करें।

ॐ ह्रीं गुण-द्रव्य-शरणमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४६।।

लावनी : **तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी।**
इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४४७।।

ॐ ह्रीं साधु-दर्शन-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका चिन्तन करने अथवा अवलोकन करने अथवा श्रद्धान करने इत्यादिरूप में आपकी शरण-ग्रहण करने से वास्तव में मोक्षरूपी रानी प्राप्त होती है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं दर्शन-शरण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४७।।

तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा।
यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा।।निजरूप....।।४४८।।

ॐ ह्रीं साधु-ज्ञान-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा का अनुभव रूप शुद्धोपयोग मन में धारण कर इस ज्ञान की शरण द्वारा आप वास्तव में विकारों से पूर्णतया रहित हो गए हैं। अपने...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्ञान-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४८।।

निज आत्मरूप में दृढ़ सरधा तुम पाई।
थिर रूप सदा निवसों शिववास कराई।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४४९।।

ॐ ह्रीं साधु-आत्म-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप अपने आत्म-स्वरूप में दृढ़ श्रद्धा कर, स्थिर हो सदा शिव-वास में निवास करते हैं। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं आत्म-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४४९।।

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा।
तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श स्वरूपा।।निजरूप....।।४५०।।

ॐ ह्रीं साधु-दर्शन-स्वरूपाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप निराकार, अभेद, छेद से रहित, अनुपम, आवरणों से रहित, द्वन्द्व से रहित आत्म-दर्शन स्वरूप हैं। अपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं दर्शन-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५०।।

तुम परम पूज्य परमेश परमपद पाया।
हम शरण गही पूजैं नित मन वच काया।।निजरूप....।।४५१।।

ॐ ह्रीं साधु-परमात्म-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परम पूज्य परमेश्वर आपने परम पद प्राप्त कर लिया है। हम शरण ग्रहण कर मन, वचन, काय से सदा आपकी पूजन करते हैं। अपने.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं परमात्म-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५१।।

तुम मन इन्द्री व्यापार जीत सु अभीता।
हम शरण गही मनु आज कर्मरिपु जीता।।निजरूप....।।४५२।।

ॐ ह्रीं साधु-निजात्म-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप मन और इन्द्रिय के व्यापार को जीतकर भय से पूर्णतया रहित हो गए हैं। हमने आपकी शरण ग्रहण की है; इससे ऐसी प्रतीति हो रही है, मानो आज कर्मरूपी शत्रु को जीत लिया है। अपने.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं निजात्म-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५२।।

भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मन में।
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिन में।।निजरूप....।।४५३।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्य-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार-वास से दुखी जो जीव मन में आपकी शरण ग्रहण करते हैं; आपने उन्हें अवलम्बन देकर, भय से मुक्त कर एक क्षण में उवार/संसार से पार कर दिया है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं वीर्य-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५३।।

दृग बोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा।
तुम बल अपार शरणागत विघनविछेदा।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४५४।।

ॐ ह्रीं साधु-वीर्यात्म-शरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सभी प्रकार के खेद से पूर्णतया रहित, अनन्त-अनन्त दर्शन-ज्ञान को धारण करने वाले आपका अपार बल शरणागत के विघ्नों का विच्छेद कर देता है। अपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं वीर्य-आत्म-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५४।।

निज ज्ञानानन्दी महा लक्षिमी सोहै।
सुर असुरन में नित परम मुनी मन मोहै।।निजरूप....।।४५५।।

ॐ ह्रीं साधु-लक्ष्मी-अलंकृताय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने ज्ञानानन्दरूपी महा-लक्ष्मी से सुशोभित परम मुनि, देवों और असुरों में/के भी मन को मुग्ध करते हैं। अपने..........करता हूँ।

ॐ ह्रीं लक्ष्मी-अलंकृत साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५५।।

भववास महा दुखरास ताहि विनशाया।
अति क्षीन लीन स्वाधीन महासुख पाया।।निजरूप....।।४५६।।

ॐ ह्रीं साधु-लक्ष्मी-प्रणीताय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : महा दु:ख की राशिमय संसार के निवास को पूर्णतया नष्ट कर, क्षायिक भाव में लीन आपने स्वाधीन महा-सुख प्राप्त कर लिया है। अपने.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं लक्ष्मी-प्रणीत साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५६।।

त्रिभुवन का ईश्वरपना तुम्हीं में पाया।
त्रिभुवन के पातिक हरौ मनू रवि-छाया।।निजरूप....।।४५७।।

ॐ ह्रीं साधु-लक्ष्मी-रूपाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों का ईश्वरपना आपमें ही पाया जाता है। जैसे सूर्य छाया का हरण कर लेता है; उसीप्रकार आप तीनों लोकों के पातकों का हरण कर लेते हैं। अपने....करता हूँ।

ॐ ह्रीं लक्ष्मी रूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५७।।

तुम काल अनंतानंत अबाध विराजौ।
परनिमित विकार निवार सु नित्य सु छाजौ।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४५८।।

ॐ ह्रीं साधु-ध्रुवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पर की निमित्तता में उत्पन्न होने वाले विकारों का निवारण कर नित्य शोभायमान आप अनन्त-अनन्त काल पर्यन्त बाधाओं से पूर्णतया रहित विराजमान रहते हैं। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं ध्रुव-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५८।।

तुम छायकलब्धि प्रभाव परम गुणधारी।
निवसौ निज-आनंद माँहि अचल अविकारी।।निजरूप....।।४५९।।

ॐ ह्रीं साधु-गुण-ध्रुवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : क्षायिक-लब्धि के प्रभाव से परम गुणों के धारक आप अचल, अविकारी, अपने आनन्द में निवास करते हैं। अपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं गुण-ध्रुव साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४५९।।

तेरम चौदम गुणथान द्रव्य है जैसो।
रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो।।निजरूप....।।४६०।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्य-गुण-ध्रुवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान में जैसा द्रव्य है; उसीप्रकार की शुद्धता अनन्त-अनन्त काल पर्यन्त रहती है। अपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं द्रव्य-गुण-ध्रुव साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६०।।

फिर जन्म-मरण नहीं होय जन्म वो पाया।
संसार-विलक्षण निज अपूर्व पद पाया।।निजरूप...।।४६१।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्योत्पादाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुन: जन्म-मरण को प्राप्त नहीं होने वाले जन्म को प्राप्त आपने संसार से विरुद्ध लक्षण वाले अपूर्व पद को प्राप्त कर लिया है। अपने...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं द्रव्य-उत्पादमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६१।।

सूक्षम अलब्धि-पर्याप्त निगोद शरीरा।
ते तुच्छ द्रव्य कर नाश भये भवतीरा।।निजरूप....।।४६२।।

ॐ ह्रीं साधु-द्रव्यव्ययाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक निगोद शरीररूप तुच्छ द्रव्य/पर्याय का नाश कर आप संसार से पार हो गए हैं। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं द्रव्य-व्यय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६२।।

रागादि परिग्रह टारि तत्त्व सरधानी।
इम साधु जीव नित साधत शिवसुखदानी।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४६३।।

ॐ ह्रीं साधु-जीवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : रागादि परिग्रह को छोड़कर तत्त्व का श्रद्धान करने वाले ये साधु शिव सुख को देने वाले अपने जीव की साधना करते हैं। अपने.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं जीव-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६३।।

स्वसंवेदन विज्ञान परम अमलाना।
तज इष्ट-अनिष्ट विकल्प जाल दुखसाना।।निजरूप....।।४६४।।

ॐ ह्रीं साधु-जीव-गुणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्व-संवेदन विज्ञानमय, परम/उत्कृष्ट, मल से पूर्णतया रहित/पवित्र आपने, दुःखों से परिपूर्ण, इष्ट-अनिष्ट के विकल्प जालों को छोड़ दिया है। अपने......करता हूँ।

ॐ ह्रीं जीव-गुण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६४।।

देखन जानन चेतन सुरूप अविकारी।
गुण-गुणी भेद में अन्य भेद व्यभिचारी।।निजरूप...।।४६५।।

ॐ ह्रीं साधु-चेतन-गुणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विकारों से पूर्णतया रहित देखने-जाननेरूप चेतन-स्वरूप के गुण-गुणी भेद में अन्य भेद व्यभिचारी/दोष पूर्ण हैं। अपने...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं चेतन-गुण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६५।।

चेतन की परिणति रहै सदा चित माहीं।
ज्यों सिंधु लहर है सिंधु और कुछ नाहीं।।निजरूप....।।४६६।।

ॐ ह्रीं साधु-चेतन-स्वरूपाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे सागर की लहर सागर ही है, उसके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है; उसीप्रकार चेतन की परिणति सदा चेतन में ही रहती है। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं चेतन-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६६।।

चेतनविलास सुखरास नित्य परकाशी।
सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४६७।।

ॐ ह्रीं साधु-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : चेतन में विलास करने वाले, सुख की राशि को सदा प्रकाशित करने वाले दिगम्बर साधु अविनाशी साधु हो गए हैं। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं चेतन साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६७।।

तुम असाधारण अरु परमात्मप्रकाशी।
नहिं अन्य जीव यह लहै गहै भववासी।।निजरूप....।।४६८।।

ॐ ह्रीं साधु-परमात्म-प्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : असाधारण आप, परमात्मा के प्रकाशक हैं। संसार-वास को ग्रहण करने वाले अन्य जीव इसे प्राप्त नहीं कर पाते हैं। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं परमात्म-प्रकाश-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६८।।

तुम मोह तिमिर बिन स्वयं सूर्य परकाशी।
गुणद्रव्यपर्य सब भिन्न-भिन्न प्रतिभासी।।निजरूप...।।४६९।।

ॐ ह्रीं साधु-ज्योति-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोहरूपी अन्धकार से पूर्णतया रहित आप, सभी द्रव्य, गुण, पर्यायों को पृथक्-पृथक् प्रतिभासित करने वाले, स्वयं प्रकाशमय सूर्य हैं। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्योति-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४६९।।

ज्यों घटपटादि दीपक की ज्योति दिखावै।
त्यों ज्ञानज्योति सब भिन्न-भिन्न दरशावै।।निजरूप....।।४७०।।

ॐ ह्रीं साधु-ज्योति-प्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे दीपक की ज्योति घट/घड़ा, पट/वस्त्र आदि को दिखाती है; उसीप्रकार आपकी ज्ञान-ज्योति सभी को पृथक्-पृथक् दिखाती है। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्योति-प्रदीप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४७०।।

सामान्यरूप अवलोकन युगपत सारा।
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अँधियारा।।निजरूप....।।४७१।।

ॐ ह्रीं साधु-दर्शन-ज्योति-प्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक साथ सभी के सामान्य रूप का अवलोकन करने वाली आपके दर्शनरूपी प्रदीप की ज्योति अन्धकार का हरण करती है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं दर्शन-ज्योति-प्रदीप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४७१।।

साकार रूप सु विशेष ज्ञानद्युति माहीं।
युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तु प्रगटाई।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४७२।।

ॐ ह्रीं साधु-ज्ञान-ज्योति-प्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपकी ज्ञान रूपी ज्योति में सभी वस्तुओं के साकार रूप विशेष एक साथ प्रगट रूप में प्रतिबिम्बित होते हैं। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं ज्ञान-ज्योति-प्रदीप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४७२।।

जे अर्थजन्य कहैं ज्ञान वो झूठे वादी।
है स्वपर-प्रकाशक आतम-ज्योति अनादी।।निजरूप...।।४७३।।

ॐ ह्रीं साधु-आत्म-ज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो पदार्थों से ज्ञान की उत्पत्ति मानते हैं, वे मिथ्यावादी हैं। ज्ञान तो अनादि काल से ही स्व-पर प्रकाशक आत्म-ज्योतिरूप है। अपने.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं आत्म-ज्योति साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४७३।।

है तारणतरण जहाजाश्रित भवसागर।
हम शरण गही पावैं शिववास उजागर।।निजरूप....।।४७४।।

ॐ ह्रीं साधु-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार-सागर से पार होना, आप तारन-तरनरूपी जहाज के आश्रित है। हमने आपकी शरण ग्रहण की है; हम प्रसिद्ध/प्रगट शिव-वास प्राप्त करें। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं शरणभूत साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४७४।।

सामान्यरूप सब साधु मुक्ति-मग साधैं।
हम पावैं निजपद नेमरूप आराधैं।।निजरूप....।।४७५।।

ॐ ह्रीं साधु-सर्व-शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सामान्य रूप से सभी साधु मोक्ष-मार्ग की साधना करते हैं। हम अपना पद प्राप्त करें - इस हेतु नियम रूप से आपकी आराधना कर रहे हैं; अथवा अपना पद प्राप्त करने-हेतु धुरी के समान आपकी, हम आराधना कर रहे हैं। अपने.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं सर्व-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥४७५॥

त्रसनाडी ही में तत्त्वज्ञान सरधानी।
ताकर साधै निश्चय पावै शिवरानी॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै॥४७६॥

ॐ ह्रीं साधु-लोक-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तत्त्व-ज्ञान और उसके श्रद्धानी त्रस नाड़ी में ही होते हैं। उस तत्त्व-ज्ञान-श्रद्धान की साधना करने पर वास्तव में मोक्षरूपी रानी की प्राप्ति होती है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं लोक-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥४७६॥

तिहुँ लोक करन हित वरतै नित उपदेशा।
हम शरण गही मेटो भववास कलेशा॥निजरूप...॥४७७॥

ॐ ह्रीं साधु-त्रिलोक-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों का हित करने के लिए आपका उपदेश सदा होता रहता है। हमने आपकी शरण ग्रहण की है। आप हमारा संसार-वास का क्लेश नष्ट कर दीजिए। अपने ....करता हूँ।

ॐ ह्रीं त्रिलोक-शरण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥४७७॥

संसार विषम दुखकार असार अपारा।
तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा॥निजरूप....॥४७८॥

ॐ ह्रीं साधु-संसार-छेदकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आत्मा का वेदन करने वाले, सुख-दायक, हित-कारक आप विषम, दु:ख-कारक, असार, अपार संसार के छेदक हैं। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं संसार-छेदक साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥४७८॥

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजैं।
तद्यपि निज सत्ता माहिं भिन्न सों साजैं॥निजरूप....॥४७९॥

ॐ ह्रीं साधु-एकत्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यद्यपि एक क्षेत्र में अभिन्न रूप से अवगाहन कर आप विराजमान हैं; तथापि पर से पूर्णतया पृथक् अपनी सत्ता में ही सुशोभित हैं। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं एकत्व-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....॥४७९॥

यद्यपि सामान्य-सरूप सु पूरणज्ञानी।
तद्यपि निज आश्रयभाव भिन्न परनामी॥

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४८०।।

ॐ ह्रीं साधु-एकत्व-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यद्यपि आप सामान्य स्वरूपमय पूर्ण ज्ञानी हैं; तथापि अपने आश्रय से उत्पन्न भावों की अपेक्षा पृथक्-पृथक् भी परिणमित होते हैं। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं एकत्व-गुण साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८०।।

है असाधारण एकत्वद्रव्य तुम माहीं।
तुम सम संसार मँझार और कोउ नाहीं।।निजरूप...।।४८१।।

ॐ ह्रीं साधु-एकत्व-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपमें द्रव्य का असाधारण एकत्व है। इस संसार में आपके समान अन्य कोई दूसरा नहीं है। अपने.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं एकत्व-द्रव्य साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८१।।

यद्यपि सब ही हो असंख्यात परदेशी।
तद्यपि निज में निजरूप स्वद्रव्य सुदेशी।।निजरूप....।।४८२।।

ॐ ह्रीं साधु-एकत्व-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यद्यपि सभी सिद्ध या जीव असंख्यात प्रदेशी हैं; तथापि अपने में, अपने रूप, अपने द्रव्यमय, अपने प्रदेश-सम्पन्न हैं। अपने............करता हूँ।

ॐ ह्रीं एकत्व-स्वरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८२।।

सामान्यरूप सब ब्रम्ह कहावै ज्ञानी।
तिनमें तुम वृषभ सु परमब्रम्ह परणामी।।निजरूप....।।४८३।।

ॐ ह्रीं साधु-पर-ब्रम्हणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सामान्य रूप से सभी ज्ञानी ब्रम्ह कहलाते हैं। परम ब्रम्ह रूप परिणमित हो जाने के कारण आप उन सभी में वृषभ/श्रेष्ठ हैं। अपने............करता हूँ।

ॐ ह्रीं परम-ब्रम्ह साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८३।।

सापेक्ष एक ही कहे सु नय विस्तारा।
तुम भाव प्रकटकर कहै सुनिश्चैकारा।।निजरूप....।।४८४।।

ॐ ह्रीं साधु-परम-स्याद्वादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : एक नय एक अपेक्षा से ही वस्तु का विस्तार पूर्वक वर्णन करता है। आपके प्रगट हुए भाव को निश्चय नय ही कहता है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं परम-स्याद्वाद साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८४।।

है ज्ञाननिमित यह वचन जाल परमाणा।
है वाचक-वाच्य संयोग ब्रम्ह कहलाना।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४८५।।

ॐ ह्रीं साधु-शुद्ध-ब्रम्हणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : ज्ञान के निमित्त से यह वचनों का समूह भी प्रमाण है और वाचक-वाच्य संयोग के कारण ब्रम्ह कहलाता है। अपने........करता हूँ।

ॐ ह्रीं शुद्ध-ब्रम्ह साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८५।।

षट्द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हौ।
तिसके तुम मूलनिधान सु परमागम हौ।।निजरूप....।।४८६।।

ॐ ह्रीं साधु-परमागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो छह द्रव्यों का निरूपण करता है, वह आगम है। आप उसके मूल निधान होने से परमागम हैं। अपने..............करता हूँ।

ॐ ह्रीं परमागम-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८६।।

तीर्थेश कहैं सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं।
तुम गुण अपार इम कह्यौ जिनागम ताही।।निजरूप....।।४८७।।

ॐ ह्रीं साधु-जिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीर्थंकर सर्वज्ञ अपनी दिव्य-ध्वनि में आपके अपार गुण कहते हैं - ऐसा जिनागम में कहा गया है। अपने.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं जिनागम-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८७।।

तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थ का वाची।
ताके प्रबोध सों हो प्रतीत मन साँची।।निजरूप....।।४८८।।

ॐ ह्रीं साधु-अनेकार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपका प्रसिद्ध नाम अनेक अर्थों का वाचक है। उसके प्रकृष्ट ज्ञान से मन में सच्ची यथार्थ/प्रतीति हो जाती है। अपने...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अनेक-अर्थ-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४८८।।

लोभादिक मेंटे बिन न शौचता होई।
है बृथा तीर्थ-स्नान करो भी कोई।। निजरूप....।।४८९।।

ॐ ह्रीं साधु-शौचाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : लोभादि नष्ट किए विना शुचिता नहीं होती है। कोई कितने भी तीर्थ स्नान करे; सब व्यर्थ हैं; उनसे शौच/पवित्रता नहीं होती है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान

धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं शौच-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८९।।

है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना।
सो शुद्धशौच गुण यही, न तन का धोना।।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।४९०।।

ॐ ह्रीं साधु-शुचित्व-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मिथ्या-मोह रूपी प्रकृष्ट बल-शाली मल को नष्ट करना ही शुद्ध शौच गुण है; शरीर को धोना/स्नान आदि शौच गुण नहीं है। अपने..............करता हूँ।

ॐ ह्रीं शुचित्व-गुण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९०।।

इकदेश कर्ममल नाशि पवित्र कहायौ।
तुम सर्व कर्ममल नाशि परमपद पायौ।।निजरूप....।।४९१।।

ॐ ह्रीं साधु-पवित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मरूपी मल का एकदेश/आंशिक नष्ट हो जाना, पवित्र कहलाता है। आपने सम्पूर्ण कर्म रूपी मल का पूर्णतया नाश कर परम पद प्राप्त कर लिया है। अपने....करता हूँ।

ॐ ह्रीं पवित्र-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९१।।

तुम रहौ बंधसों दूर एकांत सुखाई।
ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहौ तिस माहीं।।निजरूप....।।४९२।।

ॐ ह्रीं साधु-विविक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे सभी द्रव्य आकाश में रहते हुए भी वह आकाश उनसे पूर्णतया अलिप्त है; उसीप्रकार आप बन्ध से दूर/पूर्णतया रहित एकान्त/मात्र सुखी हैं। अपने.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं विविक्त-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९२।।

सब द्रव्य-भाव-नोकर्म बंध छुटकारा।
तुम शुद्ध निरंजन निजसरूप थिर पाया।।निजरूप....।।४९३।।

ॐ ह्रीं साधु-बन्ध-मुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म के बन्ध को नष्ट कर आपने शुद्ध, निरंजन, स्थिर अपना स्वरूप प्राप्त कर लिया है। अपने स्वरूप में मग्न मुनिराज ध्यान धारण किए सुशोभित हो रहे हैं। सिद्धों के समान अकम्प रूप में विराजमान उन साधु परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं बन्ध-मुक्त-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९३।।

अडिल्ल : **भावास्रव बिन अतिशय सहित अबंध हो।**
मेघपटल बिन ज्यों रविकिरण अमंद हो।।

मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हुँ कर्म रिपु को दहैं।।

ॐ ह्रीं साधु-बन्ध-प्रतिबन्धकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९४।।

अर्थ : जैसे बादलों के समूह-विना सूर्य की किरणें अमन्द/तीव्र होती हैं; उसीप्रकार भावास्रव के विना आप अतिशय-सहित/विशेष रूप से प्रकृष्ट रूप में बन्ध से पूर्णतया रहित हैं। सभी साधु मोक्ष-मार्ग या कल्याण-कारी मोक्ष रूप हैं। कर्मरूपी शत्रु को नष्ट करने के लिए हम भी उन्हें निरन्तर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं बन्ध-प्रतिबन्धक-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९४।।

निज स्वरूप में लीन परम संवर करैं।
यह कारण अनिवार कर्म आवन हरैं।।मोक्षमार्ग....।।४९५।।

ॐ ह्रीं साधु-संवर-कारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने स्वरूप में लीन हो आप परम संवर को करते हैं। यह कारण निर्बाध रूप से आते हुए कर्मों को नष्ट करता है। सभी साधु............करते हैं।

ॐ ह्रीं संवर-कारण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९५।।

पुद्गलीक परिणाम आठ विधि कर्म है।
तिनकी करत निरजरा शुद्धसु पर्म है।।मोक्षमार्ग....।।४९६।।

ॐ ह्रीं साधु-निर्जरा-द्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पौद्गलिक परिणाममय आठ प्रकार के कर्मों की निर्जरा करके आप परम शुद्ध हो गए हैं। सभी साधु.....करते हैं।

ॐ ह्रीं निर्जरा-द्रव्य-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९६।।

पर्म शुद्ध उपयोग रूप वरते जहाँ।
छिनमें नन्तानन्त कर्म खिर हैं तहाँ।।मोक्षमार्ग...।।४९७।।

ॐ ह्रीं साधु-निर्जरा-निमित्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जहाँ परम शुद्ध उपयोग रूप प्रवृत्ति होती है; वहाँ क्षण भर में अनन्तानन्त कर्म खिर जाते हैं। सभी साधु.......करते हैं।

ॐ ह्रीं निर्जरा-निमित्त-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९७।।

सकल विभाव अभाव निर्जरा करत है।
ज्यों रवि तेज प्रचंड सकल तम हरत है।।
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हुँ कर्म रिपु को दहैं।।४९८।।

ॐ ह्रीं साधु-निर्जरा-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे सूर्य का प्रचण्ड तेज सम्पूर्ण अन्धकार को समाप्त कर देता है; उसीप्रकार निर्जरा समस्त विभावों का अभाव कर देती है। सभी साधु मोक्ष-मार्ग या कल्याण-कारी मोक्ष रूप हैं। कर्मरूपी शत्रु को नष्ट करने के लिए हम भी उन्हें निरन्तर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं निर्जरा-गुणमय-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९८।।

जे संसार निमित्त ते सब दुख रूप हैं।
तुम निमित्त शिव कारण शुद्ध अनूप हैं।।मोक्षमार्ग...।।४९९।।

ॐ ह्रीं साधु-निमित्त-मुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो संसार के लिए निमित्त हैं, वे सभी दुःखरूप हैं; आप कल्याण के कारण/मोक्ष-मार्ग के शुद्ध, अनुपम निमित्त हैं। सभी साधु......करते हैं।

ॐ ह्रीं मुक्ति के निमित्त साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।४९९।।

संशयरहित सुनिश्चै सम्मतिदाय हो।
मिथ्या-भ्रम-तमनाशन सहज उपाय हो।।मोक्षमार्ग...।।५००।।

ॐ ह्रीं साधु-बोध-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आप संशय से रहित, सुनिश्चित सम्यग्ज्ञान के दायक और मिथ्या भ्रमरूपी अन्धकार को नष्ट करने के सहज उपाय हैं। सभी साधु......करते हैं।

ॐ ह्रीं बोध-धर्म-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५००।।

अति विशुद्ध निजज्ञान स्वभाव सु धरत हो।
भव्यन के संशय आदिक तम हरत हो।।मोक्षमार्ग...।।५०१।।

ॐ ह्रीं साधु-बोध-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अत्यन्त विशुद्ध अपने ज्ञान स्वभाव को धारण करने वाले आप भव्यों के संशय आदि अन्धकार का हरण करते हैं। सभी साधु........करते हैं।

ॐ ह्रीं बोध-गुण-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०१।।

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो।
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो।।मोक्षमार्ग...।।५०२।।

ॐ ह्रीं साधु-सुगति-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विनाश से रहित, अविकारी, परम शिवधाम आप अत्यन्त अभिराम सुगति को प्राप्त हैं। सभी साधु मोक्ष-मार्ग या कल्याण-कारी मोक्ष रूप हैं। कर्मरूपी शत्रु को नष्ट करने के लिए हम भी उन्हें निरन्तर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं सुगति-भाव-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०२।।

जासो परे न और जन्म वा मरण है।
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहै।।

मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हुँ कर्म रिपु को दहैं।।५०३।।

ॐ ह्रीं साधु-परम-गति-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जिसके बाद अन्य कोई जन्म-मरण नहीं है; उस उत्तम, उत्कृष्ट परम गति को आपने प्राप्त किया है। सभी साधु.........करते हैं।

ॐ ह्रीं परम-गति-भाव-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०३।।

पर निमित्त रागादिक जो परनाम हैं।
इन विभाव सों रहित साधु शुभ नाम हैं।।मोक्षमार्ग...।।५०४।।

ॐ ह्रीं साधु-विभाव-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अन्य की निमित्तता में होने वाले रागादि सभी प्रकार के सम्पूर्ण विभाव भावों से पूर्णतया रहित आपका शुभ नाम साधु है। सभी साधु......करते हैं।

ॐ ह्रीं विभाव-रहित-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०४।।

निजसुभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो।
इन्द्र-फनेन्द्र-नरेन्द्र शीश निज नाइयो।।मोक्षमार्ग...।।५०५।।

ॐ ह्रीं साधु-स्वभाव-सहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपने स्वभाव की सामर्थ्य से प्रभुता को प्राप्त आपको इन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती आदि अपना शीश झुकाते हैं। सभी साधु......करते हैं।

ॐ ह्रीं स्वभाव-सहित साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०५।।

कर्मबंध सौं रहित सोई शिवरूप हैं।
निवसैं सदा अबंध स्वशुद्ध अनूप हैं।।मोक्षमार्ग...।।५०६।।

ॐ ह्रीं साधु-मोक्ष-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जो कर्म-बन्ध से पूर्णतया रहित हैं, वे ही शिवरूप, सदा अबन्ध, अनुपम, अपने शुद्ध स्वरूप में निवास करते हैं। सभी साधु.....करते हैं।

ॐ ह्रीं मोक्ष-स्वरूप-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०६।।

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हौ।
सत्यारथ निश्चल निश्चै परमाण हौ।।
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हुँ कर्म रिपु को दहैं।।५०७।।

ॐ ह्रीं साधु-परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सम्पूर्ण द्रव्य और समस्त पर्यायों में अपने ज्ञान रूप आप सत्यार्थ, निश्चल, निश्चय

प्रमाण हैं। सभी साधु मोक्ष-मार्ग या कल्याण-कारी मोक्ष रूप हैं। कर्मरूपी शत्रु को नष्ट करने के लिए हम भी उन्हें निरन्तर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं परमानन्द-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०७।।

(अब, पाँच सौ आठ से लेकर पाँच सौ चौदह पर्यन्त सात छन्दों द्वारा प्रत्येक और सामूहिक परमेष्ठी वाचक साधुओं का यशोगान करते हैं।)

तीन लोक के पूज्य यतीजन ध्यावहीं।
कर्म-शत्रु को जीत 'अर्ह' पद पावहीं।।मोक्षमार्ग...।।५०८।।

ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्-स्वरूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : तीनों लोकों के पूज्य, यतिजनों द्वारा ध्यान किए जाने वाले, आपने कर्मरूपी शत्रुओं को जीतकर 'अर्ह' पद प्राप्त कर लिया है। सभी साधु.......करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हत्-स्वरूप-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०८।।

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो।
तीन लोक परमेष्ट परमपद पाइयो।।मोक्षमार्ग...।।५०९।।

ॐ ह्रीं साधु-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : परम इष्ट शिव को साधने से आप सिद्ध कहलाते हैं। आपने तीनों लोकों में परम परमेष्ठी पद को प्राप्त कर लिया है। सभी साधु........करते हैं।

ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठीरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५०९।।

शिव-मारग प्रकटावन कारण हो तुम्हीं।
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं।।मोक्षमार्ग...।।५१०।।

ॐ ह्रीं साधु-सूरि-प्रकाशिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : मोक्ष-मार्ग को प्रगट करने में आप ही कारण हैं। पतित भव्य जीवों का उद्धार करने, तारनेवाले आप ही हैं। सभी साधु.......करते हैं।

ॐ ह्रीं सूरिप्रकाशी/आचार्यरूप में प्रकाशित होने वाले साधुओं को नमस्कार; अर्घ्यं....।।५१०।।

स्वपर सुहित करि परम बुद्धि भरतार हो।
ध्यान धरत आनंद-बोध दातार हो।।
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हुँ कर्म रिपु को दहैं।।५११।।

ॐ ह्रीं साधु-उपाध्यायाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : अपना और दूसरे का सम्यक् हित करने वाली परम बुद्धि के स्वामी आपका

ध्यान धारण करने वाले को आप आनन्द और ज्ञान/सम्यक्रत्नत्रय के दाता हैं। सभी साधु मोक्ष-मार्ग या कल्याण-कारी मोक्ष रूप हैं। कर्मरूपी शत्रु को नष्ट करने के लिए हम भी उन्हें निरन्तर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं उपाध्याय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५११।।

पंच परम गुरु प्रकट तुम्हारौ नाम है।
भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है।।मोक्षमार्ग...।।५१२।।

ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्व-साधुभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : भेद-अभेद स्वभावरूप आत्माराम का पंच परम गुरु, प्रगट नाम है। सभी साधु....करते हैं।
ॐ ह्रीं अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधुमय साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं..।।५१२।।

लोकालोक सु व्यापक ज्ञान सुभाव तैं।
तद्यपि निजपद लीन विहीन विभाव तैं।।मोक्षमार्ग...।।५१३।।

ॐ ह्रीं साधु-आत्म-रतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : यद्यपि ज्ञान-स्वभाव की अपेक्षा आप लोक और अलोक में व्यापक हैं; तथापि सभी प्रकार के विकारी भावों से पूर्णतया रहित अपने पद में लीन हैं। सभी साधु....करते हैं।

ॐ ह्रीं आत्मा-रति-साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५१३।।

रतनत्रय निज भाव विशेष अनंत हैं।
पंच परमगुरु भये नमें नित संत हैं।।मोक्षमार्ग...।।५१४।।

ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्व-साधु-रत्नत्रयात्मकानंतगुणेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : रत्नत्रय रूप अपना विशेष भाव, अनन्त है। उससे जो पंच परम गुरु हुए हैं; उन्हें सन्त कवि नित्य नमन करते हैं। सभी साधु.....करते हैं।

ॐ ह्रीं रत्नत्रयात्मक अनन्त गुण-सम्पन्न सभी अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधुरूप साधुओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।५१४।।

पंच परम गुरु नाम विशेषण को धरैं।
तीन लोक में मंगलमय आनन्द करैं।।
पूरणकर थुतिनाम अन्त सुख कारणं।
पूजूँ हूँ युत भाव सु अर्घ उतारणं।।५१५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंचशतगुणयुत-श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : विशेषणों को धारण करने वाले पंच परम गुरुओं के नाम तीनों लोकों में मंगलमय आनन्द करते हैं। अब अन्त में सुख के कारणभूत उन नामों वाली स्तुति को समाप्त कर, भाव पूर्वक सम्यक् अर्घ्य उतारते हुए आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठिओं के लिए

अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१५।।

यहाँ 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः' इस मन्त्र का एक सौ आठ बार जाप कीजिए।

जयमाला

दोहा : **रत्नत्रय भूषित महा, पंच सुगुरु शिवकार।**
सकल सुरेन्द्र नमैं नमूँ, पाऊँ सो गुणसार।।

अर्थ : रत्नत्रय रूपी महा आभूषणों से विभूषित, कल्याण करने वाले पंच सुगुरुओं/परमेष्ठिओं को सभी सुरेन्द्र नमन करते हैं। मैं भी इन सारभूत गुणों को प्राप्त करने के लिए नमन करता हूँ।

पद्धड़ी : **जय महा मोहदल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनन्दपूर।**
जय द्वैविधि कर्म विमुक्त देव, जय निजानन्द स्वाधीन एव।।१।।

अर्थ : महा मोहरूपी सेना को समाप्त करने के लिए शूर-वीर योद्धा, निर्विकल्प आनन्द के भण्डार, द्रव्यकर्म-भावकर्म रूप दो प्रकार के कर्मों से पूर्णतया रहित, देव, निजानन्द मय स्वाधीन आपकी सदा जय हो, जय हो; आप नित्य जयवन्त वर्तें।

जय संशयादि भ्रमतम निवार, जय स्वामिभक्ति द्युतिथुति अपार।
जय युगपत सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष।।२।।

अर्थ : संशय आदि भ्रम रूप अन्धकार का निवारण करने वाले आपकी जय हो। अपार स्वामित्व, भक्ति, द्युति/कांति, स्तुति-सम्पन्न आपकी जय हो। एक साथ सभी पदार्थों को प्रत्यक्ष देखने-जानने वाले, आवरणों से पूर्णतया रहित, निर्मल, इन्द्रियातीत आपकी जय हो, जय हो।

जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वन्द्व निरामय निर-उपाध।
जय मनवचतन व्यापार नाश, जय थिरसरूप निज पद प्रकाश।।३।।

अर्थ : सुख के अगाध सागर, निर्द्वन्द्व, निरामय/निरोग, निरुपाधि; मन, वचन, काय के व्यापार का नाश करने वाले, अपने स्वरूप में स्थिर, अपने पद का प्रकाश करने वाले आपकी सदा जय हो, जय हो; आप सदा जयवन्त वर्तें।

जय पर-निमित्त सुख-दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार।
निज में पर को पर में न आप, परवेश न हो नित निर-मिलाप।।४।।

अर्थ : पर की निमित्तता वाले सुख-दुःख के निवारक, निर्लेप, आश्रय से पूर्णतया रहित, निर्विकार; अपने में दूसरों के और दूसरों में अपने प्रवेश से पूर्णतया रहित, नित्य मिलाप-रहित आपकी सदा जय हो! जय हो!!

तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार।
तुम पंच परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त।।५।।

अर्थ : परम धर्म के लिए सारभूत आराध्य, अपने समान बनाने के दुर्निवार/निर्बाध कारण, पंच परम आचार से युक्त आप सदा भक्त-समूह के लिए मुक्ति-दाता हैं।

एकादशांग सर्वांग पूर्व, स्वै अनुभव पायो फल अपूर्व।
अन्तर-बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधु पद लहाय।।६।।

अर्थ : आत्मानुभव के अपूर्व फल-स्वरूप आपने ग्यारह अंग और सर्वांगमय पूर्व का ज्ञान प्राप्त किया है। अन्तरंग और बहिरंग परिग्रह का नाशकर आपने परमार्थ साधु पद प्राप्त किया है।

हम पूजत निज उर भक्ति ठान, पावें निश्चय शिवपद महान।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय, मणि चन्द्रकांत द्रवता लहाय।।७।।

अर्थ : जैसे चन्द्रमा की किरणों के समूह की शीतलता प्राप्त कर चन्द्रकान्त मणि द्रवता को प्राप्त होती है; उसीप्रकार अपने हृदय में भक्ति धारण कर आपकी पूजन करने से हम वास्तव में महान मोक्ष-पद प्राप्त करेंगे।

घत्ता : **जय भव-भयहारं, बन्धबिडारं, सुखसारं शिवकरतारं।**
नित 'सन्त' सु ध्यावत, पाप नसावत, पावत पद निज अविकारं।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिक-पंचशत-गुणयुत-श्रीसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य-पद-प्राप्तये जयमाला-महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : संसार के भय का हरण करने वाले, बन्ध को पूर्णतया नष्ट करने वाले, सारभूत सुख और कल्याण करने वाले आपकी जय हो। सन्त कवि कहते हैं कि आपका सदा ध्यान करने से पापों का नाश होकर, विकारों से पूर्णतया रहित अपने पद की प्राप्ति होती है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; पाँच सौ बारह गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठिओं के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सोरठा : **तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव-भय नशै।**
'सन्त' सदा चित धार, शांति करौ भवतप हरौ।।

अर्थ : मल-रहित आपके अपार गुणों का अनुभव करने से संसार के भय का नाश होता है। सन्त कवि कहते हैं कि हम आपको सदा चित्त में धारण करते हैं; आप शान्ति कीजिए, संसार के संताप का हरण कर लीजिए।

इसप्रकार सप्तम पूजन समाप्त हुई।।७।।

एक हजार चौबीस गुण-सहित अष्टम पूजन

छप्पय :

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्ग्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अंत ह्रीं बेढ़्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागकौ।
ह्वै केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करौ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्ध-परमेष्ठिन्! चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-सहित-विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : जिसके मध्य में स्थित 'हकार' ऊपर-नीचे रेफ-युक्त और बिन्दु-सहित है; कर्णिका अकारादि स्वरों से सहित है; उसके चारों ओर स्थित अष्ट दल कमलाकार आठ पत्र क्रमश: वर्गों से पूरित हैं/उन पर क्रमश: अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग लिखे हैं। उन पत्रों की आठ सन्धिओं में तत्त्व अर्थात् णमो अरहंताणं तथा अग्र-भाग में/भीतरी किनारों पर श्रेष्ठ अनाहत मन्त्र ॐ बीजाक्षर शोभायमान है।

अन्त में पुन: यह सम्पूर्ण कमलाकार ह्रीं से वेष्टित है। देवों के द्वारा भी ध्याया गया यह सिद्ध-यंत्र, कर्म-शत्रु रूपी हाथिओं को नष्ट करने के लिए सिंह-समान है। पूजन के निमित्त हम यहाँ उनकी स्थापना करते हैं। सिद्धों का समूह हमारा मंगल करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा :

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव जोग।।

(इति यंत्र-स्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ : सूक्ष्म (सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व...) आदि गुणों से सहित, सभी कर्मों से रहित, निरोगी सिद्ध-समूह की स्थापना यहाँ कर रहा हूँ; जिससे उपद्रव/अशुभ योग मिट जाते हैं।

(इसप्रकार यन्त्र-स्थापना के लिए पुष्पांजलि का क्षेपण करें।)

अब अष्टक प्रारंभ होते हैं–

गीता : **निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित, सरस आनन्दधार हो।**
नाशे त्रिविधि मल सकल दुखमय, भव जलधि के पार हो।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, नीरसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने जन्म-जरा-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सरस/मनोहर, आनन्द के धारक, नित्य अपने आत्मा रूपी उत्तम तीर्थ मार्ग का आश्रय ले आप सभी प्रकार के दुःखमय, द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म रूप तीनों प्रकार के कर्म-मलों को नष्ट कर संसार-सागर से पार हो गए हैं; अत: एक हजार चौबीस गुणों के समूह को भाव पूर्वक मन में धारण कर आपके चरणों की जल से पूजन करना, उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशन-हेतु जलं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

शीतल सुरूप सुगन्ध चन्दन, एक भव तप नासही।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह, नहिं और ठौर सु बास ही।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, मलयसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : शीतल, सुरूप, सुगन्धित एक-मात्र आत्म-स्वरूपमय चन्दन ही संसार के संताप को नष्ट करता है; अत: यही भव्यरूपी भोरों के लिए प्रिय है। ऐसी सुगन्ध अन्यत्र नहीं है; अत: चंदन से..... उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;.....संसार-ताप-विनाशन-हेतु चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

अक्षय अबाधित आदि-अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो।
ज्यों तुस बिना तंदुल दिपै त्यूँ, निखिल अमल प्रभाव हो।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, अक्षतं पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।३।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे छिलके से रहित चावल, सुशोभित होता है; उसीप्रकार कभी भी नष्ट नहीं होने वाले, अबाधित, आदि-अन्त में समान, स्वच्छ स्वभावमय आप, सम्पूर्ण मल-रहित और सांसारिक भावों से रहित हैं; अत: एक हजार चौबीस गुणों के समूह को भाव पूर्वक मन में धारण कर आपके चरणों की अक्षत से पूजन करना, उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अक्षय-पद-प्राप्ति-हेतु अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कंठ पहिरैं भावसों।
जिनके मधुपमन रसिक लुब्धित, रमत नित-प्रति चावसों।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, पुष्पसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।४।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने काम-बाण-विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : आपके गुणों रूपी पुष्पों की विशाल माला, भव्य जीव भाव पूर्वक कण्ठ में पहिनते हैं। जिनके रसिक, स्वाद के लोलुप उनके मन रूपी भौंरे सदैव रुचि पूर्वक उनमें रमण करते हैं; अत: पुष्प से....... उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;......काम-बाण-विध्वंसन-हेतु पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

शुद्धात्म सरस सुपाक, मधुर, समान और न रस कहीं।
ताके हो आस्वादी सु तुम सम और संतुष्टित नहीं।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, चरुनसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : सरस, सुन्दर पाक-सहित, शुद्धात्मा के समान मधुर रस अन्यत्र कहीं नहीं है। उसके आस्वादी आपके समान और कोई भी सन्तुष्ट नहीं है; अत: नैवेद्य से..... है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;.......क्षुधा-रोग-विनाशन-हेतु नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

स्वय-पर प्रकाश स्वभावधर ज्यूँ, निज-स्वरूप सँभारते।
त्यूँ ही त्रिकाल अनंत द्रव, पर्याय प्रगट निहारते।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, दीपसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।६।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : स्व-पर-प्रकाशक स्वभाव को धारण करने वाले आप, जैसे अपने स्वरूप को सम्हालते हैं/उसमें स्थिर रहते हैं; उसीप्रकार तीनों काल संबंधी अनन्त द्रव्यों और उनकी पर्यायों को प्रत्यक्ष जानते-देखते हैं; अत: एक हजार चौबीस गुणों के समूह को भाव पूर्वक मन में धारण कर आपके चरणों की दीपक से पूजन करना, उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए मोहान्धकार-विनाशन-हेतु दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्ध्वगमन स्वभावतैं।
राजैं अचल शिव थान नित, तिंह धर्मद्रव्य अभावतैं।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, धूपसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।७।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : उत्कृष्ट/शुक्लध्यान रूपी अग्नि में आठों कर्मों को जलाकर, ऊर्ध्व गमन स्वभाव से शिव-स्थान को प्राप्त कर, आगे धर्म द्रव्य का अभाव होने से वहाँ ही नित्य, अचल रूप में आप शोभायमान हैं; अत: धूप से....... उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;........अष्टकर्म-दहन-हेतु धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा।
तीर्थेश पद को स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, फलनसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।८।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : पुण्य का सर्वोत्कृष्ट फल तीर्थंकर नामक महा-पद प्राप्त कर लेने के बाद भी उसमें रुचिवान नहीं होते हुए आपने, अपने आत्मा में ही रुचि धारण कर अव्यय, अमर, मोक्षरूपी फल प्राप्त कर लिया है; अत: फल से.......... उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार;.......मोक्ष-फल-प्राप्ति-हेतु फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

अष्टांग मूल सु विधि हरो, निज अष्ट गुण पायो सही।
अष्टार्ध गति संसार मेटि सु अचल ह्वैं अष्टम मही।।

यातैं उचित ही है जु तुम पद, अर्घसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ।।९।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : कर्मों के मूल आठ भेदों को नष्ट कर आपने-अपने आठ गुण यथार्थ रूप में प्रगट कर लिए हैं और चार गति रूप संसार को नष्ट कर आप आठवीं पृथ्वी पर अचल हो गए हैं; अत: एक हजार चौबीस गुणों के समूह को भाव पूर्वक मन में धारण कर आपके चरणों की अर्घ्य से पूजन करना, उचित ही है।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य-पद-प्राप्ति-हेतु अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव-कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण-गेह द्यो हम शुभ मती।।१०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैक-सहस्र-गुण-संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये महार्घ्यं....।

अर्थ : स्वच्छ जल, सुगन्धित चन्दन; उज्ज्वल, अखण्डित अक्षत; मँडराते हुए भ्रमर-युक्त शुभ पुष्प; उत्कृष्ट, स्वादिष्ट, विविध, बहुलतामय नैवेद्य; प्रज्वलित श्रेष्ठ दीपों का समूह; धूपायन; सरस, सुन्दर फल का अर्घ्य बनाकर समस्त कर्म-समूह से पूर्णतया रहित सिद्ध-समूह की पूजन करता हूँ।

क्रमश: होने वाले दर्शनोपयोग-ज्ञानोपयोग का नाशकर, युगपत्/एक साथ प्रवर्तित ज्ञान-दर्शनमय; जन्मादि के दु:खों को नष्टकर, असीम गुणमय, सूक्ष्म स्वरूपी, अनुपम; आठ कर्मों से रहित, त्रैलोक्य-पूज्य, अखण्ड, शिव-लक्ष्मी के स्वामी; मुनिराजों द्वारा भी ध्यान करने, सेवन करने-योग्य, अनन्त चतुष्टय के भण्डार भगवान हमें अच्छी बुद्धि/सम्यग्ज्ञान प्रदान करें।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य-पद-प्राप्ति-हेतु महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

एक हजार चौबीस गुण अर्घ्य

(इनमें भगवान के एक हजार आठ नामों की मुख्यता से उनका गुण-गान किया गया है। जो इसप्रकार हैं :-)

दोहा : **इन्द्रिय विषय-कषाय हैं, अन्तर शत्रु महान।**
तिनको जीतत जिन भये, नमूँ सिद्ध भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अर्थ : इन्द्रियों के विषय और कषाय अन्तरंग महान शत्रु हैं; उन्हें जीतने वाले जिन हुए, सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१।।

रागादिक जीते सु जिन तिनमें तुम परधान।
तातैं नाम जिनेन्द्र है, नमूँ सदा धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

अर्थ : रागादि जीतने वाले जिन में आप प्रधान हैं; अत: आपका नाम जिनेन्द्र है। सदा ध्यान धरकर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२।।

रागादिक लवलेश बिन, शुद्ध निरंजन देव।
पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-पूर्णताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

अर्थ : रागादि के लव-लेश-विना/रागादि से पूर्णतया रहित आप शुद्ध निरंजन देव हैं। आपमें परिपूर्ण जिन-पद स्वयं ही शोभायमान है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन पूर्णता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३।।

बाह्य शत्रु उपचरित को, जीतत जिन नहीं होय।
अंतर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

अर्थ : बाह्य शत्रु उपचरित/वास्तव में शत्रु नहीं होने के कारण उन्हें जीतने से जिन नहीं होते हैं; अन्दर के अति बल-शाली शत्रुओं को जीतने से ही उत्तम जिन होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४।।

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत हैं तिहुँ काल।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-प्रष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

अर्थ : इन्द्र आदि तीनों काल आपके चरणों की पूजन और सेवा करते हैं। गणधर आदि और श्रुत केवली भी जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा अपने मस्तक पर धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन प्रष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५।।

गणधरादि सत-पुरुष जे, वीतराग निरग्रंथ।
तुमकौ सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपंथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

अर्थ : वीतरागी निर्ग्रन्थ गणधर आदि सत् पुरुष आपकी सेवा करते हुए मोक्ष-मार्ग की साधना कर जिनेन्द्र हुए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६।।

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहंत।
द्रव्यभाव सर्वातमा, नमूँ सिद्ध भगवंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

अर्थ : सभी मुनि एक देश जिन हैं, सभी अरहन्त भाव जिन हैं, सभी सिद्ध आत्मा द्रव्य और भाव - दोनों की अपेक्षा जिन हैं; उन सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७।।

गणधरादि सेवत चरण, शुद्धातम लवलाय।
तीन लोक स्वामी भये, नमूँ सिद्ध अधिकाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-स्वामिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

अर्थ : शुद्धात्मा में रुचि लगाकर गणधर आदि आपके चरणों की सेवा करते हैं। अधिकता से तीन लोक के स्वामी हुए सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८।।

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान।
सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूँ, पाऊँ शिवसुख थान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

अर्थ : तीनों काल ध्यान धारण कर सुर और असुर जिनके चरणों में नमन करते हैं; उन जिनेश्वर सिद्धों के लिए मैं नमन करता हूँ; जिससे शिव-सुख का स्थान प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९।।

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

अर्थ : तीनों लोकों के तारण-तरण, तीनों लोकों में प्रसिद्ध, महा जिन-नाथ सिद्ध भगवान की सेवा करने से पापों का नाश होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०।।

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज।
नित-प्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्य समाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

अर्थ : एक-देशव्रती श्रावक और सर्व-देशव्रती मुनिराज - इन दोनों के प्रति-समय, पुण्य/पवित्रता के समूह सिद्ध भगवान महा-रक्षक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११।।

त्रिभुवन शिखा-शिरोमणी, राजत सिद्ध अनंत।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-प्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

अर्थ : मोक्ष का मार्ग प्रसिद्ध कर, तीनों लोकों के शिखर पर शिरोमणि के समान शोभायमान अनन्त सिद्धों को नमन करने से संसार-सागर का अन्त आ जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन प्रभु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२।।

जिन आज्ञा त्रिभुवन विषैं, वरतै सदा अखंड।
मिथ्यामति दुरपक्ष कौं, देत नीतिसौं दंड।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

अर्थ : तीनों लोकों में जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा सदा अखण्ड रूप में वर्तती है। वह मिथ्यामती, एकान्तवादी/दुराग्रही को नीति पूर्वक दण्ड देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३।।

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश।
राजत हैं विस्तीर्ण जिन, नमूँ हरौ भववास।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-विभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

अर्थ : प्रकाश के द्वारा परिपूर्ण तीनों लोकों-सहित अलोक में विस्तृत जिनेन्द्र भगवान सुशोभित हैं। मैं आपको नमन करता हूँ; आप मेरा संसार-वास समाप्त कर दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन विभु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४।।

आत्मज्ञ जिन नमत हैं, शुद्धातम के हेत।
स्वामी हो तिहुँ लोक के, नमूँ बसे शिवखेत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-भर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

अर्थ : आत्मा को जानने वाले, शुद्धात्मा की प्रगट-प्राप्ति-हेतु जिनेन्द्र भगवान को नमन करते हैं। तीनों लोकों के स्वामी और कल्याणमय क्षेत्र/मोक्ष में निवास करने वाले आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-भर्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५।।

मिथ्यामति को नाश करि, तत्त्वज्ञान परकास।
दीप्ति रूप रवि सम सदा, करो सदा उरवास।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व-प्रकाशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

अर्थ : मिथ्यामति/विपरीत बुद्धि को प्रकाशमान सूर्य के समान नष्ट कर, तत्त्व-ज्ञान का प्रकाश करने वाले आप सदा मेरे हृदय में निवास कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व-प्रकाश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६।।

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार।
धर्ममार्ग प्रकटात हैं, शुद्ध सुलभ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-कर्म-जिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७।।

अर्थ : कर्मरूपी शत्रुओं को जीतने वालों के सारभूत/सर्वोत्तम स्वामी आप, शुद्ध, सुलभ/ सरलता से प्राप्त होने-योग्य, सुख-कारक धर्म-मार्ग को प्रगट करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-जीत जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७।।

अमृत सम निज दृष्टिसों, यथाख्यात आचार।
तिन सबके स्वामी नमूँ, पायौ शिवपद सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८।।

अर्थ : अमृत के समान अपने आत्मा की दृष्टि से यथाख्यात चारित्र को धारण करने वाले सभी के स्वामी, सारभूत मोक्ष पद को प्राप्त आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८।।

समोसरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान।
शुद्धातम शिवपद लहौ, नमूँ कर्म की हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नायकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

अर्थ : समवसरण आदि वैभव को प्राप्त करने वालों में प्रधान, कर्मों को नष्ट कर शिव-पदमय शुद्धात्मा को प्राप्त आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९।।

सूरज सम तिहुँ लोक में, मिथ्या तिमिर निवार।
सहज दिखायो मोक्षमग, मैं बंदूँ हित धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नेत्रे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०।।

अर्थ : सूर्य के समान आपने तीनों लोकों में मिथ्यात्व रूपी अन्धकार का निवारण कर सहज/सरल मोक्ष-मार्ग दिखलाया है। अपने हित को धारण कर/हित की भावना से मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नेत्र/नेता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०।।

जन्म-मरण दुख जीतिकर, जिन 'जिन' नाम धराय।
नमूँ सिद्ध परमात्मा, भवदुख सहज नसाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-जेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

अर्थ : जन्म-मरण के दु:खों को जीतकर जिन्होंने 'जिन' नाम प्राप्त किया है; संसार के दु:खों को सहज रूप से नष्ट करने वाले उन सिद्ध परमात्मा को मेरा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-जेता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१।।

अचल अबाधित पद लहौ, निज स्वभाव दृढ़ भाय।
नमूँ सिद्ध कर-जोरिकर, भाव सहित उर लाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-परिदृढ़ाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२।।

अर्थ : दृढ़ता से अपने स्वभाव की भावना कर/उसमें स्थिर हो आपने अचल, अबाधित पद प्राप्त कर लिया है। भाव-सहित हृदय में धारण कर हाथ जोड़कर, उन सिद्ध भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं परिदृढ़ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२।।

सर्व-व्यापि परमात्मा, सर्व पूज्य विख्यात।
श्रीजिनदेव नमूँ त्रिविध, सर्व पाप नशि जात।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३।।

अर्थ : सर्व व्यापी, परमात्मा, सर्व पूज्य प्रसिद्ध श्री जिन-देव को त्रिविध/मन, वचन, काय पूर्वक नमन करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३।।

श्रीजिनेश जिनराज हो, निजस्वभाव अनिवार।
पर-निमित्त विनशै सकल बंदूँ, शिवसुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४।।

अर्थ : श्री जिनेश, जिनराज, निज स्वभाव-धारक, सभी बाधाओं से पूर्णतया रहित आपके, सभी पर-निमित्त नष्ट हो गए हैं। शिव-सुख को करने वाले आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४।।

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय।
तीन लोक पालक महा, मैं बंदूँ शिवराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-पालकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५।।

अर्थ : तीनों लोकों को सुख-दायक, परम धर्म के दाता, तीनों लोकों के महा पालक, शिवराज की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पालक-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५।।

गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार।
अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूँ करो भवपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६।।

अर्थ : महान आपकी आज्ञा को शिर पर धारण कर/स्वीकार कर गणधर आदि भी उसका सेवन करते हैं। अधिक-अधिक/विशेषता-सम्पन्न जिन-पद को प्राप्त आपके लिए नमन करता हूँ। आप हमें संसार-सागर से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६।।

परम धर्म उपदेश करि, प्रगटायो शिवराय।
श्रीजिन निज आनंद में, वर्तें बंदूँ ताय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-शासनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७।।

अर्थ : परम धर्म का उपदेश देकर, मोक्ष-दशा प्रगट कर अपने आनन्द में रमण करने वाले श्री जिन की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासन-ईश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७।।

पूरण पद पावत निपुण, सब देवन के देव।
मैं पूजूँ नित भावसौं, पाऊँ शिव स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-देवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८।।

अर्थ : अपनी निपुणता से परिपूर्ण पद प्राप्त करने वाले, सभी देवों के देव की मैं सदा भाव से पूजन करता हूँ; जिससे स्वयं ही मोक्ष-पद प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेव जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८।।

तीन लोक विख्यात हैं, तारण-तरण जिहाज।
तुम सम देव न और हैं, तुम सबके शिरताज।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाद्वितीयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९।।

अर्थ : तारण-तरण जहाज के रूप में तीनों लोकों में विख्यात, आपके समान दूसरा कोई देव नहीं है। आप सभी के सिरताज/शिरोमणि हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९।।

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय।
इन्द्रादिक थुति करि थके, मैं बंदूँ तिस पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०।।

अर्थ : भाव-सहित शिर झुकाकर तीनों लोक जिनके चरणों की पूजन करता है, जिनकी स्तुति करते हुए इन्द्रादि भी थक गए हैं; मैं उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिनाथ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०।।

तुम समान नहीं देव है, भविजन तारन हेत।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावैं शिवसुख खेत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्र-विबंधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१।।

अर्थ : भव्य जीवों को तारने में कारणभूत आपके समान और कोई देव नहीं है। आपके चरण रूपी कमलों की सेवा करने से सौभाग्य-शाली शिव-सुख का क्षेत्र/मोक्ष-पद प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विबन्ध/बन्ध से रहित जिनेन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१।।

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपति निवार।
धर्मामृत कर पोषियौ, वरते शशि उनहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-चन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२।।

अर्थ : आपने चन्द्रमा के समान संसाररूपी आताप से संतप्त जीवों की विपत्ति का निवारण कर धर्मामृत द्वारा उनका पोषण किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्र-चन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२।।

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोक के जीव।
तत्त्व मार्ग प्रकटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनादित्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३।।

अर्थ : तीनों लोकों के जीव मिथ्यात्व रूपी अन्धकार से अन्धे थे। उनके हेतु सूर्य के प्रचण्ड प्रकाश-समान आपने तत्त्व का मार्ग प्रगट किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्र-आदित्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३।।

बिन कारण तारण तरण, दीप्त रूप भगवान।
इन्द्रादिक पूजत चरण, करत कर्म की हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-दीप्त-रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४।।

अर्थ : हे दीप्त रूप भगवान! आप विना कारण ही तारण-तरण हैं। आपके चरणों की पूजन करके इन्द्र आदि अपने कर्मों का नाश कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दीप्त रूप जिनेन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४।।

जैसे कुंजर चक्र के, जाने दल को साज।
चार संघ नायक प्रभु, बंदूँ सिद्ध समाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-कुंजराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५।।

अर्थ : जैसे हाथिओं के समूह का साज-सामान, उनका स्वामी/महावत जानता है; उसीप्रकार आप चार संघ के नायक प्रभु हैं। मैं सिद्ध-समूह की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-कुंजर/जिनों में श्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५।।

दीप्त रूप तिहुँ लोक में, है प्रचण्ड प्रताप।
भक्तन कौं नित देत हैं, भोगैं शिवसुख आप।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनार्काय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६।।

अर्थ : तीनों लोकों में आपका प्रचण्ड प्रताप दीप्त रूप है। आप भक्तों को भी सदा शिव-सुख देते हैं और स्वयं भी उसी शिव-सुख का भोग करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-अर्क/सूर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६।।

रत्नत्रय मग साध कर, सिद्ध भये भगवान।
पूरण निजसुख धरत हैं, निज में निज परिणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-धौर्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७।।

अर्थ : रत्नत्रय-मार्ग की साधना कर आप सिद्ध भगवान हो गए हैं। अपने में स्वयं से परिणमित आप परिपूर्ण आत्म-सुख को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन धौर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७।।

तीन लोक के नाथ हो, ज्यूँ तारागण सूर्य।
सिवसुख पायो परमपद, बंदों श्रीजिन सूर्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-धूर्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८।।

अर्थ : जैसे तारा-गणों का स्वामी सूर्य है; उसीप्रकार आप तीन लोक के नाथ हैं। शिव-सुखमय परम-पद को प्राप्त श्रेष्ठ श्री जिन के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन धूर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८।।

पराधीन बिन परमपद, तुम बिन लहै न और।
उत्तमातमा मैं नमूँ, तीन लोक शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९।।

अर्थ : पराधीनता से पूर्णतया रहित परम पद आपके अतिरिक्त अन्य कोई प्राप्त नहीं कर पाता है। तीनों लोकों के शिरोमणि उत्तम आत्मा के लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९।।

जहाँ न दु:ख को लेश है, तहाँ न परसों कार।
तुम बिन कहूँ न श्रेष्ठता, तीन लोक दुखटार।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-दु:ख-निवारकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०।।

अर्थ : जहाँ दु:ख का लेश भी नहीं होता है; वहाँ अन्य से कुछ कार्य नहीं होता है। तीनों लोकों के दु:खों को नष्ट करने वाले आपके अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी श्रेष्ठता नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक दु:ख-निवारक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०।।

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज।
परमश्रेय परमातमा, बंदूँ शिवसुख साज।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१।।

अर्थ : अपनी परिपूर्ण लक्ष्मी को प्राप्त, श्री जिनराज, परम श्रेय/उत्कृष्ट कल्याणरूप, शिव-सुख से सुसज्जित परमात्मा की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१।।

निरभय हो निर आश्रयी, नि:संगी निर्बंध।
निजसाधन साधक सुगुन, परसों नहिं संबंध।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नि:संगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२।।

अर्थ : निर्भय, पर के आश्रय से पूर्णतया रहित, नि:संगी/अपरिग्रही/परिग्रह से पूर्णतया रहित, निर्बन्ध, अपने साधन से सुगुणों की साधना करने वाले आपका पर से कुछ भी संबंध नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं नि:संग जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२।।

अन्तराय विधि नाश के, निजानन्द भयो प्राप्त।
'सन्त' नमैं कर जोरयुत, भव-दुख करो समाप्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोद्वाहाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

अर्थ : अन्तराय कर्म का नाश हो आपको निजानन्द प्राप्त हो गया है। 'सन्त' कवि हाथ जोड़कर नमन करते हुए कहते हैं कि आप मेरे संसार के दु:ख समाप्त कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं उद्वाह जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३।।

शिवमारग में धरत हौ, जग मारगतें काढ़।
धर्मधुरन्धर मैं नमूँ, पाऊँ भव वन बाढ़।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-वृषभाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४।।

अर्थ : संसार के मार्ग से निकालकर मोक्ष के मार्ग में रखने वाले धर्म-धुरन्धर के लिए मैं नमन करता हूँ; जिससे मैं संसार रूपी वन का किनारा प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन वृषभ/श्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४।।

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार।
रहो सुथिर निजधर्म में, मैं बंदूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-धर्माय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५।।

अर्थ : धर्मनाथ, धर्मेश, धर्म के कर्ता, सुख-कारक निज-धर्म में सुस्थिर रहने वाले आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥४५॥

जगत जीव विधि धूलि सौं, लिप्त न लहैं प्रभाव।
रत्नराशि सम तुम दिपौ, निर्मल सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-रत्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६॥

अर्थ : संसारी जीव कर्मरूपी धूल से लिप्त होने के कारण अपना प्रभाव प्राप्त नहीं कर पाता है। आप अपने सहज निर्मल स्वभाव के कारण रत्न-राशि के समान देदीप्यमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-रत्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥४६॥

तीन लोक के शिखर पर, राजत हौ विख्यात।
तुम सम और न जगत में, बड़ा कोई दिखलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४७॥

अर्थ : तीन लोक के शिखर पर शोभायमान, विख्यात आपके समान जगत में अन्य कोई बड़ा दिखाई नहीं देता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥४७॥

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोह शत्रु को जीत।
लहौ जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोक के मीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४८॥

अर्थ : इन्द्रिय और मन के विविध व्यापार मय मोहरूपी शत्रु को जीतकर, तीनों लोकों के हितकर जिनेश्वर ने सिद्ध पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥४८॥

चारि घातिया कर्म कौ, नाश कियौ जिनराय।
घाति-अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९॥

अर्थ : चार घाति-कर्म का नाश कर जिनराज हो आप घाति-अघाति कर्मों का विनाश कर सुख-दायक जिनाग्र हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥४९॥

निज पौरुषकर साधियौ, निज पुरुषारथ सार।
अन्य सहाय नहीं चहैं, निज सुवीर्य अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-शार्दूलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५०॥

अर्थ : अपने पौरुष से अपने पुरुषार्थ की साधना करने वाले आप अपार/अनन्त सुवीर्य-सम्पन्न सिद्ध होने से अन्य की सहायता नहीं चाहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-शार्दूल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०।।

इन्द्रादिक निज ध्यावते, तुम सम और न कोय।
तीन लोक चूड़ामणि, नमूँ सिद्धसुख होय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-पुंगवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१।।

अर्थ : तीनों लोकों के चूड़ामणि आपके समान अन्य कोई नहीं होने के कारण इन्द्रादि भी आपका ध्यान करते हैं। आपको नमन करने से सिद्ध-सुख होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-पुंगव/सर्व-श्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१।।

निजानन्द पद को लहौ अवरोधी मल नास।
समकित बिन तिहुँलोक में, और नहीं सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-प्रवेकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२।।

अर्थ : बाधा उत्पन्न करने वाले मल का नाशकर आपने निजानन्द पद को प्राप्त कर लिया है। तीनों लोकों में सम्यक्त्व के विना अन्य कोई सुख की राशि नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-प्रवेक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२।।

जगत शत्रु कौं जीति के, कल्पित जिन कहलाय।
मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-हंसाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३।।

अर्थ : जगत के (लौकिक) शत्रुओं को जीतकर कल्पित जिन कहलाते हैं और मोहरूपी शत्रुओं को जीतने वाले सिद्ध, सुखमय उत्तम जिन कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-हंस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३।।

द्रव्य-भाव दोनों नहीं, उत्तम शिवसुख लीन।
मनवचतन करि मैं नमूँ, निज समभाव जु कीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तम-सुख-धारकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४।।

अर्थ : आपमें द्रव्य और भाव - दोनों प्रकार का संसार नहीं है। उत्तम शिव-सुख में लीन आपके लिए; अपना सम-भाव करने-हेतु मन, वचन, काय पूर्वक मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तम सुख-धारक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४।।

चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय।
तारण तरण जहान के, मैं बंदूँ शिवराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नायकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५।।

अर्थ : चार संघ के नायक, प्रभु, मोक्ष-मार्ग को सुलभ/सरल करने वाले, संसार के तारण-तरण, शिवराज की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-नायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५।।

स्वयंबुद्ध शिवमार्ग में, आप चले अनिवार।
भविजन अग्रेश्वर भये, बंदूँ भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६।।

अर्थ : स्वयं ही बोध को प्राप्त आप निर्बाध रूप से मोक्ष-मार्ग में चलते हुए भव्य-जनों के अग्रेश्वर/प्रधान स्वामी हो गए हैं। भक्ति और विचार पूर्वक मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रिम-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६।।

शिवमारग के चिन्ह हो, सुखसागर की पाल।
शिवपुर के तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-ग्रामण्यै नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७।।

अर्थ : मोक्षमार्ग के चिन्ह, सुख-सागर के भण्डार, मोक्षरूपी नगर के स्वामी आप धर्म-नगर के प्रतिपालक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ग्रामणि/अनेक विशेषताओं के समूह जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७।।

तुम सम और न जगत में, उत्तम श्रेष्ठ कहाय।
आप तिरे पर तारते, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-सत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८।।

अर्थ : जगत में आपके समान अन्य कोई भी ऐसा नहीं है; जिसे उत्तम, श्रेष्ठ कह सकें। संसार-सागर से स्वयं तिरने वाले/पार हुए और अन्य को भी पार करने वाले आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्तम/सर्व-श्रेष्ठ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८।।

स्व-पर कल्याणक हो प्रभू, पंचकल्याणक ईश।
श्रीपति शिव-शंकर नमूँ, चरणाम्बुज धरि शीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-प्रभवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९।।

अर्थ : अपना और दूसरों का कल्याण करने वाले, प्रभु, पंच कल्याणकों के स्वामी, श्रीपति/मोक्ष-लक्ष्मी के नाथ, शिव-शंकर/कल्याण और सुख करने वाले आपके चरण रूपी कमलों पर हम शिर रखकर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभव/प्रकृष्ट रूप से प्रगट हुए जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९।।

मोह महाबल दलमलौ, विजय लक्ष्मीनाथ।
परमज्योति शिवपद लहौ, चरण नमूँ धरि माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०।।

अर्थ : मोहरूपी महा बलवान के समूह को समाप्त कर विजय-लक्ष्मी के स्वामी आपने परम ज्योति स्वरूप मोक्षपद प्राप्त कर लिया है। मैं आपके चरणों में शिर रखकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०।।

चहुँ गति दु:ख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ।
नमूँ सिद्ध कर-जोरिकै, पाऊँ मैं सर्वार्थ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-चतुर्गति-दु:खान्तकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१।।

अर्थ : चारों गतिओं के दु:खों को नष्ट कर अपना पुरुषार्थ पूर्ण करने वाले सिद्ध भगवान को हाथ जोड़कर नमन करता हूँ; जिससे मैं सर्व अर्थ/सभी प्रयोजनों/सम्पूर्ण पदार्थ/मोक्ष को प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्गति दु:खों को नष्ट करने वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१।।

जीते कर्म निकृष्ट को, श्रेष्ठ भये जिनदेव।
तुम सम और न जगत में, बंदूँ मैं तिन भेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-श्रेष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२।।

अर्थ : निष्कृष्ट कर्मों को जीतकर श्रेष्ठ हुए जिन-देव के समान जगत में कोई दूसरा नहीं है। मैं उन्हें भाव-सहित नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२।।

आप मोक्षमग साधिओ, औरन सुलभ कराय।
आदि पुरुष तुम जगत में, धर्म रीत वरताय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-ज्येष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३।।

अर्थ : स्वयं मोक्ष-मार्ग को साधकर अन्य के लिए उसे सरल करने वाले आप; जगत में धर्म की रीति बताने वाले आदि पुरुष हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३।।

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय।
मैं बंदूँ तिन भक्ति करि, सिद्ध कहावै सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-सुखाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४।।

अर्थ : मोक्षरूपी मुख्य पुरुषार्थ की साधना कर, सुखी हो सिद्ध कहलाने वाले आपकी भक्ति पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सुखी जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४।।

सूरज सम अग्रेश हो, निज-पर-भासनहार।
आप तिरे भवि तारियौ, बंदूँ योग सँभार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५।।

अर्थ : स्वयं को और दूसरों को प्रकाशित करने के लिए आप सूर्य के समान अग्रेश/प्रमुख हैं। आप संसार से स्वयं पार हो गए हैं और अन्य भव्य जीवों को भी पार करते हैं। योग/मन, वचन, काय को सम्हालकर मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्र/प्रमुख जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५।।

रागादिक रिपु जीत तुम, श्रीजिन नाम धराय।
सिद्ध भये कर जोरिकैं, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६।।

अर्थ : रागादि शत्रुओं को जीतकर, 'श्री जिन' नाम को प्राप्त कर सिद्ध हुए आपके चरणों की हाथ जोड़कर वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६।।

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण।
उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्म को चूर्ण।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७।।

अर्थ : विषय-कषाय से पूर्णतया रहित, दर्शन-ज्ञान से परिपूर्ण उत्तम जिन आपने कर्मों को समाप्त कर शिव-पद प्राप्त कर लिया है। आपके लिए हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७।।

चहुँ प्रकार के देवता, नित्य नमावत शीश।
तुम देवन के देव हो, नमूँ सिद्ध जगदीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-वृन्दारकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८।।

अर्थ : चारों प्रकार के/भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव आपको सदा शीश झुकाते हैं। देवों के देव, सिद्ध, जगदीश आपके लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं वृन्दारक/समूह में श्रेष्ठ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८।।

जो निज सुख होने न दे, सो सत रिपु है जोय।
ऐसे रिपु कौं जीत कैं, नमूँ सिद्ध जो होय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अरि-जिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९।।

अर्थ : जो अपना आत्मीक सुख नहीं होने देता है, उसे ही वास्तविक शत्रु समझना चाहिए। उस शत्रु को जीतकर सिद्ध हुए आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अरि-जित/शत्रु को जीतने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९।।

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात।
जामें विघ्न न लेश है, नमूँ सिद्ध कहलात।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्नाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०।।

अर्थ : अविनाशी, विकारों से पूर्णतया रहित, अचल रूप में प्रसिद्ध, सभी प्रकार के विघ्नों से पूर्णतया रहित सिद्ध कहलाने वाले भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्न/विघ्न-रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०।।

राग-द्वेष मद-मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय।
शुद्ध निरंजन सिद्ध हैं, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विरजसे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१।।

अर्थ : राग, द्वेष, मद, मोह और ज्ञानावरणादि कर्मों को नष्ट कर शुद्ध, निरंजन, सिद्ध हुए भगवान के चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विरजस/द्रव्यकर्म, भावकर्म रूपी रज से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१।।

मत्सर भाव दुखी करै, निजानन्द कौं घात।
सो तुम नाशौ छिनक में, शम सुखिया कहलात।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्त-मत्सराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१।।

अर्थ : मत्सर भाव, अपने आनन्द का घात कर दु:खी करता है। आपने उसे क्षण मात्र में नष्ट कर दिया है; अत: आप शम, सुखी कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मत्सर को नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२।।

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहिं जाय।
बचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३।।

अर्थ : पर-कृत भावों से पूर्णतया रहित आपका भेद/रहस्य कहना, सम्भव नहीं है। महा सुख-दायक सिद्ध भगवान की शुद्धता वचन-अगोचर है।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३।।

रागादिक मल बिन दिपौ, शुद्ध सुवर्ण समान।
शुद्ध निरंजन पद लियौ, नमूँ चरण धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरंजनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४।।

अर्थ : रागादि मल के विना आप शुद्ध सुवर्ण के समान देदीप्यमान हैं। आपने शुद्ध निरंजन पद प्राप्त कर लिया है। आपके चरणों का ध्यान कर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निरंजन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४।।

द्रव्य-भाव दो विधि करम, नाश भये शिवराय।
बन्दूँ मनवचकाय करि, भविजन को सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-विनाशकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५।।

अर्थ : द्रव्य और भाव - दोनों कर्मों का नाश कर आप शिव के स्वामी हो गए हैं। भव्य-जनों को सुख-दायक आपकी मन, वचन, काय पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मघ्न/कर्मों को नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५।।

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म।
तिनकौं अंत खिपाइकैं, लियौ मोक्षपद पर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं घाति-कर्मान्तकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६।।

अर्थ : ज्ञानावरण आदि चार घाति कर्मों का अन्तिम रूप में क्षयकर आपने मोक्षरूपी परम पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं घाति-कर्म को अन्तक/नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६।।

ज्ञानावरणी पटल बिन, ज्ञान दीप्त परकाश।
शुद्ध सिद्ध परमातमा, बंदित भवदुख नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-दीप्तये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७।।

अर्थ : ज्ञानावरण कर्मरूपी पटल के विना प्रकाशमान ज्ञान दीप्ति वाले, शुद्ध सिद्ध परमात्मा की वन्दना करने से संसार के दु:खों का नाश हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जिन-दीप्ति/प्रकाशमान जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७।।

कर्म रुलावैं आत्मा, रागादिक उपजाय।
तिनकौ मर्म विनाशकैं, सिद्ध भये सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-मर्म-भिदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८।।

अर्थ : कर्म, रागादि को उत्पन्न कर आत्मा को रुलाता/कष्ट देता है। आप उनके मर्म/कर्म-बन्ध के मूल कारण मिथ्यात्वादि का विनाश कर सुख-दायक सिद्ध हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-मर्म का भेदन करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८।।

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात।
मुनि मन मोहन रूप है, नमूँ जोरि जुग हाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनुदयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९।।

अर्थ : जिनके पाप का समूह लेश मात्र भी नहीं है, उन शुद्ध-अशुद्ध रूप में प्रसिद्ध मुनिओं के मन को मोहित करने वाले रूप-सम्पन्न आपको दोनों हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनुदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९।।

(इस अस्सीवें पद्य से सौवें पद्य पर्यन्त २१ पद्यों द्वारा अठारह दोषों के अभाव की प्रधानता से सिद्ध भगवान का गुणगान किया जा रहा है।)

राग नहीं थुतिकारसौं, निंदकसौं, नहीं द्वेष।
शम सुखिया आनन्दघन, बंदूँ सिद्ध हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं वीतरागाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०।।

अर्थ : स्तुति करने वाले से राग और निन्दा करने वाले से द्वेष आपको नहीं है। सदा शम, सुख को भोगने वाले, आनन्द-घन सिद्ध भगवान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं वीतराग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०।।

क्षुधा वेदनी नाशकर, स्व-सुख भुंजनहार।
निजानन्द संतुष्ट हैं, बंदूँ भाव विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१।।

अर्थ : क्षुधा की वेदना का नाशकर अपने सुख को भोगने वाले, अपने आनन्द में ही सन्तुष्ट भगवान की, भावों का विचार कर वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुधा/क्षुधा से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१।।

एक दृष्टि सबको लखैं, इष्ट-अनिष्ट न कोय।
द्वेष अंश व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२।।

अर्थ : सभी को एक समान दृष्टि से देखने वाले आपको कोई इष्ट-अनिष्ट नहीं होने से आपमें द्वेष का अंश भी नहीं है। यही सिद्ध कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेष/द्वेष से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२।।

भवसागर के तीर हैं, शिवपुर के हैं राहि।
मिथ्यातम-हर सूर्य हैं, मैं बंदूँ हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३।।

अर्थ : संसार-सागर के किनारे, मोक्ष-नगर के राही, मिथ्यात्वरूपी अन्धकार का हरण करने के लिए सूर्य के समान आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३।।

जगजन में यह दोष है, सुखी-दुखी बहु भेव।
ते सब दोष निबारियौ, उत्तम हो स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४।।

अर्थ : अनेक प्रकार से सुखी-दु:खी होने वाले संसारी जीवों में अनेकों दोष हैं। उन सभी दोषों का निवारण कर आप स्वयं ही उत्तम हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४।।

जनम मरण यह रोग है, तिनकौ कठिन इलाज।
परमौषध यह रोग की, बंदूँ मेटन काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं अगदाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५।।

अर्थ : जन्म-मरण रूपी रोग का उपचार कठिन है। आप उन रोगों को नष्ट करने की परमौषधि हैं। उन्हें मिटाने के लिए मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अगद/रोग से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५।।

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सौं होय।
सो निज मोह विनाशियौ, नमूँ सिद्ध है सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्वाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६।।

अर्थ : राग, ममता आदि मोहनीय कर्म के उदय में होते हैं। अपना मोह नष्ट कर हुए सिद्ध भगवान को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्व के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६।।

तृष्णा दुख कौ मूल है, सुखी भये तिस नाश।
मनवचतन करि मैं नमूँ, है आनन्दविलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-तृष्णाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७।।

अर्थ : दु:ख की मूल/जड़ तृष्णा को नष्ट कर सुखी हो आनन्द में विलास करने वाले आपको मैं मन, वचन, काय पूर्वक नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-तृष्णा/तृष्णा से पूर्णतया रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७।।

अन्तर बाह्य निरिच्छ हैं, एकी रूप अनूप।
निस्पृह परमेश्वर नमूँ, निजानंद शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं असंगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८।।

अर्थ : अन्तरंग-बहिरंग - सभी प्रकार की इच्छाओं से पूर्णतया रहित, एक रूप, अनुपम, निस्पृह, निजानन्दमय मोक्ष के राजा, परमेश्वर के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं असंग/परिग्रह से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८।।

क्षायिक समकित को धरैं, निर्भय थिरता रूप।
निजानंदसौं नहिं चिगैं, मैं बंदूँ शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९।।

अर्थ : निर्भय, स्थिरता रूप क्षायिक सम्यक्त्व को धारण करने वाले, निजानन्द से च्युत नहीं होने वाले शिव के स्वामी की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९।।

स्वप्न प्रमादी जीव के, अल्प-शक्ति सौं होय।
निज बल अतुल महा धरैं, सिद्ध कहावैं सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्वप्नाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०।।

अर्थ : प्रमादी जीव को अल्प शक्ति के कारण स्वप्न आते हैं। अपने महान अतुल/अनन्त बल को धारण करने वाले आप सिद्ध कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्वप्न/स्वप्न से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०।।

दर्श ज्ञान सुख भोगतैं, खेद न रंचक होय।
सो अनंत बल के धनी, सिद्ध नमामी सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं नि:श्रमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१।।

अर्थ : दर्शन, ज्ञान, सुख का भोग करते हुए आपको रंच-मात्र खेद नहीं है। उन अनन्त बल के धनी सिद्ध भगवान को हमारा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं नि:श्रम/श्रम से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१।।

युगपत सब प्रापत भये, जानत हैं सब भेद।
संशय बिन आश्चर्य नहिं, नमूँ सिद्ध स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-विस्मयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२।।

अर्थ : एक साथ सभी कुछ प्राप्त हो गया होने से सभी भेदों/रहस्यों को जानने वाले, संशय से रहित, आश्चर्य से मुक्त हो स्वयं ही सिद्ध हुए भगवान को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत विस्मय/आश्चर्य से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२।।

सिद्ध सनातन कालतैं, जग में हैं परसिद्ध।
तथा जन्म फिर नहीं धरैं, नमूँ जोर कर सिद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३।।

अर्थ : अनादि काल से जगत में प्रसिद्ध सिद्ध भगवान इस संसार में पुन: जन्म धारण नहीं करते हैं; उन्हें हाथ जोड़ कर नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मा/जन्म से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३।।

भ्रम बिन, ज्ञान प्रकाश में, भासैं जीव-अजीव।
संशय बिन निश्चल सुखी, बंदूँ सिद्ध सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं नि:संशयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४।।

अर्थ : भ्रम से पूर्णतया रहित आपके ज्ञान प्रकाश में जीव-अजीव भासित होने पर भी आप संशय के विना निश्चल सुखी हैं। ऐसे सिद्ध भगवान की सदैव वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं नि:संशय/संशय से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४।।

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार।
जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूँ सिद्ध अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५।।

अर्थ : परिपूर्ण परमात्मा, सदैव एक समान रहने वाले, वृद्ध अवस्था से पूर्णतया रहित, अविकारी सिद्ध भगवान के लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जरा/बुढ़ापा से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५।।

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नहीं होय।
मरण रहित बंदूँ सदा, देउ अमर पद सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६।।

अर्थ : परिपूर्ण परमात्मा, कभी भी अन्त/समाप्त नहीं होने वाले, मरण से रहित सिद्ध भगवान की सदा वन्दना करते हैं। वे हमें भी वही अमर पद प्रदान करें।

ॐ ह्रीं अर्हं अमर/मरण से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६।।

निजानन्द के भोग में, कभी न आरत आय।
यातैं तुम अरतीत हो, बंदूँ सिद्ध सुहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अरत्यतीताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७।।

अर्थ : अपने आनन्द के भोग में आपको कभी भी अरति नहीं होती है; अथवा आर्तध्यान नहीं होता है; अत: आप उससे पूर्णतया रहित हैं। इन रुचिकर सिद्ध भगवान की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अरति/अप्रीति से अतीत/पूर्णतया रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७।।

होत नहीं सोच न कभूँ, ज्ञान धरैं परतक्ष।
नमूँ सिद्ध परमातमा, पाऊँ ज्ञान अलक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं निश्चिंताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८।।

अर्थ : प्रत्यक्ष ज्ञान को धारण करने वाले आपको कभी भी किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं होती है। अतीन्द्रिय ज्ञान प्राप्त करने के लिए मैं सिद्ध परमात्मा को नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निश्चिन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८।।

जानत हैं सब ज्ञेय को, पर ज्ञेयनतैं भिन्न।
यातैं निर्विषयी कहे, लेश न भोगैं अन्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९।।

अर्थ : सभी ज्ञेयों को जानते हुए भी आप उन ज्ञेयों से पूर्णतया पृथक् हैं; अत: निर्विषयी कहलाते हैं। आप अन्य का रंचमात्र भी भोग नहीं करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९।।

अहंकार आदि त्रिषट्, तुम पद निवसैं नाहिं।
सिद्ध भये परमात्मा, मैं बन्दूँ हूँ ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिषष्ठि-जिते नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००।।

अर्थ : अहंकार आदि त्रेषठ दोष/कर्म प्रकृतिआँ/अठारह दोष आपके पद में निवास नहीं करते हैं। सकल परमात्मा सिद्ध हो गए हैं। मैं उनकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अठारह दोषों या त्रेषठ प्रकृतिओं से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००।।

(इस १०१ वें पद्य से १२४ वें पद्य पर्यन्त २४ पद्यों द्वारा अनन्त चतुष्टय की प्रधानता से सिद्ध भगवान की स्तुति की गई है।)

जेते गुण परजाय हैं, द्रव्य अनन्त सुकाल।
तिनकौं तुम जानौ प्रभु, बंदूँ मैं नमि भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१।।

अर्थ : अनन्त द्रव्यों के त्रिकालवर्ती जितने जो भी गुण-पर्यायें हैं; हे प्रभु! आप उन्हें जानते हैं। मैं मस्तक झुकाकर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१।।

ज्ञान-आरसी तुम विषैं, झलकें ज्ञेय अनन्त।
सिद्ध भये तिनकौं नमैं, तीनों काल सु संत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-विदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२।।

अर्थ : आपके ज्ञान रूपी दर्पण में अनन्त ज्ञेय झलकते हैं। आप सिद्ध हो गए हैं। सन्त कवि आपको तीनों काल/सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-विद/सभी जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२।।

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान।
नमूँ सिद्ध परमातमा, तीनों योग प्रधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-दर्शिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०३।।

अर्थ : समदर्शी भगवान के दर्शन में चक्षु, अचक्षु आदि भेद नहीं हैं। तीनों योगों की प्रधानता पूर्वक मैं सिद्ध परमात्मा को नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-दर्शी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०३।।

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मँझार।
सर्वालोकी सिद्ध हैं, नमूँ त्रियोग सम्हार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०४।।

अर्थ : तीनों कालों संबंधी कुछ भी देखना, शेष नहीं होने के कारण आप सर्व आलोकी सिद्ध हैं। तीनों योगों को सम्हालकर आपके लिए नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व अवलोक/सभी कुछ देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०४।।

तुम सम प्राक्रम और सब, जगवासी में नाहिं।
निज बल शिवपद साधियौ, मैं बंदूँ हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-विक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०५।।

अर्थ : संसार में रहने वाले सभी जीवों में आपके समान पराक्रम नहीं है। अपने बल से शिव-पद की साधना करने वाले आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त विक्रम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०५।।

निज सुख भोगत नहिं चिगैं, वीर्य अनन्त धराय।
तुम अनन्त बल के धनी, बंदूँ मनवचकाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०६।।

अर्थ : अनन्त वीर्य के धारक होने से आप अपने सुख को भोगते हुए विचलित नहीं होते हैं। अनन्त बल के धनी आपकी मन, वचन, काय पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०६।।

सुखाभास जग जीव के, पर-निमित्तसैं होय।
निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावै सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-सुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०७।।

अर्थ : संसारी जीवों को पर के निमित्त से सुखाभास होता है। अपने आश्रय से पूर्ण सुखी होने वाले ही सिद्ध कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त सुख के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०७।।

निज-सुख में सुख होत है, पर-सुख में सुख नाहिं।
सो तुम निज-सुख के धनी, मैं बंदूँ हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-सौख्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०८।।

अर्थ : अपने सुख से ही सुख होता है, दूसरों के सुख से सुख नहीं होता है। अपने सुख के धनी आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त सौख्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०८।।

तीन लोक तिहुँ काल के, गुण-पर्यय कछु नाहिं।
जाकौं तुम जानौ नहीं, ज्ञान-भानु के माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०९।।

अर्थ : तीनों लोकों और तीनों कालों के गुण-पर्यायों में से ऐसे कुछ भी नहीं हैं, जिन्हें आप ज्ञान रूपी सूर्य के द्वारा जानते नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०९।।

द्रव्य तथा गुण पर्य को, देखैं एकीबार।
विश्वदर्श तुम नाम है, बंदों भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-दर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११०।।

अर्थ : द्रव्य, गुण और पर्याय को एक बार में ही देख लेने के कारण आपका नाम विश्व-दर्शी है। भक्ति और विचार पूर्वक मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-दर्शी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११०।।

संपूरण अवलोकतैं, दर्शन धरौ अपार।
नमूँ सिद्ध कर जोरिकैं, करौ जगत सैं पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अखिलार्थ-दर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१११।।

अर्थ : सम्पूर्ण अवलोकन से आप अनन्त दर्शन के धारक हैं। मैं आपको हाथ जोड़ कर नमन करता हूँ; आप मुझे संसार से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं अखिल अर्थ-दर्शी/सम्पूर्ण पदार्थ देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१११।।

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय।
बिन इंद्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्पक्ष-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११२।।

अर्थ : इन्द्रिय-ज्ञान परोक्ष है और क्रमवर्ती कहलाता है। आप इन्द्रियों से पूर्णतया रहित प्रत्यक्ष, सुख-दायक ज्ञान के धारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्पक्ष दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११२।।

विश्व माँहि तुम अर्थ सब, देखौ एकीबार।
विश्वचक्षु तुम नाम है, बंदूँ भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-चक्षुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११३।।

अर्थ : विश्व के सम्पूर्ण पदार्थों को एक ही बार में देख लेने के कारण आपका विश्व-चक्षु नाम है। भक्ति और विचार पूर्वक मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-चक्षु/सभी को देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११३।।

तीन लोक के अर्थ जे, बाकी रहौ न शेष।
युगपत तुम सब जानियौ, गुण-पर्याय विशेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं अशेष-विदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११४।।

अर्थ : गुण-पर्याय रूप विशेषों-सहित तीनों लोकों में जितने भी पदार्थ हैं; उनमें से कुछ भी शेष रखे विना, उन सभी को आप एक साथ जान लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अशेष-विद/सभी को जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११४।।

पराधीन अरु विघ्न बिन, है साँचा आनन्द।
सो शिवगति में तुम लियौ, मैं बंदूँ सुखकंद।।

ॐ ह्रीं अर्हं आनन्दाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११५।।

अर्थ : हे सुखकन्द! आपने मोक्ष-गति में पराधीनता और विघ्नों से पूर्णतया रहित, यथार्थ आनन्द प्राप्त कर लिया है। मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११५।।

सत प्रशंसता नित बहै, या सद्भाव सरूप।
सो तुममें आनंद है, बंदत हूँ शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदानन्दाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११६।।

अर्थ : सदा प्रशंसनीय, प्रवाहमान, सत या सद्भाव-स्वरूप शिव के स्वामी आप आनन्दमय हैं। मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सदानन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११६।।

उदय महा सतरूप है, जामें असत न होय।
अंतराय अरु विघन बिन, सत्य उदै है सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदोदयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११७।।

अर्थ : अन्तराय और विघ्नों से पूर्णतया रहित सत्य का उदय ही महा सत्‌रूप उदय है। इसमें असत् नहीं होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा उदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११७।।

नित्यानन्द महासुखी, हीनाधिक नहिं होय।
नहिं गत्यंतर रूप हौं, शिवगति में है सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्यानंदाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११८।।

अर्थ : हीनाधिकता से पूर्णतया रहित और अन्य गति रूप नहीं होने का स्वभाव मोक्ष गति में होने के कारण वही, नित्य आनन्द रूप महा सुखी है।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्य आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११८।।

जासौं परे न और सुख, अहमिन्द्रन में नाहिं।
सोइ श्रेष्ठ सुख भोगते, बंदूँ हूँ मैं ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११९।।

अर्थ : जिसके अतिरिक्त अन्य कुछ सुख नहीं है, जो अहमिन्द्रों में भी नहीं है; उस श्रेष्ठ सुख को भोगने वाले भगवान की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।११९।।

पूरण सुख की हद धरैं, सो महान आनन्द।
सो तुम पायौ शिव-धनी, बंदूँ पद अरविंद।।

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२०।।

अर्थ : परिपूर्ण सुख की अन्तिम सीमा/चरमोत्कर्षमय महा आनन्द, हे शिव-धनी! आपने प्राप्त कर लिया है। मैं आपके चरण-कमलों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२०।।

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय।
चारों गति में सो नहीं, तुम पायौ सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२१।।

अर्थ : चारों गतिओं में नहीं पाया जाने वाला उत्तम स्वाधीन सुख परम कहलाता है। हे सुख-दायक! आपने उसे प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२१।।

जामें विघन न लेश है, उदय तेज विज्ञान।
जाकों हम जानत नहीं, सुलभरूप विधि ठान।।

ॐ ह्रीं अर्हं परोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२२।।

अर्थ : जिन पदार्थों को हम नहीं जानते हैं; उन्हें आप विघ्नों से पूर्णतया रहित, प्रगट हुए तेजस्वी विज्ञान/केवलज्ञान द्वारा अत्यन्त सरलता पूर्वक जान लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परा/उत्कृष्ट उदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२२।।

परम शक्ति परमातमा, पर सहाय बिन आप।
स्वयं वीर्य आनंद के, नमत कटैं सब पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमौजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२३।।

अर्थ : अन्य की सहायता के विना स्वयं ही अपने आनन्दमय वीर्य से परम शक्तिमय परमात्मा हुए आपको नमस्कार करने से सभी पाप समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम औज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२३।।

महा तेज के पुंज हौ, अविनाशी अविकार।
झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पणवत आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-तेजसे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२४।।

अर्थ : जैसे दर्पण के आधार से पदार्थ प्रतिबिम्बित होते हैं; उसीप्रकार महा तेज के पुंज, अविनाशी, अविकारी आपमें सभी पदार्थ ज्ञानाकार होकर प्रतिबिम्बित होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम तेज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२४।।

परमधाम उत्कृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय।
जासौं फिर आवत नहीं, जन्म-मरण नशि जाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-धाम्ने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२५।।

अर्थ : जन्म-मरण समाप्त हो जाने के कारण जहाँ से पुन: आगमन नहीं होता है, वह परम धाम उत्कृष्ट पद, मोक्ष कहलाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-धाम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२५।।

जगगुरु सिद्ध परमातमा, जगत सूर्य शिव नाम।
परमहंस योगीश हैं, लियौ मोक्ष अभिराम।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-हंसाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२६।।

अर्थ : जगत-गुरु, सिद्ध, परमात्मा, जगत-सूर्य, शिव, परम हंस, योगीश इत्यादि नाम वाले आपने अभिराम/सुन्दरतम मोक्ष प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम हंस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२६।।

दिव्यज्योति स्व-ज्ञान में, तीन लोक प्रतिभास।
शंका बिन विश्वास कर, निजपर कियौ प्रकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्ष-ज्ञातु: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२७।।

अर्थ : दिव्य ज्योतिमय अपने ज्ञान में तीनों लोक प्रतिभासित होते हैं - शंका से पूर्णतया रहित हो इसका विश्वास कर आपने स्व और पर को प्रकाशित किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्ष ज्ञाता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२७।।

निज विज्ञान सु ज्योति में, संशय आदिक नाहिं।
सो तुम सहज प्रकाशियौ, मैं बंदूँ हूँ ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं विज्ञान-ज्योतिषे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२८।।

अर्थ : अपनी विज्ञान ज्योति में संशय आदि नहीं हैं। उसे आपने सहज प्रकाशित कर लिया है; मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विज्ञान-ज्योति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२८।।

शुद्ध बुद्ध परमातमा, परम ब्रम्ह कहलाय।
सर्व-लोक उत्कृष्ट पद, पायौ बंदूँ ताय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-ब्रम्हणे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२९।।

अर्थ : शुद्ध, बुद्ध, परमात्मा परम ब्रम्ह कहलाता है। सम्पूर्ण लोक में उत्कृष्ट पद पाने वाले की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-ब्रम्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१२९।।

चार ज्ञान नहिं जास में, शुद्ध सरूप अनूप।
पर कौ नाहिं प्रवेश है, एकाकी शिवरूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-रहसे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३०।।

अर्थ : अनुपम, शुद्ध-स्वरूप, एकाकी, शिवरूप आपमें चार ज्ञान/मति-श्रुत-अवधि-मन:पर्यय ज्ञान नहीं हैं और अन्य का प्रवेश भी नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-रहस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३०।।

निज गुण द्रव पर्याय में, भिन्न-भिन्न सब रूप।
एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३१।।

अर्थ : अपने-अपने द्रव्य, गुण, पर्याय में पृथक्-पृथक् रहते हुए भी आप सभी एक क्षेत्र में रहते हुए चिद्रूपमय शोभायमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्ष आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३१।।

शुद्ध बुद्ध परमातमा, निज विज्ञान प्रकाश।
स्वै-आतम के बोधतैं, कियौ कर्म कौ नास।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रबोधात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३२।।

अर्थ : शुद्ध, बुद्ध, परमात्मा, अपने विज्ञान के प्रकाशमय आपने अपने आत्मा के बोध से कर्मों का नाश कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रबोध आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३२।।

कर्म मैल से लिप्त हैं, जगत आत्म दिन रैन।
कर्म नाश महपद लियौ, बंदूँ हूँ सुख दैन।।

ॐ ह्रीं अर्हं महात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३३।।

अर्थ : संसार के सभी आत्माएँ दिन-रात कर्म रूपी मैल से लिप्त हैं। हे सुख देने वाले! आपने, कर्मों का नाश कर महान पद प्राप्त कर लिया है। मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३३।।

आतम कौ गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३४।।

अर्थ : आत्मा का गुण, ज्ञान है। इसके यथार्थ परिणमन से ज्ञान, आनन्द, ईश्वरता प्रगट हो जाती है।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मा के महान उदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३४।।

दर्श ज्ञान सुख वीर्य को, पाय परम पद होय।
सो परमातम तुम भये, नमूँ जोर कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३५।।

अर्थ : दर्शन, ज्ञान, सुख, वीर्य को प्राप्त कर ही परम पद होता है। आप परमात्मा हो गए हैं; मैं दोनों हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३५।।

मोहकर्म के नाशतें, शान्त भये सुखदैन।
क्षोभरहित प्रशान्त हो, शांत नमूँ सुख लैन।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३६।।

अर्थ : मोह-कर्म का नाश हो जाने से सुख देने वाले आप शान्त और क्षोभ-रहित प्रशान्त हो गए हैं। सुख प्राप्त करने के लिए मैं शान्त-स्वरूप आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्त आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३६।।

पूरण पद तुम पाइयौ, यातैं परै न कोय।
तुम समान नहीं और हैं, बंदूँ हूँ पद दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३७।।

अर्थ : जिसके आगे और कुछ भी नहीं है, उस पूर्ण पद को आपने प्राप्त कर लिया है। आपके समान कोई दूसरा नहीं है। मैं आपके चरण-युगल की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३७।।

पुद्गल कृत तन छारकैं, निज आतम में वास।
स्व-प्रदेश गृह के विषैं, नित ही करत विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-निकेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३८।।

अर्थ : पुद्गल-कृत शरीर को छोड़कर अपने आत्मा में वास करते हुए आप अपने प्रदेशों रूपी घर में सदा ही विलास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-निकेतन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३८।।

औरन कौं नित देत हैं, शिवसुख भोगैं आप।
परम इष्ट तुम हो सदा, निजसम करत मिलाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३९।।

अर्थ : आप शिव-सुख को सदा भोगते हुए सदा दूसरों को भी उसे देते हैं। आप सदा परम इष्ट हैं। भव्य जीवों को अपने समान करके अपने में ही मिला लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१३९।।

मोक्ष-लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत।
महा इष्ट कहलात हो, बंदूँ शिवसुख हेत।।

ॐ ह्रीं अर्हं महितात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४०।।

अर्थ : मोक्ष-लक्ष्मी के स्वामी आप, भक्तों के लिए सदा उसे ही देने के कारण महा इष्ट कहलाते हैं। शिव-सुख के लिए मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महित आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४०।।

रागादिक मल नाशिकैं, श्रेष्ठ भये जगमाँहिं।
सो उपासना करन कौं, तुम सम कोई नाहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४१।।

अर्थ : रागादि मल को नष्ट कर आप जगत में श्रेष्ठ हो गए हैं; अत: उपासना करने के लिए आपके समान अन्य कोई नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ-आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४१।।

पर में ममत विनाशकैं, स्वै आतम थिर धार।
पर-विकल्प संकल्प बिन, तिष्ठौ सुख-आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्म-निष्ठिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४२।।

अर्थ : पर-पदार्थों में ममत्व को पूर्णतया विनष्ट कर, अपने आत्मा में स्थिरता धारण कर, पर संबंधी संकल्प-विकल्प से रहित हो आप सुख के आधारभूत आत्मा में स्थिर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्म-निष्ठित/अपने आत्मा में पूर्ण स्थिर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४२।।

स्वै-आतम में मग्न हैं, स्वै-आतम लवलीन।
पर में भ्रमण करैं नहीं, 'सन्त' चरण शिर दीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-निष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४३।।

अर्थ : अपने आत्मा में मग्न, अपने आत्मा में परिपूर्ण लीन आप, पर में भ्रमण नहीं करते हैं। सन्त कवि आपके चरणों में शिर झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-निष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४३।।

तीन लोक के नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज।
तुम सम और महानता, नहिं धारत है दूज।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-ज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४४।।

अर्थ : तीनों लोकों के नाथ, इन्द्रादि द्वारा पूज्य, आपके समान महानता अन्य कोई दूसरा धारण नहीं कर पाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-ज्येष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४४।।

तीन लोक परसिद्ध हौ, सिद्ध तुम्हारा नाम।
सर्व सिद्धता ईश हौ, पूरहुँ सबके काम।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरूढ़ात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४५।।

अर्थ : तीनों लोकों में प्रसिद्ध होने के कारण आपका नाम सिद्ध है। सभी सिद्धता के ईश होने के कारण आप सभी के कार्य पूर्ण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरूढ़/रूढ़ से रहित आत्मा/स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४५।।

स्वै-आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय।
निश्चल परम सुभाव में, भये प्रगति कौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४६।।

अर्थ : चलाचलता से पूर्णतया रहित हो अपने आत्मा में स्थिरता धारण करने वाले आप, कर्म-प्रकृतिओं को नष्ट कर परम स्वभाव में निश्चल हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ आत्मा/स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४६।।

क्षयोपशम नानाविधै, क्षायक एक प्रकार।
सो तुममें नहिं और में, बंदूँ योग सँभार।।

ॐ ह्रीं अर्हं एक-विद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४७।।

अर्थ : क्षायोपशमिक ज्ञान अनेक प्रकार का और क्षायिक ज्ञान एक प्रकार का है। वह आपमें ही है; अन्य में नहीं है। तीनों योगों को सम्हाल कर मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं एक विद्या के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४७।।

कर्म पटल के नाशतैं, निर्मल ज्ञान उदार।
तुम महान विद्या धरौ, बंदूँ योग सँभार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-विद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४८।।

अर्थ : कर्म-पटल के नष्ट हो जाने से निर्मल ज्ञान को प्रगट कर आप महान विद्या को धारण करते हैं। योगों को सम्हाल कर मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा विद्या के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४८।।

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रम्ह कहाय।
पायो सहज महान पद, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-पदेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४९।।

अर्थ : परम पूज्य, परम ईश, सहज महान पद प्राप्त करने वाले आप, पूर्ण ब्रम्ह कहलाते हैं। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा पदेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१४९।।

पंच परम-पद पाइयौ, ब्रम्ह नाम है एक।
पूजूँ मनवचकाय करि, नाशैं विघ्न अनेक।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच-ब्रम्हणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५०।।

अर्थ : पंच परम पद प्राप्त कर लेने पर भी आपका एक 'ब्रम्ह' नाम है। आप अनेक विघ्नों को नष्ट कर देते हैं। मैं मन, वचन, काय पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच ब्रम्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५०।।

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायौ सहज सुभाय।
हीनाधिक बिन बिलसते, बंदूँ ध्यान लगाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५१।।

अर्थ : आपने अपनी विभूति के सर्वस्व और सहज स्वभाव को प्राप्त कर लिया है। हीनाधिकता से पूर्णतया रहित हो विलास करने वाले आपकी ध्यान लगाकर वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५१।।

पूरण पण्डित ईश हो, बुद्ध धाम अभिराम।
बंदूँ मनवचकाय करि, पाऊँ मोक्ष सुधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-विद्येश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५२।।

अर्थ : मोक्ष रूपी सुधाम प्राप्त करने के लिए मन, वचन, काय पूर्वक सम्पूर्ण पण्डितों के ईश्वर, बुद्ध/ज्ञान के सुन्दर धाम की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व विद्या के ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५२।।

मोह कर्म चकचूरतैं, स्वाभाविक शुभ चाल।
शुध परिणाम धरैं सदा, बंदूँ नित नमि भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५३।।

अर्थ : मोहनीय कर्म के पूर्णतया नष्ट हो जाने से स्वाभाविक शुभ/कल्याणकारी स्वरूपमय शुद्ध परिणामों को सदा धारण करने वाले आपकी सदा मस्तक झुकाकर वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५३।।

ज्ञान-दर्श आवर्ण बिन, दीपो नंतानंत।
सकल ज्ञेय प्रतिभास हैं, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-दीप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५४।।

अर्थ : ज्ञानावरण और दर्शनावरण से पूर्णतया रहित आपमें अनन्त-अनन्त सम्पूर्ण ज्ञेय पदार्थ प्रतिभासित होते हुए भी आप देदीप्यमान हैं। आपको सन्त कवि सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-दीप्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५४।।

इक इक गुण प्रतिछेद कौ, पार न पायौ जाय।
सो गुण रास अनंत हैं, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५५।।

अर्थ : आपके एक-एक गुण संबंधी अविभागी प्रतिच्छेद का पार नहीं पाया जा सकता है और गुण-राशि तो अनन्त है। आपके चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त आत्मा/स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५५।।

अहमिंद्रन की शक्ति जो, करौ अनंती राश।
सो तुम शक्ति अनंत गुण, करै अनंत प्रकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-शक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५६।।

अर्थ : अहमिन्द्रों की शक्ति को अनन्त से गुणा करने पर प्राप्त अनन्त-राशि से भी अनन्त गुणी शक्ति आपमें अनन्त रूप में प्रकाशित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-शक्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५६।।

क्षायक दर्शन जोति में, निरावरण परकास।
सो अनंत दृग तुम धरौ, नमैं चरण नित दास।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-दर्शये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५७।।

अर्थ : आवरण से पूर्णतया रहित, प्रकाशमय क्षायिक दर्शनरूप अनन्त दर्शन को आप धारण करते हैं। यह दास आपके चरणों में नित्य नमन करता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-दर्शी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५७।।

जाकी शक्ति अपार है, हेत-अहेत प्रसिद्ध।
गणधरादि जानत नहीं, मैं बंदूँ नित सिद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-शक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५८।।

अर्थ : हेतु-अहेतु रूप में प्रसिद्ध जिनकी अपार शक्ति को गणधर आदि भी नहीं जानते हैं; मैं उन सिद्धों की सदा वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-शक्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५८।।

चेतन शक्ति अनंत है, निरावरण जो होय।
सो तुम पायौ सहज ही, कर्म पुंज कौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-चिदेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५९।।

अर्थ : आवरण से पूर्णतया रहित चेतन शक्ति अनन्त है। आपने कर्म-समूह को पूर्णतया नष्ट कर उसे सहजता से प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त चिदेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१५९।।

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख पर में नाहिं।
निजानन्द रस लीन हैं, मैं बंदूँ हूँ ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-मुदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६०।।

अर्थ : जो सुख अपने आश्रय से प्रगट होता है, वह सुख दूसरों में नहीं है। अपने आनन्द-रस में लीन आपकी, मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त मुद/प्रसन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६०।।

जाकैं कर्म लिपैं न फिर, दिपैं सदा निरधार।
सदा प्रकाशजु सहित है, बंदूँ योग सम्हार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-प्रकाशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६१।।

अर्थ : जिसके कर्म पुन: प्रकाशित नहीं होते हैं/जो सदा बन्धन से रहित हैं। शाश्वत प्रकाश से सहित जो सदा विना किसी के आधार से देदीप्यमान हैं; योगों को सम्हालकर मैं उनकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा प्रकाश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं।।१६१।।

निजानन्द के माँहि हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध।
सो तुम पायौ सहज ही, नमत मिलैं नवनिद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थ-सिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६२।।

अर्थ : अपने आनन्द में सभी प्रयोजन प्रकृष्ट रूप से सिद्ध हो जाते हैं। उसे आपने सहजता से प्रगट कर लिया है। आपको नमन करने से नौ निधिआँ प्रगट हो जाती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व अर्थ सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६२।।

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय।
साक्षात् सबको लखौ, बंदूँ तिनकैं पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६३।।

अर्थ : काय/अस्तिकाय/मूर्त और अकाय/अनस्तिकाय/अमूर्त रूप सभी अत्यन्त सूक्ष्म पदार्थों को भी प्रत्यक्ष जानने वाले आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात् करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६३।।

सकल-गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश।
तुम समान नहिं दूसरौ, वन्दत पूरैं आस।।

ॐ ह्रीं अर्हं समग्रर्द्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६४।।

अर्थ : शुद्ध स्वभाव का प्रकाश करने वाले सम्पूर्ण गुणोंमय द्रव्यरूप आपके समान अन्य कोई दूसरा नहीं है। आपकी वन्दना करने से आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं समग्र ऋद्धि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६४।।

सर्व कर्म कौं छीन करि, जरी जेवरी सार।
सो तुम धूलि उड़ाइयो, बंदूँ भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-क्षीणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६५।।

अर्थ : सभी कर्मों को क्षीण कर जली हुई जेवरी/रस्सी के समान कर आपने उनकी धूलि/राख उड़ा दी है। मैं भक्ति और विचार पूर्वक आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-क्षीण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६५।।

चहुँ गति जगत कहात हैं, ताकौ करि विध्वंस।
अमर अचल शिवपुर बसैं, भर्म न राखौ अंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वंसिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६६।।

अर्थ : चारों गतिओं को जगत/संसार कहते हैं। उनका विध्वंस कर, रंच-मात्र भी भ्रम न रखते हुए आप अमर, अचल, मोक्षरूपी नगर में निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत/संसार का विध्वंस करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६६।।

इन्द्री मन व्यापार में, जाकौ नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अलक्षात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६७।।

अर्थ : इन्द्रिय और मन के व्यापार/कार्यों में जिनका कुछ भी अधिकार नहीं है; वे अलक्ष/इन्द्रियातीत भगवान आत्मा हमें सुमति के दाता हों।

ॐ ह्रीं अर्हं अलक्ष आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६७।।

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार।
सो शिवपुर में वसत हैं, बंदूँ भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अचल-स्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६८।।

अर्थ : चलाचलता से पूर्णतया रहित हो, भ्रमण का विनाश कर आप स्थिरता को धारण कर शिवपुर में निवास करते हैं। मैं भक्ति और विचार पूर्वक आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अचल स्थान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६८।।

पर कृत निमित बिगाड़ हैं, सोई दुविधा जान।
सो तुममें नहिं लेश हैं, निराबाध परणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६९।।

अर्थ : पर-कृत निमित्त विकार उत्पन्न करता है - इसे ही दुविधा जानना चाहिए। आपमें यह रंच-मात्र भी नहीं है। आपके सभी परिणाम बाधाओं से पूर्णतया रहित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१६९।।

जैसे हौ तुम आदि में, सोई हौ तुम अन्त।
एक भाँति निवसौ सदा, वंदत है नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतर्क्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७०।।

अर्थ : आप जैसे प्रारम्भ में हैं; उसीप्रकार अन्त में हैं; सदा/सभी कालों में एक समान ही रहते हैं। सन्त कवि सदा आपकी वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतर्क्य आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७०।।

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानैं आन।
मिथ्यामत नहिं चलत हैं, तुम आगे परमाण।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-चक्रिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७१।।

अर्थ : धर्म के स्वामी, जगत के ईश आपको देवता और मुनि भी आ-आकर स्वीकार करते हैं। आपके सामने प्रामाणिक रूप में मिथ्या-मत नहीं चल पाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-चक्री के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७१।।

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस माहिं।
श्रेष्ठ ज्ञान तुम पुंज हौ, परनिमित्त कछु नाहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं विदांवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७२।।

अर्थ : ज्ञान की शक्ति उत्कृष्ट है; उसमें ही सभी धर्म गर्भित हैं। आप ज्ञान के श्रेष्ठ पुंज हैं। आपमें अन्य की निमित्तता रंच-मात्र भी नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं विदांवर/जानने वालों में श्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७२।।

निज अभाव से मुक्त हौं, कहैं कुवादी लोग।
भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायौ जोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७३।।

अर्थ : कुवादी लोग/मिथ्यावादी ऐसा कहते हैं कि अपना अभाव हो जाना, मोक्ष है। पहले विद्यमान आत्मा ही संसार का अभाव कर मोक्ष-दशा प्राप्त करता है। वह योग/अवसर आपने प्राप्त कर लिया है अथवा आपने उस मोक्ष-दशा को योग द्वारा प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं भूत/विद्यमान आत्मा/स्वरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७३।।

सहज सुभाव प्रकाशियौ, परनिमित्त कछु नाहिं।
सो तुम पायौ सुलभतैं, स्वसुभाव के माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं सहज-ज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७४।।

अर्थ : अन्य की निमित्तता से पूर्णतया रहित हो आपने अपने स्वभाव में ही सरलता से सहज स्वभाव को प्रकाशित कर प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं सहज ज्योति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७४।।

विश्व नाम तिहुँ लोक में, तिसमें करत प्रकाश।
विश्वज्योति कहलात हैं, नमत मोहतम नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७५।।

अर्थ : तीनों लोकों का एक नाम विश्व है। उसमें प्रकाश करने/उसे जानने वाले होने से आप विश्व-ज्योति कहलाते हैं। आपको नमन करने से मोहरूपी अन्धकार का नाश हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ज्योति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं....।।१७५।।

फरस आदि मन इन्द्रियाँ, द्वार ज्ञान कछु नाहिं।
यातैं अतिइन्द्रिय कहौ, जिन-सिद्धांत के माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७६।।

अर्थ : आपका कुछ भी ज्ञान स्पर्शन आदि इन्द्रियों और मन के द्वारा नहीं होने के कारण जिन-सिद्धान्त में उसे अतीन्द्रिय कहा है।

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रिय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७६।।

एक मात्र असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंस।
केवल तुमकौं धर्म है, नमैं तुम्हें नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७७।।

अर्थ : आप असहाय/अन्य की सहायता से पूर्णतया रहित, शुद्ध, बुद्ध, अभेद केवल धर्म रूप हैं। 'सन्त' आपके लिए सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं केवल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७७।।

लौकिक जन या लोक में, तुम सारूँ गुण नाहिं।
केवल तुमही में बसैं, मैं बंदूँ हूँ ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलालोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७८।।

अर्थ : इस लोक के लौकिक-जनों में आपके समान गुण नहीं हैं; वे केवल आपमें ही रहते हैं। मैं उनकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं केवल अलोक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७८।।

लोक अनन्त कहौ सही, तातैं नन्तानन्त।
है अलोक अवलोकियौ, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकावलोकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७९।।

अर्थ : असंख्य प्रदेशी लोक अनन्त/विनाश-रहित और उससे अनन्तानन्त अलोक है। उन दोनों का अवलोकन करने वाले आपको सन्त सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-अलोक के अवलोकी को नमस्कार; अर्घ्यं...।।१७९।।

ज्ञान द्वार निज शक्ति हौ, फैली लोकालोक।
भिन्न-भिन्न सब जानियौं, नमूँ चरण दें धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं विवृताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८०।।

अर्थ : ज्ञान द्वारा लोकालोक पर्यन्त फैली हुई अपनी शक्ति से आप सभी को पृथक्-पृथक् जानते हैं। हम आपके चरणों में धोक/ढोक देकर नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विवृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८०।।

बिन सहाय निज शक्ति हौ, प्रकटी आपोआप।
स्वयंबुद्ध स्वै-सिद्ध हौ, नमत नसैं सब पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलावलोकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८१।।

अर्थ : अन्य किसी की सहायता के विना आपकी अपनी शक्ति अपने आप प्रगट हुई है; अत: आप स्वयं-बुद्ध, स्व-सिद्ध हैं। आपको नमन करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं केवल अवलोक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८१।।

सूक्षम सुभग सुभावतैं, मन इन्द्रिय नहिं ज्ञात।
वचन अगोचर गुण धरैं, नमूँ चरन दिन-रात।।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्यक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८२।।

अर्थ : मन और इन्द्रिय से ज्ञात नहीं होने वाले सूक्ष्म, सुभग/मनोहर स्वभाव के कारण आप वचन-अगोचर गुणों को धारण करते हैं। मैं दिन-रात/सदा आपके चरणों में नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्यक्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८२।।

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव संसार।
तिन सबकौ तुमही शरण, देहौ सुक्ख अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-शरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८३।।

अर्थ : सभी संसारी जीव कर्म के उदय (की निमित्तता) में दु:ख भोग रहे हैं। अपार सुख को देने वाले आप ही उन सभी के लिए शरण हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व शरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८३।।

चितवन में आवैं नहीं, पार न पावै कोय।
महा विभव के हौ धनी, नमूँ जोर कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्य-विभवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८४।।

अर्थ : जिसका चिन्तन कर पाना सम्भव नहीं है, पार पाना शक्य नहीं है, ऐसे महा विभव के धनी आपको हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अचिन्त्य विभव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८४।।

छहों काय के वास कौं, विश्व कहैं सब लोक।
तिनके थंभनहार हौं, राज काज के जोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भृते नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८५।।

अर्थ : छहों काय के वास को सभी लोक विश्व कहते हैं। मोक्ष का राज्य करने-योग्य आप उनके जीवनाधार/उन्हें सुखी होने का उपाय बताने वाले हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८५।।

घट-घट में राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर।
विश्व रूप जीवात्म हौ, तीन लोक सिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-रूपात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८६।।

अर्थ : ज्ञान के द्वारा आप सभी जगह सदा घट-घट में विराजमान होने से विश्वरूप, तीनों लोकों में सर्व-श्रेष्ठ जीवात्मा हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वरूप आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८६।।

घट-घट में नित-व्याप्त हो, ज्यों घर दीपक जोत।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८७।।

अर्थ : जैसे घर में दीपक की ज्योति व्याप्त रहती है; उसीप्रकार घट-घट में सदा व्याप्त होने से आपका नाम विश्व-नाथ है। आपकी पूजन करने से शिव-सुख होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८७।।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजैं आन।
यातैं मुखिया हौ सही, मैं पूजूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतो-मुखाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८८।।

अर्थ : विश्व के स्वामी इन्द्र आदि भी आकर आपके चरणों की पूजन करते हैं; अत: आप वास्तविक प्रधान हैं। मैं ध्यान धारण कर आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतोमुख/विश्व में मुख्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८८।।

ज्ञान द्वार सब जगत में, व्यापि रहे भगवान।
विश्व व्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूँ नभ में शशि भान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-व्यापिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८९।।

अर्थ : जैसे आकाश में चन्द्रमा और सूर्य व्यापक हैं; उसीप्रकार भगवान ज्ञान के द्वारा सम्पूर्ण विश्व में व्यापक होने से मुनिजन आपको विश्व-व्यापी कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-व्यापी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१८९।।

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं बंदूँ दिन रात।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-ज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९०।।

अर्थ : आवरण से पूर्णतया रहित, निर्लेप, तेज रूप में प्रसिद्ध, ज्ञान की परिपूर्ण कलाओं के धारक आपकी मैं सदा वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं स्वयं ज्योति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९०।।

चितवन में आवैं नहीं, धारैं सुगुण अपार।
मन वच काय नमूँ सदा, मिटै सकल संसार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९१।।

अर्थ : जो चिन्तन में नहीं आ पाते हैं, आप इतने अपार सुगुणों को धारण करते हैं। मैं मन, वचन, काय पूर्वक आपको सदा नमन करता हूँ; जिससे मेरा समस्त संसार मिट जाए।

ॐ ह्रीं अर्हं अचिन्त्य-आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९१।।

नय प्रमाण कौ गमन नहिं, स्वयं ज्योति परकाश।
अद्‌भुत गुण पर्याय में, सुख सौं करैं विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमित-प्रभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९२।।

अर्थ : स्वयं ज्योति के प्रकाशमय अद्‌भुत गुण-पर्यायों में सुख पूर्वक विलास करने वाले आपमें नय और प्रमाण का गमन/उनकी आवश्यकता नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं अमित प्रभाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९२।।

मति आदि क्रमवर्त बिन, केवल लक्ष्मीनाथ।
महाबोध तुम नाम है, नमूँ पाँय धरि माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-बोधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९३।।

अर्थ : मति आदि क्रमवर्ती ज्ञानों के विना केवल-लक्ष्मी के स्वामी होने से आपका नाम महा बोध है। मैं आपके चरणों में मस्तक रखकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा बोध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९३।।

कर्मयोगतैं जगत में, जीव शक्ति कौ नास।
स्वयं वीर्य अद्‌भुत धरैं, नमूँ चरण सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९४।।

अर्थ : संसार के कर्म के योग से जीव की शक्ति का नाश हो जाता है। आप अपने अद्‌भुत वीर्य को धारण करते हैं। सुख की राशिमय आपके चरणों को मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९४।।

क्षायक लब्धि महान है, ताकौ लाभ लहाय।
महालाभ यातैं कहैं, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-लाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९५।।

अर्थ : क्षायिक नामक महान लब्धि का लाभ हो जाने से आपको महा लाभ कहते हैं। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा लाभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९५।।

ज्ञानावरणादिक पटल, छायौ आतम ज्योत।
ताकौं नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९६।।

अर्थ : आत्म-ज्योति पर ज्ञानावरण आदि पटल छाए हुए हैं। उनका नाश हो जाने पर विमल दीप्ति रूप उद्योत हो गया है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा उदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९६।।

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मि कौं, भोगैं बाधाहीन।
पंचम गति में वास है, नमूँ जोग पद लीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-भोग-सुगतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९७।।

अर्थ : पंचम गति/सिद्ध-दशा में रहते हुए आप बाधाओं से पूर्णतया रहित हो ज्ञान-आनन्दमय अपनी लक्ष्मी का भोग करते हैं। तीनों योगों पूर्वक आपके चरणों में लीन रहते हुए मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा भोग-सुगति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९७।।

पर निमित्त जामें नहीं, स्व-आनन्द अपार।
सोई परमानन्द हैं, भोगैं निज आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-भोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९८।।

अर्थ : अन्य की निमित्तता जिसमें रंच-मात्र भी नहीं है; वह अपना अपार आनन्द ही परमानन्द है। उसे आप अपने आधार से भोगते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा भोग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९८।।

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हौ, मैं बंदूँ हूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतुल-वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९९।।

अर्थ : अनन्त वीर्य के धारक होने से दर्शन, ज्ञान, सुख को भोगते हुए भी आपको रंच-मात्र भी बाधा नहीं होती है। मैं आपकी ही वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अतुल वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१९९।।

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीड़ा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, बन्दत रिपुगण नास।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२००।।

अर्थ : आनन्दमय शिव स्वरूप में क्रीड़ा करते हुए विलास/रमण करते होने से आप महादेव कहलाते हैं। आपकी वन्दना करने से शत्रु-समूह का नाश हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञ अर्ह/पूजन के योग्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२००।।

महाभाग शिवगति लहौ, ता सम भान न और।
सोई भगवत है प्रभु, नमूँ पदाम्बुज ठौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०१।।

अर्थ : महा भाग्यवान आपने शिव-गति प्राप्त की है। उसके समान प्रकाशमान/सूर्य और कोई नहीं हैं। वे ही भगवान हैं। हे प्रभो! आपके चरण-कमलों में मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०१।।

तीन लोक के पूज्य हैं, तीन लोक के स्वाम।
कर्म-शत्रु कौ छय कियौ, तातैं अरहत नाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०२।।

अर्थ : तीनों लोकों में पूज्य, तीनों लोकों के स्वामी और कर्मरूपी शत्रु का नाश किया होने से आपका नाम अरहन्त है।

ॐ ह्रीं अर्हं अरहन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०२।।

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्थ जुत भाव।
महा-अर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महार्घ्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०३।।

अर्थ : द्रव्य, अर्थ और भाव पूर्वक देव और मनुष्य आपके दोनों चरणों की पूजन करते हैं; आपका महार्घ्य, नाम है। आपकी पूजन करने से कर्मों का अभाव हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं महार्घ्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०३।।

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिंद्रन के ध्येय।
द्रव्य-भाव करि पूज्य हो, पूजक पूज्य अभेय।।

ॐ ह्रीं अर्हं मघवार्चिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०४।।

अर्थ : पूजक और पूज्य के भेद से रहित आप सौ इन्द्रों द्वारा पूज्य, अहमिन्द्रों के ध्येय और द्रव्य-भाव द्वारा पूज्य हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मघवा/देवों द्वारा, अर्चित/पूजित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०४।।

छहों द्रव्य गुण पर्य कौ, जानत भेद अनन्त।
महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०५।।

अर्थ : छहों द्रव्यों के गुण-पर्यायों संबंधी अनन्त भेदों को जानने वाले महा पुरुष, त्रिभुवन के धनी आपकी, सन्त सतत पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ यज्ञ पुरुष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०५।।

तुमसौं कछु छाना नहीं, तीन लोक का भेद।
दर्पण तल सम भास है, नमत कर्ममल छेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ-यज्ञाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०६।।

अर्थ : तीनों लोकों का कोई भी भेद/रहस्य आपसे छिपा/अज्ञात नहीं है। दर्पण-तल के समान आपके ज्ञान में सभी कुछ एक साथ प्रतिभासित है। आपको नमस्कार करने से कर्म-मल समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ यज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०६।।

सकल ज्ञेय के ज्ञानतैं, हौ सबके सिरमौर।
पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ-कृत-पुरुषाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०७।।

अर्थ : समस्त ज्ञेयों का ज्ञान होने से सभी के सिरमौर/शिरोमणि होने के कारण आपका नाम पुरुषोत्तम है। आपके पास तक सभी की दौड़/पहुँच है।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ कृत पुरुष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०७।।

स्वयंबुद्ध शिवमग चरत, स्वयंबुद्ध अविरुद्ध।
शिवमगचारी नित ज़जैं, पावैं आतम शुद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०८।।

अर्थ : हे स्वयंबुद्ध! शिव-मार्ग में चलते हुए अविरुद्ध, स्वयंबुद्ध आपकी शिव-मार्ग पर चलने वाले सदा पूजन करते हैं; जिससे वे शुद्ध आत्मा प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०८।।

सब देवन के देव हो, तीन लोक के पूज्य।
मिथ्या तिमिर निवारनैं, सूरज और न दूज।।

ॐ ह्रीं अर्हं भट्टारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०९।।

अर्थ : आप सभी देवों के देव और तीनों लोकों में पूज्य हैं। मिथ्यात्व रूपी अन्धकार का निवारण करने के लिए आपके समान सूर्य कोई दूसरा नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं भट्टारक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२०९।।

सुर नर मुनि के पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय।
तीन लोक के स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्र-भवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१०।।

अर्थ : देवों, मनुष्यों, मुनिओं के पूज्य आपसे श्रेष्ठ कोई दूसरा नहीं होने के कारण आप तीनों लोकों के स्वामी हैं। आपकी पूजन करने से शिव-सुख होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्र-भवत्/वहाँ होते हुए के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१०।।

महा पूज्य महा मान्य हो, स्वयंबुद्ध अविकार।
मन-वच-तन से ध्यावते, सुर नर भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्र-भवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२११।।

अर्थ : महा पूज्य, महा मान्य, स्वयं-बुद्ध, विकारों से पूर्णतया रहित आपका, भक्ति और विचार पूर्वक देव और मनुष्य ध्यान करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्र-भवत्/यहाँ होते हुए के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२११।।

महाज्ञान केवल कहौ, सो दीखै तुम माँहि।
महा नाम सौं पूजिये, संसारी दुख नाहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं महते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१२।।

अर्थ : केवलज्ञान को महा ज्ञान कहते हैं और वह आपमें ही दिखाई देता है। इस महा नाम से आपकी पूजन करने पर सांसारिक दु:ख नहीं होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महत्/महान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१२।।

पूज्यपणा नहिं और में, इक तुम ही में जान।
महा अर्ह तुम गुण प्रभु, पूजत हो कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं महार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१३।।

अर्थ : पूज्यपना एक आपमें ही है, अन्य किसी में नहीं है। हे प्रभो! आपके महा अर्ह गुणों की पूजन करने से कल्याण होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा अर्ह/पूजन के योग्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१३।।

अचल शिवालय के विषैं, अमित काल रहैं राज।
चिरजीवी कहलात हो, बंदूँ शिवसुख काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रायुषे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१४।।

अर्थ : अचल शिवालय/मोक्षरूपी घर में अनन्त काल पर्यन्त विराजमान आप चिरजीवी कहलाते हैं। मैं शिव-सुख रूपी कार्य के लिए आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्र आयुष/वहाँ विराजमान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१४।।

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनन्तानन्त।
दीर्घायू तुम नाम है, बन्दत नित प्रति 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१५।।

अर्थ : मरण से पूर्णतया रहित मोक्ष-पद में आप अनन्त-अनन्त काल पर्यन्त शोभायमान होने से आपका नाम दीर्घायु है। सन्त कवि सदा आपको नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घ आयुष/अनन्त काल पर्यन्त विराजमान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१५।।

सकल तत्त्व के अर्थ कहि, निराबाध निरशंस।
धर्म मार्ग प्रकटाइयौ, नमत मिटै दुख अंश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थ-वाचे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१६।।

अर्थ : सभी प्रकार की बाधाओं से पूर्णतया रहित, समस्त संशयों से मुक्त रूप में सम्पूर्ण तत्त्वों के अर्थ को कहकर धर्म का मार्ग प्रगट करने वाले आपको नमस्कार करने से दु:ख का अंश भी समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थ वाक्/वस्तु को बताने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१६।।

मुनिजन नितप्रति ध्यावतैं, पावैं निज़ कल्याण।
सज्जन जन आराध्य हौ, मैं ध्याऊँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सज्जन-वल्लभाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१७।।

अर्थ : सदा आपका ध्यान करते हुए मुनिजन अपना कल्याण कर लेते हैं। आप सज्जन व्यक्तिओं के आराध्य हैं। ध्यान धारण कर मैं आपका ध्यान करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सज्जन बल्लभ/प्रिय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१७।।

शिवसुख जाकौं ध्यावतैं, पावैं सन्त मुनीन्द्र।
परमाराध्य कहात हौ, पायौ नाम अतीन्द्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमाराध्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१८।।

अर्थ : जिनका ध्यान करने से सन्त मुनीन्द्र शिव-सुख प्राप्त कर लेते हैं; अत: जो परम आराध्य कहलाते हैं; उन्होंने अतीन्द्रिय नाम प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम आराध्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१८।।

पंचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण।
देवन करि पूजित भये, पायौ शिवसुख थान।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच-कल्याण-पूजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१९।।

अर्थ : गर्भ से लेकर निर्वाण पर्यन्त प्रसिद्ध पंच कल्याणकों में देवों द्वारा पूजित हो आपने शिव-सुख का स्थान प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच कल्याणकों से पूजित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२१९।।

देखो लोकालोक को, हस्त रेख की सार।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखै उदय अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शन-विशुद्धि-गुणोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२०।।

अर्थ : हाथ की रेखाओं के समान लोक और अलोक को देखने वाले आपमें इसके जैसे अनन्त गुणों का उदय दिखाई देता है।

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शन विशुद्धि गुण-उदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२०।।

क्षायक समकित को धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र।
तुम पूजन परभावतैं, अन्तिम होय जिनेन्द्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुरार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२१।।

अर्थ : क्षायिक सम्यक्त्व के धारक सौधर्म आदि इन्द्र आपकी पूजन के प्रभाव से अन्त में जिनेन्द्र हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुर-अर्चित/देवों द्वारा पूजित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२१।।

निर्विकल्प शुभ चिन्ह है, वीतराग सौ होय।
सो तुम पायौ सहज ही, नमूँ जोर कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुखदात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२२।।

अर्थ : निर्विकल्प के शुभ चिन्ह वीतराग भाव को अथवा वीतराग के शुभ चिन्ह निर्विकल्प भाव को आपने सहज ही प्राप्त कर लिया है। मैं दोनों हाथ जोड़कर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सुखद आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२२।।

स्वर्ग आदि सुख थान के, हो परकाशन हार।
दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिवौजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२३।।

अर्थ : स्वर्ग आदि सुख के स्थानों का प्रकाशन करने वाले, ज्योति रूप, बल-शाली आपका मार्ग सुख-कारक है।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव-ओज/स्वर्ग का प्रकाश करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२३।।

गर्भ कल्याणक के विषैं, तुम माता सुखकार।
षट् कुमारिका सेवती, पावें भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शची-सेवित-मातृकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२४।।

अर्थ : गर्भ कल्याणक में सुख-कारक आपकी माता की सेवा करने से षट् कुमारिका देविआँ संसार-सागर से पार हो जाती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शची-सेवित माता वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२४।।

अति उत्तम तुम गर्भ है, भवदुख जन्म निवार।
रत्नराशि दिवलोक तैं, वर्षे मूसलधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं रत्न-गर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२५।।

अर्थ : संसार के दुःख जन्म का निवारक होने से आपका गर्भ अति उत्तम है। इस समय स्वर्ग लोक से रत्नों की राशि मूसलाधार बरसती है।

ॐ ह्रीं अर्हं रत्न-गर्भ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२५।।

सुर शोधन तैं गर्भ में, दर्पण सम आकार।
यों पवित्र तुम गर्भ है, पावै शिव सुख सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूत-गर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२६।।

अर्थ : देवों के द्वारा शुद्ध किए जाने से आपका गर्भ दर्पण के समान आकार/स्वभाव वाला हो जाता है। इसप्रकार शिव-सुख के सार को पाने वाले आपका ऐसा पवित्र गर्भ है।

ॐ ह्रीं अर्हं पूत/पवित्र गर्भ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२६।।

जाके गर्भागमन तैं, पहले उतसव ठान।
दिव्य नारि मंगल सहित, पूजत श्री भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भोत्सव-सहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२७।।

अर्थ : जिनके गर्भ में आने के पहले ही उत्सव रचकर मंगल-सहित दिव्य-नारिआँ श्री भगवान की पूजन करती हैं। (उनकी हम भी पूजन कर रहे हैं।)

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भ उत्सव से सहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२७।।

नित-नित आनन्द उर धरैं, सुर सुरीय हरषात।
मंगल साज समाज सब, उपजावैं दिन-रात।।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्योपचारोपचरिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२८।।

अर्थ : देव-देविआँ हर्षित हो सदा हृदय में आनन्द धारण कर दिन-रात मंगलमय सभी साधन-समूह प्रगट करते रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्य उपचार उपचरित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२८।।

केवलज्ञान सु लक्ष्मी, धरत महा विस्तार।
चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजत हितधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्म-प्रभवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२९।।

अर्थ : महा विस्तार-सम्पन्न केवलज्ञान लक्ष्मी को धारण करने वाले आपके चरण-कमलों की देव, मुनि भी पूजन करते हैं। हम भी अपने हित के लिए आपकी पूजन कर रहे हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्म प्रभु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२२९।।

तिहुँविध विधि-मल धोयकर, उज्ज्वल निर्मल होय।
शिव आलय में वसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निखलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३०।।

अर्थ : तीनों प्रकार के/द्रव्य-कर्म, भाव-कर्म, नो-कर्म रूपी विधि/कर्म-मल को धोकर उज्ज्वल, निर्मल, शुद्ध, सिद्ध हो आप शिव-आलय/मोक्षरूपी घर में निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निखल/खल से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३०।।

असंख्यात परदेश में, अन्य प्रदेश न होय।
स्वयं स्वभाव स्वजात हैं, मैं प्रणमामी सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-स्वभावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३१।।

अर्थ : आपके असंख्यात प्रदेशों में अन्य के प्रदेश नहीं हैं। अपने स्वभाव से ही स्वयं प्रगट हुए आपको मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं स्वभाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३१।।

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कछु भक्ति प्रमाण।
तुम ही सबके मूल हौ, नमत अमंगल हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वीय-जन्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३२।।

अर्थ : अपनी भक्ति के अनुसार पूजा, यज्ञ, आराधना आदि जो कुछ भी मैं कर रहा हूँ; उन सभी के मूल आप ही हैं। आपको नमन करने से अमंगलों का अभाव हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वीय जन्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३२।।

सूर्य सुमेरु समान हौ, या सुरतरु की ठौर।
महा पुन्य की राशि हौ, सिद्ध नमूँ कर जोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यांगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३३।।

अर्थ : सूर्य के समान, सुमेरु के समान, कल्पवृक्ष के स्थान/समान महा-पुण्य की राशि सिद्ध भगवान को हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य अंग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३३।।

ज्यौं सूरज मध्यान्ह में, दिपै अनंत प्रभाव।
त्यों तुम ज्ञान कला दिपै, मिथ्या तिमिर अभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं भास्वते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३४।।

अर्थ : जिसप्रकार मध्यान्ह/दोपहर में सूर्य का प्रभाव अनन्त रूप में देदीप्यमान होता है; उसीप्रकार मिथ्यात्व रूपी अन्धकार का अभाव करने वाली आपकी ज्ञान कला देदीप्यमान होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं भास्वत/प्रकाशमान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३४।।

चहुँविधि देवन में सदा, तुम सम देव न आन।
निजानंद में केलिकर, पूजत हूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्‌भुत-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३५।।

अर्थ : अपने आनन्द में केली/रमण करने वाले आपके समान देव, चारों प्रकार के देवों में सदा ही अन्य कोई नहीं है। मैं ध्यान धरकर आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्‌भुत देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३५।।

विश्व ज्ञान युगपत धरैं, ज्यूँ दर्पण आकार।
स्वपर प्रकाशक हौ सही, नमूँ भक्ति उरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ज्ञातृ-सम्भृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३६।।

अर्थ : दर्पण के समान वास्तविक स्व-पर प्रकाशक होने से आप एक साथ सम्पूर्ण विश्व को जानते हैं। हृदय में भक्ति को धारण कर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ज्ञाता-सम्भृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३६।।

सत-स्वरूप सत-ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान।
पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३७।।

अर्थ : सत् स्वरूप, सत् ज्ञान वाले आप ही पूज्यों में प्रधान होने से आपको प्रामाणिक देव मानकर विश्व के व्यक्ति आपकी सदा ही पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३७।।

सृष्टि कौं सुख करत हौ, हरत दुक्ख भववास।
मोक्ष लक्षमी देत हौ, जन्म-जरा-मृत नास।।

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टि-निर्वृत्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३८।।

अर्थ : आप संसार-वास के दु:ख का हरण कर सृष्टि को सुखमय करते हैं तथा जन्म, जरा, मृत्यु का नाशकर मोक्ष-लक्ष्मी देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टि-निर्वृत्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३८।।

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार।
मोक्ष लहै सो नेमतैं, मैं पूजूँ मनधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्राक्ष-दृगुत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३९।।

अर्थ : हजार नेत्र बनाकर आपके अपार रूप को देखने वाला इन्द्र नियम से मोक्ष प्राप्त करता है। मन में धारण कर मैं आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्र अक्ष दृग/हजार नेत्रों द्वारा देखने वाले उत्सव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२३९।।

संपूरण निज शक्ति के, हैं परताप अनन्त।
सो तुम विस्तीरण करौ, नमें चरण नित संत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-शक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४०।।

अर्थ : आपने अपनी सम्पूर्ण शक्तिओं के अनन्त प्रताप को विस्तृत कर लिया है। सन्त कवि सदा आपके चरणों में नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व शक्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४०।।

ऐरावत पर रूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड।
पूजत हैं सो भक्ति सों, मेटि भवार्णव हांड।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवैरावतासीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४१।।

अर्थ : ऐरावत हाथी पर आरूढ़ कर देव नृत्य करते हुए भक्ति पूर्वक आपकी पूजन करके संसार-सागर के दुःखों को समाप्त कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-ऐरावत-आसीन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४१।।

सुर नर चारण मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश।
परिपूरण हर्षात हैं, पूरैं मन की आश।।

ॐ ह्रीं अर्हं हर्षाकुलामर-खग-चारणर्षि-मतोत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४२।।

अर्थ : आकाश में सुलभता से गमन करने वाले देव, विद्याधर मनुष्य, चारण ऋद्धिधारी मुनिराज आपकी पूजन से परिपूर्णता को प्राप्त कर हर्षित हो अपने मन की आशाएँ पूर्ण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं हर्ष से आकुल देव, विद्याधर, चारण ऋद्धि-युक्त ऋषि-सम्पन्न उत्सव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४२।।

रक्षक हो षट् काय के, शरणागत प्रतिपाल।
सर्वव्यापि निज-ज्ञानतैं, पूजत होंय निहाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४३।।

अर्थ : षट्कायिक जीवों के रक्षक, शरणागत के प्रतिपालक, अपने ज्ञान से सर्व व्यापक

आपकी पूजन करने से निहाल हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णु/सर्व-व्यापक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४३।।

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेर विख्यात।
जन्माभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नान-पीठैतादृश-राजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४४।।

अर्थ : सुमेरु पर्वत पर प्रभु का महा उच्च आसन प्रसिद्ध है। वहाँ सुरेन्द्र जन्माभिषेक कर मन में अत्यन्त हर्षित होता हुआ आपकी पूजन करता है।

ॐ ह्रीं अर्हं पर्वत पर स्थित स्नान पीठ पर शोभायमान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४४।।

जाकरि तरिए तीर्थ सो, मानैं मुनि गण मान्य।
तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है, असत्यार्थ हैं अन्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-सामान्य-दुग्धाब्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४५।।

अर्थ : जिससे तिरा जाए, वह तीर्थ है। आपके समान दूसरा कौन श्रेष्ठ है? अन्य सभी तो असत्यार्थ हैं - ऐसा मान्य मुनिओं के समूह मानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसामान्य दुग्ध सागर/क्षीर सागरमय भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं.।।२४५।।

लोकस्नान गिलानता, मेटै मैल शरीर।
आतम प्रक्षालित कियौ, तुम्हीं ज्ञान सु नीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानाम्बू-स्वावासवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४६।।

अर्थ : लौकिक स्नान ग्लानि और शरीर के मैल को नष्ट करता है। आपने ज्ञानरूपी जल से आत्मा को प्रक्षालित किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नान अम्बु स्नात वासव/ज्ञानरूपी जल से स्नान-द्वारा वासना को धो देने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४६।।

तारण तरण सुभाव है, तीन लोक विख्यात।
ज्यौं सुगंध चम्पाकली, गन्धमई कहलात।।

ॐ ह्रीं अर्हं गन्ध-पवित्रित-त्रिलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४७।।

अर्थ : जैसे चम्पा की सुगन्धित कली गन्धमई कहलाती है; उसीप्रकार आपका तारण-तरण स्वभाव तीनों लोकों में प्रसिद्ध है।

ॐ ह्रीं अर्हं गन्ध पवित्रित त्रिलोक/तीनों लोकों को अपनी गन्ध से पवित्र करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४७।।

सूक्ष्म तथा स्थूल में, ज्ञान करै परवेश।
जाकौ तुम जानौं नहीं, खाली रहौ न देश।।

ॐ ह्रीं अर्हं वज्र-सूचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४८।।

अर्थ : सूक्ष्म और स्थूल – सभी पदार्थों में आपका ज्ञान प्रवेश करता है/सभी को जानता है। ऐसा एक भी प्रदेश नहीं है, जिसे आप नहीं जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं वज्र सूची/वज्र की सुई के समान सभी में प्रविष्ट/सर्वज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४८।।

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्म धूलि को टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि-स्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४९।।

अर्थ : निर्मल, पवित्र आचरण से अन्य को आनन्दित करने वाले हे प्रभु! आप कर्मरूपी धूली को नष्ट कर पवित्र हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि-श्रव/पवित्रता-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२४९।।

कर्मों करि किरतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय।
कर पर कर राजत प्रभू, बंदूँ हूँ युग पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थ-कृत-हस्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५०।।

अर्थ : किए हुए का उत्तम फल प्राप्त कर लिया होने के कारण आप कर्मों से कृतार्थ हो गए हैं। हाथ पर हाथ रखे शोभायमान हे प्रभु! मैं आपके चरण-युगलों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थ कृत हस्त/करने-योग्य सब कुछ कर लिया होने से कृतार्थ हुए हाथ-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५०।।

दर्शन इन्द्र अघात हैं, इष्ट मान उर माँहि।
कर्म नाशि शिवपुर बसैं, मैं बंदूँ हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५१।।

अर्थ : हृदय में इष्ट मानकर इन्द्र आपके दर्शन से संतुष्ट हो जाता है। कर्म का नाशकर मोक्ष-नगर में बसने वाले आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्र-इष्ट/इन्द्र को रुचिकर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५१।।

मघवा जाके नृत्य करि, ताकै तृप्ति महान।
सो मैं उनकौं जजत हूँ, होय कर्म की हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्र-नृत्य-तृप्तिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५२।।

अर्थ : इन्द्र जिनके समक्ष नृत्य कर महा तृप्ति का वेदन करता है; मैं अपने कर्मों को समाप्त करने के लिए उनकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्र-नृत्य-तृप्तिक/नृत्य करते हुए इन्द्र को तृप्त करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५२।।

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन दासन के दास।
निश्चय मन में नमन कर, नित वंदित पद जास।।

ॐ ह्रीं अर्हं शची-विस्मापिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५३।।

अर्थ : शची इन्द्रानी, इन्द्र और कामदेव जिनेन्द्र भगवान के दासों के दास हैं - ऐसा मन में निश्चय कर, उन्हें नमन कर, उनके चरणों की हम सदा वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शची-विस्मापित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५३।।

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय।
जन्म सुफल मानैं सदा, हम पर होउ सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानंद-नृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५४।।

अर्थ : जिनके सम्मुख नृत्य कर हर्षित होता हुआ इन्द्र सदा अपना जन्म सफल मानता है; वे भगवान हमारी सहायता करें।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्र-आरब्ध-आनन्द-नृत्य/इन्द्र द्वारा प्रारम्भ किए गए आनन्द नृत्य वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५४।।

धन सुवर्ण तैं लोक में, पूरण इच्छा होय।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं रैद-पूर्ण-मनोरथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५५।।

अर्थ : लोक में धन, सुवर्ण से इच्छाओं की पूर्ति होती है। आपकी पूजन करने से तो चक्रवर्ती पद प्राप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं रैद-पूर्ण-मनोरथ/इच्छाओं को पूर्ण करने वाले धन/भगवान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५५।।

तुम आज्ञा में हैं सदा, आप मनोरथ मान।
इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान।।

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीन्द्र-कृत-सेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५६।।

अर्थ : आपकी आज्ञा में अपना मनोरथ मानकर और इसे ही पाप-विनाशक जानकर इन्द्र सदा-सदा इसका ही सेवन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञा-अर्थी इन्द्र-कृत सेवा/आज्ञा के इच्छुक इन्द्र द्वारा जिनकी सेवा की जा रही है; उन्हें नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५६।।

सब देवन में श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज।
सब देवन के इष्ट हो, बंदत सुलभ सुकाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-श्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५७।।

अर्थ : सभी देवों में श्रेष्ठ, सभी देवों में शिरोमणि, सभी देवों के इष्ट आपकी वन्दना करने से सभी समीचीन कार्य सुलभ हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-श्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५७।।

तीन लोक में उच्च हौ, तीन लोक परशंस।
सो शिवगति पायौ प्रभु, जजत कर्म विध्वंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवौद्यमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५८।।

अर्थ : तीनों लोकों में उच्च, तीनों लोकों में प्रशंसनीय, मोक्ष दशा को प्राप्त प्रभु की पूजन करने से कर्म समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-उद्यम/मोक्ष-पुरुषार्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५८।।

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट।
हित उपदेशक परमगुरु मुनिजन मानैं इष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्य-शिव-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५९।।

अर्थ : जगत में पूज्य, मोक्ष के स्वामी, विशिष्ट द्रव्य, आपको, मुनिजन हित का उपदेश देने वाले परम गुरु, इष्ट मानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-पूज्य शिवनाथ/मोक्ष के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२५९।।

मति, श्रुत, अवधि अवर्ण कौ, नाश कियौ स्वयमेव।
केवल ज्ञान स्वतै लियौ, आप स्वयंभू देव।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-भुवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६०।।

अर्थ : मति-ज्ञानावरण, श्रुत-ज्ञानावरण, अवधि-ज्ञानावरण (मन:पर्यय-ज्ञानावरण, केवल-ज्ञानावरण) का स्वयं ही नाश कर आपने स्वयं से ही केवलज्ञान प्राप्त कर लिया है; अत: आप स्वयं-भू देव हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-भू/स्वयं से सर्वज्ञ हुए के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६०।।

समोसरण अद्भुत महा, और लहै नहीं कोय।
धनपति रचो उछाह सौं, मैं पूजूँ हूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कुबेर-रचित-स्थानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६१।।

अर्थ : महा अद्भुत समवसरण आपके अतिरिक्त अन्य कोई प्राप्त नहीं कर पाता है। धनपति/कुबेर अति उत्साह पूर्वक इसकी रचना करता है। मैं उसमें स्थित आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं कुबेर-रचित स्थान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६१।।

जाकौ अन्त न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ।
सोई शिवपुर के धनी, नमूँ भाव धरि नाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-श्री-जुषे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६२।।

अर्थ : जिसका कभी अन्त नहीं है, उस ज्ञान लक्ष्मी के नाथ ही शिव-पुर के स्वामी हैं। हे नाथ! मैं भाव पूर्वक आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-श्री-जुष/सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६२।।

गणधरादि नित ध्यावतैं, पावैं शिवपुर वास।
परम ध्येय तुम नाम है, पूरै मन की आस।।

ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६३।।

अर्थ : गणधर आदि सदा आपका ध्यान करते हुए शिव-पुर का वास प्राप्त कर लेते हैं; अतः मन की आशा पूर्ण करने वाले आपका नाम परम ध्येय है।

ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वर-अर्चित/पूजित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६३।।

परम ब्रम्ह का लाभ हो, तुम पद पायौ सार।
त्रिभुवन ज्ञाता हौ सही, नय निश्चय-व्यवहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-विदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६४।।

अर्थ : सारभूत पद/सिद्ध दशा प्राप्त हो जाने के कारण आपको परम ब्रम्ह का लाभ हो गया है। आप तीनों लोकों के और निश्चय-व्यवहार नय के वास्तविक ज्ञाता हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-विद/आत्मा/विश्व को जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६४।।

सर्व तत्त्व के आदि में, ब्रम्ह तत्त्व परधान।
तिसके ज्ञाता हौ प्रभु, मैं बंदूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-तत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६५।।

अर्थ : सभी तत्त्वों के प्रारम्भ में ब्रम्ह तत्त्व प्रधान है। आप उसके ज्ञाता हैं। हे प्रभु! मैं ध्यान धारण कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह तत्त्व के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६५।।

द्रव्य भाव द्वै विधि कही, यज्ञ यजन की रीति।
सो सब तुमही हेत हैं, रचत नशै सब भीति।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञ-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६६।।

अर्थ : पूज्य की पूजन करने की पद्धति द्रव्य और भावरूप में दो प्रकार की कही हैं। वे सभी आपकी पूजन के लिए ही हैं। आपकी पूजन करने से समस्त भय समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञ-पति/पूजन के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६६।।

महादेव शिवनाथ हौ, तुमकौं पूजत लोक।
मैं पूजूँ हूँ भाव सौं, मेटौ मन कौ शोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६७।।

अर्थ : महान देव, शिव के स्वामी आपकी पूजन लोक करते हैं। मैं भाव पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ; आप मेरे मन का शोक समाप्त कर दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवनाथ/मोक्ष के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६७।।

कृत्य भये निज भाव में, सिद्ध भये सब काज।
पायौ निज पुरुषार्थ कौं, बंदूँ सिद्ध समाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृत-कृत्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६८।।

अर्थ : आपने अपने भाव में करने-योग्य सभी कार्यों को करके, सभी कार्य सिद्ध कर अपने पुरुषार्थ को प्राप्त कर लिया है। मैं सिद्ध-समूह की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं कृत-कृत्य/करने-योग्य सब कर लेने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६८।।

यज्ञविधान के अंग हौ, मुख नामी परधान।
तुम बिन यज्ञ न हो कभी, पूजत हो कल्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञांगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६९।।

अर्थ : आप पूजन-विधान के प्रमुख, प्रसिद्ध, प्रधान अंग हैं। आपके विना यज्ञ कभी नहीं होता है। आपकी पूजन करने से कल्याण होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञ अंग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२६९।।

मरण रोग के हरण सैं, अमर भये हौ आप।
शरणागत कौ अमरकर, अमृत हौ निष्पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७०।।

अर्थ : आप मरण रूपी रोग का हरण कर अमर हो गए हैं। शरणागत को अमर करने वाले आप, पापों से पूर्णतया रहित अमृत हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७०।।

पूजन विधि स्थान हौ, पूजत शिवसुख होय।
सुर नर नित पूजन करैं, मिथ्या मति कौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७१।।

अर्थ : पूजन-विधि के स्थान आपकी पूजन करने से शिव-सुख होता है। मिथ्या मति को समाप्त कर देव, मनुष्य सदा आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७१।।

जो हौ सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक।
वस्तु सुभाव यही कहौ, बंदूँ सिद्ध प्रत्येक।।

ॐ ह्रीं अर्हं वस्तूत्पादकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७२।।

अर्थ : सामान्य से आप जो हैं, वही होने पर भी अनेक विशेषताओं के धारक हैं। आपने वस्तु का स्वभाव भी यही कहा है। मैं प्रत्येक सिद्ध भगवान की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं वस्तु-उत्पादक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७२।।

इन्द्र सदा तुम थुति करैं, मन में भक्ति उपाय।
सर्व शास्त्र में तुम थुति, गणधरादि करि गाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७३।।

अर्थ : मन में भक्ति प्रगट कर इन्द्र सदा आपकी स्तुति करते हैं। सभी शास्त्रों में गणधर आदि ने भी आपकी स्तुति गाई है।

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुति के ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७३।।

मगन रहौ निज तत्त्व में, द्रव्य भाव विधि नाश।
जो है सो है विविध विध, नमूँ अचल अविनाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७४।।

अर्थ : द्रव्य-कर्म और भाव-कर्म का नाश कर आप अपने तत्त्व में मग्न रहते हैं। जो है, वही अनेक प्रकार का, अचल और अविनाशी है। मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७४।।

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं महपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७५।।

अर्थ : तीनों लोकों के शिरोमणि, इन्द्रादि द्वारा पूज्य, धर्म के स्वामी, जगत के प्रतिपालक आपके समान अन्य कोई नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं महपति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७५।।

महाभाग सरधानतैं, तुम अनुभव करि जीव।
सो पुनि सेवत पाप तज, निज सुख लहैं सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-यज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७६।।

अर्थ : जो महा भाग्य-शाली जीव श्रद्धा पूर्वक आपका अनुभव कर, पापों का परित्याग कर आपकी सेवा करते हैं; वे सदैव अपने आत्मिक सुख को प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा यज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२७६।।

यज्ञ-विधि उपदेश में, तुम अग्रेश्वर जान।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्र-याजकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७७।।

अर्थ : यज्ञ/पूजन की पद्धति के उपदेश में आप अग्रेश्वर हैं। आप ही यज्ञ कराने वाले/विधानाचार्य हैं और आप ही यजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्र-याजक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥२७७॥

तीन लोक के पूज्य हौ, भक्तिभाव उर धार।
धर्म-अर्थ अरु मोक्ष के, दाता तुम हौ सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२७८॥

अर्थ : हृदय में भक्ति-भाव धारण कर तीनों लोकों के आप ही पूज्य हो। आप ही सारभूत/उत्कृष्ट धर्म, अर्थ और मोक्ष के दाता हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥२७८॥

दया मोह पर पापतैं, दूर भये स्वैतंत्र।
ब्रम्हज्ञान में लय सदा, जपूँ नाम तुम मंत्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयापराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२७९॥

अर्थ : दया, मोह, पर और पाप से पूर्णतया रहित हो स्वतन्त्रता पूर्वक ब्रम्ह ज्ञान में सदा लीन रहने वाले आपके नाम रूपी मंत्र का हम सदा जाप करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दयापर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥२७९॥

तुम ही पूजन योग्य हौ, तुम ही हौ आराध्य।
महा साधु सुख हेतुतैं, साधैं हैं निज साध्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८०॥

अर्थ : पूजन के योग्य, आराधना के योग्य आप ही हैं। सुख के लिए महा साधु अपने साध्य/शाश्वत भगवान आत्मा की साधना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्य-अर्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥२८०॥

निज पुरुषारथ सधन कौं, तुमको अर्चत जक्त।
मनवांछित दातार हौ, शिव सुख पावैं भक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगदर्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८१॥

अर्थ : अपने पुरुषार्थ को साधने के लिए संसारी जीव आपकी अर्चना करते हैं। आप मनोवांछित दाता हैं; अतः आपके भक्त शिव-सुख प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-अर्चित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...॥२८१॥

ध्यावत हैं नित प्रति तुम्हैं, देव चार परकार।
तुम देवन के देव हौ, नमूँ भक्ति उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८२॥

अर्थ : आप देवों के देव हैं; अत: चारों प्रकार के/भवन-वासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क, वैमानिक देव सदा आपका ध्यान करते हैं। हृदय में भक्ति धारण कर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८२।।

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव।
ध्यावत हैं नित भावसौं, मोक्ष लहैं स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रार्चिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८३।।

अर्थ : इन्द्र के समान भक्त और आपके समान देव कोई अन्य नहीं है। जो आपका ध्यान सदा भाव पूर्वक करते हैं, वे स्वयं ही मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्र-अर्चित/इन्द्र द्वारा पूजित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८३।।

तुम देवन के देव हौ, सदा पूजने योग्य।
जे पूजत हैं भावसौं, भोगैं शिवसुख भोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-देवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८४।।

अर्थ : देवों के देव आप सदा पूजने-योग्य हैं। जो आपकी भाव पूर्वक पूजन करते हैं, वे शिव-सुख के भोग भोगते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८४।।

तीन लोक सिरताज हौ, तुम से बड़ा न कोय।
सुर नर पशु खग ध्यावते, दुविधा मन की खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्-गुरवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८५।।

अर्थ : तीनों लोकों के शिरोमणि आपसे बड़ा कोई नहीं है। मन की दुविधा को समाप्त कर देव, मनुष्य, पशु, पक्षी - सभी आपका ध्यान करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत गुरु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८५।।

जो हौ सो ही तुम सही, नहीं समझ में आय।
सुर नर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणी कौं पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं संहूत-देव-संघार्चाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८६।।

अर्थ : आप जो हैं, वही वास्तविक हैं; हमारे ज्ञान-गोचर नहीं हैं। आपकी वाणी को प्राप्त कर देव, मनुष्य, मुनि - सभी आपका ध्यान करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं संहूत/आए हुए देव-संघ से पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८६।।

ज्ञानानन्द स्वलक्षमी, ताके हौ भरतार।
स्वसुगंध वासित रहौ, कमल गंध की सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्म-नन्दाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८७।।

अर्थ : जिसप्रकार कमल अपनी सुगन्ध से सुगन्धित है; उसीप्रकार ज्ञानानन्दमय अपनी

लक्ष्मी के स्वामी आप अपनी सुगन्ध से सुगन्धित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्म-नन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८७।।

सब कुवादि वादी हते, बज्र शैल उनहार।
विजयध्वजा फहरात हैं, बंदूँ भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जय-ध्वजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८८।।

अर्थ : जैसे बज्र पर्वत को नष्ट कर देता है; उसीप्रकार सभी कुवादी/मिथ्या कथन करने वाले वादिओं को नष्ट कर आपकी विजय-ध्वजा फहरा रही है। भक्ति और विचार पूर्वक मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जय-ध्वज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८८।।

(अब, इन दो सौ नवासी से दो सौ छ्यानवै पर्यन्त आठ छन्दों द्वारा आठ प्रातिहार्य की अपेक्षा भगवान का गुणगान कर रहे हैं।)

दशों दिशा परकाश हैं, तिनकी ज्योति अमंद।
भविजन कुमुद विकास हौ, बंदूँ पूरणचंद।।

ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डलिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८९।।

अर्थ : जिनकी तीव्र ज्योति दशों दिशाओं को प्रकाशित करती है; उन भव्य जीवों रूपी कुमुदों को विकसित करने के लिए पूर्ण चन्द्रमा के समान आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डली/प्रभा-मण्डल से सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२८९।।

चमरनि करि भक्ति करैं, देव चार परकार।
यह विभूति तुम ही विषैं, बंदूँ पाप निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुःषष्टी-चामराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९०।।

अर्थ : चारों प्रकार के/भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क, वैमानिक देव चँवरों द्वारा आपकी भक्ति करते हैं। यह विभूति/वैभव आपमें ही है। मैं पापों का त्याग कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चौंषठ चँवर-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९०।।

देव दुंदुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार।
तथा आप परसिद्ध हौ, ढोल शब्द उनहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-दुंदुभये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९१।।

अर्थ : दुन्दुभी बजा कर देव ढोल की ध्वनि के समान प्रसिद्ध आपकी, सदा जय-जयकार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं देव-दुन्दुभी-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९१।।

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इकसार।
अक्षरार्थ नहिं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं वाङ्-स्पष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९२।।

अर्थ : संशय, मोह के निवारक अक्षरों का अर्थ करने में भ्रम नहीं होने के कारण सभी जीव आपकी वाणी का मनन कर तत्त्व को एक समान समझ लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं वाक्-स्पष्ट/वाणी की स्पष्टता-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९२।।

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान।
तथा स्व-आसन पाइयौ, अचल रहौ शिवथान।।

ॐ ह्रीं अर्हं लब्धासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९३।।

अर्थ : अपने आसन/शाश्वत आत्मा को प्राप्त कर, मोक्ष-स्थान में अचल रहने वाले आपको महा प्रभु जानकर धनपति/कुबेर ने आपके आसन की रचना की है।

ॐ ह्रीं अर्हं लब्ध-आसन/आसन को प्राप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९३।।

तीन लोक के नाथ हौ, तीन छत्र विख्यात।
भव्य-जीव तुम छाँह में, सदा स्व-आनंद पात।।

ॐ ह्रीं अर्हं छत्र-त्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९४।।

अर्थ : भव्य जीव आपकी छाया में सदा अपने आनन्द को प्राप्त करते हैं; अतः आप तीन लोक के नाथ हैं - ऐसा तीन छत्र प्रसिद्ध करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं छत्र-त्रय-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९४।।

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मँझार।
तुम सुगंध दशदिश रमी, भविजन भ्रमर निहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्प-वृष्टये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९५।।

अर्थ : देव तीनों कालों में पुष्प-वृष्टि करते हैं। दशों दिशाओं में फैल रही आपकी सुगन्ध को भव्य जीव रूपी भौंरे ग्रहण कर रहे हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्प-वृष्टि-सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९५।।

देवन रचित अशोक है, वृक्ष महा रमणीक।
समोसरण सोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्याशोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९६।।

अर्थ : महा रमणीय, समवसरण की शोभा का स्वामी, शोक को समाप्त करने में समर्थ यह अशोक वृक्ष देव-रचित है।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य-अशोक से सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९६।।

(यहाँ आठ प्रातिहार्यों का प्रकरण समाप्त हुआ।)

मानस्तम्भ निहार कैं कुमतिन मान गलाय।
समोसरण प्रभुता कहै, नमूँ भक्ति उर लाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं मानस्थम्भाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९७।।

अर्थ : मानस्तम्भ को देखने से मिथ्यात्विओं का मान गल जाता है। यह समवसरण की प्रभुता को बताता है। हृदय में भक्ति लाकर उसे नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मानस्थम्भ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९७।।

सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुण गान।
भक्ति भाव उर में जगै, बंदत श्री भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं संगीतार्हाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९८।।

अर्थ : देवांगनाएं संगीत पूर्वक आपके शुभ गुणों का गान करती हैं; जिससे हृदय में भक्ति का भाव जागृत होता है। उन श्री भगवान की हम वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं संगीत के योग्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९८।।

मंगल सूचक चिन्ह हैं, कहे अष्ट परकार।
तुम समीप राजत सदा, नमूँ अमंगल टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्ट-मंगलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९९।।

अर्थ : आठ प्रकार के बताए गए मंगल-सूचक चिन्ह आपके समीप सदा सुशोभित हैं। मैं अमंगल को नष्ट कर आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्ट मंगल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।२९९।।

भविजन तरिये तीर्थ सो, तुम हौ श्रीभगवान।
कोई न भंगै आन जिन, तीर्थचक्र सो जान।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-चक्रवर्तिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३००।।

अर्थ : भव्य जीव जिससे संसार को पार करते हैं, वह तीर्थ, हे श्री भगवान! आप ही हैं। इस तीर्थ-चक्र को जानकर कोई भी आपके सम्मान का उल्लंघन नहीं करता है।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-चक्रवर्ती के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३००।।

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमावगाढ़।
संशय आदिक मैटिकै, नासौ सकल विगाढ़।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०१।।

अर्थ : आप निश्चय परमावगाढ़ रूप सम्यग्दर्शन के धारक हैं। आपने संशय आदि नष्ट कर सभी विरोधों को पूर्णतया समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०१।।

कर्ता हौ शिव काज के, ब्रम्हा जग की रीति।
वर्णाश्रम कौ थापकैं, प्रकटायी शुभ नीति।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०२।।

अर्थ : जगत की पद्धति के अनुसार मोक्ष रूपी कार्य के कर्ता होने से आप ब्रम्हा हैं। आपने वर्ण और आश्रम की स्थापना कर शुभ नीति प्रगट की है।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०२।।

सत्य धर्म प्रतिपालकैं, पोषत हौ संसार।
यति श्रावक दो धर्म के, भये नाथ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-भर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०३।।

अर्थ : सत्य धर्म का प्रतिपालन करके आप संसार का पोषण करते हैं। हे सुख-कारक आप! मुनि और श्रावक - इन दोनों धर्मों के स्वामी हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थभर्ता/तीर्थ के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०३।।

धर्मतीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हौ तुम स्वामि।
धर्म नाथ तुम जानकैं, नितप्रति करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०४।।

अर्थ : मुनिराज धर्म-तीर्थ हैं। आप उनके भी स्वामी होने से धर्म के नाथ हैं - ऐसा जानकर मैं सदा आपको प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थ-ईश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०४।।

लोक तीर्थ में गिनत हैं, धर्मतीर्थ परधान।
सो तुम राजत हौ सदा, मैं बन्दूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०५।।

अर्थ : लोक में तीर्थों की अपेक्षा सभी में धर्म-तीर्थ ही प्रधान माने जाते हैं। वे आपसे ही सुशोभित हैं। मैं सदा ध्यान पूर्वक आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थ करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०५।।

तुम बिन धर्म न हो कभी, ढूँढ़ो सकल जहान।
दश-लक्षण स्वधर्म के, तीरथ हौ परधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थ-युताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०६।।

अर्थ : सम्पूर्ण विश्व में खोज लेने पर भी आपके विना धर्म कभी नहीं होता है। दश लक्षणमय अपने धर्म के आप प्रधान तीर्थ हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थ-युत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०६।।

धर्म तीर्थ करतार हौ, श्रावक या मुनिराज।
दोनों विधि उत्तम कहौ, स्वर्ग मोक्ष के काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थङ्कराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०७।।

अर्थ : धर्म-तीर्थ के कर्ता आप स्वर्ग और मोक्ष के लिए श्रावक या मुनिराज - दोनों ही प्रकार के धर्म को उत्तम बताते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थंकर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०७।।

तुमसे धर्म चलै सदा, तुम्ही धर्म के मूल।
सुरनर मुनि पूजैं सदा, छिदहिं कर्म के शूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-प्रवर्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०८।।

अर्थ : धर्म सदा आपसे ही चलता है; आप धर्म के मूल हैं। देव, मनुष्य, मुनि सदा आपकी पूजन करते हैं; जिससे उनके कर्म के काँटे/कर्मोदय की निमित्तता में होने वाले दु:ख नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-प्रवर्तक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०८।।

धर्मनाथ जग में प्रगट, तारण तरण जिहाज।
तीन लोक अधिपति कहौ, बन्दूँ सुख के काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-वेधसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०९।।

अर्थ : हे धर्मनाथ! आप जगत में संसार से पार उतरने के लिए तारण-तरण जहाज के रूप में प्रगट/प्रसिद्ध हैं। तीन लोक के अधिपति कहे गए आपकी मैं सुख के लिए वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-वेध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३०९।।

श्रावक या मुनि धर्म के, हौ दिखलावनहार।
अन्य लिंग नहिं धर्म के, बुधजन लखौ विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-विधायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१०।।

अर्थ : आप श्रावक धर्म और मुनि धर्म को बताते हैं। हे ज्ञानी जनो! विचार कर देखो! इन दोनों के अतिरिक्त धर्म के अन्य कोई लिंग/चिन्ह नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-विधायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१०।।

स्वर्ग मोक्ष दातार हौ, तुम्हीं मार्ग सुखदान।
अन्य कुभेषिन में नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य-तीर्थकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३११।।

अर्थ : स्वर्ग-मोक्ष के दाता आप ही सुख को देने वाला मार्ग बताते हैं। अन्य खोटे भेष वालों में/को धर्म का यथार्थ ज्ञान नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य तीर्थकर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३११।।

सेवन योग्य सु जगत में, तुम्हीं तीर्थ हौ सार।
सुर नर मुनि सेवन करैं, मैं बन्दूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-सेव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१२।।

अर्थ : जगत में सेवन करने-योग्य सारभूत तीर्थ आप ही हैं। देव, मनुष्य, मुनि उसी का सेवन करते हैं। सुख-कारक उस तीर्थ को मैं वंदन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-सेव्य/सेवन करने-योग्य तीर्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१२।।

भवि समुद्र भव सैं तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय।
हौ तारण तिहुँ लोक में, सेवत हूँ तुम पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-तारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१३।।

अर्थ : भव्य जीव (आपके मार्ग का अवलम्बन ले) संसार-सागर से पार हो जाते हैं; अतः आप तीर्थ कहलाते हैं। आप तीनों लोकों में तारण-हार हैं। मैं आपके चरणों की सेवा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-तारक/पार करने वाले तीर्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१३।।

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम बैन।
धर्म सुमार्ग प्रवर्तको, तुम राजत हो ऐन।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य-वाक्याधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१४।।

अर्थ : इच्छाओं से पूर्णतया रहित आपके वचन सभी पदार्थों के प्रकाशक/प्रतिपादक हैं। धर्म के समीचीन मार्ग के प्रवर्तक आप उनसे विशेष रूप में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य वाक्य के अधिप/स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१४।।

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय।
सो उपदेशक आप हौ, तिस संकेत कहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य-शासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१५।।

अर्थ : जो धर्म के मार्ग को प्रगट करता है, वह शासन कहलाता है। उसका संकेत कहने वाले आप उसके उपदेशक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य-शासन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१५।।

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश।
नेमरूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१६।।

अर्थ : ज्ञानावरण का विनाश कर आप अतिशय-युक्त सर्वज्ञ हैं। जो भव्य जीव आपका उपदेश नियम रूप से सुनते हैं; वे शिव-सुख का प्रकाश करते हैं/मोक्ष-सुख प्रगट करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१६।।

कहैं कथञ्चित् धर्म कौं, स्यात् वचन सुखकार।
सो प्रमाणतैं साधियौ, नय निश्चय-व्यवहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१७।।

अर्थ : आप (वस्तु के) धर्मों को सुख-कारक कथंचित् स्यात् वचन द्वारा प्रमाण से सिद्ध कर निश्चय नय और व्यवहार नय द्वारा निरूपित करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१७।।

निर अक्षर वाणी खिरै, दिव्य मेघ की गर्ज।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य-ध्वनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१८।।

अर्थ : बादलों की गर्जना के समान आपकी वाणी निरक्षरी/अक्षर-रहित खिरती है और भव्य जीवों के मन की विनती सुनकर अक्षर-अर्थ रूप परिणमित हो जाती है।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य-ध्वनि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१८।।

नय प्रमाण नहीं हतत हैं, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुख के साधन विषैं, नहीं गिनत हैं व्यर्थ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहतार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१९।।

अर्थ : आपके द्वारा प्रकाशित पदार्थ का नय और प्रमाण खण्डन नहीं करते हैं; इसीलिए उन्हें मोक्ष-सुख के साधनों में व्यर्थ नहीं माना जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहत अर्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३१९।।

करै पवित्र सु आत्मा, अशुभ कर्ममल खोय।
पहुँचावै ऊँची सुगति, तुम दिखलाओ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२०।।

अर्थ : आपके द्वारा निरूपित मार्ग अशुभ कर्म-मल को नष्ट कर, आत्मा को पवित्र कर ऊँची, अच्छी गति में पहुँचा देता है।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य वाक्/पवित्र वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२०।।

तत्त्वारथ तुम भासियौ, सम्यक् विषैं प्रधान।
मिथ्या जहर निवारणं, अमृत पान समान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थ-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२१।।

अर्थ : मिथ्यात्व रूपी जहर के निवारक, अमृत-पान के समान आपके सम्यग्ज्ञान परक वचनों में मुख्य रूप से तत्त्वार्थ प्रतिपादित हुए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाक्/पदार्थों का निरूपण करने वाली वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२१।।

देव अतिशयसौं खिरत ही, अक्षरार्थ मय होय।
दिव्यध्वनि निश्चय करै, संशय तम कौ खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्ध-मागधी-युक्तये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२२।।

अर्थ : खिरते ही देव-कृत अतिशय द्वारा अक्षर और अर्थमय हो जाने वाली दिव्य-ध्वनि वास्तव में संशय रूपी अन्धकार का नाश कर देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्ध-मागधी-युक्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२२।।

सब जीवन कौं इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास।
सो तुमने दिखलाइयौ, संशय मोह विनाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं इष्ट-वाचे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२३।।

अर्थ : संशय और मोह का विनाश कर आपने सभी जीवों के लिए इष्ट अपने आनन्दमय निवास रूप मोक्ष को दिखाया है।

ॐ ह्रीं अर्हं इष्ट-वाक्/हित-कारी वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२३।।

नय प्रमाण ही कहत हैं, द्रव्य पर्याय सु भेद।
अनेकान्त साधै सही, वस्तु भेद निरखेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनेकांत-दर्शिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२४।।

अर्थ : द्रव्य और पर्याय के भेदों को नय और प्रमाण ही बताते हैं। खेद से रहित हो वस्तु के भेदों को यथार्थ रूप में अनेकान्त ही साधता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनेकान्त-दर्शी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२४।।

दुर्नय कहत एकांत कौं, ताकौ अन्त कराय।
सम्यक्मति प्रकटाइयौ, पूजूँ तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नयांतकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२५।।

अर्थ : (मिथ्या/सर्वथा) एकान्त को दुर्नय कहते हैं। उनका अन्त कर सम्यक् मति प्रगट करने वाले के चरणों की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नय-अन्तक/दुर्नय को नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२५।।

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताकौ तिमिर निवार।
स्याद्वाद सम न्यायतैं, भविजन तारे पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं एकांत-ध्वांत-भिदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२६।।

अर्थ : (किसी भी वस्तु का मात्र) एक पक्ष मानना, मिथ्यात्व है। उसके अन्धकार का निवारण कर, स्याद्वाद रूपी समीचीन न्याय द्वारा आप भव्य जीवों को संसार-सागर से पार कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं एकान्त-ध्वान्त-भिद/एकान्त रूपी अन्धकार को नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२६।।

जो है सो निज भाव में, रहै सदा निरवार।
मोक्ष साध्य में सार है, सम्यक् विषैं अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२७।।

अर्थ : वस्तु का जो भाव है, वह सदा बाधाओं से पूर्णतया रहित हो उसी में रहता है। सम्यक् साध्यों में असीम सारभूत मात्र मोक्ष ही है।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्ववाक्/तत्त्व का निरूपण करने वाले वचनों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२७।।

निज गुण निज परयाय में, सदा रहौ निरभेद।
शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हौ, पूजूँ हूँ निरखेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं पृथक्कृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२८।।

अर्थ : अपने गुण और अपनी पर्यायों में आप सदा भेदों से पूर्णतया रहित हो शुद्ध, बुद्ध, अव्यक्त रूप में रहते हैं। मैं खेद-रहित होकर आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पृथक् कृत/पृथक्/भेद-विज्ञान करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२८।।

स्यात्कार उद्योतकर, वस्तु धर्म निरशंस।
तासु ध्वजा निर्विघ्न कौं, भाषौ विधि विध्वंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कार-ध्वजा-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२९।।

अर्थ : प्रकाश करने वाले 'स्यात्' कार द्वारा आप संशय-रहित हो वस्तु के धर्मों का प्रकाशन करते हैं और कर्मों को नष्ट कर उस स्याद्वाद की निर्विघ्न ध्वजा का प्रतिपादन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कार ध्वजा वाक्/को बताने वाले या 'स्यात्' से पहिचानने-योग्य वचनों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३२९।।

परम्परा इह धर्म को, उपदेशौ श्रुत द्वार।
भवि भव सागर-तीर लह, पायौ शिवसुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३०।।

अर्थ : आपने परम्परा के अनुसार यहाँ वस्तु के धर्म का श्रुत द्वारा उपदेश दिया है। जिससे भव्य जीव संसार-सागर का किनारा प्राप्त कर, सुख-कारक मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं वाक् के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३०।।

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुष-कृत, है अनादि परमान।
सो तुम भाष्यौ है सही, यह पर्याय सुजान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेय-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३१।।

अर्थ : द्रव्य-दृष्टि पुरुष/आत्मा द्वारा नहीं की जाती है - यह अनादि से प्रमाणित है। यह पर्याय है - ऐसा भली-भाँति जानकर आपने इसका यथार्थ प्रतिपादन किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेय वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३१।।

नहीं चलाचल होठ हौं, जिस वाणी के होत।
सो मैं बंदूँ हौं किया, मोक्षमार्ग उद्योत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अचलौष्ठ-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३२।।

अर्थ : जिस वाणी के होने पर ओष्ठ चलाचल/चंचल नहीं होते हैं, जिससे आपने मोक्ष-मार्ग प्रकाशित किया है, उस दिव्य-ध्वनि की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अचल ओष्ठमय वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३२।।

तुम सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप।
तुमकौं बंदूँ भावसौं, पाऊँ शिव-सुख कूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३३।।

अर्थ : आपकी परम्परा अनादि से शाश्वत, नित्य-स्वरूप है। शिव-सुख का भण्डार प्राप्त करने के लिए मैं भाव पूर्वक आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३३।।

हीनाधिक वा और विधि, नहिं विरुद्धता जान।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुख की खान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३४।।

अर्थ : हीन, अधिक या और भी अन्य किसी प्रकार की विरुद्धता आपमें ज्ञात नहीं होती है। सभी प्रकार के सुखों की खदान आप एक रूप सामान्य हैं अथवा एक रूप सामान्य ही सभी सुखों की खदान है।

ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३४।।

नय विवक्ष तैं सधत है, सप्त भंग निरबाध।
सो तुम भाष्यौ नमत हूँ, वस्तु रूप को साध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभंगी-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३५।।

अर्थ : वस्तु के स्वरूप को सिद्ध करने के लिए सभी प्रकार की बाधाओं से पूर्णतया रहित

सप्तभंग नय-विवक्षा से ही सिद्ध होते हैं। आपने उनका प्रतिपादन किया है; आपके लिए मेरा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभंगी वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३५।।

अक्षर बिन वाणी खिरै, सर्व अर्थ करि युक्त।
भविजन निज सरधानतैं, पावैं जग तैं मुक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवर्ण-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३६।।

अर्थ : सभी अर्थों से सहित आपकी वाणी अक्षरों के विना/निरक्षरी खिरती है। भव्य जीव अपने श्रद्धान द्वारा जगत से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अवर्ण गिरा/अक्षरों से रहित वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३६।।

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश।
तुम मुखतैं खिरकैं करै, भर्म तिमिर को नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-भाषामय-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३७।।

अर्थ : क्षुद्र/सात सौ लघु भाषा, अक्षुद्र/अठारह महाभाषामय सभी भाषाओं में प्रकाशित (दिव्यध्वनि) आपके मुख/सर्वांग से खिरकर भ्रमरूपी अन्धकार को नष्ट कर देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं सभी भाषाओंमय वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३७।।

कहने योग्य समर्थ सब, अर्थ करै परकाश।
तुम वाणी मुखतैं खिरै, करै भरम-तम नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्त-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३८।।

अर्थ : कहने-योग्य सभी को कहने में समर्थ आपके मुख/सर्वांग से खिरने वाली वाणी सभी अर्थों को प्रकाशित कर भ्रम रूपी अन्धकार का नाश कर देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्त वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३८।।

तुम वाणी नहिं व्यर्थ है, भंग कभी नहिं होय।
लगातार मुखतैं खिरे, संशय तम को खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमोघ-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३९।।

अर्थ : मुख/सर्वांग से लगातार खिरने वाली, संशयरूपी अन्धकार को नष्ट करने वाली आपकी वाणी कभी व्यर्थ नहीं जाती है, खण्डित नहीं होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं अमोघ वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३३९।।

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान।
तुम दिखलाये सहज ही, हरी कुमति मतिवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवाच्यानन्त-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४०।।

अर्थ : अनन्त पर्यायों रूप वस्तु वचन-अगोचर जानना चाहिए। आपने उन्हें सहज ही दिखलाकर, कुमति/मिथ्याज्ञान का हरण कर मतिमान/सम्यग्ज्ञानी बना दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त अवाच्य वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४०।।

वचन अगोचर गुण धरौ, लहैं न गणधर पार।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारौ भवपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४१।।

अर्थ : वचनों के अगोचर गुणों को धारण करने वाले आपका पार गणधर भी प्राप्त नहीं कर पाते हैं। आपकी महिमा आपमें ही है। मुझे संसार से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं वचन-रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४१।।

तुम सम वचन न कहि सकै, असतमती छद्मस्थ।
धर्म मार्ग प्रकटाइयौ, मेटी कुमति समस्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैत-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४२।।

अर्थ : असद्मती/मिथ्याज्ञानी, छद्मस्थ/अपूर्ण ज्ञानी, आपके समान वचन कहने में समर्थ नहीं हैं। आपने सभी प्रकार का मिथ्या-ज्ञान समाप्त कर, धर्म-मार्ग को प्रगट किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैत/भेद-रहित वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४२।।

सत्य प्रिय तुम बैन हैं, हित-मित भविजन हेत।
सो मुनिजन तुम ध्यावतैं, पावैं शिवपुर खेत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूनृत-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४३।।

अर्थ : भव्य जीवों के लिए आपके वचन सत्य, प्रिय, हित-कारी और सीमित हैं। आपका ध्यान कर मुनिजन मोक्ष-नगर का क्षेत्र प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४३।।

नहीं साँच नहिं झूठ है, अनुभय वचन कहात।
सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानुभय-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४४।।

अर्थ : जो सत्य भी नहीं है और झूठ/असत्य भी नहीं है, उसे अनुभय वचन कहते हैं। तीर्थंकर की ध्वनि अनुभयरूप होने पर भी उसमें सत्यार्थ, सत्य बात कही गई है।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य, अनुभय वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४४।।

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताकौ नाम।
सत्यारथ उद्योत कर, सुगिरा ताकौ नाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४५।।

अर्थ : मिथ्या अर्थ को प्रकाशित करने वाली वाणी, कुगिरा और सत्य अर्थ को प्रकाशित करने वाली वाणी, सुगिरा कहलाती है।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४५।।

योजन एक चहूँ दिशा, हो वाणी विस्तार।
श्रवण सुनत भविजन लहैं, आनंद हिये अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं योजन-व्यापि-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४६।।

अर्थ : चारों/सभी दिशाओं में एक-एक योजन विस्तृत आपकी वाणी को कानों से सुनकर भव्य जीव हृदय में अपार आनन्द प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं एक योजन में फैली हुई वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४६।।

निर्मल क्षीर समान हैं, गौर श्वेत तुम बैन।
पाप मलिनता रहित हैं, सत्य प्रकाशन ऐन।।

ॐ ह्रीं अर्हं क्षीर-गौर-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४७।।

अर्थ : निर्मल दूध के समान गौर, श्वेत आपके वचन, पाप और मलिनता से रहित, सत्य के प्रकाशक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं गौर क्षीर के समान वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४७।।

तीर्थ तत्त्व जो नहिं तजैं, तारण भविजन वान।
यातैं तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-तत्त्व-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४८।।

अर्थ : तीर्थ (मोक्ष-मार्ग या प्रतिपादक-वाणी/देशना) और तत्त्व (वस्तु का मूल स्वरूप, ध्रुवता) को नहीं छोड़ने वाले भव्य-जीवों के लिए 'तारना' स्वभाव होने से आप तीर्थंकर प्रभु कहलाते हैं। आपको नमन करने से पाप-मल समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थ-तत्त्वमय वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४८।।

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्मतत्त्व को जान।
सो तुम सत्यारथ कहौ, मुनि जन उत्तम मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थ-गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४९।।

अर्थ : पर्याय द्वारा उत्तमार्थ आत्म-तत्त्व को जानकर उसे आपने सत्यार्थ कहा है; अतः मुनिजन आपको उत्तम मानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम अर्थ को कहने वाली वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३४९।।

भव्यनि को श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन।
मैं बंदूँ हूँ भाव सौं, धर्म बतायौ ऐन।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यैक-श्रवण-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५०।।

अर्थ : कानों के लिए सुखद आपकी वाणी भव्यों को सुख देती है। धर्म को बताने वाले आपकी मैं भाव पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यों को एक-मात्र सुनने-योग्य वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५०।।

संशय विभ्रम मोह कौ, नाश करौ निर्मूल।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं सद्गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५१।।

अर्थ : संशय, विभ्रम और मोह का निर्मूल नाश कर, प्रामाणिक सत्य वचनों द्वारा आपने मिथ्यात्व रूपी शूलों/काँटों का छेदन कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं सद् गो/वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५१।।

तुम वाणी में प्रकट हैं, सब सामान्य विशेष।
नानाविध सुन तर्क में, संशय रहै न शेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्र-गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५२।।

अर्थ : आपकी वाणी में सभी, सामान्य-विशेष रूप में प्रगट हैं। अनेक प्रकार के तर्क सुनकर उनमें रंचमात्र भी संशय शेष नहीं रहता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनेक प्रकार की वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५२।।

परम कहैं उतकृष्ट कौं, अर्थ होय गम्भीर।
सो तुम वाणी में खिरै, बंदत भवदधि तीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थ-गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५३।।

अर्थ : उत्कृष्ट को परम कहते हैं। अर्थ (अनन्त धर्मात्मक होने से) गम्भीर होता है। आपकी वाणी में यह सब खिरता है। संसार-सागर से पार होने के लिए आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थ वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५३।।

मोह क्षोभ परशांत हो, तुम वाणी उरधार।
भविजन को संतुष्ट कर, भव आताप निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांत-गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५४।।

अर्थ : आपकी वाणी को हृदय में धारण करने से मोह और क्षोभ प्रशान्त हो जाते हैं। वह भव्य जीवों को संतुष्ट कर संसार के आताप का निवारण करती है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्त वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५४।।

बारह सभासु प्रश्न कर, समाधान करतार।
मिथ्यामत विध्वंस करि, बंदूँ मन में धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निक-गिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५५।।

अर्थ : प्रश्न करने वाली बारह सभाओं की मिथ्या-मति को नष्ट कर आप उनके समाधान-कर्ता हैं। मन में धारण कर मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निक गिरा/प्रश्न के कारण प्रगट वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५५।।

महापुरुष महादेव हो, सुर नर पूजन योग।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावैं शिवसुख भोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं याज्य-श्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५६।।

अर्थ : देवों और मनुष्यों द्वारा पूजन के योग्य, महान पुरुष, महान देवमय आपकी वाणी को सुनकर भव्य जीव मिथ्यात्व को छोड़कर मोक्ष-सुख का भोग प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं याज्य-श्रुति/पूजन के योग्य वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५६।।

शिव मग उपदेशक सुश्रुत, मन में अर्थ विचार।
साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५७।।

अर्थ : मन में अर्थ का विचार कर मोक्ष-मार्ग का उपदेश देने वाले आप, सुश्रुत हैं। भव्य जीवों को पार उतारने वाले आप साक्षात् उपदेश हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५७।।

तुम समान तिहुँ लोक में, नहीं अर्थ परकाश।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामति को नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-श्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५८।।

अर्थ : भव्य जीवों को सम्बोधन देने वाले, मिथ्यामति का नाश कर वस्तु के स्वभाव का प्रकाश करने वाले आपके समान तीनों लोकों में अन्य कोई भी नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा श्रुति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५८।।

जो निजात्म-कल्याण में, बरतैं सो उपदेश।
धर्म नाम तिस जानियौ, बंदूँ चरण हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-श्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५९।।

अर्थ : अपने आत्मा के कल्याण में प्रवृत्ति करना ही उपदेश है। इसे ही धर्म जानना चाहिए। मैं आपके चरणों की सदा वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म श्रुति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३५९।।

जिन शासन के अधिपति, शिवमारग बतलाय।
वा भविजन संतुष्ट करि, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६०।।

अर्थ : जिन-शासन के अधिपति, मोक्ष-मार्ग बतलाने वाले और भव्य जीवों को संतुष्ट करने वाले आपके चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६०।।

धारक हौ उपदेश के, केवल ज्ञान संयुक्त।
शिवमारग दिखलात हौ, तुमकौं बंदन युक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत-धृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६१।।

अर्थ : केवलज्ञान से संयुक्त, उपदेश के धारक, मोक्ष-मार्ग को दिखलाने वाले आपको वन्दन करना, उचित है।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत-धृत/धारण करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६१।।

जैसौ है तैसौ कहौ, परम्पराय सु रीत।
सत्यारथ उपदेश तैं, धर्म मार्ग की रीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुव-श्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६२।।

अर्थ : जैसा है, उसी प्रकार परम्परा के अनुसार सत्यार्थ उपदेश द्वारा आपने धर्म-मार्ग की पद्धति प्रगट की है।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुव-श्रुति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६२।।

मोक्ष मार्ग कौं देखियौ, औरन कौं दिखलाय।
तुम सम हितकारक नहीं, बंदूँ हूँ तिन पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाण-मार्गोपदेशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६३।।

अर्थ : मोक्ष-मार्ग को स्वयं देखकर दूसरों को दिखाने वाले आपके समान हित-कारक कोई दूसरा नहीं है। मैं उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाण-मार्ग-उपदेशक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६३।।

स्वर्ग मोक्ष मारग कहौ, यति श्रावक कौ धर्म।
तुमकौं बन्दत सुख महा, लहै ब्रम्ह पद पर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं यति-श्रावक-मार्ग-देशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६४।।

अर्थ : आपने स्वर्ग और मोक्ष का मार्ग, श्रावक और यति का धर्म कहा है। आपकी वन्दना करने से महा सुखमय परम ब्रम्ह पद की प्राप्ति होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं यति-श्रावक का मार्ग दिखाने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६४।।

तत्त्व अतत्त्वसु जानियौ, तुम सब ही परतक्ष।
निज-आतम संतुष्ट हो, देखौ लक्ष अलक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व-मार्ग-दृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६५।।

अर्थ : तत्त्व, अतत्त्व आदि सभी को आप प्रत्यक्ष जानते हुए अपने आत्मा में सन्तुष्ट हैं। आप अपने लक्ष्य को अलक्ष/अतीन्द्रिय ज्ञान से देख रहे हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व का मार्ग देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६५।।

सार तत्त्व वर्णन कियौ, अयथार्थ मत नाश।
स्वपर-प्रकाशक हो महा, बंदैं तिनकौ दास।।

ॐ ह्रीं अर्हं सार-तत्त्व-यथार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६६।।

अर्थ : महान स्व-पर-प्रकाशक होने के कारण अयथार्थ मत का नाश कर आपने सारभूत तत्त्व का वर्णन किया है। आपके दास आपकी वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सार तत्त्व यथार्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६६।।

आप तीर्थ औरन प्रति, सर्व तीर्थ करतार।
उत्तम शिवपुर पहुँचना, यही विशेषण सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्तम-तीर्थ-कृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६७।।

अर्थ : दूसरों के सभी तीर्थों के कर्ता होने से आप तीर्थ हैं। मोक्षरूपी उत्कृष्ट नगर में पहुँचना ही आपका सारभूत विशेषण है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम उत्तम तीर्थ करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६७।।

दृष्टा लोकालोक के, रेखा हस्त समान।
युगपत सबकौं देखियौ, कियौ भर्म तम हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं दृष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६८।।

अर्थ : हाथ की रेखा के समान लोकालोक के दृष्टा आपने सभी को एक साथ देखकर भ्रम रूपी अन्धकार का नाश कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं दृष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६८।।

जिनवाणी के रसिक हौ, तासौं रति दिन रैन।
भोगोपभोग करौ सदा, बंदत ह्वै सुख चैन।।

ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६९।।

अर्थ : जिनवाणी के रसिक आपकी, दिन-रात उनमें ही प्रीति होने से आप सदा उनका ही भोग-उपभोग करते हैं। आपकी वन्दना करने से सुख-शान्ति होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मी-ईश्वर/वाणी के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३६९।।

जो संसार समुद्र सैं, पार करत सो धर्म।
तुम उपदेश्या धर्म कूँ, नमत मिटै भव भर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-शासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७०।।

अर्थ : जो संसार-सागर से पार करता है, वह धर्म है। इसी धर्म का उपदेश देने वाले आपको नमन करने से भव-भ्रम समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-शासन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७०।।

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार।
मैं बंदूं तिनकौं सदा, करौ भवार्णव पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-देशकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७१।।

अर्थ : भव्य जीवों के लिए हित-कारक धर्म रूप उपदेश देने वाले आपकी मैं सदा वन्दना करता हूं। आप मुझे संसार-सागर से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-देशक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७१।।

सब विद्या के ईश हौ, पूरन ज्ञान सुजान।
तिनकौं बंदूं भाव से, पाऊँ ज्ञान महान।।

ॐ ह्रीं अर्हं वागीश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७२।।

अर्थ : सम्यग्ज्ञानमय परिपूर्ण ज्ञान-सम्पन्न आप सभी विद्याओं के ईश्वर हैं। मैं भाव पूर्वक आपकी वन्दना करता हूँ; जिससे मैं महान ज्ञान प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं वाणी के ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७२।।

सुमति नार भरतार हौ, कुमति कुसौत विडार।
मैं पूजूँ हूँ भाव सौं, पाऊँ सुमती सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयी-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७३।।

अर्थ : कुमति/मिथ्याज्ञान रूपी खोटी सौत को समाप्त कर सुमति/सम्यग्ज्ञान रूपी स्त्री के स्वामी हुए आपकी मैं भाव पूर्वक पूजन करता हूँ; जिससे सुमति का सार/केवलज्ञान प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयी नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७३।।

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान।
मैं नित-प्रति पायन परूँ, देहु परम कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभंगीशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७४।।

अर्थ : धर्म, अर्थ और मोक्ष के दाता भगवान के चरणों की मैं सदा वन्दना करता हूँ; आप मुझे परम कल्याण दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभंगी-ईश/धर्मादि तीन पुरुषार्थ के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७४।।

गिरा कहैं जिन वचन कौं, तिसका अन्त सु धर्म।
मोक्ष करैं भवि-जनन कौं, नाशै मिथ्या भर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं गिरांपतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७५।।

अर्थ : जिनका वाच्य सुधर्म/सापेक्ष धर्म रूप अन्त है, जिनेन्द्र भगवान के उन वचनों को गिरा कहते हैं। वे मिथ्या भ्रम का नाश कर भव्य जीवों का मोक्ष करती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं गिरा/सापेक्ष वाणी के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७५।।

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान।
शरणागत कौं सिद्ध है, नमूँ सिद्ध धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धांगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७६।।

अर्थ : मोक्ष जिनकी सीमा है, जो परिपूर्ण सुख के स्थान हैं, शरणागत को सिद्ध बना देते हैं; मैं ध्यान धारण कर उन सिद्ध भगवान को नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-अंग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७६।।

नय-प्रमाण सौं सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार।
मिथ्या तिमिर निवार कैं, करैं भव्य जन पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाङ्मयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७७।।

अर्थ : नय और प्रमाण से सिद्ध आपकी वाणी, सूर्य के समान मिथ्यात्व रूपी अन्धकार का निवारण कर, भव्य जीवों को पार कर देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-वाङ्मय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७७।।

निज पुरुषारथ साधकैं, सिद्ध भये सुखकार।
मन वच तन करि मैं नमूँ, करौ जगत सैं पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७८।।

अर्थ : अपने पुरुषार्थ से साधना कर जो सुख-कारक सिद्ध हो गए हैं; उन्हें मन, वचन, काय पूर्वक मैं नमन करता हूँ। आप मुझे संसार से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७८।।

सिद्ध करै निज अर्थ को, तुम शासन हितकार।
भविजन मानै सरदहै, करै कर्म रज छार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-शासनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७९।।

अर्थ : आपका हित-कारी शासन अपने प्रयोजन को सिद्ध करता है। भव्य जीव इसे मानते हैं, इसकी श्रद्धा करते हैं; जिससे वे कर्मरूपी रज को समाप्त कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध शासन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३७९।।

तीन लोक में सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त।
अनेकान्त परकाश कर, नाशैं मिथ्या ध्वांत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्-प्रसिद्ध-सिद्धांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८०।।

अर्थ : तीनों लोकों में सिद्ध, प्रसिद्ध सिद्धान्त अनेकान्त रूपी प्रकाश द्वारा आप मिथ्यात्व रूपी अन्धकार को नष्ट कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-प्रसिद्ध सिद्धान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८०।।

ओंकार यह मंत्र है, तीन लोक परसिद्ध।
तुम साधक कहलात हौ, जपत मिलै नवनिद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-मंत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८१।।

अर्थ : तीनों लोकों में प्रसिद्ध यह 'ओंकार' मन्त्र-स्वरूप है। आप उसकी साधना करने वाले कहलाते हैं। इसका जाप करने से नव निधिआँ प्राप्त होती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-मन्त्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८१।।

सिद्ध यज्ञ कौं कहत हैं, संशय विभ्रम नाश।
मोक्षमार्ग में ले धरैं, निजानन्द परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८२।।

अर्थ : सिद्ध भगवान की पूजन संशय, विभ्रम, मोह का विनाश कर, निजानन्द का प्रकाश कर, मोक्ष-मार्ग में ले जाकर रख देती है - ऐसा कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-वाक् के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८२।।

मोहरूप मलसौं दुरी, वाणी कही पवित्र।
भव्य स्वच्छता धारिकैं, लहैं मोक्ष पद तत्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि-वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८३।।

अर्थ : आपकी वाणी मोह रूपी मल से पूर्णतया रहित, पवित्र, स्वच्छ है। भव्य जीव उसे धारण कर वहीं मोक्ष पद प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि-वाक्/पवित्र वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८३।।

कर्ण विषय में होत ही, करै आत्म-कल्याण।
तुम वाणी शुचिता धरै, नमें, 'संत' धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि-श्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८४।।

अर्थ : शुचिता/पवित्रता को धारण करने वाली आपकी वाणी कर्ण का विषय होते ही आत्म-कल्याण करती है। सन्त कवि ध्यान धारण कर उसे नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचि-श्रव/पवित्रता प्रवाहित करने वाली के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८४।।

वचन अगोचर पद धरौ, कहते पंडित लोग।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, सदा बंदने योग्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरुक्तोक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८५।।

अर्थ : पण्डितजन कहते हैं कि आप वचन-अगोचर पद धारण करते हैं। अपने में ही अपनी महिमा धारण करने वाले आप सदा वन्दना के योग्य हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरुक्त उक्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८५।।

सुर नर मानें आन सब, तुम आज्ञा सिर धार।
मानों तंत्र विधान करि, बाँधे एक लगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तंत्र-कृते नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।।३८६।।

अर्थ : तन्त्र विधान से एक साथ बाँध दिए गए के समान देव, मनुष्य आदि सभी आपकी आज्ञा शिर पर धारण कर स्वीकार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तन्त्र-कृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८६।।

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपार।
सो तुमसे परगट भयो, न्याय-शास्त्र रुचि धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं न्याय-शास्त्र-कृते नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८७।।

अर्थ : अपार प्रमेयरूप वस्तुओं का जिससे निश्चय किया जाता है; उस रुचि के धारक न्याय-शास्त्र को आपने ही प्रगट किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं न्याय-शास्त्र कृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८७।।

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त।
युगपत जानौ श्रेष्ठ युत, धरौ महा सुखवंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-ज्येष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८८।।

अर्थ : महा सुखवान श्रेष्ठता को धारण करने वाले आप अनन्त गुण-पर्यायों से सहित अनन्तानन्त द्रव्यों को एक साथ जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा ज्येष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८८।।

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय।
शिवलक्ष्मी के नाथ हो, पूजूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्दाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८९।।

अर्थ : आपके महान पद को प्राप्त कर लेने वाला ही आपके महान गुणों का पार प्राप्त कर लेता है। शिव-लक्ष्मी के स्वामी आपके चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३८९।।

तुम सम कविवर जगत में, और न दूजौ कोय।
गणधर से श्रुतकार भी, अर्थ लहैं नहीं सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कवीन्द्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९०।।

अर्थ : जगत में आपके समान श्रेष्ठ कवि अन्य कोई नहीं है। गणधर के समान श्रुतकार भी उसका अर्थ प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कवीन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९०।।

हित करता षट्काय के, महा इष्ट तुम बैन।
तुमको बंदूँ भावसौं, मोक्ष महासुख दैन।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेष्टाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९१।।

अर्थ : षट्कायिक जीवों के हित-कारक आपके वचन महा इष्ट हैं। मोक्ष का महा सुख देने वाले आपकी भाव पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा इष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९१।।

मोक्ष दान दातार हौ, तुम सम कौन महान।
तीन लोक तुमको जजैं, मन में आनंद ठान।।

ॐ ह्रीं अर्हं महानंद-दात्रे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९२।।

अर्थ : मोक्ष रूपी दान को देने वाले आपके समान महान दूसरा कोई नहीं है। मन में आनन्द धारण कर तीनों लोक आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा आनन्द दाता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९२।।

द्वादशांग श्रुत को रचैं, गणधर से कविराज।
तुम आज्ञा शिर धारकैं, नमूँ निजातम काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं कवीश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९३।।

अर्थ : द्वादशांग श्रुत की रचना करने वाले गणधर जैसे कविराज भी अपने आत्मा के कार्य-हेतु आपकी आज्ञा को शिरोधार्य कर आपको नमस्कार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कवीश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९३।।

देव महा ध्वनि करत हैं, तुम सम्मुख धर भाव।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजूँ युत चाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं दुंदुभीश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९४।।

अर्थ : आपके सम्मुख भक्ति-भाव धारण कर देव महा-ध्वनि करते हैं। इसे केवलज्ञान कृत अतिशय कहते हैं। मैं रुचि पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं दुन्दुभी-ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९४।।

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय।
त्रिभुवन नाथ कहात हौ, हम पूजत नित पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवन-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९५।।

अर्थ : भक्ति पूर्वक शिर झुकाकर इन्द्रादि सदा आपकी पूजन करते हैं। आप तीनों लोकों के नाथ कहलाते हैं। हम आपके चरणों की सदा पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवन-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९५।।

गणी मुनीश फनीशपति, कल्पेन्द्रन के नाथ।
अहमिन्द्रन के नाथ हौ, तुमहिं नमूँ धरि माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९६।।

अर्थ : गणधर, आचार्य मुनि, धरणेन्द्र, कल्पेन्द्रों, अहमिन्द्रों के स्वामी आप ही हैं। आपको मस्तक रखकर/झुकाकर नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९६।।

भिन्न-भिन्न देख्यौ सकल, लोकालोक अनन्त।
तुम सम दृष्टि न और की, तुमैं नमें नित 'संत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-दृष्टे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९७।।

अर्थ : सम्पूर्ण लोक और अनन्त अलोक को पृथक्-पृथक् देखने वाले आपके समान अन्य की दृष्टि नहीं है। सन्त कवि आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-दृष्टा/देखने वालों में सर्वश्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९७।।

सब जग के भरतार हौ, मुनिगण में परधान।
तुमको पूजैं भावसौं, होत सदा कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९८।।

अर्थ : समस्त जगत के स्वामी, मुनिओं के समूह में प्रधान आपकी भाव पूर्वक पूजन करने से सदा कल्याण होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९८।।

श्रावक या मुनिराज हौं, तुम आज्ञा शिर धार।
वरतैं धर्म पुरुषार्थ में, पूजत हूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वामिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९९।।

अर्थ : श्रावक हों या मुनिराज - सभी आपकी आज्ञा शिरोधार्य कर धर्म पुरुषार्थ में प्रवृत्ति करते हैं। सुख-कारक आपकी मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।३९९।।

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रम्हा परमार्थ।
मालिक हो तिहुँ लोक के, पूजनीक सत्यार्थ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४००।।

अर्थ : धार्मिक कार्यों को करने वाला ही वास्तव में परमार्थ ब्रम्हा है। तीनों लोकों के स्वामी आप सत्यार्थ, पूजनीय हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४००।।

तीन लोक के नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघ के अधिपती, पूजूँ हूँ नमि भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विघ-संघाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०१।।

अर्थ : तीनों लोकों के नाथ, शरणागत के प्रतिपालक, चार संघ के अधिपति की मैं मस्तक झुकाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विध संघ के अधिपति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०१।।

तुम सम और विभव नहीं, धरौ चतुष्ट अनंत।
क्यों न करौ उद्धार अब, दास कहावै 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय-विभव-धारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०२।।

अर्थ : आपके प्रगट हुए अनन्त चतुष्टय रूप वैभव के समान अन्य कोई वैभव नहीं है। दास कहलाने वाले इस सन्त का उद्धार अब क्यों नहीं करते हैं?

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय विभव-धारक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०२।।

जामैं विघन न हौं कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजन शुभ करतूत।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०३।।

अर्थ : जिसमें कभी भी विघ्न नहीं होता है, ऐसी श्रेष्ठ विभूति को आपने अपने पुरुषार्थ द्वारा प्राप्त किया है। मैं आपकी पूजन का शुभ कार्य कर रहा हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०३।।

तुम सम शक्ति न और की, शिवलक्ष्मी कौं पाय।
भौगैं सुख स्वाधीन कर, बंदूँ जिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय-शक्ति-धारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०४।।

अर्थ : मोक्षरूपी लक्ष्मी को प्राप्त करने वाले आपके समान शक्ति अन्य किसी की नहीं है। स्वाधीन सुख का भोग करने वाले आपके चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय शक्ति-धारक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०४।।

तुमसे अधिक न और में, पुरुषारथ कहुँ पाइ।
हो अधीश सब जगत के, बंदूँ जिनके पाँइ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०५।।

अर्थ : आपसे अधिक पुरुषार्थ अन्य किसी में भी प्राप्त नहीं होता है। समस्त जगत के स्वामी के चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०५।।

अग्रेश्वर चउ संघ के, शिवनायक शिरमौर।
पूजत हूँ नित भावसौं, शीश दोऊ कर जोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०६।।

अर्थ : चतुर्विध संघ के श्रेष्ठ स्वामी, शिव के नायक, शिरोमणि की मैं सदा शिर से दोनों हाथ जोड़कर भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०६।।

सहज सुभाव प्रयत्न बिन, तीन लोक आधीश।
शुद्ध सुभाव विराजतै, बन्दूँ पद धर शीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०७।।

अर्थ : सहज स्वभाव-सम्पन्न, प्रयत्न के विना ही/अपने आप तीनों लोकों के ईश्वर, शुद्ध स्वभाव में विराजमान आपके चरणों में शिर रखकर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व अधीश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०७।।

क्षायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान।
तुमसैं शिवमारग चलै, बंदूँ मैं धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशित्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०८।।

अर्थ : सुहावने क्षायिक ज्ञान का बीजभूत मोक्ष-मार्ग आपसे ही चलता है। मैं ध्यान धारण कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशिता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०८।।

स्वयंबुद्ध शिवनाथ हौ, धर्मतीर्थ करतार।
तुम सम सुमति न कौ धरै, मैं बंदूँ निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थ-कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०९।।

अर्थ : स्वयं-बुद्ध, शिव-नाथ, धर्म-तीर्थ के कर्ता आपके समान सम्यग्ज्ञान को धारण करने वाला अन्य कोई नहीं है। मैं यह निर्णय कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-तीर्थ-कर्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४०९।।

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूजत ब्रम्ह प्रकाश।
पूरण पद पायौ प्रभू, पूजत पाप विनाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण-पद-प्राप्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१०।।

अर्थ : परिपूर्ण शक्ति-स्वभाव को धारण करने वाले, पूर्ण पद-प्राप्त प्रभु के ब्रम्ह प्रकाश की मैं पूजन करता हूँ। आपकी पूजन करने से पाप विनष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण पद प्राप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१०।।

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय।
तीन लोक अत्यन्त सुख, पायौ बंदूँ ताय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४११।।

अर्थ : आपसे अधिक और कोई तीनों लोकों के ईश्वर नहीं कहलाते हैं। आपने तीनों लोकों में अत्यन्त सुख प्राप्त किया है। मैं इनकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक अधिपति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४११।।

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान।
मैं पूजौं हौं भावसौं, सबसे बड़े महान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ईशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१२।।

अर्थ : आपको ईश्वर जानकर तीनों लोक आपके चरणों की पूजन करते हैं। आप सबसे बड़े महान हैं। मैं भाव पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१२।।

सूरज सम परकाश कर, मिथ्यातम परिहार।
भविजन कमल प्रबोध कौ, पायौ निज हितकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ईशानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।।४१३।।

अर्थ : सूर्य के समान प्रकाश कर मिथ्यात्व रूपी अन्धकार का परिहार करने वाले आपने भव्य जीवों रूपी कमलों को विकसित कर अपना हित-कर पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं ईशान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१३।।

क्रीडा कर शिवमार्ग में, पाय परमपद आप।
आज्ञा भंग न हौ कभी, बंदत नाशैं पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१४।।

अर्थ : मोक्षमार्ग में क्रीड़ा करते हुए/अत्यन्त सरलता पूर्वक आपने परम पद प्राप्त कर लिया है। आपकी आज्ञा कभी भंग नहीं होती है और वन्दना करने से पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१४।।

उत्तम हो तिहुँ लोक में, सबके हो सिरताज।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूँ आतम काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकोत्तमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१५।।

अर्थ : तीनों लोकों में उत्तम, सभी के शिरोमणि, शरणागत के प्रतिपालक आपकी अपने कार्य/आत्म-कल्याण के लिए मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-उत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१५।।

अधिक भूति के हो धनी, सुखी सर्व निरधार।
सुर नर तुम पद कौ लहैं, पूजत हूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधि-भुवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१६।।

अर्थ : सर्वाधिक सम्पत्ति के स्वामी आप सभी ओर से पूर्ण सुखी हैं - ऐसा निश्चय कर देव, मनुष्य, आपके पद को प्राप्त करते हैं। सुख-कारक आपकी, मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अधि-भू के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१६।।

तीन लोक कल्याणकर, धर्म मार्ग बतलाय।
सब देवन के देव हो, महादेव सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१७।।

अर्थ : तीनों लोकों के लिए कल्याण-कारी धर्म का मार्ग बतलाने के कारण आप सभी देवों के देव, सुख-दायक महादेव हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१७।।

महा ईश महराज हो, महा प्रताप धराय।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१८।।

अर्थ : महान ईश, महाराज, महा प्रताप के धारक, महा जीव, सभी जीवों को शरण-सहाई आपके चरणों की हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१८।।

परम कहौ उत्कृष्ट कौं, धर्म तीर्थ बरताय।
परमेश्वर यातैं भये, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१९।।

अर्थ : उत्कृष्ट को परम कहते हैं। उत्कृष्ट धर्म-तीर्थ के प्रवर्तक होने से आप परमेश्वर हैं। आपके चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४१९।।

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ।
महा विभव ऐश्वर्य कौं, धरौ नमूँ निज माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेशित्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२०।।

अर्थ : आपके समान जगत में ईश्वर और जगत का नाथ कोई दूसरा नहीं है। महा विभव और ऐश्वर्य को धारण करने वाले आपको मस्तक झुकाकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा ईशिता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२०।।

चार प्रकारन के सदा, देव तुम्हें शिर नाँय।
सब देवन में श्रेष्ठ हौ, नमूँ युगल तुम पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२१।।

अर्थ : सभी देवों में श्रेष्ठ होने से चारों प्रकार के देव सदा आपको शिर झुकाते हैं। मैं आपके युगल चरणों में नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२१।।

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवन के देव।
यों महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूँ एव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महादेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२२।।

अर्थ : 'देवों के देव' – इस महान पदवी को धारण करने वाले आपके समान कोई दूसरा देव नहीं है; इसीलिए हम आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२२।।

शिवमारग तुममें सही, देव पूजने योग।
सहचारी तुम सुगुण हैं, और कुदेव अयोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२३।।

अर्थ : वास्तविक मोक्ष-मार्ग आपमें होने से आप ही पूजन करने-योग्य देव और सहचारी सुगुणों से सम्पन्न हैं; अन्य कुदेवों में इन सभी की योग्यता नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२३।।

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार।
त्रिभुवन ईश्वर हौ सही, मैं पूजूँ निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२४।।

अर्थ : आपकी आज्ञा को शिरोधार्य कर तीनों लोक आपके चरणों की पूजन करते हैं। आप तीनों लोकों के वास्तविक ईश्वर हैं – ऐसा निर्णय कर मैं आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तीनों लोकों के ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२४।।

विश्वपती तुमको नमैं, निज कल्याण विचार।
सर्व विश्व के तुम पती, मैं पूजूँ उर धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२५।।

अर्थ : विश्व के स्वामी/इन्द्र, अपने कल्याण का विचार कर आपको नमन करते हैं। सम्पूर्ण विश्व के स्वामी आपको हृदय में धारण कर मैं आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२५।।

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द।
षट्कायिक आल्हादकर, जिम कुमोदनी चंद।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भूतेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२६।।

अर्थ : जैसे चन्द्रमा कुमुदनी के विकास में कारण है; उसी प्रकार हे भगवान! आप जगत-जीवों का कल्याण करने में, लोकालोक को आनन्दित करने में और षट्-कायिक जीवों को आल्हादित करने में कारण हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भूत/प्राणिओं के ईश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२६।।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमकौं पूजत आन।
यातैं तुम विश्वेश हौ, साँच नमूँ धर ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२७।।

अर्थ : विश्वपति इन्द्रादि भी आकर आपकी पूजन करते हैं; अत: आप वास्तव में विश्व-ईश हैं। आपका ध्यान धर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश/विश्व के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२७।।

विश्व बन्ध दृढ़ तोड़ कैं, विश्व शिखर ठहराय।
चरण कमल तल जगत है, यूँ सब पूजत पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२८।।

अर्थ : विश्व के दृढ़ बन्धनों को तोड़कर विश्व के शिखर पर स्थित आपके चरण कमलों के तल में/नीचे विश्व है; इसप्रकार सभी आपके चरणों की पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२८।।

शिवमारग की रीति तुम, बरतायौ शुभ योग।
तिहूँ काल तिहुँ लोक में, और कुनीति अयोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिराजे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२९।।

अर्थ : तीनों कालों में और तीनों लोकों में मोक्ष-मार्ग की रीति को ही आपने शुभ और योग्य बताया है। इसके अतिरिक्त सभी रीतिआँ कुनीति और अयोग्य हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिराज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४२९।।

लोक तिमिर हर सूर्य हौ, तारण लोक जिहाज।
लोकशिखर राजत प्रभू, मैं बन्दूँ हित काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३०।।

अर्थ : लोक का अन्धकार नष्ट करने के लिए सूर्य, संसार से पार होने के लिए जहाज के समान आप, लोक के शिखर पर सुशोभित हैं। हे प्रभो! मैं अपने हित के लिए आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३०।।

तीन लोक प्रतिपाल हौ, तीन लोक हितकार।
तीन लोक तारण तरण, तीन लोक सरदार।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-पतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३१।।

अर्थ : हे भगवान! आप तीनों लोकों के प्रतिपालक, तीनों लोकों के हितकारक, तीनों लोकों के तारण-तरण और तीनों लोकों में प्रधान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३१।।

लोक-पूज्य सुखकार हौ, पूजत हैं हित धार।
मैं पूजों नित भाव सौं, करौ भवार्णव पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३२।।

अर्थ : लोक-पूज्य, सुख-कारक आपकी सभी हित की भावना से पूजन करते हैं। मैं सदा भाव पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ। आप मुझे संसार-सागर से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३२।।

पूजनीक जग में सही, तुम्हैं कहैं सब लोग।
धर्म मार्ग प्रगटित कियौ, यातैं पूजन योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं जग-पूज्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३३।।

अर्थ : धर्म का मार्ग प्रगट किया होने से आप पूजन के योग्य हैं; अत: जगत में सभी लोग आपको वास्तविक पूजनीय कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३३।।

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक।
तिनमें तुम उत्कृष्ट हौ, तुम्हैं देत नित धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३४।।

अर्थ : ऊर्ध्व, अधो और मध्य - इन तीन भागों में विभक्त इस लोक में आप उत्कृष्ट हैं। हम सदा आपको धोक देते/नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३४।।

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोक में और।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३५।।

अर्थ : तीनों लोकों में आपके समान समर्थ अन्य कोई नहीं है। स्वयं मोक्ष के स्वामी, शिरोमणि आप सिद्धालय में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक ईश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३५।।

जगत नाथ जग ईश हौ, जगपति पूजें पाँय।
मैं पूजूँ नित भाव युत, तारण तरण सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३६।।

अर्थ : जगत के नाथ, जगत के ईश आपके चरणों की जगत-पति/इन्द्र भी पूजन करते हैं। संसार से पार होने में सहायक आपकी मैं सदा भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३६।।

महा भूति इस जगत में, धारत हौ निरभंग।
सब विभूति जग जीति कैं, पायौ सुख सरवंग।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रभवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३७।।

अर्थ : इस जगत में अखण्ड महा विभूति/अनन्त चतुष्टय के धारक आपने जगत की सभी विभूतिओं को जीतकर सर्वांग सुख प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-प्रभु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३७।।

मुनि मन करण पवित्र हौ, सब विभाव कौं नाश।
तुमकौं अंजुलि जोरकर, नमूँ होत अघ नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं पवित्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३८।।

अर्थ : मुनिओं के मन को पवित्र करने वाले, सभी विभावों के नाशक, आपको अंजुली जोड़कर नमन करने से पापों का नाश हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं पवित्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३८।।

मोक्ष रूप परधान हौ, ब्रम्हज्ञान परवीन।
बंध रहित शिव-सुख सहित, नमैं 'सन्त' आधीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं पराक्रमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३९।।

अर्थ : मोक्ष रूप, प्रधान, ब्रम्ह ज्ञान में प्रवीण, बन्ध से रहित, सुख से सहित आपके अधीन/वशीभूत हो सन्त कवि आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पराक्रम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४३९।।

जामें जन्म-मरण नहीं, लोकोत्तर कियौ वास।
अचल सुथिर राजैं सदा, निजानंद परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं परत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।।४४०।।

अर्थ : जन्म-मरण से पूर्णतया रहित, लोकोत्तर/लोक के अग्र भाग में रहने वाले आप सदा अचल, सुस्थिर, निजानन्द के प्रकाश में शोभायमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परत्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४०।।

मोहादिक रिपु जीत कैं, विजयवन्त कहलाय।
जैत्र नाम परसिद्ध है, बंदूँ तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जैत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४१।।

अर्थ : मोहादि शत्रुओं को जीतकर 'विजयवन्त' कहलाते होने से आपका 'जैत्र' नाम प्रसिद्ध है। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जेता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४१।।

रक्षक हौ षट् काय के, कर्म शत्रु क्षयकार।
विजय लक्ष्मी नाथ हौ, मैं पूजूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४२।।

अर्थ : षट्-कायिक जीवों के रक्षक, कर्म-शत्रु का क्षय करने वाले, विजय लक्ष्मी के नाथ, सुख-कारक आपकी मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४२।।

करता हौ विधि कर्म के, हरता पाप विशेष।
पुन्य-पाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखौ लेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४३।।

अर्थ : कार्य करने की विधि/पद्धति के कर्ता, पापों के सभी विशेषों भेद-प्रभेदों को नष्ट करने वाले आपने पुण्य-पाप में भेद करने के भ्रम को रंच-मात्र भी नहीं रखा है/दोनों को एक-समान संसारमय ही बताया है।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४३।।

स्वानंद-ज्ञान विनाश बिन, अचल सुथिर है राज।
अविनाशी अविकार हौ, बंदूँ निजहित काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं अविनश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४४।।

अर्थ : अपने अविनाशी आनन्द-ज्ञान में अचल, सुस्थिर रूप में सुशोभित आप विनाश से पूर्णतया रहित, अविकारी हैं। मैं अपने हितरूप कार्य के लिए आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अविनश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४४।।

इन्द्रादिक पूजित चरन, महा भक्ति उर धार।
तुम महान ऐश्वर्य कौं, धारत हौ अधिकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभ-विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४५।।

अर्थ : महा भक्ति को हृदय में धारण कर इन्द्रादि आपके चरणों की पूजन करते हैं। आप महान ऐश्वर्य को अधिकार पूर्वक धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभ-विष्णु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४५।।

गुण समूह गुरुता धरैं, महा भाग सुख रूप।
तीन लोक कल्याण कर, पूजूँ हूँ शिव भूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं भ्राजिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४६।।

अर्थ : महा भाग्यमय, सुख रूप आप गुणों के समूह से गुरुता को धारण करते हैं। तीनों लोकों का कल्याण करने वाले, मोक्ष के राजा की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भ्राजिष्णु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४६।।

महा विभव कौं धरत हैं, हितकारण मितकार।
धर्म-नाथ परमेश हौ, पूजत हूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभूष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४७।।

अर्थ : हित में कारणभूत मधुर कार्य करने वाले आप महान विभव/सम्पत्ति को धारण करते हैं। सुख-कारक, धर्म-नाथ, परम ईश की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभूष्णु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४७।।

बिन कारण असहाय हौ, स्वयं प्रभा अविरुद्ध।
तुमकौ बंदूँ भाव सौं, निज आतम कर शुद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-प्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४८।।

अर्थ : किसी कारण के विना, अन्य की सहायता के विना, बाधाओं से पूर्णतया रहित, अपनी प्रभा-सम्पन्न आपकी, अपने आत्मा को पवित्र कर भाव पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं प्रभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४८।।

लोकवास कौ नाश कर, लोक सम्बन्ध निवार।
अचल विराजैं शिवपुरी, पूजत हूँ उर धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-जिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४९।।

अर्थ : संसार-वास का नाशकर, सांसारिक संबंधों का निवारण कर, मोक्षपुरी में अचल विराजमान आपको हृदय में धारण कर आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-जित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४४९।।

विश्व नाम संसार है, जन्म-मरण सौं होय।
सोई व्याधि विनासियौ, जजूँ जोड़ कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५०।।

अर्थ : जन्म-मरण के कारण विश्व का एक नाम संसार है। इस व्याधि का विनाश करने वाले आपकी दोनों हाथ जोड़कर मैं अर्चना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५०।।

विश्व कषाय निवार कैं, जग सम्बन्ध विनाश।
जनम-मरण बिन ध्रुव लसैं, नमूँ ज्ञान परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५१।।

अर्थ : विश्व-व्यापी कषायों का निवारण कर, सांसारिक संबंधों का विनाश कर, जन्म-मरण से पूर्णतया रहित ध्रुव ज्ञान-प्रकाश से सुशोभित आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जेता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५१।।

विश्व-वास तुम जीतियौ, विश्व नमावै शीश।
पूजत हैं हम भक्ति सौं, जयवन्तौ जगदीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५२।।

अर्थ : विश्व के वास को जीतने वाले आपको विश्व शीश नमाता है। जयवन्त, जगत के ईश आपकी मैं भक्ति पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५२।।

इन्द्रादिक जिनकौं नमें, ते तुम शीश नवाय।
विश्वजीत तुम नाम है, शरणागत सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जित्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५३।।

अर्थ : इन्द्रादि जिन्हें/मुनिराजों को नमन करते हैं, वे आपको शीश झुकाते हैं। शरणागत को सुख-दायक आपका नाम विश्वजीत है।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-जित्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५३।।

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणांबुज ठौर।
यातैं सब जग जीति कैं, राजत हौ शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगजेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५४।।

अर्थ : तीनों लोकों की लक्ष्मी आपके चरण कमलों में रहती है; इसलिए आप सम्पूर्ण जगत को जीतकर शिरोमणि रूप में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-जेता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५४।।

तीन लोक कल्याण कर, कर्म शत्रु कौं जीत।
भव्यन प्रति आनंद कर, मैंटत तिनकी भीति।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जिष्णवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५५।।

अर्थ : कर्म रूपी शत्रुओं को जीतकर, तीनों लोकों का कल्याण करने वाले आप भव्यों को आनन्दित कर उनका भय समाप्त कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-जिष्णु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५५।।

जग जीवन कौं अन्ध कर, फैलौ मिथ्या घोर।
धर्म मार्ग प्रकटाय कर, पहुँचायौ शिव ठौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नेत्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५६।।

अर्थ : संसारी जीवों को अन्धा करने वाले फैले हुए मिथ्यात्व रूपी घोर अन्धकार को समाप्त कर आपने धर्म के मार्ग को प्रगट कर उन्हें मोक्ष के स्थान पर पहुँचा दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-नेत्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५६।।

मोहादिक जिन जीतियौ, सोई जग में नाम।
सो तुम पद पायौ महा, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जयिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५७।।

अर्थ : मोहादि को जीतने वाले का ही नाम जगत में रहता है। आपने उस महा पद को प्राप्त कर लिया है। मैं आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-जयी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५७।।

जो तुम धर्म प्रकट करी, जिय आनन्दित होय।
अग्र भये कल्यान कर, तुम पद प्रणमूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रण्ये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५८।।

अर्थ : आपके द्वारा बताए गए धर्म को प्रगट कर जीव आनन्दित हो जाता है। आप कल्याण करने में अग्र/मुख्य हैं। मैं आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५८।।

रक्षा करि षट्काय की, विषय-कषाय न लेश।
त्रास हरौ जमराज कौ, जयवन्तौ गुण शेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं दया-मूर्तये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५९।।

अर्थ : षट्-कायिक जीवों की रक्षा करने वाले, विषय-कषायों से पूर्णतया रहित, यमराज/मरण के दु:ख का हरण करने वाले, शेष रहे अन्य गुणों से सहित आप जयवन्त रहें।

ॐ ह्रीं अर्हं दया-मूर्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४५९।।

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय।

पुद्‌गल नेत्र न नेत्र हो, साँचे नेत्र सुखाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य-नेत्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६०।।

अर्थ : जो सत्य-असत्य को देखते हैं, वे ही नेत्र कहलाते हैं। पौद्‌गलिक नेत्र, नेत्र नहीं हैं। वास्तविक नेत्र सुख-दायक होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य नेत्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६०।।

सुर नर मुनि तुम ज्ञानतैं, जानैं नित कल्याण।

ईश्वर हौ सब जगत के, आनंद संपति खान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६१।।

अर्थ : देव, मनुष्य, मुनि आपके ज्ञान से अपना कल्याण जान लेते हैं। आनन्द रूपी सम्पत्ति की खदान आप सम्पूर्ण जगत के ईश्वर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६१।।

धर्माभास मनोक्त कौं, मूल नाश कर दीन।

सत्य मार्ग बतलाइयौ, कियौ भव्य सुख लीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-नायकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६२।।

अर्थ : मनोक्त/कपोल-कल्पित धर्माभासों को जड़-मूल से समाप्त कर, सत्य मार्ग बतलाकर आपने भव्य जीवों को सुख में लीन किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-नायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६२।।

ऋद्धिन में परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान।

सो तुम पायौ सहज ही, योगीश्वर मुनि मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धीशाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६३।।

अर्थ : योगीश्वरों और मुनिओं को मान्य, सभी ऋद्धिओं में प्रसिद्ध महान केवलज्ञान ऋद्धि को आपने सहजता से प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धि ईश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६३।।

जो प्राणी संसार में, तिन सबके हितकार।

आनंद सौं सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूत-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६४।।

अर्थ : आप सभी संसारी प्राणिओं के हित-कारक हैं। सभी आनन्द पूर्वक आपको नमस्कार करते हुए संसार-सागर से पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भूत/प्राणिओं के नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६४।।

प्राणिन के भरतार हौ, दुख टारन सुखकार।
तुम आश्रय करि जीव सब, आनंद लहैं अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूत-भर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६५।।

अर्थ : दु:खों को समाप्त करने और सुख करने के लिए आप प्राणिओं के स्वामी हैं। आपका आश्रय लेकर सभी जीव अपार आनन्द प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भूत/प्राणिओं के भर्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६५।।

सत्य धर्म के मार्ग हौ, ज्ञान मात्र निरशंस।
तुम ही आश्रय पाय कैं, रहै न अघ को अंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६६।।

अर्थ : संशय से पूर्णतया रहित सत्य धर्म के आप मार्ग हैं। आपका आश्रय प्राप्त कर पापों का अंश मात्र भी नहीं रहता है।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-पात्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६६।।

अतुल वीर्य स्वशक्ति हौ, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहिं और में, होउ सहाय अबार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतुल-बलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६७।।

अर्थ : अतुल वीर्यमय अपनी शक्ति से आपने कर्मों को जलाकर उन्हें जीत लिया है। आपके समान बल अन्य किसी में नहीं है। मेरी सहायता आप शीघ्र कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं अतुल-बल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६७।।

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ बरताय।
स्वसुभाव सो धर्म है, पायौ सहज उपाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६८।।

अर्थ : धर्म-मूर्ति, धर्मात्मा आपने धर्म-तीर्थ की प्रवृत्ति कर, अपने स्वभावरूप धर्म को सहज उपाय से प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं वृष/धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६८।।

हिंसा को वर्जित कियौ, जे अपराध महान।
परिग्रह कर आरंभ के, त्यागी श्री भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रह-त्यागी-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६९।।

अर्थ : महान अपराधमय हिंसा का त्याग कर श्री भगवान आरम्भ और परिग्रह के त्यागी हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रह-त्यागी जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४६९।।

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायौ स्वयं उपाय।
साँचे हौ वश करण कौं, जग में मंत्र कराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र-कृते नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७०।।

अर्थ : स्वयं सुलभ उपाय द्वारा आपने सभी सिद्धिओं को प्राप्त कर लिया है। जगत को वश में करने के लिए आप वास्तविक वशीकरण मन्त्र हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्र-कृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७०।।

जितने कछु शुभ चिन्ह हैं, दीप्त अशेष स्वरूप।
शुभ लक्षण सोहत अती, सहजै तुम शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ-लक्षणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७१।।

अर्थ : दीप्ति-स्वरूप जितने जो भी शुभ चिन्ह हैं; उन सभी शुभ लक्षणों से हे शिवभूप! आप सहज ही अत्यधिक सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ-लक्षण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७१।।

लोक विषैं तुम मार्ग कौं, मानत हैं बुधवन्त।
तर्क हेतु करुणा लिये, यातैं मानैं 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाध्यक्षाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७२।।

अर्थ : लोक में सभी बुद्धिमान आपके मार्ग को मानते हैं। करुणा पूर्वक तर्क-हेतु से सिद्ध होने के कारण सन्त कवि उसे स्वीकार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-अध्यक्ष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७२।।

काहू के वश में नहीं, काहू नमत न शीश।
कठिन रीति धारैं प्रभु, नमूँ सदा जगदीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं दुरोध्रष्टाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७३।।

अर्थ : आप किसी के वश में नहीं हैं, किसी को शिर नहीं झुकाते हैं। कठिन पद्धति को धारण करने वाले प्रभु, जगत के ईश को मैं सदा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं दुरोध्रष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७३।।

दासनि के प्रतिपाल कर, शरणागत हितकार।
भवि दुखियन कौं पोष कर, दियौ अखै पदसार।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्य-बन्धवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७४।।

अर्थ : आप अपने सेवकों के प्रतिपालक, शरणागत के हित-कारक, दुखी भव्यों का पोषण कर उन्हें सारभूत अक्षय पद देने वाले हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्य-बन्धु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७४।।

निराकरण करि कर्म कौ, सरल सिद्धगति धार।
शिवथल जाय सु वास लहि, धर्मद्रव्य सहकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्त-कर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७५।।

अर्थ : सम्पूर्ण कर्मों का पूर्णतया निराकरण कर, सरल सिद्ध गति को धारण कर, धर्म द्रव्य की सहायता से शिव-थल में जाकर आपने स्थाई वास प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्त-कर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७५।।

मुनि ध्यावैं पावैं सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान।
पावैं निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-ध्येय-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७६।।

अर्थ : मुनि आपका ध्यान करके सुपद प्राप्त करते हैं। निकट भव्य आपका ध्यान धरकर निज कल्याण कर लेते हैं। इसप्रकार सदा ध्यान के योग्य आप माने गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-ध्येय जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७६।।

रक्षक हौ जग के सदा, धर्म दान दातार।
पोषित हौ सब जीव के, बंदूँ भाव लगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्ताप-हराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७७।।

अर्थ : जगत की सदा रक्षा करने वाले, धर्म-दान के दाता, सभी जीवों के पोषक आपकी मैं भाव पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-ताप-हर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७७।।

मोह प्रचंड बली जयौ, अतुल वीर्य भगवान।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूँ हेत कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोहारि-जिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७८।।

अर्थ : प्रचण्ड बल-शाली मोह को जीतकर अतुल वीर्य-सम्पन्न भगवान शीघ्र गमन कर मोक्ष पहुँच गए हैं। मैं अपने कल्याण के लिए उन्हें नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मोह-अरि-जित/मोहरूपी शत्रु को जीतने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७८।।

तीन लोक शिरमौर तुम, सब पूजत हरषाय।
परमेश्वर हौ जगत के, बंदत हूँ तिन पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७९।।

अर्थ : तीनों लोकों के शिरोमणि आपकी पूजन कर सभी हर्षित होते हैं। आप जगत के परमेश्वर हैं। आपके चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत परमेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४७९।।

लोक शिखर पर अचल नित, राजत हैं तिहुँ काल।
सर्वोत्तम आसन लियौ, लोक शिरोमणि भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८०।।

अर्थ : लोक के शिखर पर सदा अचल रहते हुए आप तीनों काल सुशोभित हैं। लोक के मस्तक पर शिरोमणि के समान आपने सर्वोत्तम आसन प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-आसीन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८०।।

विश्वभूति प्राणीन के, ईश्वर हैं भगवान।
सबके शिर पर पग धरैं, सर्व आन तिन मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भूतेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८१।।

अर्थ : हे भगवान! आप विश्व के समस्त प्राणिओं के ईश्वर होने से सभी के शिर पर चरण रखे हैं/सभी आपके पैरों के नीचे रहते हैं। वे सभी आपको स्वीकार करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भूत/प्राणिओं के ईश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८१।।

मोक्ष संपदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य।
कौन मूढ़ कौंड़ी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं विभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८२।।

अर्थ : मोक्ष रूपी सम्पदा होते ही ऐश्वर्य सदा अक्षय हो जाता है। सर्वोत्तम श्रेष्ठ धन के स्थान पर कौड़ी ग्रहण करना, कौन मूर्ख चाहेगा? कोई नहीं।

ॐ ह्रीं अर्हं विभव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८२।।

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक।
तुम तज चाहै और कौं, ऐसौ कौ बुध बंक।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८३।।

अर्थ : आप तीनों लोकों के ईश्वर हैं; शेष सभी जीव रंक/गरीब हैं। ऐसा कौन ज्ञानी चतुर होगा; जो आपको छोड़कर अन्य किसी की चाह करेगा? कोई नहीं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवन ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८३।।

उत्तरोत्तर तिहुँ लोक में, दुर्लभ लब्धि कराय।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सौं पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजग-दुर्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८४।।

अर्थ : तीनों लोकों में उत्तरोत्तर लब्धिओं को प्राप्त करना, दुर्लभ है। दुर्लभ और कठिन आपका पद महा भाग्यवान ही प्राप्त कर पाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजग-दुर्लभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८४।।

बढ़वारी परिणाम सौं, पूर्ण अभ्युदय पाय।
भई अनंत विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८५।।

अर्थ : सतत बड़ते हुए भावों से पूर्ण अभ्युदय को प्राप्त कर आपके अनन्त विशुद्धता हो जाने से आपकी विशुद्धि अथाह हो गई है।

ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८५।।

तीन लोक मंगलकरण, दुखहारण सुखकार।
हमकौं मंगल द्यो महा, पूजौं बारम्बार।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगन्मंगलोदयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८६।।

अर्थ : तीनों लोकों में मंगल करने वाले, दु:ख-हरण करने वाले, सुख-कारक आप हमें भी महा मंगल दीजिए। हम आपकी बारम्बार पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रि-जगत-मंगल उदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८६।।

आप धर्म के सामने, और धर्म लुप जायें।
धर्मचक्र आयुध धरौ, शत्रु नाश तव पायें।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-चक्रायुधाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८७।।

अर्थ : आपके धर्म के सामने सभी धर्म लुप्त हो जाते हैं। आप धर्म-चक्र रूपी आयुध को धारण करते हैं; जिससे शत्रु नाश को प्राप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-चक्र-आयुध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८७।।

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर।
है प्रसिद्ध इस जगत में, कर्म शत्रु शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजाताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८८।।

अर्थ : आपकी ही सत्य शक्ति वास्तविक है। आपका ही सत्य पराक्रम श्रेष्ठ है। यह इस जगत में प्रसिद्ध है कि आप कर्म-शत्रुओं को जीतने वालों में शिरोमणि हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सद्य:जात/तत्काल उत्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८८।।

मंगलमय मंगलकरण, तीन लोक विख्यात।
सुमरण ध्यानसु करत ही, सकल पाप नशि जात।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-मंगलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८९।।

अर्थ : मंगलमय, मंगल करने के लिए तीनों लोकों में प्रसिद्ध आपका स्मरण और ध्यान करते ही सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-मंगल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४८९।।

द्रव्य-भाव दऊ वेद बिन, स्वातम रति सुख मान।
पर-आलिंगन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवेदाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९०।।

अर्थ : द्रव्य-वेद और भाव-वेद - दोनों वेदों से रहित अपने आत्मा में रमण करने में सुख मानने वाले आप भगवान, दूसरों का आलिंगन करने और उनमें रमण करने की इच्छा से पूर्णतया रहित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अवेद के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९०।।

घातिरहित स्व-पर दया, निजानन्द रसलीन।
सुखसों अवगाहन करैं, 'सन्त' चरण आधीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिघाताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९१।।

अर्थ : घाति कर्मों से रहित आप स्व-पर दया और अपने आनन्द-रस में लीन रह सुख पूर्वक अवगाहन करते हैं। सन्त कवि आपके चरणों के अधीन हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिघात के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९१।।

निजानन्द स्व-देश में, खंड खंड नहीं होय।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूँ भ्रम खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९२।।

अर्थ : अपने प्रदेशों में स्थित अपना आनन्द खण्ड-खण्ड नहीं होने से आप पूर्ण अविनाशी सुखी हैं। मैं भ्रम को समाप्त कर आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्य/अखण्डित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९२।।

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात।
कभूँ न जग में जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात।।

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ीयसे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।।४९३।।

अर्थ : सिद्ध के समान शुभ और प्रसिद्ध नाम अन्य कोई नहीं है। जिनका पुन: कभी भी संसार में जन्म नहीं होता है; वे ही दृढ़ कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ीयस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९३।।

जन्म-मरण के कष्ट सैं, सर्व लोक भयवंत।
ताकौं नाश अभय करण, तुम्हैं नमैं जिय 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अभयंकराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९४।।

अर्थ : सभी लोग जन्म-मरण के कष्ट से भयभीत हैं। आप उसे नष्ट कर उन्हें अभय करते हैं। आपको सभी जीव और सन्त कवि नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अभयंकर/अभय करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९४।।

ज्ञानानन्द स्व-लक्ष्मी, भोगत हौ निरखेद।
महा भोग यातैं भये, हैं स्वाधीन अवेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-भोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९५।।

अर्थ : आप खेद-रहित हो ज्ञानानन्दमय अपनी लक्ष्मी का भोग करते हैं; अतः स्वाधीन, अवेद, महा भोगमय हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा भोग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९५।।

असाधारण असमान हौ, सर्वोत्तम उत्कृष्ट।
परसौं भिन्न अखिन्न हौ, पायौ पद अविनष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरौपम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९६।।

अर्थ : असाधारण, असामान्य, सर्वोत्तम, उत्कृष्ट, पर से भिन्न, खिन्नता से पूर्णतया रहित आपने अविनाशी पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं निरौपम्य/उपमाओं से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९६।।

दश लक्षण शुभ धर्म के, राजसम्पदा भोग।
नायक हौ निज धर्म के, पूजि नमैं तिहुँ योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-साम्राज्य-नायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९७।।

अर्थ : कल्याणमय दशलक्षण धर्म की राज-सम्पदा को भोगने वाले आप अपने धर्म के नायक हैं। (मन, वचन, कायमय) तीनों योगों पूर्वक आपकी पूजन कर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-साम्राज्य-नायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९७।।

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, परकृत भाव विडार।
तिहूँ वेद रति मान बिन, संपूरण सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेद-प्रवृत्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९८।।

अर्थ : अपने स्वभाव के स्वामी आप, पर-कृत भावों को नष्ट कर; तीनों वेद, रति, मान के विना अथवा तीनों वेदों में रति माने विना सम्पूर्ण सुख-कारक अधिपति हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेद-प्रवृत्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९८।।

यथायोग्य पद पाइयौ, यथायोग्य संपूर्ण।
नमूँ त्रियोग सँभारिकैं, करूँ पाप मल चूर्ण।।

ॐ ह्रीं अर्हं संपूर्ण-योगिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९९।।

अर्थ : यथा-योग्य पद, यथा-योग्य परिपूर्णता को प्राप्त आपके लिए पाप-मल चूर्ण करने हेतु तीनों योगों को सम्हाल कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सम्पूर्ण योगी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।४९९।।

सब इन्द्रिय मन रोक कैं, आरोहण तिस भाव।
श्रेणी उच्च चढ़ाव में, तत्पर अन्त सु पाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं समारोहण-तत्पराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५००।।

अर्थ : सभी इन्द्रियों और मन को रोककर, उस भाव का आरोहण कर उच्च श्रेणी चढ़ने में तत्पर हो आपने अन्तिम लक्ष्य/परिपूर्ण स्वरूप-स्थिरता को प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं समारोहण तत्पर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५००।।

एकाश्रय निज धर्म में, परसौं भिन्न सदीव।
सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सहज-सिद्ध-रूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०१।।

अर्थ : सभी सिद्धराज जीव, पर से पूर्णतया पृथक् सदैव सहज स्वभावमय एक-आश्रय-सम्पन्न अपने धर्म में विराजमान रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सहज सिद्धरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०१।।

राग द्वेष बिन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव।
मन विकल्प नहिं भाव में, पूजत हौं धरि चाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सामायिकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०२।।

अर्थ : राग-द्वेष के विना सहज ही शुद्ध-स्वभाव में सुशोभित आपके भावों में मन के विकल्प नहीं हैं। मैं रुचि पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सामायिक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०२।।

निजानन्द निज लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय।
अतुल वीर्य स्व भावतैं, परमादी नहिं होय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमादाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०३।।

अर्थ : अपने आनन्दरूपी अपनी लक्ष्मी को भोगते हुए आपको ग्लानि नहीं होती है। स्वभाव से ही अतुल वीर्य-सम्पन्न होने के कारण आप प्रमादी नहीं होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमाद के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०३।।

है अनादि संतान करि, कभी भयौ नहिं आदि।
नित्य शिवालय पूर्णता, बसैं जगत अघवादि।।

ॐ ह्रीं अर्हं अकृताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०४।।

अर्थ : शिवालय/मोक्ष-स्थान की पूर्णता परम्परा की अपेक्षा अनादि से है। इसका कभी प्रारम्भ नहीं हुआ है। पाप-सहित जीव जगत में रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०४।।

पर-पदार्थ नहिं इष्ट हैं, निजपद में लवलीन।
विघ्नहरण मंगलकरण, तुम पद मस्तक दीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०५।।

अर्थ : अपने पद में लवलीन/पूर्णतया निमग्न आपके लिए पर-पदार्थ इष्ट नहीं हैं। विघ्नों का हरण करने वाले और मंगल करने वाले आपके चरणों में मैं अपना मस्तक रखता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०५।।

नित्य शौच संतोष मय, पर-पदार्थ सौं रोक।
निश्चय सम्यक् भाव मय, हैं प्रधान द्यूँ धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०६।।

अर्थ : निश्चय सम्यक् नित्य शौच, सन्तोषमय अपने भावों को पर-पदार्थों से रोकने में आप प्रधान हैं। हम आपको ढोक देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रधान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०६।।

ज्ञान ज्योति निज धरत हौ, निश्चल परम सुठाम।
लोकालोक प्रकाश कर, मैं बंदूँ सुख धाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वभास-परभासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०७।।

अर्थ : परम निश्चल सुस्थान में अपनी ज्ञान ज्योति को धारण करने वाले, लोकालोक के प्रकाशक, सुखधाम आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वभास-परभासन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०७।।

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारित भूप।
शुद्ध उपयोग प्रभावतैं, कर्म खिपावन रूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायाम-चरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०८।।

अर्थ : निश्चय चारित्र के स्वामी, एक स्थान पर सदा सुस्थिर रहने वाले आपने शुद्ध उपयोग के प्रभाव से कर्मों को समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायाम चरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०८।।

विषय स्वादसौं हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय।
निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावैं सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-प्रत्याहाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०९।।

अर्थ : अपने विषयों के स्वाद से हटकर आपकी इन्द्रियाँ और मन स्थिर हो गए हैं। जो अपने आत्मा में लवलीन/निमग्न हैं; वे ही शुद्ध कहलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध प्रत्याहार के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५०९।।

इन्द्री विषय न वश रहैं, निज आतम लवलाय।
सो जिनेन्द्र स्वाधीन हैं, बंदूँ तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१०।।

अर्थ : जो इन्द्रिय-विषयों के वश नहीं होकर अपने आत्मा में निमग्न रहते हैं; वे ही स्वाधीन जिनेन्द्र हैं। मैं उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रिय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१०।।

ध्यान विषैं सो धारणा, निज आतम थिर धार।
ताके अधिपति हौ महा, भये भवार्णव पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं धारणाधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५११।।

अर्थ : ध्यान में अपने आत्मा में स्थिरता धारण करने रूप धारणा के महा अधिपति आप संसार-सागर से पार हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धारणा अधीश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५११।।

रागादिक मल नाशिकैं, ध्यान सु धर्म लहाय।
अचल रूप राजैं सदा, बंदूँ मन वच काय।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-ध्यान-निष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१२।।

अर्थ : रागादि मल को नष्ट कर, भली-भाँति धर्म-ध्यान प्राप्त कर आप सदा अचल रूप में सुशोभित हैं। मैं मन, वचन, काय पूर्वक आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-ध्यान-निष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१२।।

निजानन्द में मगन हैं, परपद राग निवार।
समदृष्टि राजत सदा, हमें करौ भव पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१३।।

अर्थ : अन्य-पदों के राग का निवारण कर अपने आनन्द में मग्न, सम-दृष्टि रूप में सदा सुशोभित आप हमें संसार से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१३।।

वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरशंस।
समरसभाव परम सुखी, नमत मिटैं दुख अंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरित-समरसी-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१४।।

अर्थ : वीतराग, निर्विकल्प, संशय से रहित परिपूर्ण ज्ञान-युक्त सम-रस भावमय परम सुखी आपको नमन करने से दु:खों का अंश भी/सम्पूर्ण दु:ख समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरित/प्रगट सम-रसी भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१४।।

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशौ मोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं एकीभाव-नय-रूपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१५।।

अर्थ : नयों और विकल्पों अथवा नयों के विकल्पों से रहित स्थान में एक रूप विराजमान आपकी शुद्धता वचन-अगोचर है। आप मेरे पाप नष्ट कर दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं एकीभाव नयरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१५।।

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ।
ध्यावैं पावैं परम पद, नमूँ जोर जुग हाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रंथनाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१६।।

अर्थ : परम दिगम्बर, महा मुनि, सम-दृष्टी, मुनिओं के स्वामी का ध्यान करने से परम पद प्राप्त हो जाता है। मैं आपको दोनों हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रन्थ-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१६।।

योग साध योगी भये, तिनकर इन्द्र महान।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं योगीन्द्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१७।।

अर्थ : योगों की साधना कर जो योगी हो गए हैं; उनके आप महान इन्द्र हैं। आपका ध्यान करने से परम पद की प्राप्ति होती है। मैं अपने कल्याण के लिए आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं योगीन्द्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१७।।

शिवमारग सिद्धांत के, पार भये मुनि ईश।
तारण-तरण जिहाज हौ, तुम्हें नमूँ नित शीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१८।।

अर्थ : मोक्ष-मार्ग और सिद्धान्त के पार को प्राप्त, मुनिओं के स्वामी, (संसार से पार होने के लिए) तारण-तरण जहाजरूप आपको सदा शीश झुकाकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ऋषि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१८।।

निज स्वरूप को साधिकर, साधु भये जग माहिं।
निजपर हितकर गुण धरैं, तीन लोक नमि ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१९।।

अर्थ : अपने स्वरूप की साधना कर साधु हुए आप जगत में स्व-पर हित-कारक गुणों को धारण करते हैं। तीनों लोक आपको नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं साधु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५१९।।

रागादिक रिपु जीत कैं, भये यती शुभ नाम।
धर्म धुरंधर परम गुरु, जुगपद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं यतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२०।।

अर्थ : रागादि शत्रुओं को जीत कर शुभ नाम-प्राप्त यती हो गए धर्म-धुरन्धर, परम गुरु के युगल चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं यती के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२०।।

पर संपतिसूँ विमुख हौ, निजपद रुचि करि नेम।
मुनि मन रंजन पद महा, तुम धारत हौ ऐम।।

ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२१।।

अर्थ : अन्य की सम्पत्ति से पूर्णतया उदासीन, अपने पद में नियम पूर्वक रुचि करने वाले आप मुनिओं के मन को आनन्दित करने वाले महा पद के धारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मुनिओं के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२१।।

महा श्रेष्ठ मुनिराज हौ, निजपद पायौ सार।
महा परम निरग्रन्थ हौ, पूजत हूँ मन धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२२।।

अर्थ : महा श्रेष्ठ मुनिराज, अपने पद का सार प्राप्त करने वाले, महा परम निर्ग्रन्थ को मैं मन में धारण कर उनकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२२।।

साधु भार दुरगमन है, ताहि उठावन हार।
शिव-मन्दिर पहुँचात हौ, महाबली सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं साधु-धौरेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२३।।

अर्थ : साधुरूपी दुर्गम भार को उठाने वाले, मोक्ष रूपी मन्दिर में पहुँचाने वाले आप सुख-कारक, महा-बल-शाली हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं साधु-धौरेय/धुरी/आधारभूत साधु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२३।।

इन्द्री मन जित जे जती, तिनके हौ तुम नाथ।
परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं यती-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२४।।

अर्थ : इन्द्रियों और मन को जीतने वाले यतिओं के नाथ, परम्परा की मर्यादा को धारण करने वाले आप हमें अपना साथ दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं यती-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२४।।

चार संघ मुनिराज के, ईश्वर हौ परधान।
परहितकर सामर्थ्य हौ, निज सम करि भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२५।।

अर्थ : चार प्रकार के मुनिराजों के संघ के प्रधान ईश्वर आप दूसरों का हित करने की और अपने समान भगवान बना लेने की सामर्थ्य-सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२५।।

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिरधार।
समकित ज्ञान सु लक्ष्मी, पावत हैं निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-मुनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२६।।

अर्थ : गणधर आदि महान सेवक आपकी आज्ञा को शिरोधार्य कर नियम से सम्यक्त्व, ज्ञान आदि लक्ष्मी को प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा मुनि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२६।।

महा मुनि सर्वस्व हौ, धर्म मूर्ति सरवांग।
तिनकौं बंदूँ भाव युत, पाऊँ मैं धर्मांग।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-मौनिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२७।।

अर्थ : सर्वस्व महा मुनि रूप, सर्वांग धर्म-मूर्तिमय आपकी मैं भाव पूर्वक वन्दना करता हूँ; जिससे मैं धर्मांगों को प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा मौनी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२७।।

इष्टानिष्ट विभाव बिन, समदृष्टि स्वध्यान।
मगन रहें निजपद विषैं, ध्यान रूप भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-ध्यानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२८।।

अर्थ : इष्ट/प्रिय, अनिष्ट/अप्रिय विभावों से रहित, सम-दृष्टि, अपना ध्यान करने वाले, अपने पद में मग्न रहने वाले आप ध्यान रूप भगवान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा ध्यानी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२८।।

स्व सुभाव नहिं त्याग है, नहीं ग्रहण पर माहिं।
पाप कलाप न आपमें, परम शुद्ध नमुँ ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-व्रतिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२९।।

अर्थ : अपने स्वभाव का त्याग नहीं करने वाले, पर का ग्रहण नहीं करने वाले आपमें, पापों का समूह नहीं है। उन परम शुद्ध के लिए नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा व्रती के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५२९।।

क्रोध प्रकृति विनाश कैं, धरैं क्षमा निज भाव।
समरस स्वाद सु लहत हैं, बंदूँ शुद्ध स्वभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-क्षमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३०।।

अर्थ : क्रोध प्रकृति का विनाश कर अपने क्षमा भाव को धारण कर सम-रस का सम्यक् स्वाद लेने वाले शुद्ध स्वभावमय आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा क्षमा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३०।।

मोह रूप सन्ताप बिन, शीतल महा स्वभाव।
पूरण सुख आकुल नहीं, बंदूँ मन धर चाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-शीतलाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३१।।

अर्थ : मोहरूपी सन्ताप से पूर्णतया रहित महा शीतल स्वभाव, आकुलता से पूर्णतया रहित परिपूर्ण सुखमय है। मैं मन में रुचि धारण कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा शीतल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३१।।

मन इन्द्रिय के क्षोभ बिन, महा शांति सुख रूप।
निजपद रमण स्वभाव नित, मैं बंदूँ शिव भूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-शांताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३२।।

अर्थ : मन और इन्द्रियों के क्षोभ से रहित महा शान्ति सुखरूप अपने पद में सदा रमण करने के स्वभाव वाले मोक्ष के स्वामी की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा शान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३२।।

मन इन्द्रिय कौ दमन कर, पायौ ज्ञान अतीन्द्र।
स्वाभाविक स्वशक्ति कर, बंदूँ भये जितेन्द्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३३।।

अर्थ : मन और इन्द्रियों का दमन कर अपनी स्वाभाविक शक्ति द्वारा अतीन्द्रिय ज्ञान को प्राप्त कर जितेन्द्रिय हुए भगवान की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३३।।

पर पदार्थ कौ क्लेश तजि, व्यापैं निजपद माहिं।
स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूँ नित ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३४।।

अर्थ : पर-पदार्थों की निमित्तता वाले क्लेश को समाप्त कर अपने पद में व्यापक आप अपने स्वच्छ स्वभाव में विराजमान हैं। मैं सदा आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३४।।

संशयादि दृष्टि नहीं, सम्यग्ज्ञान मँझार।
सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३५।।

अर्थ : संशय आदि की दृष्टि से पूर्णतया रहित सम्यग्ज्ञान में सभी पदार्थों को प्रत्यक्ष देखने वाले, सुख-कारक आप, महा तुष्ट/तृप्त हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३५।।

शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमही में पाय।
निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूँ युग पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३६।।

अर्थ : शान्ति रूप अपना शान्ति गुण आपमें ही प्राप्त कर, अपने मन में शान्ति स्वभाव को धारण कर मैं आपके चरण-युगल की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३६।।

मुनि श्रावक द्वै धर्म के, तुम अधिपति शिवनाथ।
भविजन कौं आनंद करि, तुम्हैं नवाऊँ माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३७।।

अर्थ : मुनि और श्रावक - दोनों धर्मों के अधिपति, शिव के स्वामी, भव्य जीवों को आनन्दित करने वाले आपको मैं शिर झुकाता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-अध्यक्ष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३७।।

दया नीति बरताइयौ, सुखी किये जगजीव।
कल्पित राग ग्रसित नहीं, जानत मार्ग सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं दया-ध्वजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३८।।

अर्थ : दया-नीति प्रचलित कर आपने जगत के सभी जीव सुखी किए हैं। कल्पित राग को ग्रहण नहीं करने वाले आप मोक्ष-मार्ग को सदैव जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दयाध्वज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३८।।

केवल ब्रम्ह स्वरूप हौ, अन्तर बाह्य अदेह।
ज्ञानज्योतिघन नमत हूँ, मनवचतन धरि नेह।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-योनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३९।।

अर्थ : अन्तरंग (भावकर्म-द्रव्यकर्म) और बहिरंग (नोकर्म) शरीर से पूर्णतया रहित, मात्र ब्रम्ह -स्वरूप, ज्ञान ज्योति-घन आपको स्नेह धारण कर मन, वचन, काय पूर्वक नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-योनि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५३९।।

स्वयं बुद्ध अविरुद्ध हौ, स्वयं ज्ञान परकाश।
निजपर भाव दिखात हौ, दीपक सम प्रतिभास।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-बुद्धाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४०।।

अर्थ : स्वयं बुद्ध, अविरुद्ध, स्वयं ज्ञान प्रकाशमय आप दीपक के समान अपने और अन्य के भावों को प्रतिभासित करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं बुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४०।।

रागादिक मल नाशियौ, महा पवित्र सुखाय।
शुद्ध स्वभाव धरैं करैं, सुरनर थुति न अघाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४१।।

अर्थ : रागादि मल को पूर्णतया नष्ट कर, महा पवित्र, सुखमय शुद्ध स्वभाव को धारण करने वाले आपकी स्तुति करते हुए देव, मनुष्य सन्तुष्ट नहीं होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४१।।

वीतराग श्रद्धानता, संपूरण वैराग।
द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहूँ सदा पग लाग।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४२।।

अर्थ : वीतरागता, श्रद्धानता, सम्पूर्ण वैराग्य, द्वेष से पूर्णतया रहित, शुभ गुणों से सहित आपके चरणों में मैं सदा लगा रहूँ अथवा नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४२।।

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान।
निर्मल भाव थकी, जजूँ, होत पाप की हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमद-भावाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४३।।

अर्थ : माया, मद/मान आदि से पूर्णतया रहित; शुद्ध, सुख की खदान आपकी निर्मल भावों पूर्वक पूजन करने से पापों का विनाश हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अमद भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४३।।

अतुल वीर्य जा ज्ञान में, सूर्य समान प्रकाश।
मोक्षनाथ निज धर्म जुत, स्व-ऐश्वर्य विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमैश्वर्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४४।।

अर्थ : अतुल वीर्य-सम्पन्न आपके ज्ञान में सूर्य के समान प्रकाश है। मोक्ष के नाथ, अपने धर्म से सहित आप अपने ऐश्वर्य में विलास/रमण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम ऐश्वर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४४।।

मत्सर क्रोध जु ईर्ष्या, पर में द्वेष सुभाव।
सो तुम नाशौ सहज ही, निंदित दुषित विभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-मत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४५।।

अर्थ : मत्सर, क्रोध, ईर्ष्या, अन्य के प्रति स्वाभाविक द्वेष आदि निन्दित, दूषित, विभावों को आपने सहज ही पूर्णतया नष्ट कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-मत्सर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४५।।

धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण तरण जिहाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-वृषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४६।।

अर्थ : धर्म रूपी भार को शिर पर धारण कर दूसरों के लिए समाधान-हेतु आपके समान श्रेष्ठ अन्य धर्म नहीं है। (संसार-सागर से पार होने के लिए) आप तारण-तरण जहाज हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म वृष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४६।।

क्रोध कर्म जड़ सैं नसौ, भयौ क्षोभ सब दूर।
महा शांति सुखरूप हौ, पूजत अघ सब चूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४७।।

अर्थ : आपका क्रोध कर्म जड़ मूल से नष्ट हो गया है, सभी प्रकार का क्षोभ दूर हो गया है। महा शान्ति-सुख रूप आपकी पूजन करने से सभी पाप समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४७।।

इष्टमिष्ट बादरझरी, विद्युत विधि कर खण्ड।
जिष्णु महा कल्याणकर, शिवमग भाग प्रचण्ड।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-विधि-खण्डाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४८।।

अर्थ : जैसे इष्ट/प्रिय, मिष्ट/मधुर बादलों की झड़ी/मूसलाधार वर्षा और बिजली के गिरने से पर्वत खण्ड-खण्ड हो जाते हैं; उसीप्रकार प्रिय, मधुर दिव्य-ध्वनिरूपी मूसलाधार वर्षा और स्वरूप-स्थिरता रूपी बिजली के गिरने से कर्म रूपी पर्वत खण्ड-खण्ड हो जाते हैं। आप सूर्य के समान महा कल्याण-कारी और प्रचण्ड/महा प्रभाव-शाली मोक्ष-मार्ग के अंश हैं/निमित्त कारण हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा विधि खण्ड के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४८।।

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार।
जन्म कल्याणक इन्द्र कर, क्षीरनीर करधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४९।।

अर्थ : अमृतमय आपका जन्म लोक को सन्तुष्टि-कारक है। आपका जन्म-कल्याणक मनाने के लिए इन्द्र क्षीर-सागर के नीर को हाथों में धारण करता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृत उद्भव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५४९।।

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार।
मूर्तीक शुभ मंत्र हौ, देव जजैं हित धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र-मूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५०।।

अर्थ : इन्द्रियों के विषयों रूपी विष का हरण करने वाले कामरूपी पिशाच को नष्ट कर देने वाले आप मूर्तिक शुभ मन्त्र/कल्याण-कारी मन्त्रों की मूर्ति हैं। हित को धारण कर देव आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्र-मूर्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५०।।

सौम्य दशा प्रकटी घनी, जाति विरोधी जीव।
वैर छाँड समभाव धर, सेवत चरण सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वैर-सौम्य-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५१।।

अर्थ : आपके अत्यधिक सौम्य दशा प्रगट हो जाने के कारण जाति-विरोधी जीव भी बैर छोड़कर सम-भाव धारण कर सदैव आपके चरणों की सेवा करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्बैर सौम्य भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५१।।

पराधीन इन्द्री बिना, राग विरोध निवार।
हो स्वाधीन न कर्ण पर, स्वयं सिद्ध सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वतन्त्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५२।।

अर्थ : पराधीन इन्द्रियों के विना ही राग, द्वेष का निवारण कर आप स्वाधीन, इन्द्रियातीत, स्वयं-सिद्ध, सुख-कारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वतन्त्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५२।।

ब्रम्ह रूप, नहिं बाह्य तन, संभव ज्ञान स्वरूप।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-सम्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५३।।

अर्थ : बाह्य शरीर से पूर्णतया रहित, ब्रम्हरूप, भली-भाँति प्रगट हुए ज्ञान-स्वरूप, स्वयं प्रकाशमय विलास के धारक आप मल से पूर्णतया रहित, अनुपम रूप से सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह सम्भव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५३।।

आनन्दधार सु मगन है, सब विकल्प दुख टार।
पर आश्रित नहिं भाव हैं, पूजूँ आनंद धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५४।।

अर्थ : आनन्द को धारण कर भली-भाँति निमग्न आप सम्पूर्ण विकल्पों रूपी दुःखों को दूर कर पराश्रित भावों से पूर्णतया रहित हैं। आनन्दित हो मैं आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५४।।

परिपूरण गुण सीम है, सर्व शक्ति भण्डार।
तुमसे सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं गुणांबुधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५५।।

अर्थ : गुणों से परिपूर्ण, सीमा-सहित सभी शक्तिओं के भण्डार आपमें कोई भी सुगुण ऐसा नहीं है, जो सुख-कारक न हो/सभी सुख-कारक ही हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं गुण-अम्बुधि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५५।।

ग्रहण-त्याग कौ भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद।
व्याधिकार है वस्तु में, तुम्हें नमूँ निरखेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-पाप-निरोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५६।।

अर्थ : ग्रहण-त्याग के भाव को छोड़कर, व्याधि में निमित्तभूत सभी वस्तुओं संबंधी शुभ और अशुभ को अभेद करने वाले आपको खेद-रहित हो मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-पाप का निरोध करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५६।।

सूक्षम रूप अलक्ष हैं, गणधर आदि अगम्य।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अगम्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं महागम्य-सूक्ष्म-रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५७।।

अर्थ : गणधर आदि के लिए अगम्य सूक्ष्म रूप अलक्ष/अतीन्द्रिय आप गुप्त परमात्मा इन्द्रिओं के द्वारा ज्ञात होने-योग्य नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा अगम्य सूक्ष्मरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५७।।

अन्तरगुप्त स्व-आत्मरस, ताकौ पान करात।
पर प्रवेश नहीं रंच है, केवल मग्न सुजात।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५८।।

अर्थ : अन्तर गुप्त अपने आत्म-रस का पान करने वाले आपमें अन्य का प्रवेश रंच-मात्र भी नहीं है। आप भली-भाँति प्रगट केवल-ज्ञानादि में ही मग्न हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्त आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५८।।

निजकारक निज कर्णकर, निजपद निज आधार।
सिद्ध कियौ निज रस लियौ, पूजत हूँ हितकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५९।।

अर्थ : अपना करने वाले आपने, अपने साधन द्वारा, अपने आधार से, अपने पद को सिद्ध कर अपना रस प्राप्त कर लिया है। हित करने वाले आपकी मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५५९।।

नित्य उदै बिन अस्त हौ, पूरण दुति घन आप।
ग्रहै न राहू जास शशि, सो हौ हर सन्ताप।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरुपप्लवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६०।।

अर्थ : उदय और अस्त से पूर्णतया रहित, सदा परिपूर्ण ज्योति के घन/ठोस समूह आप सन्ताप का हरण करते हुए सुशोभित हैं। आप रूपी चन्द्रमा को कभी भी राहू नहीं ग्रस पाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं निरुपप्लव/सम्पूर्ण बाधाओं से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६०।।

लियौ अपूरव लाभ कौं, अचल भये सुखधाम।
पूज रचैं जे भावसौं, पूर्ण होंइ सब काम।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदर्काय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६१।।

अर्थ : अपूर्व लाभ को प्राप्त कर आप सुख-धाम में अचल हो गए हैं। भाव पूर्वक आपकी पूजन करने वाले के सभी कार्य पूर्ण हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा उदर्क के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६१।।

है प्रशंस तिहुँ लोक में, तुम पुरुषार्थ उपाय।
पायौ धर्म सुधाम कौ, पूजौं तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोपायाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६२।।

अर्थ : तीनों लोकों में प्रशंसनीय अपने पुरुषार्थ रूपी उपाय से आपने धर्म का सुधाम/सुन्दर स्थान प्राप्त कर लिया है। मैं आपके चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा उपाय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६२।।

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरीश।
तुमकौं पूजत भक्ति करि, चरण धरैं निज शीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पितामहाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६३।।

अर्थ : जगत के स्वामी गणधर आदि, सुरेन्द्र/देवों के इन्द्र, सुरीश/देविओं के स्वामी भक्ति पूर्वक आपकी पूजन करते हुए आपके चरणों में अपना शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत पितामह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६३।।

तुम ही सौं भवि सुख लहैं, तुम बिन दुख ही पाय।
नेमरूप यहि है तुम्हें, महा नाम हम गाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-कारुणिकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६४।।

अर्थ : भव्य जीव आपसे ही सुख प्राप्त करते हैं; आपके विना दु:ख ही प्राप्त करते हैं। आपके महा नाम को गाकर हम नियम से आपको प्राप्त कर लेंगे।

ॐ ह्रीं अर्हं महा कारुणिक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६४।।

महासुगुण की रास हौ, राजत हौ गुण रूप।
लौकिकगुण औगुण सही, सब ही द्वेष सरूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६५।।

अर्थ : सुगुणों की महा राशि-सम्पन्न आप गुण रूप से सुशोभित हैं। लौकिक गुण तो वास्तव में अवगुण और सभी प्रकार से द्वेष-स्वरूप हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६५।।

जन्म-मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार।
परम सुखी तुमकौं नमूँ, पाऊँ भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-क्लेश-निवारणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६६।।

अर्थ : जन्म-मरण आदि महा दु:खों का निवारण कर परम सुखी हुए आपके लिए संसार-सागर से पार होने-हेतु नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा क्लेश-निवारण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६६।।

रागादिक नहिं भाव है, द्रव्य नेह नहिं धार।
दोउ मलिनता, छाँड़िकैं, स्वच्छ भये निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-शुचये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६७।।

अर्थ : रागादि भावों से पूर्णतया रहित, द्रव्य-देह/पौद्गलिक शरीर के धारक नहीं होने से आप भाव और द्रव्य - दोनों प्रकार की मलिनता को छोड़कर वास्तव में शुद्ध हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा शुचि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६७।।

आधि व्याधि नहीं रोग है, नित प्रसन्न निज भाव।
आकुलता बिन शांति-सुख, धारत सहज सुभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं अरुजे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६८।।

अर्थ : आधि-व्याधि रोगों से पूर्णतया रहित, अपने भाव में सदा प्रसन्न रहने वाले आप आकुलता से रहित, सहज स्वभावमय शान्ति-सुख को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अरुज/रोग-रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६८।।

यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन।
अविनाशी अविकार हैं, नमैं 'सन्त' चित दीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-योगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६९।।

अर्थ : यथा-योग्य सदा स्थिर पद वाले, यथा-योग्य स्वयं में लीन विकारों से पूर्णतया रहित अविनाशी आपको, मन में स्थापित कर सन्त कवि नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा योग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५६९।।

स्वामृत रस कौ पान करि, भोगत हैं निज स्वाद।
पर-निमित्त चाहैं नहीं, करैं न तिनकौं याद।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-भोगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७०।।

अर्थ : अपने अमृत रस का पान कर अपने स्वाद का भोग करने वाले आप अन्य निमित्तों की इच्छा नहीं करते हैं; उन्हें याद भी नहीं करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा भोग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७०।।

निर-उपाधि निज धर्म में, सदा रहैं सुखकार।
रत्नत्रय की मूरती, अनागार आगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-धृतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७१।।

अर्थ : अनागार/मुनि, आगार/श्रावक के रत्नत्रय की मूर्ति आप उपाधि से पूर्णतया रहित, सदा सुख-कारक अपने धर्म में सदा रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा धृति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७१।।

रागद्वेष नहीं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव।
ज्ञाता दृष्टा जगत के, परसौं नहीं लगाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमौदासीनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७२।।

अर्थ : जगत के ज्ञाता-दृष्टा, पर के साथ सम्बन्ध से पूर्णतया रहित आपके स्वभाव का मूल मध्यस्थ भाव है; राग-द्वेष नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम उदासीन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७२।।

आदि अन्त बिन वहत है, परम धाम निरधार।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७३।।

अर्थ : आदि और अन्त से रहित आप वास्तविक परम-धाम में रहते हैं। परम आधारभूत आपके अपने सुख में एक क्षण का भी अन्तर नहीं पड़ता है।

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७३।।

मूल देह आकृति रहै, हौ नहिं अन्य प्रकार।
सत्याशन इम नाम है, पूजूँ भक्ति लगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्याशने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७४।।

अर्थ : आपकी आकृति मूल शरीर रूप रहती है, अन्य प्रकार नहीं होती है; अत: आपका नाम सत्याशन है। मैं भक्ति पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य अशन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७४।।

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वामि।
तीनलोक प्रति शांतिकर, तुम पद करूँ प्रणामि।।

ॐ ह्रीं अर्हं शांति-नायकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७५।।

अर्थ : सदा परम शान्ति-सुखमय, क्षोभ से रहित, तीनों लोकों में शान्ति करने वाले स्वामी के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शान्ति-नायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७५।।

काल अनंतानंत करि, रुल्यो जीव जग माहिं।
आत्मज्ञान नहिं पाइयौ, तुम पायौ है ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्व-विद्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७६।।

अर्थ : अनन्त-अनन्त काल से संसार में रुलते हुए इस जीव ने आत्म-ज्ञान प्राप्त नहीं किया है। आपने उसे प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्व-विद्या के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७६।।

यथाख्यात चारित्र कौं, जानौं मानौं भेद।
आत्मज्ञान केवल थकी, पायौ पद निरभेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं योग-ज्ञायकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७७।।

अर्थ : यथाख्यात चारित्र के रहस्य को जानकर, मानकर, आपने मात्र आत्म-ज्ञान द्वारा, भेदों से पूर्णतया रहित अभेद पद प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं योग-ज्ञायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७७।।

धर्ममूर्ति सर्वस्व हौ, राजत शुद्ध स्वभाव।
धर्ममूर्ति तुमकौं नमूँ, पाऊँ मोक्ष उपाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-मूर्तये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७८।।

अर्थ : धर्म की सर्वस्व मूर्ति, शुद्ध स्वभाव से सुशोभित धर्म-मूर्ति को, मोक्ष का उपाय प्राप्त करने के लिए नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-मूर्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७८।।

स्व-आतम परदेश में, अन्य मिलाप न होय।
आकृति है निजधर्म की, निज विभाव कौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-देहाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७९।।

अर्थ : अपने आत्मा के प्रदेशों में अन्य का मिलाप नहीं होता है। अपने विभावों को नष्ट कर आप अपने धर्म की आकृति हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-देह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५७९।।

स्वामी हौ निज-आत्म के, अन्य सहाय न पाय।
स्वयं-सिद्ध परमातमा, हम पर होउ सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्हेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८०।।

अर्थ : अन्य की सहायता के विना ही अपने आत्मा के स्वामी, स्वयं-सिद्ध परमात्मा आप, हमारी सहायता कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्हेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८०।।

निज पुरुषारथ करि लियौ, मोक्ष परम सुखकार।
करना था सो करि चुके, तिष्ठैं सुख आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृत-कृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८१।।

अर्थ : अपने पुरुषार्थ द्वारा आपने परम सुख-कारक मोक्ष प्राप्त कर लिया है। इसप्रकार करने-योग्य सब कुछ कर लिया होने से अब आप सुख के आधार से विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कृत-कृत्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८१।।

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहिं पाय।
लोकोत्तम बहु मान्य हौ, बंदूँ हूँ युग पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं गुणात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८२।।

अर्थ : इन्द्र आदि को प्राप्त नहीं होने वाले असाधारण गुणों के धारक आप लोक में उत्तम और बहु-मान्य हैं। मैं आपके युगल चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं गुणात्मक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८२।।

तुम गुण परम प्रकाशकर, तीन लोक विख्यात।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण-गुण-प्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८३।।

अर्थ : आवरण से पूर्णतया रहित, उघड़े/विकसित सूर्य के समान प्रताप-धारक, तीनों लोकों में विख्यात आपके गुण परम प्रकाश करने वाले हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण-गुण-प्रकाश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८३।।

समय मात्र नहिं आदि हैं, बहैं अनादि अनंत।
तुम प्रवाह इस जगत में, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८४।।

अर्थ : एक समय मात्र भी प्रारम्भ के विना इस जगत में आपका प्रवाह अनादि-अनन्त प्रवाहित है। सन्त कवि आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८४।।

योग-द्वार बिन करम रज, चढ़ै न निज परदेश।
ज्यों बिन छिद्र न जल ग्रहै, नवका शुद्ध हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८५।।

अर्थ : जैसे छिद्रों से रहित नौका, जल-ग्रहण किए विना सदा शुद्ध रहती है; उसीप्रकार योग-द्वार के विना अपने प्रदेशों में कर्मरूपी धूल नहीं चढ़ती है।

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८५।।

परम ब्रम्ह पद पाइयौ, पूरण ज्ञान प्रकास।
तीन लोक के जीव सब, पूजैं चरण निवास।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-ब्रम्ह-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८६।।

अर्थ : ज्ञान के परिपूर्ण प्रकाश द्वारा आपने अपने ब्रम्ह पद को प्राप्त कर लिया है। आपके चरणों में निवास करने वाले तीनों लोकों के सभी जीव आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा ब्रम्ह-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८६।।

द्रव्य पर्यार्थिक दोउ नय, साधत वस्तु स्वरूप।
गुण अनंत अवरोधकर, कहत सरूप अनूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुनय-तत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८७।।

अर्थ : वस्तु के स्वरूप को सिद्ध करने वाले द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक - ये दोनों नय मुख्य और गौण पद्धति से उसके अनन्त अनुपम स्वरूप का निरूपण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुनय-तत्त्वज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८७।।

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूरि।
शरण गही तुम चरण की, करौ ज्ञान दुति पूरि।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूरये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८८।।

अर्थ : सूर्य के समान प्रकाश करने वाले, दुष्ट कर्मों को नष्ट करने वाले शूर-वीर आपके चरणों की शरण हमने ग्रहण की है। आप हमारे ज्ञान का प्रकाश परिपूर्ण कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं सूरी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८८।।

तुम सम और न जगत में, सत्यारथ तत्त्वज्ञ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावतैं, हौ अदोष सर्वज्ञ।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८९।।

अर्थ : जगत में सत्यार्थ तत्त्व को जाननेवाला आपके समान अन्य कोई नहीं है। आप सम्यग्ज्ञान के प्रभाव से निर्दोष/वीतराग, सर्वज्ञ हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५८९।।

तीन लोक हितकार हौ, शरणागति प्रतिपाल।
भव्यनि मन आनंद करि, बंदूँ दीनदयाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-मित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९०।।

अर्थ : तीनों लोकों का हित करने वाले, शरणागत के प्रतिपालक, भव्यों के मन को आनन्द देने वाले दीन-दयाल की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा मित्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९०।।

समता सुख में मगन हैं, राग द्वेष संक्लेश।
ताकौं नाशि सुखी भये, युग-युग जिओ जिनेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं साम्य-भाव-धारक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९१।।

अर्थ : राग, द्वेष, संक्लेश आदि को पूर्णतया नष्ट कर सुखी हो, समता-सुख में मग्न जिनेन्द्र भगवान युगों-युगों पर्यन्त जयवन्त वर्तें।

ॐ ह्रीं अर्हं साम्य-भाव धारक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९१।।

निरावरण निज ज्ञान में, संशय विभ्रम नाँय।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशतैं, वस्तु प्रमाण दिखाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीण-बन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९२।।

अर्थ : आवरणों से पूर्णतया रहित अपने ज्ञान में संशय, विभ्रम नहीं हैं। सम्यग्ज्ञानरूपी प्रकाश में प्रमाणित वस्तु दिखाई देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीण-बन्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९२।।

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय।
पर-निमित्त लवलेश नहिं, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९३।।

अर्थ : अपने एक रूप स्वभाव का प्रकाश कर दो प्रकार/राग-द्वेष रूप भावों का विनाश करने वाले आपके पर-निमित्त का लेशमात्र भी नहीं है। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्व के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९३।।

मुनि विशेष स्नातक कहैं, परमातम परमेश।
तुम ध्यावत निर्वाण पद, पावें भविक हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९४।।

अर्थ : आप मुनिओं में विशेष स्नातक, परमात्मा, परमेश कहलाते हैं। आपका ध्यान करने से भव्य जीव सदा निर्वाण पद प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९४।।

पंच प्रकार शरीर बिन, दीप्त रूप निज रूप।
सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूँ शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९५।।

अर्थ : पाँचों प्रकार के/औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस, कार्मण शरीरों से पूर्णतया रहित अपना रूप/स्वभाव ज्योतिरूप है। देवों और मुनिओं के मन को भी रमणीय, शिव-भूप आपकी हम पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९५।।

(अब यहाँ से इस भरत क्षेत्र संबंधी त्रिकाल चौबीसी अर्थात् बहत्तर तीर्थंकरों के नामों की मुख्यता से सिद्ध भगवान का गुणानुवाद कर रहे हैं।

उनमें से सर्व-प्रथम भूत-कालीन चौबीसी संबंधी पद्य इसप्रकार हैं -)

द्वय प्रकार बन्धन रहित, नित हौ मोक्ष सरूप।
भविजन बंध विनाशकर, दैहौ मोक्ष अनूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९६।।

अर्थ : दो प्रकार के द्रव्य-कर्म और भाव-कर्म के बन्धन से रहित सदा मुक्त-स्वरूप आप भव्य जीवों के बन्ध का विनाश कर उन्हें अनुपम मोक्ष देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९६।।

सुगुण रत्न की राश के, आप महा भण्डार।
अगम अथाह विराजतै, बंदूँ भाव विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सागराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९७।।

अर्थ : सुगुणों रूपी रत्नों की राशि के महा भण्डार स्वरूप आप अगम, अथाह रूप में सुशोभित हैं। भाव पूर्वक विचार करके मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सागर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९७।।

मुनि जन ध्यावैं भावयुत, महा मोक्षप्रद साध।
सिद्ध भये मैं नमत हूँ, चहूँ संघ आराध।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-साधवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९८।।

अर्थ : महान मोक्ष को देने वाले आपकी साधना कर, भाव पूर्वक ध्यान कर मुनिजन सिद्ध हो गए हैं। मैं चारों संघों की आराधना कर उन्हें नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-साधु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९८।।

ज्ञान ज्योति प्रतिभास में, रागादिक मल नाँह।
विशद अनूपम लसत हौ, दीप्तज्योति शिवराह।।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९९।।

अर्थ : ज्ञान-ज्योति के प्रतिभास में रागादि मल नहीं हैं। आप मोक्ष-मार्ग में विशद/स्पष्ट, अनुपम देदीप्यमान ज्योति से सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।५९९।।

द्रव्य-भाव मल नाशकर, शुद्ध निरंजन देव।
निज-आतम में रमत हौ, आश्रय बिन स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६००।।

अर्थ : अन्य के आश्रय से पूर्णतया रहित, स्वयं ही द्रव्य और भाव मल का नाशकर आप शुद्ध, निरंजन देव, अपने आत्मा में रमण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६००।।

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ।
श्रीधर नाम कहात हौ, हरिहर नावत माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०१।।

अर्थ : शुद्ध अनन्त चतुष्टय गुणों को धारण करने वाले, मोक्ष के स्वामी आपका नाम श्रीधर कहलाता है। हरि/विष्णु, हर/शंकर आपको शिर झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०१।।

मरणादिक भय से सदा, रक्षित हैं भगवान।
स्वयं प्रकाश विलास में, राजत सुख की खान।।

ॐ ह्रीं अर्हं मरण-भय-निवारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०२।।

अर्थ : मरण आदि भयों से सदा रक्षित, भगवान, सुख की खदान आप अपने प्रकाश के विलास में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मरण-भय-निवारण/दत्त-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०२।।

राग-द्वेष नहिं भाव में, शुद्ध निरंजन आप।
ज्यों के त्यों तुम थिर रहौ, तनक न व्यापै पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमल-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०३।।

अर्थ : शुद्ध, निरंजन आपके भावों में राग-द्वेष नहीं हैं। ज्यों के त्यों स्थिर रहने वाले आपमें पाप रंच-मात्र भी व्याप्त नहीं होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अमल-भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०३।।

भवसागर से पार हो, पहुँचे शिवपद तीर।
भाव सहित तिन नमत हूँ, लहूँ न पुनि भव पीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं उद्धरणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०४।।

अर्थ : संसार-सागर से पार होकर उसके तीर/किनारे शिवपद में आप पहुँच गए हैं। संसार के कष्ट अब और मैं प्राप्त नहीं करूँ; उसके लिए भाव-सहित आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं उद्धरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०४।।

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्नि-देवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०५।।

अर्थ : इन्द्र आदि शेष देवों के साथ अग्नि कुमार जाति के देव या आग्नेय दिशा के देव विशेषरूप से आपके चरण युगल का ध्यान करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्नि-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०५।।

विषय-कषाय न रंच हैं, निरावरण निरमोह।
इन्द्री मन कौ दमन कर, बन्दूँ सुन्दर सोह।।

ॐ ह्रीं अर्हं संयमाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०६।।

अर्थ : विषय-कषायों से पूर्णतया रहित, निरावरण, निर्मोह, इन्द्रियों और मन का दमन करने वाले, सुन्दर आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं संयम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०६।।

मोक्षरूप कल्याण कर, सुख-सागर के पार।
महादेव स्वशक्ति धर, विद्या तिय भरतार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०७।।

अर्थ : मोक्षरूप कल्याण करने वाले, सुखरूपी सागर के पार को प्राप्त, अपनी शक्ति के धारक, विद्या रूपी स्त्री के स्वामी आप महा-देव हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०७।।

पुष्प भेंट धर जजत सुर, निज कर अंजुलि जोड़।
कमलापति कर-कमल में, धरैं लक्ष्मी होड़।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पांजलये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०८।।

अर्थ : पुष्पों की भेंट रखकर, अपने हाथों की अंजुलि जोड़कर देव आपकी पूजन करते हैं। हे कमलापति! आपके कर-कमलों से लक्ष्मी स्पर्धा कर रही है।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पांजलि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०८।।

पूरण ज्ञानानंदमय, अजर अमर अमलान।
अविनाशी ध्रुव अखिलपद, अधिकारी सब मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०९।।

अर्थ : परिपूर्ण ज्ञानानन्दमय, अजर, अमर, म्लानता/ग्लानि से रहित, अविनाशी, ध्रुव, सम्पूर्णता-सम्पन्न आपका पद सभी विकारों से पूर्णतया रहित माना गया है।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६०९।।

रोग शोक भय आदि बिन, राजत निज आनन्द।
खेद रहित रति-अरति बिन, विकसत पूरणचंद्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्साह-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१०।।

अर्थ : रोग, शोक, भय आदि से पूर्णतया रहित सदा आनन्द से सुशोभित आप खेद से रहित, रति और अरति के विना पूर्ण चन्द्र के समान विकसित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम उत्साह जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१०।।

जो गुण शक्ति अनन्त है, ते सब ज्ञान मँझार।
एकनिष्ठ आकृति विविध, सोहत हैं अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६११।।

अर्थ : एक निष्ठ, विविध आकृतिवाले, विकारों से पूर्णतया रहित आपके ज्ञान में प्रत्येक गुण की अनन्त शक्ति सुशोभित है।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६११।।

परम पूज्य परधान हैं, परम शक्ति आधार।
परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१२।।

अर्थ : परम पूज्य, प्रधान, परम शक्ति के आधार, परम पुरुष, परमात्मा आप सुख-कारक परमेश्वर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१२।।

दोष अपोष अरोष हौ, सम सन्तोष अलोप।
पंच परम पद धारियत, भविजन कौं परिपोष।।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१३।।

अर्थ : दोषों का पोषण नहीं करने वाले, द्वेष से पूर्णतया रहित, समता और सन्तोष से सम्पन्न पंच परम पद के धारक आप भव्य जीवों का परिपोषण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१३।।

पंचकल्याणक युक्त हैं, समोसरण ले आद।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुणगण अनुवाद।।

ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१४।।

अर्थ : पंच कल्याणकों से सम्पन्न आपके गुण-समूह का अनुवाद/वर्णन समवसरण से लेकर इन्द्र आदि पर्यन्त सभी सदा करते रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं यशोधर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१४।।

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय।
सुमति गोपियन संग रमत, निजलीला दर्शाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१५।।

अर्थ : इस युग के नौवें नारायण कृष्ण गोपिओं के साथ रमण करते हुए अपनी लीला दिखाते थे; वे भविष्य में तीर्थंकर होंगे। ये भूत-कालीन कृष्ण नामक तीर्थंकर, सुमति/सम्यक् जानकारी रूपी गोपिओं के साथ रमण कर अपनी लीला दिखा रहे हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कृष्ण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१५।।

सम्यग्ज्ञान जु सुमति धर, मिथ्या मोह निवार।
परहितकर उपदेश है, निश्चय वा व्यवहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-मतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१६।।

अर्थ : मिथ्या मोह का निवारण कर, सम्यग्ज्ञानरूपी सुमति को धारण करने वाले आपका, निश्चय और व्यवहार पद्धति से दिया गया उपदेश दूसरों के लिए हित-कारक है।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-मति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१६।।

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-मतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१७।।

अर्थ : वीतराग, सर्वज्ञ, हित-कारक उपदेशक आप सत्यार्थ प्रमाण द्वारा दूसरों को सुमति/सम्यग्ज्ञान के दाता हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-मति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१७।।

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम।
ज्ञानानंद स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम।।

ॐ ह्रीं अर्हं भद्राय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१८।।

अर्थ : मायाचार और माया शल्य से पूर्णतया रहित, शुद्ध, सरल परिणाम-सम्पन्न आप ज्ञान-आनन्दमय सुन्दर अपनी लक्ष्मी का भोग करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भद्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१८।।

शील स्वभाव सुजन्म लै, अन्त समय निरवाण।
भविजन आनन्दकार हैं, सर्व कलुषता हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं शांति-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१९।।

अर्थ : सम्पूर्ण कलुषता को नष्ट करने वाले, शील-स्वभाव-सम्पन्न आप जन्म से लेकर अन्त समय निर्वाण पर्यन्त भव्य जीवों को आनन्दित करने वाले हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शान्ति-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६१९।।

(यहाँ पर्यन्त भूत-कालीन चौबीस तीर्थंकरों के नामों की मुख्यता पूर्वक सिद्ध भगवान की स्तुति की गई है। अब, यहाँ से इस भरत क्षेत्र संबंधी वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों के नामों की मुख्यता पूर्वक सिद्ध भगवान की वन्दना कर रहे हैं -)

धरम रूप अवतार हौ, लोक पाप कौ भार।
मृत स्थल पहुँचाइयौ, सुलभ कियौ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२०।।

अर्थ : धर्म रूप अवतार-सम्पन्न आपने लोक के पापरूपी भार को मृतक-स्थल/श्मशान घाट पहुँचाकर/पापों को जड़-मूल से समाप्त कर, सुख-कारक धर्म सुलभ कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२०।।

अन्तर-बाहिर शत्रु कौ, निमिष परै नहीं जोर।
विजय लक्ष्मी नाथ हौ, पूजूँ द्वय कर जोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२१।।

अर्थ : आपके ऊपर अन्तरंग-बहिरंग शत्रुओं का रंच-मात्र भी प्रभाव नहीं होता है। इन विजय-लक्ष्मी के नाथ की मैं दोनों हाथ जोड़कर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अजित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२१।।

तीन लोक आनन्द हो, श्रेष्ठ जन्म तुम होत।
स्वर्ग-मोक्ष दातार हौ, पावत नहीं कुमौत।।

ॐ ह्रीं अर्हं संभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२२।।

अर्थ : आपका श्रेष्ठ जन्म होते ही तीनों लोकों में आनन्द हो जाता है। स्वर्ग-मोक्ष के दाता आपका कभी कुमरण नहीं होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं संभव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२२।।

परम सुखी तुम आप हौ, पर आनन्द कराय।
तुमकौं पूजत भाव सौं, मोक्ष लक्ष्मी पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अभिनन्दनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२३।।

अर्थ : स्वयं से ही परम सुखी और दूसरों को आनन्दित करने वाले आपकी भाव पूर्वक पूजन करने से मोक्ष-लक्ष्मी प्राप्त होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं अभिनन्दन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२३।।

सब कुवादि एकांत कौं, नाश कियौ छिन माहिं।
भविजन मन संशयहरण, और लोक में नाहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२४।।

अर्थ : सभी एकान्तों रूप कुवादिओं को क्षण भर में समाप्त कर देने वाले आपके समान इस लोक में भव्य जीवों के मन का संशय नष्ट करने वाला अन्य कोई नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं सुमति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२४।।

भविजन मधुकर कमल हौ, धरत सुगन्ध अपार।
तीन लोक में विस्तरी, सुयश नाम कौ धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२५।।

अर्थ : भव्य जीवों रूपी भ्रमरों के लिए आप अपार सुगन्ध के धारक कमल हैं। सुयशमय आपके नाम की धारा तीनों लोकों में फैल रही है।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२५।।

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बन्ध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हौ हितकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२६।।

अर्थ : जैसे पारस लोहे को सुवर्ण बना देता है; उसीप्रकार आप संसार के बन्ध का निवारण करते हैं। मोक्ष-हेतु श्रेष्ठ गुणों के धारक आप हित-कारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्व के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२६।।

तीन लोक आताप हर, मुनि-मन-मोदन चन्द।
लोक प्रिय अवतार हो, पाऊँ सुख तुम वन्द।।

ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२७।।

अर्थ : तीनों लोकों के आताप का हरण करने वाले, मुनिओं के मन को प्रसन्न करने-हेतु चन्द्रमा के समान आपका अवतार/जन्म, लोक को प्रिय है। आपकी वन्दना कर मैं भी सुख प्राप्त कर लूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२७।।

मन मोहन सोहन महा, धारैं रूप अनूप।
दरशत मन आनन्द हौ, पायौ निज रस कूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२८।।

अर्थ : मन को मोहित करने वाले, महा सुन्दर, अनुपम रूप को धारण करने वाले आपके दर्शन से मन आनन्दित होता है। आपने अपने रस का कूप/भण्डार प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदन्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२८।।

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश।
मानो अमृत सींचियौ, पूजत सदा सुरेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं शीतल-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२९।।

अर्थ : भवों-भवों के दाह का निवारण कर हे जिनेन्द्र भगवान! आप इसप्रकार शीतल हो गए हैं; मानो अमृत का सिंचन कर लिया है। इन्द्र सदा आपकी पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शीतल-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६२९।।

तीर्थंकर श्रेयांस हम दैहौ श्री शुभ भाग।
श्रीसु अनन्त चतुष्ट हौ, हरौ सकल दुरभाग।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयांश-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३०।।

अर्थ : हे श्रेयांशनाथ तीर्थंकर! हमें आप सौभाग्यरूपी लक्ष्मी दीजिए। अनन्त चतुष्टय रूपी शुभ लक्ष्मी से सम्पन्न आप हमारे समस्त दुर्भाग्यों को समाप्त कर दीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयांश-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३०।।

त्रस नाड़ी या लोक में, तुम ही पूज्य प्रधान।
तुमकौं पूजत भावसौं, पाऊँ सुख निरवाण।।

ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३१।।

अर्थ : त्रस-नाड़ी या लोक में आप ही प्रधान पूज्य हैं। निर्वाण-सुख की प्राप्ति के लिए मैं भाव पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३१।।

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महा मुनिन के नाथ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूँ पदांबुज माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं विमल-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३२।।

अर्थ : द्रव्य और भाव मल से रहित, महा मुनिओं के नाथ आपकी पूजन इन्द्रादि सदा करते हैं। मैं आपके चरण-कमलों में शिर झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विमल-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३२।।

जाकौ पार न पाइयौ, गणधर और सुरेश।
थकित रहैं असमर्थ करि, प्रणमें 'सन्त' हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३३।।

अर्थ : गणधर और इन्द्र भी जिनका पार नहीं पा पाते हैं; असमर्थ हो थक जाते हैं; सन्त कवि उन्हें सदा प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३३।।

अनागार आगार के, उद्धारक जिनराज।
धर्मनाथ प्रणमूँ सदा, पाऊँ शिवसुख साज।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३४।।

अर्थ : अनागार/मुनिओं और आगार/श्रावकों के उद्धारक जिनराज धर्म-नाथ को मोक्ष-सुख के साधन प्राप्त करने के लिए मैं सदा प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३४।।

शांतिरूप पर शांतिकर, कर्म दाह विनिवार।
शांति हेतु बन्दूँ सदा, पाऊँ भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शांति-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३५।।

अर्थ : कर्मों की दाह को पूर्णतया समाप्त कर देने वाले शान्तिरूप आप दूसरों के लिए शान्ति करने वाले हैं। संसार-सागर से पार हो शान्ति प्राप्त करने के लिए मैं सदा आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शान्ति-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३५।।

क्षुद्र वीर्य सब जीव के, रक्षक हैं तीर्थेश।
शरणागत प्रतिपालकर, ध्यावैं सदा सुरेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थु-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३६।।

अर्थ : अल्प शक्ति वाले सभी जीवों के रक्षक, शरणागत का प्रति-पालन करने वाले तीर्थेश/तीर्थंकर का, इन्द्र भी सदा ध्यान करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थु-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३६।।

पूजनीक सब जगत के, मंगलकारक देव।
पूजत हैं हम भावसौं, विनशैं अघ स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३७।।

अर्थ : समस्त जगत के पूजनीय, मंगल-कारक देव की हम भाव पूर्वक पूजन करते हैं; जिससे पाप स्वयं ही पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अर-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३७।।

मोह काम भट जीतियौ, जिन जीतौ सब लोक।
लोकोत्तम जिनराज के, नमूँ चरण दे धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं मल्लि-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३८।।

अर्थ : मोह और काम रूपी योद्धा को जीतने वाले ने ही सम्पूर्ण लोक को जीता है अथवा सम्पूर्ण लोक को जिन्होंने जीत लिया है, उन मोह और काम रूपी योद्धा को जीतने वाले लोकोत्तम जिनराज के चरणों में मैं धोक देकर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मल्लि-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३८।।

पंच पाप कौं त्यागकरि, भव्य जीव आनन्द।
भये जासु उपदेश तैं, पूजत हूँ पद वृन्द।।

ॐ ह्रीं अर्हं मुनि-सुव्रताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३९।।

अर्थ : जिनके उपदेश से (हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील, परिग्रह - इन) पाँच पापों का त्याग कर भव्य जीव आनन्दित होते हैं, उन चरण-समूह की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मुनि-सुव्रत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६३९।।

सुर नर मुनि नित नमन करि, जान धरम अवतार।
तिनकौं पूजूँ भाव युत, लहूँ भवार्णव पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं नमि-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४०।।

अर्थ : धर्म का अवतार जानकर देव, मनुष्य, मुनिराज जिन्हें सदा नमन करते हैं; उनकी संसार-सागर से पार होने के लिए मैं भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं नमि-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४०।।

नेम धर्म में नित रमैं, धर्मधुरा भगवान।
धर्मचक्र जग में फिरै, पहुँचावै शिव थान।।

ॐ ह्रीं अर्हं नेमि-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४१।।

अर्थ : धर्म में सदा रमण करने वाले धर्म की धुरा रूप नेमि-नाथ भगवान का मोक्ष-स्थान में पहुँचाने वाला धर्म-चक्र जगत में विहार करता है।

ॐ ह्रीं अर्हं नेमि-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४१।।

शरणागत निज पास दो, पाप फाँस दुख नाश।
तिसकौं छेदौ मूलसौं, देह मुक्त गति वास।।

ॐ ह्रीं अर्हं पार्श्व-नाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४२।।

अर्थ : शरणागत को अपनी निकटता देने वाले आपने पाप रूपी फाँस के दु:ख का नाशकर, उसका मूल से छेदन कर, शरीर से पूर्णतया रहित मोक्ष-गति में वास कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पार्श्व-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४२।।

वृद्ध भावतैं उच्चपद, लोक शिखर आरूढ़।
केवल लक्ष्मी वर्धता, भई सु अन्तर गूढ़।।

ॐ ह्रीं अर्हं वर्धमानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४३।।

अर्थ : बढ़ते हुए भावों से उच्च पद प्राप्त कर, लोक-शिखर पर आरूढ़ आपकी केवलज्ञान रूपी लक्ष्मी अन्दर गूढ़ रूप से वृद्धि को प्राप्त हुई है।

ॐ ह्रीं अर्हं वर्धमान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४३।।

अतुल वीर्य तन धरत हैं, अतुल वीर्य मन बीच।
कामिन वश नहिं रंच भी, जैसैं जल बिच मीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं महावीराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४४।।

अर्थ : जैसे जल में मछली रहती है; उसीप्रकार अतुल वीर्य-सम्पन्न शरीर के धारक अतुल वीर्य वाले मन के बीच/मन पर स्त्रिओं का वश रंच-मात्र भी नहीं चलता है/आप स्त्रिओं के वश में नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महावीर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४४।।

मोह सुभटकूँ पटकियौ, तीन लोक परशंस।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगत में, कियौ कर्म विध्वंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुवीराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४५।।

अर्थ : मोहरूपी सुभट को पूर्णतया नष्ट कर देने से तीनों लोकों में आप प्रशंसनीय हैं। जगत के श्रेष्ठ पुरुष आपने कर्मों को जड़-मूल से नष्ट कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं सुवीर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४५।।

मिथ्या-मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार।
शुभ मारग दरशाइयौ, शुभ अरु अशुभ विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सन्मतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४६।।

अर्थ : महा सुमति के भण्डार आपने शुभ और अशुभ का विचार कर मिथ्या मोह को पूर्णतया समाप्त कर शुभ/कल्याण-कारी मार्ग दिखलाया है।

ॐ ह्रीं अर्हं सन्मति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४६।।

(यहाँ पर्यन्त वर्तमान-कालीन चौबीस तीर्थंकरों के नामों की मुख्यता पूर्वक सिद्ध भगवान का गुणानुवाद किया गया है। अब, यहाँ से इस भरत क्षेत्र संबंधी भविष्य-कालीन चौबीस तीर्थंकरों के नामों की मुख्यता पूर्वक सिद्ध भगवान का यशोगान करते हैं।)

निज आश्रय निर्विघ्न नित, निज लक्ष्मी भण्डार।
चरणाम्बुज निज नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-पद्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४७।।

अर्थ : अपने आश्रय से, सम्पूर्ण विघ्नों से पूर्णतया रहित, सदा अपनी लक्ष्मी के भण्डार आपके चरण-कमलों में शुभ पुष्पांजलि धारण कर हम सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-पद्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४७।।

हो देवाधीदेव तुम, नमत देव चउ भेव।
धरौ अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुर-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४८।।

अर्थ : (भवन-वासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक - ये) चार प्रकार के देव आपको नमन करते हैं; अतः आप देवाधिदेव हैं। आप परम आनन्दमय अभेद अनन्त चतुष्टय पद को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुर-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४८।।

निरावर्ण आभास है, ज्यों बिन पटल दिनेश।
लोकालोक प्रकाश करि, सुन्दर प्रभा जिनेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४९।।

अर्थ : मेघ-पटल से रहित सूर्य के समान आवरण से पूर्णतया रहित आभास/प्रतिभासमय हे जिनेन्द्र भगवान! आपकी सुन्दर प्रभा लोक-अलोक को प्रकाशित करती है।

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६४९।।

आतमीक जिन गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप।
स्वयं ज्योति परकाशमय, बन्दत हूँ शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-प्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५०।।

अर्थ : दीप्ति स्वरूप, अनुपम आत्मीक गुणों से सम्पन्न, स्वयं ज्योति रूप, प्रकाशमय, कल्याण के स्वामी जिनेन्द्र भगवान की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-प्रभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५०।।

निजशक्ती निज करण हैं, साधन बाह्य अनेक।
मोहसुभट क्षयकरन कौं, आयुध राशि विवेक।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५१।।

अर्थ : मोहरूपी सुभट का क्षय करने के लिए आयुध की राशि विवेक/भेद-विज्ञानरूप अपनी शक्तिआँ अपने करण/साधन/उपादान कारण हैं; तथा बाह्य साधन अनेकों हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५१।।

जय-जय सुर धुनि करत हैं, तथा विजय निधिदेव।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावैं सुख स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जय-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५२।।

अर्थ : देव और विजय निधि देव 'जय-जय' की देव-ध्वनि करते हैं। जो मनुष्य आपके चरणों में नमन करते हैं, वे स्वयं ही सुख प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जय-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५२।।

तुम सम प्रभा न और में, धरौ ज्ञान परकाश।
नाथ प्रभा जग में भये, नमत मोहतम नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभा-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५३।।

अर्थ : ज्ञान के प्रकाश को धारण करने वाले आपकी प्रभा के समान प्रभा अन्य किसी में भी नहीं है। जगत में प्रभा के स्वामी आपको नमन करने से मोह रूपी अन्धकार नष्ट हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभा-देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५३।।

रक्षक हौ षट्काय के, दया सिन्धु भगवान।
शशिसमजिय आल्हाद करि, पूजनीक धरिध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं उदंकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५४।।

अर्थ : चन्द्रमा के समान जीवों को आनन्दित करने वाले, षट्-कायिक जीवों के रक्षक, दया के सागर भगवान आप, ध्यान धारण कर पूजन करने के योग्य हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं उदंक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५४।।

समाधान सबके करैं, द्वादश सभा मँझार।
सर्व अर्थ परकाशकर, दिव्य ध्वनि सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्न-कीर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५५।।

अर्थ : (समवसरण की) बारह सभाओं में आप सभी का समाधान करते हैं। सभी अर्थों को प्रकाशित करने वाली आपकी दिव्यध्वनि सुख-कारक है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्न-कीर्ति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५५।।

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूँ नहिं व्यय होय।
उन्नति रूप विराजतै, जयवन्तौ जग सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५६।।

अर्थ : सभी प्रकार की बाधाओं से पूर्णतया रहित कभी नष्ट नहीं होने वाले, उन्नति रूप में विराजमान आप सदा जगत में जयवन्त रहें।

ॐ ह्रीं अर्हं जय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५६।।

केवलज्ञान स्वभाव में, लोकत्रय इक भाग।
पूरणता कौं पाइयौ, छाँडि सकल अनुराग।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण-बुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५७।।

अर्थ : केवलज्ञान रूपी आपके स्वभाव में तीनों लोक एक भाग है। आपने सभी प्रकार के अनुराग को छोड़कर पूर्णता को प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण-बुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५७।।

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार।
निज संतोष सुखी सदा, पर संबंध निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निजानंद-संतुष्ट-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५८।।

अर्थ : इच्छाओं के दुःख को पूर्णतया नष्ट कर, दूसरों का आलिंगन करने के भावों को छोड़कर, अन्य के साथ संबंध का निवारण कर आप स्वयं में संतुष्ट सदा सुखी हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निजानन्द-संतुष्ट जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५८।।

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान।
विमल जिनेश्वर मैं नमूँ, तीन लोक परधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विमल-प्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५९।।

अर्थ : मोहादि मल का नाशकर अतिशय रूप मल-रहित/परिपूर्ण पवित्र, तीनों लोकों में प्रधान विमल जिनेश्वर के लिए मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विमल-प्रभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६५९।।

स्व पद में नित रमत हैं, कभी न आरति होय।
अतुलवीर्य विधि जीतियौ, नमूँ जोर कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-बलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६०।।

अर्थ : सदा अपने पद में रमते हुए कभी भी आपको अरति/अप्रीति नहीं होती है। अतुल वीर्य के द्वारा विधि/कर्मों को जीतने वाले आपको दोनों हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-बल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६०।।

द्रव्य भाव मल कर्म हैं, ताकौ नाश करान।
शुद्ध निरंजन हो रहैं, ज्यों बादल बिन भान।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६१।।

अर्थ : बादलों से पूर्णतया रहित सूर्य के समान द्रव्य-मल कर्म और भाव-मल कर्म का नाश कर आप शुद्ध निरंजन हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६१।।

तुम चित्राम अरूप है, सुर नर साधु अगम्य।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्र-गुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६२।।

अर्थ : आपका चित्राम/आकार-प्रकार रूपादि से रहित होने के कारण देव, मनुष्य, मुनिराजों के लिए अगम्य है। आप निराकार, निर्लेप, असाधारण भावों के धारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्र-गुप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६२।।

मग्न भये निज आत्म में, पर पद में नहिं वास।
लक्ष अलक्ष विराजते, पूरौ मन की आस।।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधि-गुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६३।।

अर्थ : अपने आत्मा में पूर्णतया मग्न आपका पर-पद में वास नहीं है। लक्ष/अनन्त वैभव-सम्पन्न वस्तु में; लक्ष अलक्ष/स्थूल चिन्हों से रहित अथवा द्रव्येन्द्रिय और अतीन्द्रिय ज्ञान से सहित हो विराजमान आप मेरे मन की आशा पूर्ण कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधि-गुप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६३।।

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहिं चाह।
स्वयं भाव परकाशियौ, नमत मिटै भव दाह।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-भुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६४।।

अर्थ : आत्म-ज्ञान, अपना गुण है। दूसरों की सहायता संबंधी इच्छा के विना ही अपना भाव प्रकाशित करने वाले आपको नमन करने से संसार का दाह समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-भू के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६४।।

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द।
महातेज परताप हैं, पूरण ज्योति अमन्द।।

ॐ ह्रीं अर्हं कंदर्पाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६५।।

अर्थ : मन को मोहित करने वाले महा सुन्दर आपमें मुनिओं का मन रमण कर आनन्दित होता है। महा तेजस्वी, प्रतापी आप अमन्द/सर्वोत्कृष्ट पूर्ण ज्योतिमय हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कंदर्प के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६५।।

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान।
तिनकौं पूजै सर्व जग, मैं पूजौं धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विजय-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६६।।

अर्थ : कर्म जीतने वालों में प्रधान होने से आप विजय-लक्ष्मी के स्वामी हैं। समस्त जगत उनकी पूजन करता है। मैं भी ध्यान धारण कर उनकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विजय-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६६।।

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार।
तिनके स्वामी हौ प्रभु, राग–द्वेष मल जार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६७।।

अर्थ : विमल आचरण करने वालों में श्रेष्ठ गणधर आदि योगीशों के स्वामी हे प्रभु! आपने राग–द्वेष रूपी मल को पूर्णतया भस्म कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६७।।

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरैं, सर्व अर्थ गुणधार।
भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य–वादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६८।।

अर्थ : सम्पूर्ण अर्थों और गुणों को धारण करने वाली, भव्य जीवों के मन का संशय नष्ट करने वाली, शुद्ध ज्ञान की आधारभूत, दिव्य अनक्षरी ध्वनि आपकी खिरती है।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य–वाद के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६८।।

नहीं पार जा वीर्य कौ, स्वाभाविक निरधार।
सो सहजैं गुण धरत हौ, नमूँ लहूँ भवपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त–वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६९।।

अर्थ : जिस वीर्य का कोई पार नहीं है, उस स्वाभाविक, निराधार/अन्य के आश्रय से पूर्णतया रहित गुण को आप सहज ही धारण करते हैं। मैं संसार से पार होने के लिए आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त–वीर्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६६९।।

पुरुषोत्तम परधान हौ, परम निजानंद धाम।
चक्रपती हरिबल नमैं, मैं पूजूँ निष्काम।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा–पुरुष–देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७०।।

अर्थ : उत्कृष्ट, अपने आनन्द के धाम, पुरुषोत्तम, प्रधान आपको चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र भी नमन करते हैं। मैं निष्काम भाव से आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा–पुरुष/पुरु देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७०।।

(यहाँ पर्यन्त इस भरत क्षेत्र के भविष्य–कालीन चौबीस तीर्थंकरों के नामों की मुख्यता पूर्वक सिद्ध भगवान की स्तुति की गई है।)

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार।
श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूँ करौ भवपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुविधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७१।।

अर्थ : आपका सम्पूर्ण आचरण सभी प्रकार से शुभ/कल्याणमय और सभी जीवों के लिए हित-कारक है। आप अत्यन्त शुद्ध और श्रेष्ठ ज्ञानमय हैं। मैं आपको नमन करता हूँ; आप मुझे संसार से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं सुविधि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७१।।

हैं प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तम कौं भान।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञा-परिमाणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७२।।

अर्थ : प्रमाण से सिद्ध सभी ज्ञान के प्रमाण/बराबर होने से आप विशुद्धमय स्वरूप-सम्पन्न हैं। आप संशय रूपी अंधकार को नष्ट करने के लिए सूर्य के समान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञा-परिमाण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७२।।

समय प्रमाण निमित तनी, कभी अन्त नहीं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूँ हूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्ययाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७३।।

अर्थ : एक समय प्रमाण निमित्त होने पर भी उसका कभी अन्त नहीं होता है अथवा एक समय मात्र की कारणता होने पर भी (वह परम्परा की अपेक्षा अनादि-अनन्त होने से) उसका कभी अन्त नहीं होता है। आप अविनाशी, स्थिर पद के धारक हैं; अत: मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्यय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७३।।

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्व मान परमान।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुराण-पुरुषाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७४।।

अर्थ : जगत के ईश, जगत के प्रतिपालक, सर्व-मान्य, प्रमाणरूप, सर्वाधिक शिरोमणि, लोक के गुरु आपकी पूजन करने से सदा कल्याण होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं पुराण-पुरुष के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७४।।

धर्म सहायक हौ प्रभू, धर्म मार्ग की लीक।
शुभ मर्यादा बंध प्रति, करण चलावन ठीक।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-सारथये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७५।।

अर्थ : धर्म-मार्ग की लीक/धुरी, धर्म में सहायक हे प्रभु! आपने धर्म को चलाने में करण/साधकतम साधनों की सुन्दर, शुभ/कल्याण-कारी मर्यादाएँ बाँधी हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-सारथी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७५।।

शिवमारग दिखलाय कर, भविजन कियौ उद्धार।
धर्म सुयश विस्तार कर, बतलायौ शुभ सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-कीर्ति-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७६।।

अर्थ : मोक्ष का मार्ग दिखाकर आपने भव्य जीवों का उद्धार किया है। धर्म का सुयश विस्तृत कर उसे आपने कल्याण-कारी और सारभूत बतलाया है।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-कीर्ति जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७६।।

मोह अन्ध हन सूर्य हौ, जगदीश्वर शिवनाथ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूँ जोर युग हाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोहांधकार-विनाशक-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७७।।

अर्थ : हे जगत के ईश्वर, कल्याणों के स्वामी! आप मोह रूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्य के समान हैं। मोक्ष के मार्ग का प्रकाश करने वाले आपके लिए दोनों हाथ जोड़कर मैं नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मोहान्धकार-विनाशक-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७७।।

मन इन्द्री व्यापार बिन, भाव रूप विध्वंस।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हौ, नमत नशै अघवंस।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रिय-ज्ञान-रूप-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७८।।

अर्थ : भाव रूप मन और इन्द्रिय समाप्त हो जाने के कारण मन और इन्द्रियों के व्यापारों/कार्यों से रहित अतीन्द्रिय ज्ञान को धारण करने वाले आपको नमन करने से पापों का समूह समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रिय ज्ञानरूप जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७८।।

पर उपदेश परोक्ष बिन, साक्षात् परतक्ष।
जानत लोकालोक सब, धारैं ज्ञान अलक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञान-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७९।।

अर्थ : पर के उपदेश और परोक्षता के विना ही आप सम्पूर्ण लोक-अलोक को साक्षात् प्रत्यक्ष जानने वाले अतीन्द्रिय ज्ञान के धारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञान जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६७९।।

व्यापक हौ तिहुँ लोक में, ज्ञान ज्योति सब ठौर।
तुमकौं पूजत भावसौं, पाऊँ भवदधि और।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भूतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८०।।

अर्थ : आपकी ज्ञान ज्योति सभी स्थानों पर होने के कारण आप तीनों लोकों में

सर्वत्र व्यापक हैं। संसार-सागर का किनारा प्राप्त करने के लिए मैं आपकी भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-भूति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८०।।

इन्द्रादिक कर पूज्य हौ, मुनिजन ध्यान धराय।
तीन लोक नायक प्रभू, हम पर होउ सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-नायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८१।।

अर्थ : इन्द्र आदि द्वारा पूज्य, मुनिराजों द्वारा ध्यान किए जाने वाले, तीनों लोकों के नायक हे प्रभु! हमारी सहायता कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व नायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८१।।

तुम देवन के देव हौ, महादेव है नाम।
बिन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८२।।

अर्थ : देवों के देव होने से आपका नाम महादेव है। ममत्व/विकारी भावों से पूर्णतया रहित शुद्धात्मा रूप आपके चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८२।।

सर्व व्यापि कुमती कहैं, करौ भिन्न विश्राम।
जगसौं तजी समीपता, राजत हौ शिवधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरन्तर-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८३।।

अर्थ : पर से पूर्णतया पृथक् रूप में विश्राम करते/रहते होने से जग की समीपता को छोड़कर आप शिव-धाम/मोक्ष-स्थान में सुशोभित हो रहे हैं; तथापि विपरीत बुद्धिवाले आपको (क्षेत्र की अपेक्षा भी) सर्व-व्यापी कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरन्तर जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८३।।

हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर।
प्रियवाणी कर पोखते, द्वादश सभासु तीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं मिष्ट-दिव्य-ध्वनि-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८४।।

अर्थ : हित-कारक, अति मिष्ट, अर्थ-सहित, गम्भीर, प्रिय वाणी द्वारा आप समवसरण की बारह सभाओं का पोषण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मिष्ट दिव्य-ध्वनि जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८४।।

भवसागर के पार हौ, सुखसागर गलतान।
भव्य जीव पूजत चरन, पावैं पद निरवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं भवांतकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८५।।

अर्थ : संसार-सागर से पार हो लहराते हुए सुख-सागर को प्राप्त आपके चरणों की पूजन करने से भव्य जीव निर्वाण पद को प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भव-अन्तक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८५।।

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश।
दृढ़ परिणत निज आत्मरति, पूजूँ श्री मुक्तेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़-व्रताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८६।।

अर्थ : चलाचल/चलायमान भावों से पूर्णतया रहित, पाप-समूह से सर्वथा-मुक्त, दृढ़ परिणामोंमय, अपने आत्मा की प्रीति-सम्पन्न श्री मुक्तेश/मोक्ष के स्वामी की मैं पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़-व्रत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८६।।

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार।
तिन सबकौं जानौ सुविध, महा निपुण मति नार।।

ॐ ह्रीं अर्हं नयात्तुंगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८७।।

अर्थ : यथा-योग्य वचनों द्वारा कहे जाने वाले नयों के भेद असंख्यात हैं। उन सभी को विधि पूर्वक जानने वाले आप महा निपुण ज्ञान के धारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं नयात्तुंग/नयों से उच्च के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८७।।

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आत्म विभाव कराय।
तिनकौं त्याग विशुद्ध पद, पायौ पूजूँ पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलंकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८८।।

अर्थ : आत्मा के विभाव से प्रगट क्रोध आदि उपाधि हैं। उनका त्याग कर विशुद्ध पद को प्राप्त आपके चरणों की पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलंक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८८।।

ज्यों शशि-किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश।
कलाधार सौहैं सु इम, पूजत अघ-तम नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण-कला-धराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८९।।

अर्थ : चन्द्रमा की किरणों के उद्योत/प्रकाश-समान परिपूर्ण प्रभा, प्रकाशमय कलाओं के धारक आप सुशोभित हैं। आपकी पूजन करने से पापों रूपी अन्धकार समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण कला-धर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६८९।।

जन्म-मरण कौं आदि ले, जग में क्लेश महान।
तिसके हंता हौ प्रभु, भोगत सुख निर्वाण।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-क्लेश-हराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९०।।

अर्थ : जगत में होने वाले जन्म-मरण से लेकर अनेक-अनेक महा दु:खों को पूर्णतया नष्ट कर हे प्रभु! आप निर्वाण-सुख का भोग करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-क्लेश-हर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९०।।

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहीं होय।
अव्याबाध विराजते, पर सहाय कौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रौव्य-रूप-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९१।।

अर्थ : अन्य की सहायता को पूर्णतया समाप्त कर आप कभी भी अन्त/समाप्त नहीं होने वाले ध्रुव स्वरूप में सदा स्थिर हो अव्याबाध रूप में विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रौव्यरूप जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९१।।

व्यय उत्पाद सुभाव है, ताकौं गौण कराय।
अचल अनंत स्वभाव में, तीन लोक सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानंत-स्वभावात्मक-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९२।।

अर्थ : उत्पाद, व्यय स्वभाव को गौणकर, तीनों लोकों में सुख-दायक आप अपने अचल अनन्त स्वभाव में संतुष्ट हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षय अनन्त स्वभावात्मक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९२।।

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदय माहिं विकसाय।
सोहत हैं शुभ चिन्ह करि, भवि आनंद कराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्स-लांछनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९३।।

अर्थ : अपने ज्ञानादि चतुष्टय पद को हृदय/अपने आत्मा में विकसित कर, भव्य जीवों को आनन्द देने वाले शुभ चिन्हों से आप सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्स लांछन/चिन्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९३।।

धर्म रीति परगट कियौ, युग की आदि मँझार।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्म अवतार।।

ॐ ह्रीं अर्हं आदि-ब्रम्हणे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९४।।

अर्थ : युग के प्रारम्भ में आपने धर्म की पद्धति प्रगट की थी। इसप्रकार धर्म के आदि अवतार! आप सुख पूर्वक भव्य जीवों का पोषण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं आदि ब्रम्हा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९४।।

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होंय चहुँ ओर।
चउ अनुयोग बखानतैं, सब दुख नासौ मोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९५।।

अर्थ : चारों ओर से दर्शन होने के कारण, चार अनुयोगों का व्याख्यान करने के कारण 'चतुर्मुख' नाम से प्रसिद्ध आप मेरे सभी दु:खों को समाप्त कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुख के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९५।।

जगत जीव कल्याण कर, धर्म मर्याद बखान।
ब्रम्ह ब्रम्ह भगवान हो, महामुनी सब मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्हणे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९६।।

अर्थ : धर्म की मर्यादा का व्याख्यान कर जगत के जीवों का कल्याण करने वाले, सभी मुनिराजों द्वारा मान्य आप ब्रम्ह/व्यापक ब्रम्हमय भगवान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्हा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९६।।

प्रजापती प्रतिपाल कर, ब्रम्हा विधि करतार।
मन्मथ इन्द्री वश करन, बन्दूँ सुख आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विधात्रे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९७।।

अर्थ : जीवों का प्रतिपालन करने वाले प्रजापति, विधि के कर्ता ब्रम्हा, इन्द्रियों को वश में करने वाले और मन को मथने वाले कामदेव, सुख के आधारभूत आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विधाता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९७।।

तीन लोक की लक्षमी, तुम चरणाम्बुज वास।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९८।।

अर्थ : दिव्य आसन-सम्पन्न, सुख की राशिमय आपके चरण-कमलों में तीनों लोकों की लक्ष्मी वास करती/रहती होने से आपके श्रीपति, श्रीधर आदि शुभ नाम हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कमलासन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९८।।

बहुरि न जग में भ्रमण है, पंचम गति में वास।
नित्य अमरता पाइयौ, जरा-मृत्यु कौं नाश।

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९९।।

अर्थ : जन्म, जरा/बुढ़ापा, मरण का पूर्णतया नाश हो जाने से अब आपका पुन: कभी भी संसार में भ्रमण नहीं है। आपने पंचम गति में वास और नित्य अमरता प्राप्त कर ली है।

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मी/जन्म से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।६९९।।

पाँच काय पुद्गलमई, तामैं एक न होय।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुख खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-भुवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७००।।

अर्थ : पुद्‌गलमई पाँचों/औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस, कार्मण शरीरों में से एक भी आपके नहीं हैं। सम्पूर्ण दु:खों को नष्ट कर मात्र आत्मा के प्रदेश ही विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-भू के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७००।।

लोक शिखर सुखसौं रहैं, ये ही प्रभुता जान।
धारत हैं तिहुँ लोक में, अधिक प्रभा परधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-शिखर-निवासिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०१।।

अर्थ : लोक के शिखर पर सुख पूर्वक रहते हैं इसे ही आपकी प्रभुता जानना चाहिए। आप तीनों लोकों में सबसे अधिक और प्रधान प्रभा को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-शिखर-निवासी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०१।।

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिर कौं नाश।
शिवमग दिखलावत सही, सूरज सम प्रतिभास।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुर-ज्येष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०२।।

अर्थ : अत्यधिक प्रताप वाले प्रकाश से मोह रूपी अन्धकार को समाप्त कर सूर्य के समान प्रतिभासित आप वास्तविक मोक्षमार्ग को दिखलाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सुर-ज्येष्ठ/देवों में श्रेष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०२।।

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग बतलाय।
सत्यारथ ब्रम्हा कहैं, तुमरे बन्दूँ पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजा-पतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०३।।

अर्थ : हृदय में हित को धारण कर, शुभ/कल्याण का मार्ग बतलाकर प्रजा का पालन करने वाले आपको सत्यार्थ ब्रम्हा कहते हैं। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०३।।

गर्भ समय षड्‌मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्य-गर्भाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०४।।

अर्थ : गर्भ के समय इन्द्र हर्षित हो छह माह पहले से ही सदा रत्न-वृष्टि करते हैं; अत: आपको उत्तम गर्भ कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्य-गर्भ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०४।।

तुम हि चार अनुयोग के, अंग कहैं मुनिराज।
तुमसौं पूरण श्रुत सही, नातर मंगल काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं वेदांगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०५।।

अर्थ : मुनिराज आपको ही चारों अनुयोगों के अंग कहते हैं। आपसे ही श्रुत की वास्तविक पूर्णता है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई मंगल कार्य नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं वेदांग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०५।।

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज।
पूरण ज्ञाता हौ तुम्हीं, प्रणमूँ मैं शिवकाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण-वेद-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०६।।

अर्थ : आपके उपदेशानुसार ही गणधर द्वादशांग को कहते हैं। आप ही परिपूर्ण ज्ञाता हैं। मैं मोक्षरूपी कार्य-हेतु आपको प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण वेद ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०६।।

पार भये भवसिंधु के, तथा सुवर्ण समान।
उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव-सिंधु-पारगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०७।।

अर्थ : आप संसार-सागर से पार हो गए हैं और सुवर्ण के समान उत्तम निर्मल कांति को धारण करते हैं। आपको नमस्कार करने से कर्म रूपी मल की हानि हो जाती है।

ॐ ह्रीं अर्हं भव-सिंधु पारग/संसार-सागर से पार गए के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०७।।

सुखाभास पर-निमिततैं, पर-उपाधितैं होत।
स्वतः सुभाव धरौ सही, सत्यानन्द उद्योत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०८।।

अर्थ : पर के निमित्त से और पर की उपाधि से तो मात्र सुख का आभास होता है। सत्य आनन्द को प्रकाशित करने वाले आप स्वयं से ही वास्तविक स्वभाव को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०८।।

मोहादिक परबल महा, सो इसकौं तुम जीत।
औरन की गिनती कहाँ, तिष्ठौ सदा अभीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०९।।

अर्थ : अन्यों की तो गिनती ही क्या? मोहादि महा बल-शाली को भी जीतकर आप सदा निर्भयरूप में विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अजय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७०९।।

दिव्य रत्नमय ज्योति हौ, अमित अकंप अडोल।
मनवांछित फलदाय हौ, राजत अखय अमोल।।

ॐ ह्रीं अर्हं मनो-वांछित-फल-दायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१०।।

अर्थ : अमित, अकम्प, अडोल/निश्चल रत्नमय दिव्य ज्योति स्वरूप, मनो-वांछित फल-दायक आप अक्षय, अमूल्य रूप में शोभायमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मनो-वांछित फल-दायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१०।।

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान।
सूर्य समान सुदीप्त धर, महा ऋषीश्वर जान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जीवन-मुक्त-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७११।।

अर्थ : देह को धारण करने वाले जीवन-मुक्त परमात्मा, सूर्य के समान सुदीप्ति-धारक भगवान को महा ऋषीश्वर जानना चाहिए।

ॐ ह्रीं अर्हं जीवन-मुक्त जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७११।।

स्व-भय आदिक से परे, पर-भय आदि निवार।
पर उपाधि बिन नित सुखी, बन्दूँ भाव सम्हार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शतानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१२।।

अर्थ : स्वयं भय आदि से पूर्णतया रहित, दूसरों के भय का निवारण करने वाले, अन्य की उपाधि के विना सदा सुखी आपकी, भावों को सम्हाल कर वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शतानन्द/सदानन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१२।।

ईश्वर हौ तिहुँ लोक के, परम पुरुष परधान।
ज्ञानानंद स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१३।।

अर्थ : तीनों लोकों के ईश्वर, परम, प्रधान पुरुष आप सदा अपनी पूर्ण शुद्ध ज्ञान-आनन्द मय लक्ष्मी का भोग करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१३।।

रत्नत्रय पुरुषार्थ करि, हौ प्रसिद्ध जयवंत।
कर्मशत्रु कौं क्षय कियौ, शीश नमैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रि-विक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१४।।

अर्थ : रत्नत्रय पुरुषार्थ के द्वारा कर्मरूपी शत्रुओं का क्षयकर आप प्रसिद्ध जयवन्त हो गए हैं। सन्त कवि आपको सदा शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रि-विक्रम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१४।।

सूरज हौ शिवराह के, कर्म दलन बल सूर।
संशय केतुनि ग्रहण सम, महा सहज सुखपूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्ष-मार्ग-प्रकाशकादित्य-रूप-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१५।।

अर्थ : मोक्षमार्ग के सूर्य, कर्म-समूह को समाप्त करने के लिए बलवान योद्धा, संशय के लिए केतु के ग्रहण-समान आप सहज सुख के महा पूर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्ष-मार्ग-प्रकाशक-आदित्य रूप जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१५।।

सुभग अनन्त चतुष्टपद, सोई लक्ष्मी भोग।
स्वामी हौ शिवनारिके, नमूँ जोरि तिहुँ योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१६।।

अर्थ : सुन्दर, अनन्त चतुष्टय रूपी लक्ष्मी का भोग करने वाले, मोक्षरूपी स्त्री के स्वामी आपको (मन, वचन, कायमय) तीनों योग जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-पति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१६।।

इन्द्रादि पूजत जिन्हैं, पंचकल्याणक थाप।
अद्‌भुत पराक्रम कौं धरैं, नमत नसैं भवपाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१७।।

अर्थ : पंच कल्याणकों में इन्द्र आदि जिनकी पूजन करते हैं, उन अद्‌भुत पराक्रम के धारक को नमन करने से संसार के पाप समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१७।।

निज प्रदेश में बसत हैं, परमातम कौ वास।
आप मोक्ष के नाथ हौ, आप हि मोक्ष निवास।।

ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१८।।

अर्थ : हे परमात्मा! आप निवास-योग्य अपने प्रदेशों में ही रहते हैं। आप मोक्ष के स्वामी हैं और मोक्ष में ही निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठ-अधिपति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१८।।

सर्व लोक कल्याणकर, विष्णु नाम भगवान।
श्री अरहंत स्व लक्ष्मी, ताके भरता जान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-लोक-श्रेयस्कर-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१९।।

अर्थ : सम्पूर्ण लोक का कल्याण करने वाले विष्णु नाम वाले श्री अरहन्त भगवान को अपनी लक्ष्मी का ही स्वामी जानना चाहिए।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व लोक श्रेयस्कर जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७१९।।

मुनिमन कुमुदनि मोदकर, भव संताप विनाश।
पूरण चन्द्र त्रिलोक में, पूरण प्रभा प्रकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं हृषीकेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२०।।

अर्थ : मुनि के मन रूपी कुमुदनी को प्रमुदित कर संसार के संताप का विनाश करने वाले, पूर्ण प्रभा और प्रकाश द्वारा तीनों लोकों में व्याप्त आप परिपूर्ण चन्द्रमा हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं हृषीकेश के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२०।।

दिनकर सम परकाशकर, हौ देवन के देव।
ब्रम्हा विष्णु कहात हौ, शशि सम दुति स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं हरये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२१।।

अर्थ : स्वयं ही चन्द्रमा के समान कांति-युक्त, सूर्य के समान प्रकाश करने वाले, देवों के देव आपको ब्रम्हा, विष्णु भी कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं हरि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२१।।

स्वयं विभव के हौ धनी, स्वयं ज्योति परकाश।
स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-भुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२२।।

अर्थ : अपने वैभव के स्वामी, ज्योति-प्रकाशमय आप स्वयं हैं। अपने ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सुख में स्वाभाविक विलास करने वाले आप स्वयं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-भू के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२२।।

धर्म-भारधर धारिणी, हौ जिनेन्द्र भगवान।
तुमकौं पूजौं भावसौं, पाऊँ पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वम्भराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२३।।

अर्थ : जिनेन्द्र भगवान धर्म रूपी भार को धारण करने वाली पृथ्वी के समान हैं। निर्वाण पद प्राप्त करने के लिए मैं आपकी भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वम्भर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२३।।

असुर काम अर हास्य इन, आदि कियौ विध्वंश।
महाश्रेष्ठ तुमकौ नमूँ, रहै न अघ कौ अंश।।

ॐ ह्रीं अर्हं असुर-ध्वंसिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२४।।

अर्थ : काम, हास्य इत्यादि आसुरी वृत्तिओं को पूर्णतया समाप्त कर देने वाले आप महा श्रेष्ठ को नमन करने से पापों का अंश भी नष्ट हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं असुर-ध्वंसी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२४।।

सुधाधार द्यौ अमरपद, धर्म फूल की बेल।
शुभ मति गोपिन संग में, हमें राख निज गेल।।

ॐ ह्रीं अर्हं माधवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२५।।

अर्थ : अमृत को धारण कर अमर पद देने वाले, धर्मरूपी फूल की बेल, आप हमें भी सम्यग्ज्ञान रूपी गोपिओं के साथ अपने मार्ग में रख लीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं माधव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२५।।

विषय-कषाय स्ववश करी, बलि वश कियौ जु काम।
महा बली परसिद्ध हौ, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं बलि-बन्धनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२६।।

अर्थ : अपनी शक्ति के द्वारा विषय, कषाय, काम आदि को अपने वश में कर लेने से आप प्रसिद्ध महा-बली हैं। मैं आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं बलि-बन्धन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२६।।

तीन लोक भगवान हौ, निजपर के हितकार।
सुर नर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीक्षजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२७।।

अर्थ : तीनों लोकों के भगवान, अपना और दूसरों का हित करने वाले आपकी पूजन; सदा भक्ति भाव को हृदय में धारण कर देव, मनुष्य और पशु करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीक्षज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२७।।

हित मित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय।
धर्म मोक्ष परगट करन, बंदूँ तिनकैं पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं हित-मित-प्रिय-वचन-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२८।।

अर्थ : धर्म और मोक्ष प्रगट करने के लिए हितकारी, सीमित, मधुर, प्रिय आपके वचन अमृत के समान सुख-दाई हैं। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं हित-मित-प्रिय वचन-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२८।।

निज लीला में मगन हैं, साँचा कृष्ण सु नाम।
तीन खंड तिहुँ लोक के, नाथ करूँ परणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२९।।

अर्थ : अपनी लीला में मग्न रहने से आपका कृष्ण नाम वास्तविक है। तीनों खण्डों रूपी तीनों लोकों के स्वामी के लिए मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं केशव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७२९।।

सूखे तृण सम जगत की, विभव जान कर वास।
धरैं सरलता जोग में, करैं पाप कौं नास।।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३०।।

अर्थ : जगत के वैभव को सूखे तृण के समान जानकर उसे छोड़कर, योगों में सरलता धारण करते हैं और पापों को नष्ट करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३०।।

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हौ शुभ नीक।
सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जनचित रमणीक।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-वत्स-लांछनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३१।।

अर्थ : आत्मा के वैभव को श्री कहते हैं। उसके कारण आप शुभ और श्रेष्ठ हैं। आप सज्जनों के मन को रमण कराने वाले सुन्दर मुख से सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-वत्स-लांछन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३१।।

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति थुति योग।
धर्म मोक्षमारग कहैं, पूजत सज्जन लोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-मतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३२।।

अर्थ : हे जिनेन्द्र भगवान! आपका सम्यग्ज्ञान सर्वोत्तम, अति श्रेष्ठ और स्तुति करने-योग्य है। धर्म और मोक्ष-मार्ग को कहने वाले आपकी, सज्जन व्यक्ति पूजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-मति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३२।।

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगैं निज भाव।
स्वयं सु आश्रय रहत हैं, मैं पूजूँ धर चाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३३।।

अर्थ : अविनाशी, अविकारी, अपने स्वभाव से कभी भी च्युत नहीं होने वाले आप सदा अपने आश्रय से ही रहते हैं। मैं रुचि पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्युत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३३।।

नाशी लौकिक कामना, निर-इच्छुक योगीश।
नार शृंगार न मन बसै, बंदत हूँ लोकीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं नरकान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३४।।

अर्थ : लौकिक कामनाओं के नाशक, इच्छाओं से रहित, योगिओं के स्वामी, आपके मन में नारी और शृंगार नहीं रहते हैं/आप उनसे पूर्णतया विरक्त हैं। इन लोक के ईश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं नरक-अन्तक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३४।।

व्यापक लोकालोक में, विष्णु रूप भगवान।
धर्मरूप तरु लहिलहै, पूजत हूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-सेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३५।।

अर्थ : लोक-अलोक में (ज्ञान की अपेक्षा) व्यापक होने से हे भगवान आप विष्णु रूप हैं। आपका धर्मरूपी वृक्ष लहलहा रहा है। मैं ध्यान पूर्वक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-सेन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३५।।

धर्मचक्र सम्मुख चलै, मिथ्यामति रिपु घात।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूँ दिनरात।।

ॐ ह्रीं अर्हं चक्र-पाणये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३६।।

अर्थ : मिथ्याज्ञान रूपी शत्रुओं को नष्ट करता हुआ धर्म-चक्र आपके सम्मुख चलता है। मैं तीनों लोकों के नायक, प्रभु की दिन-रात/सदा पूजन/आराधना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चक्र-पाणि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३६।।

सुभग सुरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार।
तीन लोक की लक्षमी, है एकत्र उदार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्म-नाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३७।।

अर्थ : आपका जन्म सुन्दर, स्वरूपवान, अति श्रेष्ठ, धर्म का अवतार है। तीनों लोकों की लक्ष्मी एकत्रित होकर आपकी महिमा प्रदर्शित कर रही है।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्म-नाभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३७।।

मुनिजन आदर जोग हौ, लोक सराहन योग।
सुर नर पशु आनन्दकर, सुभग निजातम भोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं जनार्दनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३८।।

अर्थ : मुनिराजों द्वारा आदर के योग्य, लोक में सराहनीय; देवों, मनुष्यों और पशुओं को आनन्दित करने वाले आप अपने आत्मा के सुन्दर भोगों को भोगते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जनार्दन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३८।।

सब देवन के देव हौ, महादेव विख्यात।
ज्ञानामृत सुखसों खिरै, पीवत भवि सुख पात।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-कण्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३९।।

अर्थ : सभी देवों के देव होने से महादेव रूप में प्रसिद्ध आपके सर्वांग से सुख पूर्वक ज्ञानरूप अमृत (दिव्यध्वनि) खिरता है। जिसे पीकर भव्यजन सुख प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-कण्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७३९।।

पाप-पुञ्ज का नाश करि, धर्म रीत प्रगटाय।
तीन लोक के अधिपती, हम पर दया कराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिप-शंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४०।।

अर्थ : पापों के समूह को पूर्णतया नष्ट कर धर्म की रीति को प्रगट करने वाले, तीन लोक के अधिपति आप, हम पर भी दया कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक/तीनों लोकों के, अधिप/स्वामी, शंकर/सुख करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४०।।

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप।
स्वयं भाव परमातमा, बन्दूँ स्वयं सरूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-प्रभवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४१।।

अर्थ : अपने ज्ञान द्वारा स्वयं व्याप्त होने वाले, स्वयं अनुपम प्रकाशमय, अपने स्वरूप-सम्पन्न स्वयं भाव परमात्मा की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-प्रभु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४१।।

सब देवन के देव हौ, महादेव है नाम।
स्वपर सुगन्धित रूप हौ, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-पालाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४२।।

अर्थ : सभी देवों के देव होने से आपका नाम महादेव है। आपका रूप स्वयं को और दूसरों को सुगन्धित करता है। मैं आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-पाल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४२।।

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग मानैं आन।
सब जग शीश नमैं चरण, सब जग कौं सुखदान।।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभ-केतवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४३।।

अर्थ : आपकी धर्म-ध्वजा जगत में फहराती है। सम्पूर्ण जगत आपकी आन/मर्यादा को स्वीकार करता है। समस्त लोक आपके चरणों में शीश झुकाता है। आप सम्पूर्ण विश्व को सुख देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभ-केतु/धर्म-चिन्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४३।।

जन्म-जरा-मृत जीतिकैं, निश्चल अव्यय रूप।
सुखसौं राजत नित्य हौ, बन्दूँ हूँ शिवभूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युञ्जयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४४।।

अर्थ : जन्म, जरा और मृत्यु को जीतकर निश्चल, अव्ययरूप सदा सुख से सुशोभित शिव-भूप की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युंजय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४४।।

सब इन्द्री-मन जीति कैं, करि दीनौं तुम व्यर्थ।
स्वयं ज्ञान इन्द्री जग्यौ, नमूँ सदा शिव अर्थ।।

ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४५।।

अर्थ : सभी इन्द्रियों और मन को जीतकर आपने उन्हें व्यर्थ कर दिया है। आपकी ज्ञान इन्द्रियाँ स्वयं जागृत हो गई हैं। मैं मोक्ष के लिए सदा आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्ष/इन्द्रियों को व्यर्थ करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४५।।

सुन्दररूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार।
असाधारण शुभ अणु लगै, केवलज्ञान मँझार।।

ॐ ह्रीं अर्हं काम-देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४६।।

अर्थ : आपका रूप सुन्दर, मनोज्ञ, मुनिराजों के मन को वश में करने वाला है; उसमें विशेष शुभ अणु लगे हैं/वह विशेष शुभ अणुओं से निर्मित है। आपके केवलज्ञान में सम्पूर्ण विश्व अणु के समान प्रतिभासित होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं काम-देव/सर्वाधिक सुन्दर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४६।।

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप।
धर्म मार्ग दरशात हैं, लोकत रूप अनूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रि-लोचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४७।।

अर्थ : आपने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की एकता रूप धर्म-मार्ग को दिखाया है। आपके इस अनुपम रूप का सभी अवलोकन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रि-लोचन/तीन नेत्र के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४७।।

निजानन्द स्व-लक्ष्मी, ताके हौ भरतार।
शिवकामिनी नित भोगते, परमरूप सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं उमा-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४८।।

अर्थ : आत्मा के आनन्द रूप अपनी लक्ष्मी के स्वामी आप परमरूप, सुख-कारक मोक्षरूपी स्त्री का सदा भोग करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं उमा-पति/मोक्ष के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४८।।

जे अज्ञानी जीव हैं, तिन प्रति बोध करान।
रक्षक हौ षट्काय के, तुम सम कौन महान।।

ॐ ह्रीं अर्हं पशु-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४९।।

अर्थ : अज्ञानी जीवों को सदा प्रतिबोध देने वाले, षट्-कायिक जीवों के रक्षक आपके समान महान अन्य कोई नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं पशु-पति/प्राणिओं के रक्षक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७४९।।

रमण भाव निज शक्ति सौं, धरैं तथा दुति काम।
कामदेव तुम नाम है, महाशक्ति बल धाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं शम्बरारये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५०।।

अर्थ : अपने भावों में रमण करने की शक्ति को धारण करने वाले आप तेजस्वी काम-सहित होने से, महा शक्ति और बल के धाम/घर आपका नाम काम-देव है।

ॐ ह्रीं अर्हं शम्बर/विषय-वासनारूपी राक्षस के, अरि/शत्रु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५०।।

कामदाह कौं दम कियौ, ज्यों अगनी जलधार।
निजआतम आचरण नित, महाशील त्रियसार।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुरान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५१।।

अर्थ : जैसे जल की धारा अग्नि का दमन कर देती है; उसीप्रकार सदा अपने आत्मा में आचरण करने वाले, महा शीलवान, श्री के सार/सर्वोत्तम वैभव को प्राप्त आपने कामरूपी दाह/अग्नि का दमन किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुर/विषय-वासना रूपी शत्रु राक्षस को, अन्तक/नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५१।।

निज सन्मति शुभ नार सौं, मिलैं रलैं अरधांग।
ईश्वर हौ परमातमा, तुम्हैं नमूँ सर्वांग।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्ध-नारीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५२।।

अर्थ : अपनी सन्मति/वास्तविक जानकारीरूपी कल्याणमय स्त्री के अर्धांगों से मिलकर आनन्दित रहने वाले आप ईश्वर, परमात्मा हैं। (केवलज्ञान होते समय चार घाति कर्म समाप्त हो जाते हैं, चार अघाति कर्म विद्यमान रहते हैं - इस अपेक्षा आधे अंग प्रगट हुए हैं, शेष आधे अंग अव्यक्त हैं; तथापि अरहन्त भगवान अनन्त सुखी हैं। इस परिस्थिति को यहाँ स्त्री के अर्धांग से मिलकर आनन्दित रहने की भाषा में व्यक्त किया है।) मैं आपको सर्वांग नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्ध-न-अरि-ईश्वर/घाति कर्म रूपी आधे शत्रुओं से रहित ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५२।।

नहीं चिगैं उपयोग सैं, महा कठिन परिणाम।
महावीर्य धारक नमूँ, तुमकौं आठों जाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं रुद्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५३।।

अर्थ : महा वीर्य के धारक आपके परिणाम महा कठिन होने के कारण उपयोग से च्युत नहीं

होते हैं। आपको आठों प्रहर/सदा नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं रुद्र/महा बल-शाली के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५३।।

गुण-पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।
स्वयं काल स्व क्षेत्र हौ, स्वयं सुभाव विशेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५४।।

अर्थ : अनन्त गुणों और अनन्त पर्यायों-युक्त वस्तु अपने प्रदेश, अपने काल, अपने क्षेत्र, अपने विशेष स्वभावमय है; अर्थात् प्रत्येक वस्तु स्व-चतुष्टयात्मक है।

ॐ ह्रीं अर्हं भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५४।।

सूक्षम गुप्त स्वगुण धरैं, महा शुद्धता धार।
चार ज्ञानधर नहिं रखैं, मैं पूजूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भ-कल्याणक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५५।।

अर्थ : महा शुद्धता के धारक, सूक्ष्म, गुप्त अपने गुणों को धारण करने वाले आप (मति-ज्ञान, श्रुत-ज्ञान, अवधि-ज्ञान, मन:पर्यय-ज्ञान - इन) चार ज्ञानों को धारण करने वाली दशा/छद्मस्थता को नहीं रखते हैं। मैं सुख-कारक आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भ-कल्याणक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५५।।

शिव तिय संग सदा रमैं, काल अनन्त न और।
अविनाशी अविकार हौ, महादेव शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-शिवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५६।।

अर्थ : अविनाशी, अविकारी, शिरोमणि महादेव आप अनन्त काल पर्यन्त सदा मोक्षरूपी स्त्री के साथ ही रमण करते हैं; अन्य के साथ रमण नहीं करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-शिव/शाश्वत कल्याण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५६।।

जगत कार्य तुमसौं सरैं, सब तुमरे आधीन।
सबके तुम सरदार हौ, आप धनी जग दीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५७।।

अर्थ : जगत के सम्पूर्ण कार्य आपसे होते हैं; सभी आपके अधीन हैं; आप सभी के नायक हैं; आप धनवान हैं; सम्पूर्ण जगत दीन/गरीब है।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत-कर्ता/विश्व को जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५७।।

महा घोर अँधियार है, मिथ्या मोह कहाय।
जग में शिवमग लुप्त था, ताकौं तुम दरशाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारांतकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५८।।

अर्थ : मिथ्या मोह, महा घोर अन्धकार कहलाता है। इससे जगत में मोक्ष-मार्ग लुप्त था। आपने उसे प्रगट कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकार को नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५८।।

संतति पक्ष जुदी नहीं, नहीं आदि नहिं अन्त।
सदा काल बिन काल तुम, राजत हौ जयवंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनादि-निधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५९।।

अर्थ : आदि और अन्त से पूर्णतया रहित आपकी संतति/परम्परा आपसे पृथक् नहीं है। मृत्यु से रहित आप सदा काल सुशोभित और जयवन्त हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनादि-निधन/शाश्वत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७५९।।

तीन लोक आराध्य हौ, महा यज्ञ कौ ठाम।
तुमकौं पूजत पाइये, महा मोक्ष सुखधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं हराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६०।।

अर्थ : तीनों लोकों के आराध्य आप महा पूजन के आश्रय/स्थान हैं। आपकी पूजन करने से सुख के धाम महा मोक्ष की प्राप्ति होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं हर/परम-पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६०।।

महा सुभट गुणरास हौ, सेवत हैं तिहुँ लोक।
शरणागत प्रतिपालकर, चरणाम्बुज दूँ धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-सेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६१।।

अर्थ : महा बल-शाली योद्धा, गुणों की राशि, शरणागत प्रतिपालक आपकी सेवा तीनों लोक करते हैं। आपके चरण-कमलों में धोक देता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-सेन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६१।।

गणधरादि सेवैं चरण, महा गणपती नाम।
पार करौ भव-सिंधुतैं, मंगलकर सुखधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-गणपति-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६२।।

अर्थ : गणधर आदि आपके चरणों की सेवा करते हैं; अतः आपका नाम महा गणपति है। मंगल करने वाले और सुख के धाम आप मुझे संसार-सागर से पार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं महा गणपति/आचार्यों के स्वामी जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६२।।

चार संघ के नाथ हौ, तुम आज्ञा शिर धार।
धर्म मार्ग प्रवर्त कर, बन्दूँ पाप निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं गण-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६३।।

अर्थ : धर्म-मार्ग का प्रवर्तन कर चार प्रकार के संघ के स्वामी होने से सभी आपकी आज्ञा शिर पर धारण करते हैं। पापों को नष्ट करने के लिए मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं गण-नाथ/समूह के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६३।।

मोह-सर्प के दमन कौं, गरुड़ समान कहाय।
सब के आदरकार हौ, तुम गणपति सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-विनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६४।।

अर्थ : मोहरूपी सर्प का दमन करने के लिए आप गरुड़ के समान कहलाते हैं। आप सभी के आदरणीय, गणपति और सुख-दायक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा विनायक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६४।।

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसौं हौ प्रतिकूल।
धर्माधर्म विरोध कर, धरूँ शीश पग धूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं विरोध-विनाशक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६५।।

अर्थ : मोही अल्पज्ञों के धर्म रूपी अधर्म का विरोध कर आप उनसे प्रतिकूल हैं। हम आपके चरणों की धूल शिर पर धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विरोध-विनाशक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६५।।

जितने दुख संसार में, तिनकौ वार न पार।
इक तुम ही जानी सही, ताहि तजौ दुखभार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विपद्-विनाशक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६६।।

अर्थ : संसार के दु:खों का पारावार नहीं है। एक-मात्र आपने ही उनका वास्तविक स्वरूप जानकर उन दु:खों के भार का त्याग कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं विपत्तिओं को नष्ट करने वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६६।।

सब विद्या के बीज हौ, तुम वाणी परकाश।
सकल अविद्या मूल तैं, इक छिन में हौ नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६७।।

अर्थ : सभी विद्याओं के बीज आपकी वाणी के प्रकाश में क्षण भर में सभी अविद्याएँ जड़ मूल से समाप्त हो जाती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादश आत्मा/द्वादशांग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६७।।

पर-निमित्त से जीव कौं, रागादिक परिणाम।
तिनकौं त्याग सुभाव में, राजत हैं सुखधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं विभाव-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६८।।

अर्थ : पर की निमित्तता से जीव में रागादि परिणाम होते हैं। उनका त्याग कर आप सुख-धाम स्वभाव में शोभायमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विभाव-रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६८।।

अन्तर-बाहिर प्रबल रिपु, जीत सकैं नहीं कोय।
निर्भय अचल सुथिर रहैं, कोटि शिवालय सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६९।।

अर्थ : अन्तरंग और बहिरंग प्रबल शत्रुओं को कोई जीतने में समर्थ नहीं है। आप (उन्हें जीतकर) कोटों से सुरक्षित शिवालय में/परिपूर्ण अव्याबाध अपने स्वभाव में निर्भय, अचल और सुस्थिर रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७६९।।

घन सम गर्जत वचन हैं, भागैं कुनय कुवादि।
प्रबल प्रचंड सुवीर्य हैं, धरैं सुगुण इत्यादि।।

ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्-भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७०।।

अर्थ : मेघों की गर्जना के समान आपके वचनों को सुनकर मिथ्या नय और कुवादि/सर्वथा एकान्तरूप मान्यताएँ, भाग जाती हैं/नष्ट हो जाती हैं। आप प्रबल, प्रचण्ड सुवीर्य आदि सुगुणों के धारक हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं वृहद् भाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७०।।

पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम।
अतुल प्रभा धारौ महा, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्र-भानवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७१।।

अर्थ : पापरूपी सघन वन को भस्म करने के लिए दावानल के समान आपका नाम महादेव, शिव है। आप अतुल महा प्रभा को धारण करते हैं। हम आपके चरणों में प्रणाम करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्र-भानु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७१।।

तुम अजन्म बिन मृत्यु हौ, सदा रहौ अविकार।
ज्यों के त्यों मणि दीप सम, पूजत हूँ मनधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजरामर-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७२।।

अर्थ : जन्म से रहित, मृत्यु से रहित, सदा अविकारी रहने वाले आप मणि-दीप के समान ज्यों के त्यों/पूर्णतया एक समान रहते हैं। मन में धारण कर मैं आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अजर-अमर जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७२।।

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिन करि हौ आराध्य।
तुमकौं बंदों भाव सौं, मिटे सकल दुख व्याध्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७३।।

अर्थ : संस्कार आदि अपने गुणों से सहित आप इन्हीं के कारण आराधना करने-योग्य हैं। आपकी भाव पूर्वक वन्दना करने से समस्त दुःखों की व्याधि समाप्त हो जाती है।

ॐ ह्रीं अर्हं द्विज आराध्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७३।।

निज आतम निज ज्ञान है, तामें रुचि परतीत।
पर पद सौं हैं अरुचिता, पाई अक्षय जीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुधा-शोचिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७४।।

अर्थ : अपने आत्मा और अपने ज्ञान में (अपनत्व रूप से) रुचि, प्रतीति के द्वारा आपने क्षय से पूर्णतया रहित विजय प्राप्त कर ली है। पर-पदों में आपकी पूर्णतया अरुचि है।

ॐ ह्रीं अर्हं सुधा-शोची के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७४।।

जन्म-मरण कौं आदि लै, सकल रोग कौ नाश।
दिव्य औषधि तुम धरौ, अमर करन सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७५।।

अर्थ : जन्म-मरण से लेकर सम्पूर्ण रोगों को नष्ट करने वाली, अमर करने वाली, सुख की राशिमय दिव्य औषधि आप धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं औषधि के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७५।।

पूरण गुण परकाश कर, ज्यों शशि करण उद्योत।
मिथ्यातप निरवारतैं, दर्शित आनंद होत।।

ॐ ह्रीं अर्हं कमला-निधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७६।।

अर्थ : प्रकाश करने वाले चन्द्रमा के समान मिथ्यात्व रूपी ताप को पूर्णतया समाप्त कर देने वाले गुणों के परिपूर्ण प्रकाश को देखकर आनन्द होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं कमला-निधि/सम्पत्ति के भण्डार को नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७६।।

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय।
चार संघ नायक प्रभू, बंदूँ तिनकै पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्र-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७७।।

अर्थ : सूर्य के समान प्रकाश को धारण करने वाले आप वास्तविक धर्म-मार्ग दिखलाकर चार संघ के नायक, प्रभु हो गए हैं। मैं आपके चरणों की वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्र-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७७।।

भव-तप-हर हौ चन्द्रमा, शीतलकार कपूर।
तुमकौं जो नर सेवते, पाप कर्म हौं दूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्रांशवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७८।।

अर्थ : संसार के संताप को नष्ट करने के लिए चन्द्रमा के समान, शीतलता करने के लिए कपूर के समान आपकी जो मनुष्य सेवा करते हैं; उनके पाप-कर्म समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्र अंशु/स्वच्छ किरणों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७८।।

स्वर्गादिक की लक्ष्मी, तासौं भी जु ग्लान।
स्वै-पद में आनंद है, तीन लोक भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सौम्य-भाव-रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७९।।

अर्थ : स्वर्गादि की लक्ष्मी में भी ग्लानि करने वाले, तीनों लोकों के भगवान आप अपने पद में आनन्दित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सौम्य-भाव-रत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७७९।।

पर-पदार्थ कौं इष्ट लखि, होत नहीं अभिमान।
हो अबंध इस कर्म तैं, स्व-आनंद निधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं कुमुद-बांधवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८०।।

अर्थ : पर-पदार्थ को इष्ट देखकर आपको अभिमान नहीं होता है। सभी प्रकार के कर्म-बन्धों से पूर्णतया रहित आप अपने आनन्द के निधान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कुमुद-बान्धव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८०।।

सब विभाव कौं त्याग करि, हैं स्वधर्म में लीन।
तातैं प्रभुता पाइयौ, हैं नहिं बन्धाधीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-रतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८१।।

अर्थ : सभी विभावों का त्याग कर आप अपने आत्म-धर्म में लीन हैं। इससे आपने प्रभुता प्राप्त कर ली है। आप बन्ध के अधीन नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-रति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८१।।

आकुलता नहीं लेश है, नहीं रहै चित भंग।
सदा सुखी तिहुँ लोक में, चरन नमूँ सब अंग।।

ॐ ह्रीं अर्हं आकुलता-रहित-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८२।।

अर्थ : आपमें रंच-मात्र भी आकुलता नहीं है। आपका चित्त भंग/चंचल नहीं रहता है। तीनों लोकों में सदा सुखी आपके चरणों में मैं सभी अंगों से नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं आकुलता से रहित जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८२।।

शुभ-परिणति प्रकटाय कैं, दियौ स्वर्ग कौ दान।
धर्म-ध्यान तुमसे चलै, सुमरत हौं शुभ ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८३।।

अर्थ : शुभ भावों को प्रगट कराकर आपने स्वर्ग का दान दिया है/आपके लक्ष्य से शुभ भाव होने पर स्वर्ग की प्राप्ति हो जाती है। धर्म-ध्यान, आपसे/आपकी ओर उपयोग जाने से चलता/होता है। आपका स्मरण करने से शुभ ध्यान होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८३।।

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल।
ईश्वर हौ परमातमा, नमूँ चरन निज भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८४।।

अर्थ : पाप रूपी मैल को धोकर आप भव्य जीवों को अति पवित्र कर देते हैं। आप ईश्वर हैं, परमात्मा हैं। आपके चरणों में अपना मस्तक झुकाकर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य जिनेश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८४।।

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आप सैं होय।
धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मार्गन कौं खोय।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-राजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८५।।

अर्थ : श्रावक और मुनिराज का धर्म आपसे ही होता है। उन्मार्ग/खोटे/शिथिलाचार/भ्रष्ट आचरणमय मार्ग को समाप्त कर शुभ/कल्याण-कारी नीति करने वाले आप धर्मराज हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-राज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८५।।

स्वयं स्व-आतम रस लहौ, ताही का है भोग।
अन्य कुपरिणति त्यागियौ, नमूँ पदाम्बुज योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं भोग-राजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८६।।

अर्थ : आपने अपने आत्मा का रस प्राप्त कर लिया है और उसका ही भोग करते हैं। अन्य खोटी परिणतिओं का आपने त्याग कर दिया है। तीनों योगों पूर्वक आपके चरण-कमलों को नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं भोग-राज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८६।।

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताही के हौ स्वामि।
सब मलीनता त्यागियौ, भये शुद्ध परिणामि।।

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शन-ज्ञान-चारित्रात्म-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८७।।

अर्थ : दर्शन, ज्ञानमय स्वभाव को धारण करने वाले आप उसी के स्वामी हैं। आप सभी

प्रकार की मलिनता का त्याग कर शुद्ध परिणाम-सम्पन्न हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शन, ज्ञान, चारित्र-आत्मक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८७।।

सत्य उचित शुभ न्याय में, है आनन्द विशेख।
सब कुनीति कौं नाशकर, सर्व जीव सुख देख।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८८।।

अर्थ : सत्य, उचित और शुभ न्याय में ही विशेष आनन्द होता है। सभी प्रकार की कुनीतिओं को समाप्त कर आप सभी जीवों को सुखी देख रहे हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं भूत/प्राणी के, आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८८।।

पर-पदार्थ के संग सैं, दुखित होत सब जीव।
ताके भयसौं भय रहित, भोगैं मोक्ष सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धि-कान्त-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८९।।

अर्थ : पर-पदार्थों की संगति से सभी जीव दुःखी होते हैं। उसके भय से भय-रहित हो आप सदा ही मोक्ष का भोग करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धि-कान्त/मोक्ष के स्वामी जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७८९।।

जाकौ कभी न अन्त हौ, सो पायौ आनन्द।
अचलरूप निज आतममय, भाव अभावी द्वंद्व।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९०।।

अर्थ : जिसका कभी अन्त नहीं है - ऐसा आनन्द आपने प्राप्त कर लिया है। द्वन्द/दुविधा/झगड़ों से पूर्णतया रहित आप भाव स्वरूपी, अचलरूप अपने आत्मामय हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षय आनन्द के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९०।।

शिवमारग परकट कियौ, दोष रहित वरताय।
दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं वृहतां-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९१।।

अर्थ : आपने पूर्णतया निर्दोष मोक्ष-मार्ग को प्रगट कर उसका प्रवर्तन किया है। गर्जना के समान दिव्य-ध्वनि द्वारा आपने सभी पदार्थों को दिखलाया है।

ॐ ह्रीं अर्हं वृहतां/बड़ों के, पति/स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९१।।

चौपाई : **हितकारक अपूर्व उपदेश, तुम सम और नहीं देवेश।**
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।टेक।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्व-देवोपदेष्ट्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९२।।

अर्थ : हे देवों के ईश्वर! आपके समान हित-कारक और अपूर्व उपदेश अन्य किसी का नहीं है।

प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों के समूह की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।
ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्व देव उपदेष्टा/उपदेश देने वाले अपूर्व देव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९२।।

कर्मविषैं संस्कार विधान, तीन लोक में विस्तर जान।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-समूहेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९३।।

अर्थ : कर्मों में संस्कार की पद्धति से तीनों लोकों में विस्तार जानना चाहिए अर्थात् कर्मों में अपनत्व आदि करने के कारण कर्मों का नवीन बन्ध होता है और उनका उदय आने पर तीनों लोकों में परिभ्रमण होता है। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों के समूह की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-समूह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९३।।

धर्म उपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हौ अवतार।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-बुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९४।।

अर्थ : सुख-कारक धर्म का उपदेश देने वाले आप महा बुद्ध के अवतार हैं। प्रत्येक....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-बुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९४।।

तीन लोक में हौ शशि सूर, निज किरणावलि करि तम चूर।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं तमो-भेदने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९५।।

अर्थ : तीनों लोकों में अपनी किरणों के समूह द्वारा अन्धकार को पूर्णतया नष्ट कर देने वाले आप चन्द्रमा और सूर्य हैं। प्रत्येक.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तमो-भेदा/अन्धकार नष्ट करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९५।।

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवाद की कर हौ हान।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-मार्ग-दर्शक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९६।।

अर्थ : धर्म-मार्ग को प्रकाशित करके आप सभी कुवादिओं को समाप्त कर देते हैं। प्रत्येक ....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-मार्ग-दर्शक-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९६।।

सर्व शास्त्र मिथ्या वा साँच, तुम निज दृष्टि लियौ है जाँच।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-शास्त्र-निर्णायक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९७।।

अर्थ : आपने अपनी दृष्टि से सभी शास्त्रों की सत्यता और असत्यता की परीक्षा कर ली है। प्रत्येक........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-शास्त्र-निर्णायक-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९७।।

पंचमगति बिन श्रेष्ठ न और, सो तुम पाय त्रिजग शिरमौर।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचम-गति-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९८।।

अर्थ : पंचम गति को छोड़कर अन्य कोई श्रेष्ठ नहीं है। उसे प्राप्त कर आप तीनों लोकों के शिरोमणि हो गए हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों के समूह की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचम-गति-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९८।।

श्रेष्ठ सुमति तुमही हौ एक, शिवमारग की जानौ टेक।सिद्धसमूह...।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ-सुमति-दात्रि-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९९।।

अर्थ : मोक्ष-मार्ग के आश्रय को जानने वाले श्रेष्ठ सम्यग्ज्ञानी एक आप ही हैं। प्रत्येक .....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ सम्यग्ज्ञान को देने वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।७९९।।

वृष मर्जाद भली विधि थाप, भविजन मैंटें सब संताप।सिद्धसमूह...।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८००।।

अर्थ : धर्म की मर्यादाओं को भली-भाँति स्थापित कर आपने भव्य जीवों के सभी संताप समाप्त कर दिए हैं। प्रत्येक............करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८००।।

श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, सम्पूरण संकल्प निशान।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ-कल्याण-कारक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०१।।

अर्थ : संकल्प चिन्ह वाला परिपूर्ण ज्ञान श्रेष्ठ कल्याण करता है। प्रत्येक.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ कल्याण-कारक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०१।।

निज ऐश्वर्य धरौ संपूर्ण, पर विभूति बिन हौ अघ चूर्ण।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वरीय-सम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०२।।

अर्थ : पापों को पूर्णतया समाप्त कर, अन्य के वैभव से रहित आप अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य को धारण करते हैं। प्रत्येक.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं परम ईश्वरता से सम्पन्न के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०२।।

श्रेष्ठ शुद्ध निजब्रम्ह रमाय, मंगलमय पर मंगलदाय।सिद्धसमूह......।।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-ब्रम्हणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०३।।

अर्थ : स्वयं मंगलमय और अन्य को मंगल-दायक आप श्रेष्ठ, शुद्ध, अपने ब्रम्ह में रमण करते हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-ब्रम्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०३।।

श्री जिनराज कर्मरिपु जीति, पूजनीक हैं सबके मीत।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मारि-जिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०४।।

अर्थ : कर्म रूपी शत्रुओं को जीतने वाले श्री जिनेन्द्र भगवान सभी के पूजनीय और सभी का हित करते हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मरूपी शत्रुओं को जीतने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०४।।

षट् पदार्थ नव तत्त्व कहाय, धर्म-अधर्म भलीविधि गाय।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-शास्त्रज्ञ-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०५।।

अर्थ : छह द्रव्य, सात तत्त्व, नौ पदार्थ, धर्म, अधर्म का आपने भली-भाँति प्ररूपण किया है। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सभी शास्त्रों को जानने वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०५।।

है शुभ लक्षण मय परिणाम, पर उपाधि कौ नहिं कछु काम।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुलक्षण-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०६।।

अर्थ : शुभ/कल्याण-कारी लक्षणमय परिणामों में पर की उपाधि का कुछ काम नहीं है। प्रत्येक.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सुलक्षण जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०६।।

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायौ सोध।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-बोध-सत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०७।।

अर्थ : सत्य ज्ञानमय आपके बोध में शोध कर/यथार्थ रूप में हेय, उपादेय बताया गया है। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सभी प्राणिओं को बोध देने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०७।।

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्पाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०८।।

अर्थ : आपके लिए कुछ भी इष्ट-अनिष्ट नहीं है, आपका किसी में भी राग-द्वेष नहीं है, आप समान रूप में सभी के ज्ञाता-दृष्टा हैं। प्रत्येक......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्प के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०८।।

दूजौ तुम सम नहिं भगवान, धर्माधर्म रीति बलवान।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय-बोध-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०९।।

अर्थ : धर्म-अधर्म की पद्धति को बताने वाले आपके समान दूसरा कोई भगवान नहीं है। प्रत्येक......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीय-बोध जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८०९।।

महादुखी संसारी जान, तिनके पालक हौ भगवान।

सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-पालाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१०।।

अर्थ : संसारी जीवों को महा दुखी जानकर भगवान उनके पालक हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-पाल के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१०।।

जगविभूति निरइच्छुक होय, मानरहित आतमरत सोय।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-रस-रत-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८११।।

अर्थ : जगत के वैभव की इच्छा से पूर्णतया रहित होकर आप मान-रहित आत्मा में स्थिर रहते हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मा के रस में रत जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८११।।

ज्यों शशि ताप हरै अनिवार, अतिशय सहित शांति करतार।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं शांति-दात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१२।।

अर्थ : जैसे चन्द्रमा दुर्निवार ताप को समाप्त कर देता है; उसीप्रकार आप अतिशय सहित/सातिशय/अत्यधिक शान्ति के कर्ता हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शान्ति-दाता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१२।।

हो निरभेद अछेद अशेष, सब इकसार स्वयं परदेश।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं अभेद्याछेद्य-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१३।।

अर्थ : भेदों से रहित, छेदन से रहित, सम्पूर्ण, अपने सभी आत्म-प्रदेशों में आप एक समान हैं। प्रत्येक..........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अभेद्य-अछेद्य जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१३।।

मायाकृत सम पाँचों काय, निज सौं भिन्न लखौ मत भाय।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच-स्कंध-मयात्म-दृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१४।।

अर्थ : (औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस, कार्मण - ये) पाँचों शरीर माया द्वारा किए गए के समान/एक-समान हैं। उन्हें अपने से भिन्न मानते हुए आप उनकी भावना नहीं करते हैं। प्रत्येक...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच-स्कन्धमय आत्मा को देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१४।।

बीती बात देख संसार, भव-तन-भोग विरक्त उदार।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ-भावना-सिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१५।।

अर्थ : संसार की बीती हुई बातों/भूत-कालीन घटनाओं को देखकर आप संसार, शरीर, भोगों से विरक्त हो उदार हो गए हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थ भावनामय सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१५।।

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायौ लीक।सिद्धसमूह.....।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरानन-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१६।।

अर्थ : धर्म, अधर्म आदि सभी को भली-भाँति जान कर आपने मोक्ष-नगर की मर्यादाएँ या उसके चिन्ह दिखा दिए हैं। प्रत्येक.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरानन/चारों ओर दिखाई देने वाले सुख-सम्पन्न जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१६।।

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव।सिद्धसमूह.......।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य-वक्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१७।।

अर्थ : वीतराग, सर्वज्ञ रूप सच्चे देवमय आप स्वयं ही सत्य वचनों वाले वक्ता हैं। प्रत्येक.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्य वक्ता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१७।।

मन-वच-काय योग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१८।।

अर्थ : मन, वचन, काय योग का पूर्णतया नाश हो जाने के कारण आपके साथ कार्मण वर्गणा/कर्म का रंच-मात्र संबंध नहीं है। प्रत्येक.....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१८।।

चार अनुयोग कियौ उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्भूमिक-शासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१९।।

अर्थ : आपने चार अनुयोग रूप उपदेश किया है; जिससे भव्य जीव सदा सुख प्राप्त करते हैं। प्रत्येक.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्भूमिक शासन/चार प्रकार से वस्तु-स्वरूप का प्रतिपादन करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८१९।।

काहू पद सौं मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्वयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२०।।

अर्थ : जिसका किसी पद से मेल/संबंध नहीं होता है, उसे अन्वय रूप कहते हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्वय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२०।।

हो समाधि में नित लवलीन, बिन आश्रय नित ही स्वाधीन।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधि-निमग्न-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२१।।

अर्थ : अन्य के आश्रय-विना सदैव स्वाधीन रूप से आप सदा समाधि में लव-लीन हैं। प्रत्येक............करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधि-निमग्न जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२१।।

लोक भाल हौ तिलक अनूप, हौ लोकोत्तम शेष स्वरूप।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-भाल-तिलक-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२२।।

अर्थ : लोक के मस्तक पर अनुपम तिलक स्वरूप आप लोक में उत्तम और अनन्त स्वरूप-सम्पन्न हैं। प्रत्येक..........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक के मस्तक के तिलक-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२२।।

अक्षाधीन हीन हैं शक्त, तिसकौं नाश करी निज व्यक्त।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छ-भाव-भिदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२३।।

अर्थ : इन्द्रियों के अधीन शक्ति, हीन होती है। उसका नाश कर आपने अपनी शक्ति व्यक्त कर ली है। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छ-भाव का भेदन करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२३।।

जीवादिक षट् द्रव्य सुजान, तिनकौ भलीभाँति है ज्ञान।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं षड्-द्रव्य-दृशे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२४।।

अर्थ : जीवादि छह द्रव्यों के आप भली-भाँति सम्यक् और परिपूर्ण प्रत्यक्ष जानकार हैं। प्रत्येक..........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं छह द्रव्यों को देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२४।।

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानौ स्वज्ञान।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं सकल-वस्तु-विज्ञात्रे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२५।।

अर्थ : विकल रूप नय और सकल रूप प्रमाण से वस्तु के भेद/रहस्य को आप अपने ज्ञान द्वारा जानते हैं। प्रत्येक........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सम्पूर्ण वस्तुओं को विशेष रूप में जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२५।।

सब पदार्थ दर्शन तुम बैन, संशयहरण करण सुख चैन।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं षोडश-पदार्थ-वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२६।।

अर्थ : संशय का हरण करने वाली और सुख-शान्ति को करने वाली आपकी वाणी सभी पदार्थों का स्वरूप बताती है। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सोलह पदार्थ कहने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२६।।

वर्णन करि पंचासतिकाय, भव्य जीव संशय विनशाय।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचास्तिकाय-बोधक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२७।।

अर्थ : पंचास्तिकायों का वर्णन कर आपने भव्य जीवों का संशय पूर्णतया नष्ट कर दिया है। प्रत्येक......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचास्तिकाय का बोध देने वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२७।।

प्रतिबिंबित हौं आरसि माँहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हौ ताहि।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाध्यक्ष-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२८।।

अर्थ : दर्पण के समान आपके ज्ञान में सभी पदार्थ प्रतिबिम्बित होते हैं; अतः आपको ज्ञानाध्यक्ष जानना चाहिए। प्रत्येक..........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-अध्यक्ष जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२८।।

जामैं ज्ञान जीव कौ एक, सो परकासौ शुद्ध विवेक।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवाय-सार्थक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२९।।

अर्थ : जिसमें जीव को मात्र ज्ञान रूप में प्रकाशित किया जाता है, वह शुद्ध विवेक है। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं समवाय-सार्थक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८२९।।

भक्तनि के हौ साध्य सु कर्म, अन्तिम पौरुष साधन धर्म।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं भक्तैक-साधन-धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३०।।

अर्थ : भक्तों के साध्य आप सुकर्म/सम्यक् कर्ममय, अन्तिम पौरुष-सम्पन्न, धर्म के साधन हैं। प्रत्येक........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं भक्तों के एक साधन धर्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३०।।

बाकी रहौ न गुण शुभ एक, जाकौ स्वाद न हौ प्रत्येक।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरवशेष-गुणामृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३१।।

अर्थ : आपमें एक भी शुभ गुण ऐसा नहीं है, जिसका स्वाद आप नहीं लेते हैं। आप प्रत्येक का स्वाद ले रहे हैं। प्रत्येक.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सम्पूर्ण गुण अमृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३१।।

नय सुपक्ष करि सांख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्षकर वाद।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सांख्यादि-पक्ष-विध्वंसक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३२।।

अर्थ : सापेक्ष नय के द्वारा आपने सांख्य आदि कुवादिओं के पक्ष-पूर्ण एकान्त-वाद को विवाद-रहित कर दिया है। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सांख्य आदि पक्ष-विध्वंसक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३२।।

सम्यग्दर्शन हैं तुम बैन, वस्तु परीक्षा भाखों ऐन।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं समीक्षकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३३।।

अर्थ : वस्तु की परीक्षा करने का भली-भाँति व्याख्यान होने से आपके वचन सम्यग्दर्शन हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं समीक्षक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३३।।

धर्मशास्त्र के हौ कर्तार, आदि पुरुष धारौ अवतार।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं आदि-पुरुष-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३४।।

अर्थ : धर्म-शास्त्र के कर्ता आपने आदि पुरुष रूप में अवतार धारण किया है। प्रत्येक....करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं आदि पुरुष जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३४।।

नय साधत नैयायक नाम, सो तुम पक्ष धरौ अभिराम।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचविंशति-तत्त्व-वेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३५।।

अर्थ : नय का साधन करने से आपका नाम नैयायिक है। आप सुन्दर सापेक्षताओं को धारण करते हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पच्चीस तत्त्व-वेदक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३५।।

स्वपर चतुष्क वस्तु कौ भेद, व्यक्ताव्यक्त करौ निरखेद।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्ताव्यक्त-ज्ञान-विदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३६।।

अर्थ : पूर्णतया खेद-रहित आपने व्यक्त, अव्यक्त रूप में वस्तु के स्व-चतुष्टय और पर-चतुष्टय की अपेक्षा भेद करके बताए हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्त-अव्यक्त ज्ञान को जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३६।।

दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनतामय है शुभ योग।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-चैतन्य-भेद-दृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३७।।

अर्थ : चेतनतामय कल्याण-कारी योग-सम्पन्न उपयोग के दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग-ये दो भेद हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-चैतन्य के भेद देखने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३७।।

स्वसंवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्व-संवेदन-ज्ञान-वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३८।।

अर्थ : आप स्व-सम्वेदन शुद्ध ज्ञान को धारण करते हैं; अन्य जीव विभावों से मलिन हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्व-सम्वेदन ज्ञान कहने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३८।।

द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग बैन सुखकार।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरण-द्वादश-सभा-पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३९।।

अर्थ : बारह सभाएँ आपका सत्कार करती हैं। आपकी वाणी आदरणीय और सुख-कारक है। प्रत्येक...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरण में बारह सभा के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८३९।।

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहचान।सिद्धसमूह.....।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रि-प्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४०।।

अर्थ : आगम, इन्द्रिय और अतीन्द्रिय - इन तीन भेदमय प्रमाणों द्वारा आपकी पहिचान होती है। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं तीन प्रमाण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४०।।

विशद शुद्ध मति हौ साकार, तुमकौं जानत हैं सु विचार।सिद्धसमूह.....।।

ॐ ह्रीं अर्हं अध्यक्ष-प्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४१।।

अर्थ : विशद/स्पष्ट, शुद्ध, साकारमति/ज्ञानोपयोग-सम्पन्न आपको सम्यक् विचारों द्वारा जान लेते हैं। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अध्यक्ष प्रमाण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४१।।

नय सापेक्ष कहैं शुभ वैन, हैं अशंस सत्यारथ ऐन।सिद्धसमूह....।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वाद-वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४२।।

अर्थ : सापेक्ष नय कहने वाली आपकी शुभ वाणी संशय से पूर्णतया रहित, परम सत्यार्थ है। प्रत्येक.........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वाद-वाणी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४२।।

लोकालोक क्षेत्र के माँहि, आप ज्ञान है सब दरशाँहि।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४३।।

अर्थ : लोक और अलोक संबंधी समस्त क्षेत्रों में आपका ज्ञान सम्पूर्ण पदार्थों को दर्शाता है। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्र को जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४३।।

अन्तर-बाह्य लेश नहिं और, केवल आतम मई अघोर।सिद्धसमूह.....।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्म-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४४।।

अर्थ : आपके अन्तरंग और बहिरंग में अन्य कुछ रंच-मात्र भी नहीं है; सर्वत्र आप सुन्दरतम आत्मामय ही हैं। प्रत्येक.............करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्म-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४४।।

अन्तिम पौरुष साध्यौ सार, पुरुष नाम पायौ सुखकार।सिद्धसमूह......।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषात्म-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४५।।

अर्थ : सारभूत अन्तिम पुरुषार्थ/मोक्ष की साधना की होने से आपने सुख-कारक पुरुष नाम प्राप्त किया है। प्रत्येक..........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुष-आत्म-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४५।।

चहुँगति में नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार।सिद्धसमूह.....।।

ॐ ह्रीं अर्हं नराधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४६।।

अर्थ : चारों गतिओं में से मात्र मनुष्य पुरुष शरीर से ही मोक्ष होने के कारण आप पुरुष के आकार हैं। प्रत्येक...........करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं नराधिप/पुरुषों के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४६।।

दर्श ज्ञान चेतन की लार, निरावरण तुम हौ अविकार।सिद्धसमूह.....।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४७।।

अर्थ : दर्शन और ज्ञानमय चेतना के साथ आप आवरण से पूर्णतया रहित और अविकारी हैं। प्रत्येक.......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण चेतन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४७।।

भावन वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहिं सन्देह।सिद्धसमूह......।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्ष-रूप-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४८।।

अर्थ : आपका भाव-वेद और पुरुष शरीर रूप द्रव्य-वेद मोक्ष रूप है; इसमें सन्देह नहीं है। प्रत्येक......करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्ष रूप जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४८।।

सत्य यथारथ हौ सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजौ शुभ नीक।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिम-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४९।।

अर्थ : सत्य, यथार्थ, सभी ओर से पूर्णतया व्यवस्थित आप स्वयं-सिद्ध, शुभ और सुन्दर रूप में विराजमान हैं। प्रत्येक भव में सुख-सम्पत्ति देने वाले सिद्धों की मैं मन लगाकर पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिम जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८४९।।

दोहा : **जाकरि तुमकौं जानिये, सो है अगम अलक्ष।**
निर्गुण यातैं कहत हैं, भव-भय तैं हम रक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५०।।

अर्थ : जिसके द्वारा आपको जानते हैं; वह अगम्य और अतीन्द्रिय है; अत: आपको निर्गुण कहते हैं। आप भव के भय से हमारी रक्षा कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५०।।

चेतनमय हैं अष्टगुण, सो तुममें इक नाम।
शुद्ध अमूरत देव हौ, स्व-प्रदेश चिदराम।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५१।।

अर्थ : आपके चेतनामय आठ गुण आपमें ही हैं; अत: आपका एक नाम चेतन है। अपने प्रदेशों में चैतन्य रूप से स्थिर आप शुद्ध, अमूर्तिक देव हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५१।।

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार।
निजानन्द कौं आदि ले, महा तुष्ट निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं उमा-पतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५२।।

अर्थ : उमा/लक्ष्मी के स्वामी, तीनों लोकों के धनी, पृथ्वी के स्वामी, अपने आनन्द से लेकर सभी में महा सन्तुष्ट आप निश्चित ही शोभायमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं उमा-पति/मोक्ष के स्वामी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५२।।

व्यापक लोकालोक में, ज्ञान-ज्योति के द्वार।
लोकशिखर तिष्ठत अचल, करौ भक्त उद्धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-गताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५३।।

अर्थ : ज्ञान ज्योति के द्वारा आप सम्पूर्ण लोक-अलोक में व्यापक हैं। लोक के शिखर पर अचल विराजमान आप भक्तों का उद्धार कीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व-गत/सब जानने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५३।।

योग प्रबन्ध निवारियौ, राग–द्वेष निरवार।
देहरहित निष्कंप हौ, भये अक्रिया सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्रियाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५४।।

अर्थ : राग–द्वेष को पूर्णतया समाप्त कर, योग के कर्मों का भी निवारण कर आप, शरीर से पूर्णतया रहित, सारभूत अक्रियामय/निष्क्रिय हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्रिय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५४।।

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहाँ रहौ स्वयमेव।
देव वास है मोक्ष थल, हौ देवन के देव।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवेष्ट–जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५५।।

अर्थ : सर्व–श्रेष्ठ, अत्यधिक उच्च गति में आप स्वयं ही रहते हैं। देवों के देव हे देव! आपका मोक्ष–स्थल में निवास है।

ॐ ह्रीं अर्हं देवों के लिए इष्ट जिन को नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५५।।

भवसागर के तीर हौ, अचलरूप अस्थान।
फिर नहिं जग में जन्म है, राजत हौ सुखथान।।

ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५६।।

अर्थ : संसार–सागर से पार हो अचलरूप, स्थान–रहित, सुख के स्थान में आप सुशोभित हैं। अब पुन: संसार में आपका जन्म नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५६।।

ज्यों के त्यों नित थिर रहौ, अचलरूप अविनाश।
निजपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५७।।

अर्थ : अचल रूप, विनाश से पूर्णतया रहित, अपनी ज्योति से प्रकाशमान, सदा सुशोभित अपने पदमय आप सदा ज्यों के त्यों स्थिर रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५७।।

तत्त्व–अतत्त्व प्रकाशियौ, ज्ञाता हौ सब भास।
ज्ञानमूर्ति हौ ज्ञानघन, ज्ञान ज्योति अविनाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात्रे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५८।।

अर्थ : सभी वस्तुओं के ज्ञाता आपने तत्त्व, अतत्त्व को प्रकाशित किया है। आप ज्ञान–मूर्ति, ज्ञान–घन, ज्ञान–ज्योति और अविनाशी हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५८।।

पर-निमित्त के योग तैं, व्यापै नहीं विकार।
निज स्वरूप में थिर सदा, हौ अबाध निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५९।।

अर्थ : पर-निमित्त के योग से आपमें विकार व्याप्त नहीं होता है। बाधाओं से पूर्णतया रहित, सुनिश्चित या आधार से रहित अपने स्वरूप में आप सदा स्थिर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८५९।।

चारवाक वा सांख्यमत, झूठी पक्ष धरात।
अल्प मोक्ष नहिं होत है, राजत हौ विख्यात।।

ॐ ह्रीं अर्हं निराभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६०।।

अर्थ : चार्वाक या सांख्यमत झूठे/एकान्त पक्षों को धारण करते हैं। उनसे थोड़ा भी मोक्ष नहीं होता है। आप उसमें विख्यात रूप से सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरभाव/अभाव से पूर्णतया रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६०।।

तारण तरण जिहाज हौ, अतुल शक्ति के नाथ।
भव वारिधि से पारकर, राखौ अपने साथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव-वारिधि-पारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६१।।

अर्थ : अनन्त शक्ति के स्वामी आप! संसार-सागर से पार होने के लिए जहाज के समान हैं। संसार-सागर से पारकर आप मुझे भी अपने साथ रख लीजिए।

ॐ ह्रीं अर्हं संसार-सागर से पार करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६१।।

बन्ध-मोक्ष की कहन है, सो भी है व्यवहार।
तुम विवहार अतीत हौ, शुद्ध वस्तु निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं बंध-मोक्ष-रहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६२।।

अर्थ : बन्ध और मोक्ष का कथन भी व्यवहार ही है। आप व्यवहार से पूर्णतया रहित, शुद्ध वास्तविक वस्तु हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं बन्ध-मोक्ष से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६२।।

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार।
तुम साधौ परधान हौ, सबमें सुख आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्ष-साधन-प्रधान-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६३।।

अर्थ : चारों पुरुषार्थों में मोक्ष सारभूत पदार्थ है। सभी में सुख के आधारभूत आप, उसकी साधना करने में प्रधान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्ष साधने में प्रधान जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६३।।

कर्म–मैल प्रक्षाल कैं, निज आतम लवलाय।
हौ प्रसन्न शिवथल विषैं, अन्तरमल विनशाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म–व्याधि–विनाशक–जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६४।।

अर्थ : कर्म रूपी मैल का प्रक्षालन कर अपने आत्मा में लव–लीन हो, अन्तर–मल को नष्ट कर आप मोक्ष–स्थल में प्रसन्न हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म–व्याधि–विनाशक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६४।।

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभाव में लीन।
बन्दूँ शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं निज–स्वभाव–स्थित–जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६५।।

अर्थ : अपना वस्तुपना अपना स्वभाव है। अपने स्वभाव में लीन, शुद्ध स्वभावमय आपकी मैं वन्दना करता हूँ। इनके अतिरिक्त सभी कुभाव मलिन हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निज स्वभाव–स्थित जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६५।।

निज स्वरूप परकाश है, निरावरण ज्यों सूर।
तुमकौं पूजत भाव सौं, मोह कर्म कौ चूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण–सूर्य–जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६६।।

अर्थ : निरावरण सूर्य के समान अपने स्वरूप के प्रकाश से सम्पन्न, मोह कर्म को समाप्त करने वाले आपकी मैं भाव पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण–सूर्य–जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६६।।

जिन भावन तैं मोक्ष हौ, ते ही भाव रहात।
स्वगुण स्वपरजाय में, थिरता भाव धरात।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूप–रूढ़–जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६७।।

अर्थ : जिन भावों से मोक्ष होता है, वे ही भाव वहाँ रहते हैं। आप अपने गुणों और अपनी पर्यायों में स्थिरतामय भाव धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूप रूढ़ जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६७।।

सब कुभाव कौं जीतियौ, शुद्ध भये निरमूल।
शुद्धातम कहलात हौ, नमत नशैं अघ शूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृति–प्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६८।।

अर्थ : सभी कुभावों को जीतकर पूर्णतया शुद्ध हुए आप शुद्धात्मा कहलाते हैं। आपको नमन करने से पाप रूपी शूल/काँटे नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृति–प्रिय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६८।।

निज सन्मति के सन्मति, निज बुध के बुधवान।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हौ, पूजत मिथ्या हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्ध-सन्मति-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६९।।

अर्थ : अपने सम्यग्ज्ञान से सम्यग्ज्ञानी, अपने ज्ञान से ज्ञानवान, शुभ ज्ञाता, शुभ ज्ञानमय आपकी पूजन करने से मिथ्यात्व नष्ट हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्ध सन्मति जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८६९।।

कर्म प्रकृति कौ अंश बिन, उत्तर हौं या मूल।
शुद्धरूप अति तेज घन, ज्यों रवि बिंब अधूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-रूप-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७०।।

अर्थ : धूल से रहित सूर्य-बिम्ब के समान मूल-उत्तर कर्म-प्रकृतिओं के अंश से भी पूर्णतया रहित, शुद्ध रूप आप अति तेज-घन/अत्यधिक तेजस्वी हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धरूप जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७०।।

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार।
आदि मोक्ष दातार हौ, आदि कर्म हरतार।।

ॐ ह्रीं अर्हं आद्य-वेदसे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७१।।

अर्थ : आप आदि पुरुष, आदीश जिन, धर्म के आदि/सबसे पहले अवतार, मोक्ष के आदि दाता, कर्मों के आदि हर्ता हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं आद्य/सबसे पहले, वेद/जानकार के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७१।।

नहिं विकार आवै कभी, रहौ सदा सुखरूप।
रोग शोक व्यापै नहीं, निवसैं सदा अनूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकृतये नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७२।।

अर्थ : विकारों से पूर्णतया रहित आप सदा सुख रूप रहते हैं। आपमें रोग, शोक व्याप्त नहीं होते हैं। आप सदा अनुपम रूप में निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकृति/विकारों से पूर्णतया रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७२।।

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरौ तिमिर मिथ्यात।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात।।

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्या-तिमिर-विनाशकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७३।।

अर्थ : अपने पौरुष/उद्यम द्वारा सूर्य के समान मिथ्यात्वरूपी अन्धकार को पूर्णतया नष्ट कर देने वाला, तीनों लोकों में विख्यात आपका पुरुषार्थ सफल है।

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्या-तिमिर-विनाशक/मिथ्यात्वरूपी अन्धकार को नष्ट कर देने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७३।।

वस्तु परीक्षा तुम बिना, और झूठ कर खेद।
अंध कूप में आप सर, डारत हैं निरभेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं मीमांसकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७४।।

अर्थ : आपके अतिरिक्त अन्य किसी माध्यम से वस्तु की परीक्षा करना, असत्य और खेद रूप है। वे विना किसी भेद के अपने शिर/स्वयं को अन्ध कूप में डाल देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मीमांसक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७४।।

होनहार या हो लई, या पइये इस काल।
अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानौ यह हाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्ति-सर्वज्ञाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७५।।

अर्थ : जो आगे होने वाला है या हो गया है अथवा इस समय हो रहा है; वे सभी वस्तुमय अस्तिरूप हैं। आप उन सभी को भली-भाँति जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्ति-सर्वज्ञ/विद्यमान सर्वज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७५।।

जिनवाणी जिनसरस्वती, तुम गुण सौं परिपूर।
पूज्य योग तुमकौं कहैं, करैं मोह मद चूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत-पूज्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७६।।

अर्थ : आपके गुणों से परिपूर्ण, आपको पूज्य कहने वाली जिनवाणी, जिन सरस्वती मोह और मद को पूर्णतया समाप्त कर देती हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत-पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७६।।

स्वयं स्वरूपानन्द हौ, निजपद रमन सुभाव।
सदा विकासी ही रहैं, बन्दूँ सहज सुभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदोत्सवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७७।।

अर्थ : स्वयं आनन्द स्वरूपमय आप स्वभाव से ही अपने पद में रमण करते हैं। सदा विकसित रहने वाले आपके सहज स्वभाव की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा उत्सव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७७।।

मन इन्द्री जानत नहीं, ताकौ शुद्ध स्वरूप।
वचनातीत स्वगुण सहित, अमल अकाय अरूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं परोक्ष-ज्ञानागम्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७८।।

अर्थ : मन और इन्द्रियाँ जिसके शुद्ध स्वरूप को नहीं जानती हैं; आप उस वचनातीत, अपने गुण से सहित, अमल, अशरीर, अरूपमय हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परोक्ष-ज्ञान द्वारा अगम्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७८।।

जो श्रुतज्ञान कला धरैं, तिनकौं हौ तुम इष्ट।
तुमकौं नित प्रति ध्यावतैं, नाशैं सकल अनिष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं इष्ट-पाठकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७९।।

अर्थ : श्रुतज्ञान रूपी कला को धारण करने वालों के लिए आप इष्ट हैं। सदा आपका ध्यान करने वालों के सभी अनिष्ट नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं इष्ट-पाठक/पढ़ने वालों को इष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८७९।।

निज समरथ कर साधिऔ, निज पुरुषारथ सार।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध-कर्म-क्षयाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८०।।

अर्थ : अपनी सामर्थ्य से आपने अपने पुरुषार्थ का सार सिद्ध कर लिया है। इससे आपके सभी काम सिद्ध हो जाने के कारण सुख-कारक आपका नाम सिद्ध है।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-क्षय करने वाले सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८०।।

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद।
गुण अनन्त पर्याय सब, सौ विभाग परिछेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्या-मत-निवारकाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८१।।

अर्थ : पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु के भेदों को; उनके सभी अनन्त गुणों और अनन्त पर्यायों के अविभागी प्रतिच्छेदों को आप जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्या मत का निवारण करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८१।।

निज संवेदन ज्ञान में, देखत होय प्रत्यक्ष।
रक्षक हौ तिहुँ लोक के, हम शरणागत पक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैक-प्रमाणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८२।।

अर्थ : आप अपने सम्वेदन ज्ञान में सभी को प्रत्यक्ष देखते हैं। आप तीनों लोकों के रक्षक हैं। हम आपका पक्ष लेकर आपकी शरण में आए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्ष एक प्रमाण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८२।।

विद्यमान शिवलोक में, स्व-गुण पर्य समेत।
कहैं अभाव कुमती मती, निज-पर धोका देत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्ति-मुक्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८३।।

अर्थ : आप अपने गुणों और पर्यायों से सहित शिव लोक/मोक्ष में विद्यमान हैं। आपका अभाव कहने वाले खोटी बुद्धि वाले अज्ञानी स्वयं को और दूसरों को धोका देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्ति/विद्यमान मुक्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८३।।

तुम आगम के मूल हौ, अपर गुरु है नाम।
तुम वानी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम।।

ॐ ह्रीं अर्हं गुरु-श्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८४।।

अर्थ : आप आगम के मूल हैं। आपका दूसरा नाम गुरु है। आपकी वाणी के अनुसार ही शास्त्र सुन्दर हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं गुरु-श्रुति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८४।।

तीन लोक के नाथ हौ, ज्यों सुरगण में इन्द्र।
निजपद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हैं देवेन्द्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८५।।

अर्थ : देवों के समूह में इन्द्र के समान तीनों लोकों के नाथ, अपने पद में रमण करने के स्वभाव के धारक आपको देवेन्द्र भी नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-नाथ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८५।।

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, निजपर घातक नाहिं।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्व-स्व-भावाविरुद्ध-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८६।।

अर्थ : आपके सभी स्वभाव अविरुद्ध/परस्पर विरोध से रहित हैं; अपने और दूसरों के घातक नहीं हैं। साथ-साथ चलने वाले सभी परिणाम आपमें निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्व स्वभाव अविरुद्ध जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८६।।

ब्रम्ह ज्ञान कौं वेद कर, भये शुद्ध अविकार।
पूरण ज्ञानी हौ नमूँ, लहौ वेद कौ सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-विदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८७।।

अर्थ : ब्रम्ह ज्ञान का वेदन कर आप शुद्ध, विकारों से पूर्णतया रहित हो गए हैं। वेदन के सार को प्राप्त कर आप पूर्ण-ज्ञानी हो गए हैं। आपको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रम्ह-विद के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८७।।

शब्द ब्रम्ह के ज्ञान तैं, आतम तत्त्व विचार।
शुक्लध्यान मैं लय भए, हौ अतर्क अविचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शब्दाद्वैत-ब्रम्हणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८८।।

अर्थ : शब्द ब्रम्ह के ज्ञान से आत्म-तत्त्व का विचार कर आप अतर्क और अवीचारमय शुक्लध्यान में लीन हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शब्द अद्वैत ब्रम्ह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८८।।

सूक्ष्म तत्त्व परकाशकर, सूक्षम कर अच्छेद।
मोक्षमार्ग परगट कियौ, कहौ सु अन्तर भेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्म-तत्त्व-प्रकाश-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८९।।

अर्थ : सूक्ष्म कर्मों द्वारा छिन्न-भिन्न नहीं होने वाले सूक्ष्म तत्त्व को प्रकाशित कर, अन्दर का वास्तविक भेद/रहस्य कहकर आपने मोक्ष-मार्ग प्रगट किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्म-तत्त्व-प्रकाश-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८८९।।

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब मानैं पाखण्ड।
धर्म यथारथ तुम कहौ, तिन सबकौं करि खंड।।

ॐ ह्रीं अर्हं पाखण्ड-खण्डकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९०।।

अर्थ : अज्ञानिओं द्वारा मान्य तीन सौ त्रेषठ पाखण्डों में से सभी का खण्डन कर आपने यथार्थ धर्म का निरूपण किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पाखण्डों का खण्डन करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९०।।

कर्णरूप करतार हौ, कोइक नय के द्वार।
सुरमुनि करि पूजत भए, माननीक सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं नयाधीनजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९१।।

अर्थ : किसी नय की अपेक्षा आप वस्तु के करण रूप कर्ता हैं। देव और मुनि आपकी पूजन कर माननीय और सुखकार हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं नय के अधीन जन्म के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९१।।

केवलज्ञान उपाइकैं, तदनन्तर हो मोक्ष।
साक्षात् बड़भाग सैं, पूजूँ इहाँ परोक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९२।।

अर्थ : केवलज्ञान प्रगट होने के तत्काल बाद मोक्ष प्राप्त करने लेने वाले साक्षात् बड़े भाग्य-शाली आपकी मैं यहाँ परोक्ष रूप में पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तकृत/केवलज्ञान प्राप्त होते ही मुक्त हो जाने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९२।।

शरणागत कौं पार कर, देत मोक्ष अभिराम।
तारण-तरण सु नाम है, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं पारकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९३।।

अर्थ : शरणागत को (संसार से) पार कर सुन्दर मोक्ष देने के कारण आपका यथार्थ नाम तारण-तरण है। मैं आपके चरणों में नमस्कार करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं पारकृत/पार करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९३।।

भव-समुद्र गम्भीर है, कठिन जास कौ पार।
निज पुरुषारथ करि तिरे, गहौ किनारौ सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर-प्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९४।।

अर्थ : संसार-सागर गम्भीर/गहरा है। उसे पार कर पाना कठिन है। आपने अपने पुरुषार्थ द्वारा इसे पारकर सारभूत किनारा प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर-प्राप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९४।।

एक बार जो शरण गहि, ताके हौ हितकार।
यातैं सब जग जीव कैं, हौ आनन्द दातार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-हित-स्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९५।।

अर्थ : जो एक बार आपकी शरण ग्रहण करता है, आप उसके हित-कारक हैं; इसीलिए जगत के सभी जीवों को आप आनन्द के दाता हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-हित-स्थित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९५।।

रत्नत्रय निज नेत्र सौं, मोक्षपुरी पहुँचात।
महादेव हौ जगत पितु, तीन लोक विख्यात।।

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रय-नेत्र-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९६।।

अर्थ : रत्नत्रय रूपी अपने नेत्र द्वारा आप मोक्षपुरी पहुँच गए हैं या अन्य को पहुँचा देते हैं। तीनों लोकों में विख्यात जगत के पिता आप महादेव हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रय-नेत्र जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९६।।

तीन लोक के नाथ हौ, महा ज्ञान भण्डार।
सरल भाव, बिन कपट हौ, शुद्ध-बुद्ध अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-बुद्ध-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९७।।

अर्थ : तीनों लोकों के नाथ, ज्ञान के महा भण्डार, कपट से पूर्णतया रहित सरल भाव-सम्पन्न आप शुद्ध, बुद्ध, अविकारी हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध-बुद्ध जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९७।।

निश्चै वा व्यवहार के, हौ तुम जाननहार।
वस्तुरूप निज साधिऔ, पूजत हूँ निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-कर्म-समुच्चयिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९८।।

अर्थ : निश्चय और व्यवहार को जानने वाले आपने अपनी वस्तु का स्वरूप साध लिया है। मैं यथार्थ निर्णय कर आपकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-कर्म समुच्चयी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९८।।

सुर-नर-पशु न अघावतैं, सभी ध्यावतैं ध्यान।
तुमकौं नित ही ध्यावतैं, पावैं सुख निर्वाण।।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्य-तृप्त-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९९।।

अर्थ : देव, मनुष्य, पशु - ये सभी आपका ध्यान करते हुए तृप्त नहीं होते हैं। वे सदा आपका ध्यान करते हुए निर्वाण-सुख प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्य तृप्त जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।८९९।।

कर्म-मैल प्रक्षाल करि, तीनों योग सम्हार।
पाप-शैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पाप-मल-निवारक-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९००।।

अर्थ : कर्म रूपी मैल का प्रक्षालन कर, तीनों योगों को सम्हालकर, पाप रूपी पर्वतों को पूर्णतया समाप्त कर आप योग से रहित, सुख-कारक हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पाप-मल-निवारक-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९००।।

सूरज हौ निज ज्ञानघन, ग्रहण उपद्रव नाहिं।
बेखटकैं शिवपंथ सब, दीखत है जिस माहिं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण-ज्ञान-घन-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०१।।

अर्थ : ग्रहण रूपी उपद्रव के विना ही आप अपने ज्ञान के घनरूप सूर्य हैं। जिसमें बाधाओं से पूर्णतया रहित सम्पूर्ण मोक्षमार्ग दिखाई देता है।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण-ज्ञान-घन जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०१।।

जोग योग संकल्प सब, हरौ देह कौ साथ।
रहौ अकंपित थिर सदा, मैं नाऊँ निज माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्न-योगाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०२।।

अर्थ : (मन, वचन, काय रूपी) योगों के संयोग से होने वाले सभी संकल्पों को शरीर के साथ ही समाप्त कर देने वाले आप सदा अकम्पित रहते हैं। मैं आपको अपना मस्तक झुकाता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्न योग/योगों से रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०२।।

जोग सुथिरता कौं हरै, करै आगमन कर्म।
तुम तासौं निर्लेप हौ, नशौ मोह मद शर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं योग-कृत-निर्लेपाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०३।।

अर्थ : स्थिरता का भली-भाँति नाश कर (मन, वचन, काय रूपी) योग कर्मों का आगमन करता है। आप उनके लेप से पूर्णतया रहित हैं। आपने मोह, मद/मान, शर्म/लज्जा आदि को समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं योगों द्वारा किए गए लेप से पूर्णतया रहित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०३।।

निज आतम में स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय।
निर्भय तुम निर-इच्छु हौ, नमूँ जोर कर पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्व-स्थल-योग-रत-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०४।।

अर्थ : अपने आत्मा में ही स्वस्थ/भली-भाँति स्थित, अपने पद के योग में ही रमण करने वाले, निर्भय आप, इच्छाओं से पूर्णतया रहित हैं। मैं आपके चरणों में हाथ जोड़कर नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अपने स्थल के योग में लीन जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०४।।

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिम सूर।
योग किरण विकसात हौ, शोक तिमिर कर दूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं गिरि-संयोग-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०५।।

अर्थ : सूर्य की विकसित किरणों के समान हे महादेव आप! जन्म (कल्याणक) के समय सुमेरु पर्वत पर विकसित हो शोक रूपी अन्धकार को दूर कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं गिरि-संयोग/पर्वत के संयोग वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०५।।

सूक्ष्म निज परदेश तन, सूक्ष्म क्रिया परिणाम।
चितवत मन नहिं वच चलैं, राजत हौ शिवधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृत-वपुः-क्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०६।।

अर्थ : अपने सूक्ष्म प्रदेशों वाले शरीर, सूक्ष्म-क्रिया-परिणाम-सम्पन्न आप मोक्ष-स्थान में सुशोभित हैं। चिंतन करने वाला मन और बोले जाने वाले वचन आपमें नहीं हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्म किए गए शरीर-क्रिया के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०६।।

सूक्ष्म तत्त्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार।
भविजन कौं आनंदकरि, तीन जगत गुरुसार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्म-वाक्-मित-योगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०७।।

अर्थ : तीनों लोकों के सारभूत/श्रेष्ठ गुरु आप, भव्य जनों को आनन्दित करने वाले कल्याण-कारी प्रिय वचनों द्वारा सूक्ष्म तत्त्व को प्रकाशित करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्म, सीमित वचन योग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०७।।

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात।
स्वप्रदेश मय थिर सदा, कृत्तकृत्य सुख पात।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कर्म-शुद्धात्म-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०८।।

अर्थ : निश्चल क्रिया-सम्पन्न, कर्म-रहित शुद्धात्मा आप कृतकृत्य हो अपने प्रदेशों में सदा स्थिर रहते हुए सुख प्राप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मों से पूर्णतया रहित शुद्ध आत्मा मय जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०८।।

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतनराय प्रकाश।
कर्म-कालिमा सौं रहित, पूजत हौं अघ नाश।

ॐ ह्रीं अर्हं भूताभिव्यक्त-चेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०९।।

अर्थ : प्रत्यक्ष विद्यमान प्रकाशमय चेतना के स्वामी, कर्म-कालिमा से पूर्णतया रहित आपकी पूजन करने से पाप नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्राणिओं में अभिव्यक्त चेतना के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९०९।।

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धर्मरूप रसराश।
एक तुम्हीं हौ धर्म करि, पायौ शिवपुर वास।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म-रास-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१०।।

अर्थ : गृहस्थों के आचरण संबंधी सम्यक् भेदों द्वारा धर्म रूपी रस के भण्डार एकमात्र आपने ही धर्म द्वारा मोक्ष रूपी नगर का निवास प्राप्त किया है।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म रास जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१०।।

सूर्य प्रकाशन मोह तम, हरता हौ शुभ पंथ।
पाप क्रिया बिन राजते, महायती निरग्रंथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-हंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९११।।

अर्थ : अपने प्रकाश द्वारा मोह रूपी अन्धकार को समाप्त करने वाले आप सूर्य के समान कल्याण-कारी मार्ग को प्रकाशित करते हैं। पाप क्रियाओं से पूर्णतया रहित आप निर्ग्रन्थ महा-यति रूप में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम हंस के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९११।।

बन्ध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हौ निर्लेप।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहीं मोह मल लेप।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-संवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१२।।

अर्थ : बन्ध से रहित, सभी ओर से निर्मल, निर्लेप, सदा शुद्ध सुवर्ण के समान देदीप्यमान आपमें मोह रूपी मल का लेप नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम संवर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१२।।

मेघ पटल बिन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप।
निरावरण तुम शुद्ध हौ, पूजत मिटि है पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१३।।

अर्थ : मेघ-पटल से रहित सूर्य के समान अनन्त प्रताप से देदीप्यमान आप आवरणों से पूर्णतया रहित, शुद्ध हैं। आपकी पूजन करने से पाप समाप्त हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१३।।

कर्म अंश सब झर गिरे, रहौ न एक लगार।
परम शुद्धता धारकैं, तिष्ठौ हौ अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-निर्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१४।।

अर्थ : कर्मों के सभी अंश झड़कर समाप्त हो जाने से एक भी शेष नहीं रहने के कारण आप परम शुद्धता को धारण कर अविकार रूप में विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम निर्जरा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१४।।

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप।
अन्य कुदेव कुआगिया, जुग-जुग धरत कलाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलित-प्रभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१५।।

अर्थ : तेजस्वी, प्रचण्ड प्रभाव-शाली, उदितरूप प्रताप-समूह को आप युगों-युगों पर्यन्त धारण किए रहते हैं। अन्य कुदेव तो तुच्छ जुगनु के समान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलित प्रभाव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१५।।

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन।
तिनकौं जीतैं छिनक में, भये सुखी स्वाधीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं समस्त-कर्म-क्षय-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१६।।

अर्थ : आपके सभी कर्म निरर्थक हो गए हैं; उनकी शक्ति हीन हो गई है। उन्हें क्षण भर में जीत कर आप सुखी और स्वाधीन हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं समस्त कर्म-क्षय-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१६।।

कर्म प्रकृति कौं रोग सम, जानौ हौ क्षयकार।
निजस्वरूप आनन्द में, कहौ विगार निहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-विस्फोटकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१७।।

अर्थ : कर्म का स्वभाव रोग के समान क्षय करने वाला जानना चाहिए। अपने आनन्द स्वरूप में उसे निहार/पाला आदि के समान बिगाड़/बुरा करने वाला कहा है।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्म-विस्फोटक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१७।।

हीन शक्ति परमाद कौं, आप कियौ हैं अन्त।
निज पुरुषार्थ सुवीर्य यौं, सुखी भए सु अनंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-वीर्य-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१८।।

अर्थ : हीन शक्तिमय प्रमाद को आपने पूर्णतया नष्ट कर दिया है। इसप्रकार अपने पुरुषार्थ द्वारा सुवीर्य से आप अनन्त सुखी हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त वीर्य जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१८।।

एकरूप रस स्वाद में, निर आकुलित रहाय।
विविधरूप रस पर निमित, ताकौ त्याग कराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं एकाकार-रसास्वादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१९।।

अर्थ : एक/आत्मा रूप रस के स्वाद में आप आकुलता से पूर्णतया रहित हैं। आपने पर की निमित्तता में होने वाले अनेक प्रकार के रसों का त्याग कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं एकाकार-रस-आस्वाद के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९१९।।

इन्द्री मन के सब विषय, त्याग दिये इक लार।
निजानन्द में मगन हैं, छाँडौ जग व्यापार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वाकार-रसाकुलिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२०।।

अर्थ : इन्द्रिओं और मन के सभी विषयों का आपने एक साथ/एक ही बार में पूर्णतया त्याग कर दिया है। जगत के सम्पूर्ण व्यापारों/कार्यों को छोड़कर आप अपने आनन्द में मग्न हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्व-आकार/अनेक प्रकार के रस से आकुल नहीं होने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२०।।

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार।
सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्यु कौं टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा-जीविताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२१।।

अर्थ : पर संबंधी प्राणों से पूर्णतया रहित हो, जन्म, जरा/बुढ़ापा, मृत्यु को नष्ट कर आप अपने प्राणों के आधार से सदा जीवित रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सदा जीवित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२१।।

निजरस के सागर धनी, महान प्रिय स्वादिष्ट।
अमर रूप राजैं सदा, सुर मुनि के हौ इष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२२।।

अर्थ : महान प्रिय, स्वादिष्ट अपने आत्मा रूपी रस के सागर के स्वामी; देवों और मुनिओं को इष्ट आप अमर रूप में सदा विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२२।।

पूरण निज आनन्द में, सदा जागते आप।
नहिं प्रमाद में लिप्त हैं, पूजत विनसैं पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं जाग्रते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२३।।

अर्थ : प्रमाद में रंच-मात्र भी लिप्त नहीं होते हुए आप अपने परिपूर्ण आनन्द में सदा जागृत रहते हैं। आपकी पूजन करने से पाप पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं जागृत के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२३।।

क्षीण ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीव कौ नित्य।
सो आवर्ण विनाशिऔ, रहौ अस्वप्न सुवित्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं असुप्ताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२४।।

अर्थ : ज्ञानावरण कर्म जीव के ज्ञान को सदा क्षीण करता है। उस आवरण को नष्ट कर आप स्वप्न-रहित, सुदृढ़ हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं असुप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२४।।

स्व-प्रमाण में थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्व-प्रमाण-स्थिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२५।।

अर्थ : असत्य भावों का त्याग कर आप सम्पूर्ण बाधाओं से रहित, निर्भय, सुखी, सत्यार्थ स्वचतुष्टयरूप अपने प्रमाण में सदा स्थिर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अपने प्रमाण में स्थित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२५।।

श्रमकरि नहिं आकुलित हौ, सदा रहौ निरखेद।
स्वस्थरूप राजौ सदा, वेदौ ज्ञान अभेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२६।।

अर्थ : परिश्रम से होने वाली आकुलता, खेद से पूर्णतया रहित हो आप अपने अभेद ज्ञान का अनुभव करते हुए सदा स्वस्थ रूप में विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलित जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२६।।

मन वच तन व्यापार था, तावत रहौ शरीर।
ताकौं नाश अकंप हौ, बन्दूँ मन धर धीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं अयोगिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२७।।

अर्थ : जब तक मन, वचन, काय का व्यापार/कम्पन विद्यमान रहता है, तब तक शरीर रहता है। उसे समाप्त कर आप अकम्प हो गए हैं। मन में धैर्य धारण कर मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अयोगी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२७।।

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र।
तुमकौं बंदूँ भाव सौं, हरौ पाप सर्वत्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरशीति-लक्षणाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२८।।

अर्थ : जितने भी शुभ लक्षण कहे जाते हैं वे सभी आपमें एकत्रित हैं। सर्वत्र पापों को समाप्त करने वाले आपकी मैं भाव पूर्वक वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं चौरासी लक्षण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२८।।

तुम लक्षण सूक्षम महा, इन्द्रिय विषय अतीत।
वचन अगोचर गुण धरौ, निर्गुण कहत सुनीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२९।।

अर्थ : महा सूक्ष्म आपके लक्षण इन्द्रियों के विषयों से रहित हैं। वचनों के अगोचर गुणों को धारण करने वाले आपको नीतिकार निर्गुण कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अगुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९२९।।

अगुरुलघू पर्याय के, भेद अनन्तानन्त।
गुण अनंत परिणामकरि, नित्य नमैं तुम 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानन्त-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३०।।

अर्थ : अगुरुलघु गुण की पर्याय के अनन्तानन्त भेद हैं। अनन्त परिणामों द्वारा भी गुण नित्य हैं। आपको सन्त कवि सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-अनन्त पर्याय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३०।।

राग-द्वेष के नाशतैं, नहीं पूर्व संस्कार।
निज सुभाव में थिर रहैं, अन्य वासना टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्व-संस्कार-नाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३१।।

अर्थ : राग-द्वेष का नाश हो जाने के कारण आपमें पूर्व संस्कार नहीं हैं। अन्य सभी वासनाओं को समाप्त कर आप अपने स्वभाव में स्थिर रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्व संस्कार-नाशक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३१।।

गुण चतुष्ट में वृद्धता, भई अनन्तानन्त।
तुम सम और न जगत में, सदा रहौ जयवंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-चतुष्टय-वृद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३२।।

अर्थ : आपके गुण चतुष्क/ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य में अनन्तानन्त वृद्धि हो गई है। जगत में आपके समान कोई अन्य नहीं है। आप सदा जयवन्त रहें।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त चतुष्टय वृद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३२।।

आर्ष कथित, उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त।
सो सब नाम कहौ तुम्हीं, शिवमारग के सन्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रिय-वचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३३।।

अर्थ : आर्ष/आगम में कहे गए उत्तम वचन, धर्म-मार्ग, अरहन्त, मोक्ष-मार्ग के सन्त इत्यादि सभी नाम आपके ही कहे गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रिय वचन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३३।।

महाबुद्धि के धाम हौ, सूक्षम शुद्ध अवाच्य।
चार ज्ञान नहिं गम्य हौ, वस्तुरूप सो साँच्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वचनीयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३४।।

अर्थ : महा बुद्धि के धाम आप सूक्ष्म शुद्ध अवाच्य/वचन-अगोचर, (मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय - इन) चार ज्ञानों द्वारा ज्ञात नहीं होने-योग्य, वास्तविक वस्तु-स्वरूप हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वचनीय/वचनों के विषय नहीं होने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३४।।

सूक्षम तैं सूक्षम विषैं, तुमकौ है परवेश।
आपै सूक्षम रूप हौ, राजत निज परदेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३५।।

अर्थ : (ज्ञान की अपेक्षा) सूक्ष्म से सूक्ष्म में भी आपका प्रवेश है। आप स्वयं सूक्ष्म रूप हैं और अपने प्रदेशों में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनीश (जिनका कोई दूसरा स्वामी नहीं है) के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३५।।

कर्म प्रबन्ध सुघन पटल, ताकी छाँय निवार।
रविघन ज्योति प्रकट भई, पूरणता विधि धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनणु-पर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३६।।

अर्थ : कर्मों के प्रकृष्ट बन्ध रूपी घने मेघ-पटलों की छाया का निवारण कर आपमें परिपूर्ण वैभव को धारण करने वाली, सूर्य के समान सघन ज्योति प्रगट हुई है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनणु/विशाल पर्याय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३६।।

निज प्रदेश में थिर सदा, योग निमित्त निवार।
अचल शिवालय के विषैं, तिष्ठैं सिद्ध अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्थेयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३७।।

अर्थ : योग रूपी निमित्त का निवारण कर अपने प्रदेशों में सदा स्थिर रहने वाले अनन्त सिद्ध भगवान अचल मोक्ष-स्थल में विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्थेय/स्थिर रहने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३७।।

सन्तन मन प्रिय हौ अती, सज्जन वल्लभ जान।
मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३८।।

अर्थ : आपके लिए नमन करना, सन्तों को अत्यन्त प्रिय है। आपको सज्जनों का अत्यन्त प्रिय जानना चाहिए। मुनिजनों के मन को आप वास्तव में प्रिय हैं। आपको नमन करने से कल्याण होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठ/प्रकृष्ट इष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३८।।

काल अनन्तानन्त लौं, करैं शिवालय वास।
अव्यय अविनाशी सुथिर, स्वयं ज्योति परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्थिर-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३९।।

अर्थ : अव्यय, अविनाशी, परिपूर्ण स्थिर, अपनी ज्योति से प्रकाशित आप अनन्तानन्त काल पर्यन्त मोक्ष-स्थान में निवास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्थिर जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९३९।।

स्व-आतम में वास है, रुलत नहीं संसार।
ज्यों के त्यों निश्चल सदा, बंदत भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्म-तत्त्व-निष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४०।।

अर्थ : आप अपने आत्मा में निवास करते हैं; अत: संसार में नहीं रुलते/भटकते हैं। ज्यों के त्यों/जिसरूप में सिद्ध हुए, उसी रूप में सदा निश्चल रहने वाले आपकी वन्दना करने से संसार-सागर से पार हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अपने आत्म-तत्त्व में ही संतुष्टि पूर्वक रहने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४०।।

सुभग सराहन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय।
तीन लोक में सार हैं, मुनिजन बंदित पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ-भाव-धारक-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४१।।

अर्थ : सौभाग्य-शाली, सराहनीय, उत्तम भावों को धारण करने वाले, तीनों लोकों में सार आपके चरणों की मुनिजन भी वन्दना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठ-भव धारक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४१।।

सब के अग्रेसर भये, सब के हौ सिरताज।
तुमसैं बड़ा न और है, सबके करहौ काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४२।।

अर्थ : सभी में अग्र-गण्य, सभी के शिरोमणि, आपसे बड़ा अन्य कोई नहीं है। आप सभी के कार्य कर देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठ/सबसे बड़े के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४२।।

स्व-प्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य-भाव विधि नास।
इष्टानिष्ट निमित धरैं, निज आनन्द विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कंप-प्रदेश-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४३।।

अर्थ : द्रव्यकर्म और भावकर्म पूर्णतया समाप्त हो जाने के कारण आपके अपने प्रदेश निष्कम्प हैं। इष्ट-अनिष्ट निमित्तों का हरण कर आप अपने आनन्द में विलास करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कम्प-प्रदेश-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४३।।

उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सुन्याय सुलब्ध।
तिन सबके स्वामी नमूँ, पूरण सुखी सुअब्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तम-क्षमादि-गुणाब्धि-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४४।।

अर्थ : उचित/उत्तम क्षमादि, सभी अर्थ, सत्य, सुन्याय, सुलब्ध/नौ क्षायिक लब्धिआँ इत्यादि सभी के स्वामी, परिपूर्ण सुख के सागर आपके लिए नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तम क्षमादि गुणों के सागर जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४४।।

महा कठिन दुःशक्य है, यह संसार निकास।
तुम पायौ पुरुषार्थ करि, लहौ स्वलब्धि अवास।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्य-पाद-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४५।।

अर्थ : इस संसार से निकलना/संसार से पार हो जाना, बहुत कठिन दुःशक्य है। आपने अपने पुरुषार्थ से उसका पार प्राप्त कर, अपनी लब्धिओं में निवास पा लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्य-पाद/पूजने-योग्य चरण वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४५।।

परमारथ निज गुण कहैं, मोक्ष प्राप्ति में हौंय।
स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनकौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थ-गुण-निधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४६।।

अर्थ : अपने जो-जो परमार्थ गुण कहे गए हैं, वे मोक्ष की प्राप्ति में ही प्रगट होते हैं। इन्द्रियों के लक्ष्य से उत्पन्न होने वाले स्वार्थ को आपने पूर्णतया समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थ-गुण-निधान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४६।।

पर-निमित्त या भेद करि, या उपचरित कहाय।
सो तुममें सब लय भये, मानों सुप्त कराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहार-सुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४७।।

अर्थ : पर की निमित्तता या भेद द्वारा जानना, उपचरित कहलाता है। वे सभी आपमें लीन हो गए हैं, मानों आपने उन्हें सुप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहार-सुप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४७।।

स्व-पद में नित रमत हैं, अप्रमाद अधिकाय।
निज गुण सदा प्रकाश है, अतुल बली नमुँ पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अति-जागरुकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४८।।

अर्थ : प्रमाद से पूर्णतया रहित होकर आप अपने पद में सदा रमण करते हैं। सदा प्रकाशमय अपने गुणों से सम्पन्न अनन्त बल-शाली आपके चरणों में नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अति जागरुक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४८।।

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे पर की साथ।
निर्भय सदा सुखी भये, बंदूँ नमि निज माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अति-सुस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४९।।

अर्थ : पर-पदार्थों के साथ/संयोग के कारण होने वाले सभी उपद्रव पूर्णतया समाप्त हो जाने के कारण आप सदा निर्भय और सुखी हो गए हैं। अपना मस्तक झुकाकर मैं आपकी सदा वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अति सुस्थित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९४९।।

कहैं हुवे हौ नेमसैं, परमाराध्य अनादि।
तुम महातमा जगत के, और कुदेव कुवादि।।

ॐ ह्रीं अर्हं उदितोदित-माहात्म्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५०।।

अर्थ : जगत के महात्मा होने से परम आराध्य हो जाने के कारण आप नियम पूर्वक अनादि से परम आराध्य कहे गए हैं। अन्य कुदेव तो निरर्थक हैं अथवा अन्य कुदेवों को आराध्य कहना, मिथ्यात्वादिपना है।

ॐ ह्रीं अर्हं विशेष रूप से प्रगट माहात्म्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५०।।

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार।
तिसके तुम अध्याय हौ, अर्थ प्रकाशन हार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व-ज्ञानानुकूल-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५१।।

अर्थ : विचार पूर्वक शब्दों का प्रयोग कर सभी ओर से अनुकूल तत्त्व-ज्ञान के अर्थ को प्रकाशित करने वाले आप उसके अध्याय हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्व-ज्ञान अनुकूल जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५१।।

ना काहू सौं जन्म हो, ना काहू सौं नाश।
स्वयंसिद्ध बिन पर-निमित्त, स्व-स्वरूप परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५२।।

अर्थ : आपका किसी से जन्म नहीं होता है और किसी से नाश भी नहीं होता है। पर की निमित्तता से रहित आप स्वयं-सिद्ध अपने स्वरूप में प्रकाशित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिम के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५२।।

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश।
तेजरूप उत्सव मई, पाप तिमिर कौं नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमेय-महिम्ने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५३।।

अर्थ : आपके सम्यग्ज्ञान का प्रकाश अन्य प्रमाणों का विषय नहीं है। पाप रूपी अन्धकार को समाप्त करने वाला वह तेजरूप और उत्सव मय है।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात नहीं होने-योग्य महिमा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५३।।

रागादिक मल कौं हरैं, तनक नहीं आवास।

महा विशुद्ध अत्यंत हैं, हरौ पाप-अहि-डाँस।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्त-शुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५४।।

अर्थ : जिनमें आप रंच-मात्र भी नहीं रहते हैं, उन रागादि मल को समाप्त कर देने वाले आप अत्यन्त महा विशुद्ध हैं। आप पापरूपी सर्पों के डसने का हरण कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्त शुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५४।।

स्वयंसिद्ध भरतार हौ, शिवकामिनि के संग।

रमण भाव निज योग में, मानों अति आनंद।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धि-स्वयंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५५।।

अर्थ : मोक्षरूपी स्त्री के स्वयं-सिद्ध स्वामी आप उसके साथ रमण करते हुए मानो अपने योग भावों में अति आनन्दित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धि स्वयंवर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५५।।

विविध प्रकार न धरत हैं, है अजन्म अव्यक्त।

सूक्षम सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सुव्यक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५६।।

अर्थ : अनेक प्रकार के भेदों को धारण नहीं करने वाले आप, जन्म से पूर्णतया रहित, अव्यक्त, सिद्धों के समान सूक्ष्म, अपने स्वभाव से ही भली-भाँति व्यक्त हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध अनुज के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५६।।

मोक्षरूप शुभ वास के, आप मार्ग निरखेद।

भविजन सुलभ गमन करैं, जगत वास कौं छेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवपुरी-पंथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५७।।

अर्थ : मोक्ष रूपी कल्याण-कारी निवास के आप पूर्णतया खेद-रहित मार्ग हैं। भव्य जीव संसार-वास का छेदन कर सरलता पूर्वक इस मार्ग पर गमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षरूपी नगरी के मार्ग के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५७।।

गुण समूह अत्यन्त हैं, कोइ न पावै पार।

थकित रहे श्रुतकेवली, निज बल कथन अगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-गुण-समूह-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५८।।

अर्थ : आपका गुण-समूह अनन्त है; कोई भी इनका पार प्राप्त नहीं कर पाता है। इनका अपने बल से कथन करने में मुनिराज श्रुत-केवली भी थक जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त गुण समूह जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५८।।

इक अवगाह प्रदेश में, हौं अवगाह अनन्त।
पर उपाधि निग्रह कियौ, मुख्य प्रधान अनन्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-उपाधि-निग्रह-कारक-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५९।।

अर्थ : पर-कृत उपाधिओं को समाप्त कर देने से मुख्य, प्रधान, अनन्त मय आपकी अवगाहना के एक प्रदेश/क्षेत्र में अनन्त जीवों की अवगाहना होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-उपाधि-निग्रह-कारक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९५९।।

स्वयंसिद्ध निज वस्तु हौ, आगम इन्द्रिय ज्ञान।
कर्तादिक लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-सिद्ध-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६०।।

अर्थ : आगम, इन्द्रिय-ज्ञान, कर्ता आदि के लक्षण से पूर्णतया रहित, अपने स्वभाव-प्रमाण आप स्वयं-सिद्ध वस्तु हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-सिद्ध जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६०।।

हो प्रछन्न इन्द्रिय अगम, प्रकट न जानैं कोय।
सकल अगुण कौं लय कियौ, निज आतम में खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रियागम्य-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६१।।

अर्थ : प्रच्छन्न, इन्द्रियों के अगोचर आपको कोई भी प्रगट रूप में जान नहीं पाता है। अपने आत्मा में लीन हो आपने सम्पूर्ण अवगुणों को समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रिय-अगम्य जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६१।।

निज गुण करि निज पोषिऔ, सकल क्षुद्रता त्याग।
पूरण निजपद पाय करि, तिष्ठत हौ बड़भाग।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्टाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६२।।

अर्थ : अपनी समस्त क्षुद्रताओं का त्याग कर अपने गुणों द्वारा अपना पोषण करते हुए आप अपने परिपूर्ण पद को प्राप्त कर महा भाग्य-शाली हो उसमें विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्ट के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६२।।

ब्रम्हचर्य पूरण धरैं, निज पद रमता धार।
सहस अठारह भेद करि, शील सुभाव सु सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादश-सहस्र-शीलेश्वराय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६३।।

अर्थ : अपने पद में रमणता को धारण कर परिपूर्ण ब्रम्हचर्य के धारक आप अठारह हजार भेद वाले शील-स्वभाव के श्रेष्ठ सार हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अठारह हजार शीलों के ईश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६३।।

महा पुन्य शिवपद कमल, ताके दल विकसान।
मुनि मन भ्रमर रमण सुथल, गंधानंद महान।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-संकुलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६४।।

अर्थ : महा पुण्य रूप, मोक्ष पद रूपी कमलों के दलों को विकसित करने वाले आप मुनिराजों के मन रूपी भ्रमरों को रमण करने के लिए सम्यक् स्थल और सुगन्ध के महान आनन्द को देते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-संकुल/पवित्र-स्थान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६४।।

मति श्रुत अवधि त्रिज्ञान युत, स्वयंबुद्ध भगवान।
क्रतयुग में मुनि व्रत धरौ, शिव साधक परधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं व्रताग्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६५।।

अर्थ : मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान - इन तीन ज्ञान युक्त हे स्वयं बुद्ध भगवान! आप कर्म-भूमि में मुनि-व्रत धारी मोक्ष के साधकों में प्रधान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं व्रतों में प्रधान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६५।।

परम शुक्ल शुभ ध्यान में, तुम सेवन हितकार।
'सन्त' उपासक आपके कर्म-बंध छुटकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-शुक्ल-ध्यानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६६।।

अर्थ : कल्याणमय परम शुक्ल-ध्यान में आपका सेवन हित-कारक है। कर्म-बन्ध से छुटकारा प्राप्त करने के लिए सन्त कवि आपकी उपासना करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं परम शुक्ल-ध्यानी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६६।।

क्षारवार इस जलधि कौ, शीघ्र कियौ तुम अन्त।
गोखुरकार उलंघियौ, धरौ स्व भुज बलवंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं संसार-समुद्र-तारक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६७।।

अर्थ : इस खारे जल वाले संसार-सागर का गाय के खुर-समान उल्लंघन कर आपने अपनी बलवान भुजाओं द्वारा शीघ्र ही अन्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं संसार-समुद्र-तारक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६७।।

एक समय में गमन कर, कियौ शिवालय वास।
काल अनंत अचल रहौ, मेटौ जग भ्रम त्रास।।

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६८।।

अर्थ : संसार के परिभ्रमण का कष्ट समाप्त कर आपने एक समय में गमन कर मोक्ष-स्थान का निवास प्राप्त कर लिया है। आप वहाँ अनन्त काल पर्यन्त अचल रहेंगे।

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६८।।

पंचाक्षर लघु जाप में, जितना लागै काल।
अंतिम पाया शुक्ल का, ध्याय बसै जग भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्च-लघ्वक्षर-स्थितये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६९।।

अर्थ : पाँच लघु अक्षरों के जाप/उच्चारण में जितना समय लगता है, उतने समय पर्यन्त शुक्ल-ध्यान के अन्तिम भेद/व्युपरत क्रिया निवर्ति रूप ध्यान कर आप लोक के मस्तक पर स्थित हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं पंच लघु अक्षर-स्थिति के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९६९।।

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, जब तक मोक्ष न होय।
सर्व प्रकृति थिति मेटकैं, पहुँचे शिवपुर सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदश-प्रकृति-स्थिति-विनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७०।।

अर्थ : जब तक तेरह प्रकृतिआँ शेष हैं, तब तक मोक्ष नहीं होता है। सभी प्रकृतिओं की स्थिति समाप्त कर आप मोक्ष रूपी नगर में पहुँच गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं तेरह प्रकृतिओं की स्थिति का विनाश करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७०।।

तेरह विधि चारित्र के, तुम हौ पूरण शूर।
निज पुरुषारथ करि लियौ, शिवपुर आनंद पूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदश-चारित्र-पूर्णताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७१।।

अर्थ : तेरह प्रकार के चारित्र का परिपूर्ण पालन करने वाले शूरवीर आपने अपने पुरुषार्थ द्वारा शिवपुर का परिपूर्ण आनन्द प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं तेरह प्रकार के चारित्र की पूर्णता के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७१।।

निज सुख में अन्तर नहीं, परसौं हानि न होय।
स्वस्थरूप परदेश जिन, तिन पूजत हूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्य-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७२।।

अर्थ : अपने प्रदेशों में स्वस्थ रूप होने से आपके अपने सुख में अन्तर नहीं पड़ता है और दूसरों से हानि नहीं होती है। मैं उनकी पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्य/खण्डित नहीं होने वाले जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७२।।

निज पूजन तैं देत हौ, शिव संपति अधिकाय।
यातैं पूजन योग्य हौ, पूजूँ मन-वच-काय।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-दात्री-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७३।।

अर्थ : अपनी पूजन करने वालों को आप मोक्ष रूपी अत्यधिक सम्पत्ति देते हैं; अतः पूजन के योग्य आपकी मैं मन, वचन, काय पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं शिव-दाता-जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७३।।

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमकौं जीत।
नमूँ तुम्हें जयवंत हौ, धार सु उर में प्रीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजय-जिनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७४।।

अर्थ : मोह का महा प्रचण्ड बल भी आपको जीत नहीं पाता है; अत: आप सदा जयवन्त हैं। हृदय में प्रीति धारण कर मैं आपको नमन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अजय जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७४।।

यग विधान में जजत ही, आप मिलैं निधि रूप।
तुम समान नहीं और धन, हरत दरिद दुखकूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७५।।

अर्थ : यज्ञ विधान में पूजन करते ही निधि रूप आप प्राप्त हो जाते हैं। दरिद्रता रूपी दु:खमय कूप को समाप्त करने के लिए आपके समान अन्य कोई धन नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं याज्य/पूजन-योग्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७५।।

लोकोत्तर सम्पद विभव, है सरवस्व अघाय।
तुमसैं अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्य-परिग्रहाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७६।।

अर्थ : लोकोत्तर सम्पत्ति, सर्वस्व वैभव से आप पूर्णतया सन्तुष्ट हैं। हे मोक्ष के राजा! सुख और विभूति में आपसे अधिक अन्य कोई नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्य/अनमोल परिग्रह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७६।।

तुमरौ आह्वानन यजन, प्रासुक विधि सैं योग।
त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत पर्म सुखभोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्य-हेतवे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७७।।

अर्थ : मन, वचन, काय पूर्वक प्रासुक विधि से आपका आह्वानन, पूजन तीनों लोकों की वास्तविक अनमोल निधि है। यह परम सुख के भोग देती है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्य-हेतु के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७७।।

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भव-तन-भोग विरक्तता, निर्ममत्त्व सुख साज।।

ॐ ह्रीं अर्हं परम-निष्पृहाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७८।।

अर्थ : संसार, शरीर, भोगों से विरक्तता; निर्ममता, सुख-साज मुनिराजों के एकदेश है और जिनराज के सर्वदेश/परिपूर्ण है।

ॐ ह्रीं अर्हं परम निष्पृह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७८।।

परदुख में दुख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसकौं सुमति, सो तुम मोह निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्त-निर्मोहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७९।।

अर्थ : मोह प्रकृति की निमित्तता में जहाँ दूसरों के दुःख में दुःख होता है, उसे सम्यग्ज्ञानी दया कहते हैं। आपने उस मोह को समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्त निर्मोह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९७९।।

स्वयंबुद्ध भगवान हौ, सुर मुनि पूजत योग।
बिन शिक्षा शिवमार्ग कौं, साधौ हौ धरि योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८०।।

अर्थ : देवों और मुनिओं के द्वारा पूजन-योग्य आप स्वयं-बुद्ध भगवान हैं। योग धारण कर आपने विना शिक्षा के ही मोक्ष-मार्ग को साध लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८०।।

तुम एकत्व अन्यत्व हौ, परसौं नहिं सम्बन्ध।
स्वयंसिद्ध अविरुद्ध हौ, नाशौ जगत प्रबन्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-संबंध-विनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८१।।

अर्थ : एकत्व और अन्यत्व रूप आपका अन्य से संबंध नहीं है। स्वयं-सिद्ध, विरुद्धता से रहित आपने संसार के संबंधों को समाप्त कर दिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-संबंध-विनाशक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८१।।

काहू कौ नहिं यजन करि, गुरु का नहिं उपदेश।
स्वयंबुद्ध स्व-शक्ति हौ, राजौ शुद्ध हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८२।।

अर्थ : किसी की पूजन नहीं करने वाले, किसी भी गुरु का उपदेश ग्रहण नहीं करने वाले आप स्वयं-बुद्ध और स्व-शक्ति से सदा शुद्ध रूप में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८२।।

तुम त्रिभुवन के पूज्य हौ, यजौ न काहू और।
निजहित में रत हौ सदा, पर-निमित्त कौं छोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवन-पूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८३।।

अर्थ : तीनों लोकों द्वारा पूज्य आप किसी अन्य की पूजन नहीं करते हैं। पर का निमित्त छोड़कर आप अपने हित में सदा लीन हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवन-पूज्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८३।।

अरहन्तादि उपासना, मोह उदयसौं होय।
स्वयं ज्ञान में लय भए, मोह कर्म कौं खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८४।।

अर्थ : मोहनीय कर्म के उदय में अरहन्तादि की उपासना होती है। आप मोहनीय कर्म को पूर्णतया समाप्त कर अपने ज्ञान में लीन हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८४।।

गौण रूप परिणाम है, मुख ध्रुवता गुण धार।
अक्षय अविनश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८५।।

अर्थ : परिणामों को गौणरूप और ध्रुवतामय गुणों को मुख्य रूप से धारण करने वाले आप अक्षय, अविनश्वर, अपने पद में स्वस्थ, सुस्थिर और अविकार रूप हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८५।।

सूक्षम शुद्ध स्वभाव है, लहैं न गणधर पार।
इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८६।।

अर्थ : गणधर भी आपके सूक्ष्म और शुद्ध स्वभाव का पार प्राप्त नहीं कर पाते हैं। इन्द्र, अहमिन्द्र आदि सभी हृदय में धारण कर आपकी अभिलाषा करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अगम्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८६।।

अचल शिवालय के विषैं, टंकोत्कीर्ण समान।
सदा विराजौ सुखसहित, जगत भ्रमण कौं हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अगमकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८७।।

अर्थ : संसार का परिभ्रमण समाप्त कर आप मोक्ष के अचल स्थान में टंकोत्कीर्ण के समान सदा सुख-सहित विराजमान हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अगमक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८७।।

रमण योग छद्मस्थ के, नहीं अलिंग सरूप।
पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं अरम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८८।।

अर्थ : रमण करने-योग्य अलिंग स्वरूप, छद्मस्थ/अल्प-ज्ञानिओं के नहीं है। पर-पदार्थों के प्रवेश से पूर्णतया रहित आप सहज, अनुपम, शुद्धता को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अरम्य के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८८।।

पर-पदार्थ इच्छुक नहीं, इष्टानिष्ट निवार।
सुथिर रहौ निज आत्म में, बन्दत हूँ हितधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्म-सुस्थिराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८९।।

अर्थ : इष्ट और अनिष्ट का निवारण कर देने से आपको पर-पदार्थों की इच्छा नहीं है। अपने आत्मा में सदा सुस्थिर रहने वाले आपकी अपने हित को धारण कर मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मा में सुस्थिर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९८९।।

जाकौ पार न पाइऔ, अवधि रहित अत्यन्त।
सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखै 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-निर्भराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९०।।

अर्थ : जिसका पार प्राप्त नहीं किया जा सकता है, जो अवधि/सीमा से रहित अनन्त आपका महान ज्ञान है; उसकी इच्छा सन्त कवि रखते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-निर्भर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९०।।

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावैं निजपद सार।
महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत हैं सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-योगीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९१।।

अर्थ : जो मुनिराज, जिन की सेवा करते हैं, वे अपने पद का सार प्राप्त कर लेते हैं और महा शुद्ध उपयोगमय सुख-कारक रूप प्रवृत्ति करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा योगीश्वर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९१।।

भाव शुद्ध सौं देह में, द्रव्य शुद्ध बिन देह।
कर्म वर्गणा बिन लिये, पूजत हूँ धरि नेह।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्य-शुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९२।।

अर्थ : भाव शुद्धि पूर्वक देह/अरहन्त दशा में, द्रव्य शुद्धि पूर्वक देह-रहित/सिद्ध दशा में कर्म वर्गणा से पूर्णतया रहित आपकी प्रीति पूर्वक पूजन करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्य शुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९२।।

पंच प्रकार शरीर कौ, मूल कियौ विध्वंश।
स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहीं अंश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अदेहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९३।।

अर्थ : (औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस, कार्मण - इन) पाँच प्रकार के शरीरों का पूर्णतया मूल से विध्वंस कर, पर से रंच-मात्र भी नहीं मिलने वाले आप अपने प्रदेशों में सुशोभित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अदेह के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९३।।

जाकौ फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार।
सो पंचमगति शिवमई, पायौ तुम निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भवाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९४।।

अर्थ : जिसका पुन: जन्म नहीं है, पुन: संसार नहीं है, उस कल्याणमई पंचम गति को आपने वास्तव में प्राप्त कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भव के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९४।।

सकल इन्द्रियाँ व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय।
सब द्रव्यनि कौ ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैक-विदे नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९५।।

अर्थ : सम्पूर्ण इन्द्रियों को व्यर्थ कर/उनसे काम लेना बन्द कर, केवलज्ञान की सहायता से आप सभी द्रव्यों को, उनके अनन्त गुणों और पर्यायों को जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञान-एक-विद के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९५।।

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान।
अन्य विभाव विभव नहीं, महा शुद्धता जान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जीव-धनाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९६।।

अर्थ : जीव मात्र/प्रत्येक जीव को अपने धन से सहित, गुण समूह रूपी मणिओं की खदान, अन्य विभाव रूपी वैभव से पूर्णतया रहित, महा शुद्धतामय जानना चाहिए।

ॐ ह्रीं अर्हं जीव-धन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९६।।

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध।
महा शुद्ध निज आत्ममय, सदा रहैं निरबाध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९७।।

अर्थ : अपने पुरुषार्थ की साधना द्वारा आप प्रसिद्ध सिद्ध हो गए हैं। महा शुद्ध, समस्त बाधाओं से रहित अपने आत्मामय आप सदा रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९७।।

लोकशिखर पर थिर भए, ज्यों मन्दिर मणि कुम्भ।
निजशरीर अवगाह में, अचल सुथान अलुम्भ।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्र-स्थिताय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९८।।

अर्थ : लोक शिखर पर आप इसप्रकार स्थिर हो गए हैं जैसे मन्दिर पर मणिमय कुम्भ हैं। अपने शरीर रूप अवगाहना में आप अचल, सुस्थान और लुप्तता से रहित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्र-स्थित के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९८।।

सहज निरामय भेद बिन, निराबाध निस्संग।
एक रूप सामान्य हौ, निज विशेष मइ अंग।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९९।।

अर्थ : सहज, निरामय/रोग-रहित, अभिन्न, बाधाओं से पूर्णतया रहित, निस्संग/परिग्रह-रहित, एक रूप, सामान्य आप अपने विशेषता मय अंगों से सहित हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्व के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।९९९।।

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुण के सु अनन्त।
तुममें पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानंत-गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०००।।

अर्थ : प्रत्येक गुण के अनन्त अविभागी प्रतिच्छेद होते हैं। आपमें यथार्थ परिपूर्ण गुण होने से आप अनन्तानन्त अविभागी प्रतिच्छेदों को धारण करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्त गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०००।।

पर मिलाप नहिं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्हें, जानत नहीं स्वरूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्म-रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००१।।

अर्थ : अपने प्रदेशमय आपके स्वरूप में अन्य का रंच-मात्र भी मिलाप नहीं है। क्षायोपशमिक ज्ञानी आपके स्वरूप को नहीं जानते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरूप के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००१।।

क्षमा आत्म कौ भाव है, क्रोध कर्म सौं घात।
सो तुम कर्म खिपाइऔ, क्षमा सुभाव धरात।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-क्षमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००२।।

अर्थ : आत्मा का स्वभाव क्षमा है। वह क्रोध कर्म से नष्ट हो जाता है। आपने उस कर्म का पूर्णतया अभाव कर, क्षमा स्वभाव धारण कर लिया है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा क्षमा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००२।।

शील सुभाव सु आत्म कौ, क्षोभ रहित सुखदाय।
निर आकुलता धार है, बंदूँ तिनके पाँय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-शीलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००३।।

अर्थ : आत्मा के क्षोभ-रहित, सुख-दायक, शील, स्वभाव को निराकुलता पूर्वक धारण करने वाले आपके चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं महा शील के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००३।।

शशि स्वभाव ज्यों शांतिधर, और न शांति धराय।
आप शांति पर–शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा–शांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००४।।

अर्थ : चन्द्रमा के स्वभाव के समान शान्ति को धारण करने वाले आपके समान अन्य कोई दूसरा शान्ति को धारण नहीं करता है। शान्ति–स्वरूप आप दूसरों को शान्ति करने वाले हैं और संसार के दुःख रूपी दाह को समाप्त करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा शान्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००४।।

तुम सम कौ बलवान है, जीत्यौ मोह प्रचंड।
धरौ अनन्त स्व–वीर्य कौं, निजपद सुथिर अखंड।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत–वीर्यात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००५।।

अर्थ : प्रचण्ड मोह को जीतने वाले आपके समान अन्य कोई बलवान नहीं है। अपने अनन्त वीर्य को धारण करने वाले आप अपने पद में अखण्ड सुस्थिर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त वीर्यात्मक के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००५।।

लोकालोक विलोकिऔ, संशय बिन इकबार।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००६।।

अर्थ : स्वच्छ दर्पण के समान आप संशय से रहित हो एक बार में ही लोकालोक को देखकर खेद–रहित, निश्चल, सारभूत सुखी हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकज्ञ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००६।।

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रसभोग।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००७।।

अर्थ : आवरणों से पूर्णतया रहित, अपने गुणों से सहित, अपने आनन्द रूपी रस का भोग करने वाले आप सदा अव्यय, अविनाशी, अजर, अमर, कल्याणकारी योग से सम्पन्न हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००७।।

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निजपद सार।
ज्यों रविबिंब प्रकाशकर, घट–पट सहज निहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्येय–गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००८।।

अर्थ : जैसे सूर्य–बिम्ब के प्रकाश में घड़े, कपड़े आदि सरलता पूर्वक दिख जाते हैं; उसीप्रकार उत्कृष्ट मुनीश्वर आपका ध्यान धरकर सारभूत अपना पद प्राप्त कर लेते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्येय गुण के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००८।।

कवलाहारी कहत है, महा मूढ़ मति मंद।
अशन असाता पीर बिन, आप भये सुखकंद।।

ॐ ह्रीं अर्हं अशन-दग्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००९।।

अर्थ : महा मूर्ख अज्ञानी आपको कवलाहारी कहते हैं। भोजन संबंधी असाता रूपी दु:खों से पूर्णतया रहित आप सुख के कन्द हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अशन/भोजन/आहार संज्ञा को दग्ध करने वाले के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१००९।।

लोक शीश छवि देत हौ, धरौ प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हौ, सहज अकम्प सरूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-मणये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१०।।

अर्थ : लोक के शीश पर आप अनुपम प्रकाश को धारण कर सुशोभित हैं। आपका सहज अकम्प स्वरूप ज्ञानी जनों के लिए आदर-योग्य है।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोक-मणि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१०।।

महा गुणन की रास हौ, लोकालोक प्रजन्त।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत-गुण-प्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०११।।

अर्थ : लोकालोक पर्यन्त प्रकाश करने वाले आप महान गुणों की राशि हैं। देवता और मुनि भी आपका पार प्राप्त नहीं कर पाते हैं। सन्त कवि आपको सदा नमन करते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त गुण-प्राप्त के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०११।।

परम सुगुण परिपूर्ण हौ, मलिन भाव नहीं लेश।
जग जीवन आराध्य हौ, हम तुम यही विशेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१२।।

अर्थ : परम सुगुणों से परिपूर्ण आपमें मलिन भाव रंच-मात्र नहीं हैं। संसारी जीवों के आप आराध्य हैं। हममें और आपमें यही विशेष/अन्तर है।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१२।।

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार।
सो तुम पायौ सहज ही, मुनिगण बंदनहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-ऋषये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१३।।

अर्थ : सातिशय/विशिष्ट/परिपूर्ण स्वरूप-स्थिरतामय तप के सार/फल में प्रगट होने वाली महान केवल-ज्ञान ऋद्धि को आपने सहजता से प्रगट कर लिया है। आप मुनि-गणों द्वारा वन्दनीय हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं महा ऋषि के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१३।।

भूत भविष्यत काल कौ, कभी न होवे अन्त।
नित प्रति शिवपद पाय कर, होत अनंतानंत।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१४।।

अर्थ : भूत-भविष्य काल का कभी अन्त नहीं है। नित प्रति/सदा शिव-पद प्राप्त करते होने से आप अनन्तानन्त हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त सिद्धों के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१४।।

निर्भय निर-आकुलित हौ, स्वयं स्वस्थ निरखेद।
काहू विधि घबराट नहिं, निज आनंद अभेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१५।।

अर्थ : निर्भय, निराकुल, स्वयं स्वस्थ, खेद से पूर्णतया रहित, अभेद, अपने आनन्द में आपको किसी प्रकार की घबराहट नहीं है।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभ के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१५।।

जो गुण-गुणी सुभेद करि, सो जड़ मती अजान।
निज गुण-गुणी सु एकता, स्वयंबुद्ध भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-बुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१६।।

अर्थ : जो गुण-गुणी में सर्वथा भेद करते हैं, वे मूर्ख-अज्ञानी हैं। अपने गुण और गुणी की सम्यक् एकता से आप स्वयं-बुद्ध भगवान हो गए हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयं-बुद्ध के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१६।।

निरावरण निज ज्ञान में, सर्व स्पष्ट दिखाय।
संशय बिन नहिं भरम है, सुथिर रहौ सुख पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१७।।

अर्थ : आवरणों से पूर्णतया रहित अपने ज्ञान में सभी कुछ स्पष्ट दिखाई देता है। संशय के विना भ्रम से पूर्णतया रहित हो आप सुख प्राप्त कर स्वयं में सुस्थिर हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१७।।

राग-द्वेष के अंश में, मत्सर भाव कहात।
सो तुम नासौ मूल ही, रहैं कहाँ सौं पात।।

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-मत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१८।।

अर्थ : राग-द्वेष के अंश में मत्सर भाव हो जाता है - ऐसा कहते हैं। आपने राग-द्वेष रूपी मूल को ही जड़-मूल से समाप्त कर दिया है; तब फिर मत्सर आदि पत्ते कहाँ से/कैसे हो सकते हैं?

ॐ ह्रीं अर्हं वीत-मत्सर के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१८।।

अणुवत् लोकालोक है, जाके ज्ञान मँझार।
सो तुम ज्ञान अथाह है, बंदूँ मैं चित धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्त-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१९।।

अर्थ : आपके अथाह/अनन्त ज्ञान में समस्त लोक और अलोक अणु के समान है। मैं मन में धारण कर आपकी वन्दना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्त ज्ञान के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०१९।।

हस्तरेख सम देख हौ, लोकालोक सरूप।
सो अनंत दर्शन धरौ, नमत मिटै भ्रम-कूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्त-दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२०।।

अर्थ : हस्त-रेखा के समान लोकालोक के स्वरूप को देखने वाले अनन्त दर्शन को आप धारण करते हैं। आपको नमन करने से भ्रम का कूप/समूह समाप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्त दर्शन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२०।।

तीन लोक का पूज्यपन, प्रकट कहैं दिखलाय।
तीनलोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-शिखर-वासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२१।।

अर्थ : लोकोत्तम, सुख-दायक आपका तीन लोक के शिर/शिखर पर वास ही तीनों लोकों का पूज्यपना, प्रगट कह कर दिखला रहा है।

ॐ ह्रीं अर्हं लोक-शिखर-वासी के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२१।।

निज पद में लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय।
पर सौं इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहिं पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२२।।

अर्थ : अपने पद में लव-लीन आप अपने रस के स्वाद में सन्तुष्ट हैं। दूसरों के लिए यह रस गुप्त है; करोड़ों उपाय करके भी वे इसे प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं सगुप्त आत्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२२।।

कर्म प्रकृति कौ मूल नहिं, द्रव्य रूप यह भाव।
महा स्वच्छ निर्मल दिपै, ज्यों रवि मेघ अभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२३।।

अर्थ : मेघों से रहित सूर्य के समान द्रव्य-कर्म और भाव-कर्म रूपी समस्त कर्म प्रकृतिओं का मूल से ही अभाव हो जाने के कारण आपका द्रव्य और भाव महा स्वच्छ, निर्मल रूप में देदीप्यमान है।

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मा के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२३।।

हीन अभाव न शक्ति है, कर्मबन्ध कौ नाश।
उदय भये तुम गुण सकल, महा विभव की राश।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२४।।

अर्थ : कर्म-बन्ध का पूर्णतया अभाव हो जाने के कारण आपकी शक्तिओं से हीनता का पूर्णतया अभाव हो गया है। आपके सम्पूर्ण गुण, वैभव की महा-राशि प्रगट हो गई है।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदय के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२४।।

पाप रूप दुख नाशियौ, मोक्ष रूप सुख रास।
दासन प्रति मंगल करण, स्वयं 'सन्त' है दास।।

ॐ ह्रीं अर्हं महा-मंगलात्मक-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२५।।

अर्थ : पापरूपी दु:खों का नाशकर, मोक्षरूपी सुखों की राशि-सम्पन्न आप, दासों का मंगल करते हैं। सन्त कवि स्वयं आपका दास है।

ॐ ह्रीं अर्हं महा मंगलात्मक जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२५।।

दोहा : **कहैं कहाँ लौं तुम सुगुण, अंश मात्र नहीं अन्त।**
मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजै नित 'सन्त'।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्ण-स्व-गुण-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२६।।

अर्थ : अंश मात्र भी अन्त आता नहीं होने के कारण आपके सुगुण कहाँ तक कहे जाएँ? आपका नाम ही मंगल-कारी है - ऐसा जानकर सन्त कवि सदा आपका भजन करते हैं।

ॐ ह्रीं अपने गुण से पूर्ण जिन के लिए नमस्कार; अर्घ्यं...।।१०२६।।

यहाँ 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा' नमः इस मन्त्र का एक सौ आठ बार जाप करें।

जयमाला

दोहा : **होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहिं होय।**
काष्ठ पाँव सैं अनल थल, नाप सकै नहिं कोय।।१।।

अर्थ : जैसे लकड़ी के पैरों से अग्नि का स्थान कोई भी नाप नहीं सकता है; उसीप्रकार आपके विद्यमान गुणों का कथन जीभ के द्वारा नहीं हो सकता है।।१।।

सूक्षम शुद्ध-स्वरूप का, कहना है व्यवहार।
सो व्यवहारातीत हैं, यातैं हम लाचार।।२।।

अर्थ : सूक्ष्म शुद्ध स्वरूप का कथन करना व्यवहार है। आप व्यवहार से पूर्णतया रहित हो गए हैं; अत: हम आपका कथन करने में असमर्थ हैं।।२।।

पै जो हम कछु कहत हैं, शान्ति हेत भगवन्त।
बार बार थुति करन में, नहिं पुनरुक्त भनन्त।।३।।

अर्थ : ऐसा होने पर भी हे भगवान! हम जो कुछ भी कह रहे हैं, वह मात्र शान्ति के लिए है। बारम्बार स्तुति करने में पुनरुक्ति दोष नहीं कहा गया है।।३।।

पद्धड़ी : **जय स्वयं शक्ति आधार योग, जय स्वयं स्वस्थ आनंद भोग।**
जय स्वयं विकास आभास भास, जय स्वयंसिद्ध निजपद निवास।।४।।

अर्थ : अपनी शक्ति के योग्य आधार आपकी जय हो, अपने स्वस्थ आनन्द का स्वयं भोग करने वाले आपकी जय हो। अपने विकास की जानकारी को स्वयं प्रकाशित करने वाले आपकी जय हो, स्वयं-सिद्ध अपने पद में निवास करने वाले आपकी जय हो।।४।।

जय स्वयंबुद्ध संकल्प टार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आचार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार।।५।।

अर्थ : स्वयं-बुद्ध हो संकल्प को नष्ट करने वाले आपकी जय हो, रागादि को भस्म कर स्वयं-बुद्ध हुए आपकी जय हो। स्वयं अपने गुणों में आचरण को धारण करने वाले आपकी जय हो; स्वयं सुखी अक्षय, अपार आपकी जय हो।।५।।

जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।
जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग।।६।।

अर्थ : अपने चतुष्टय में शोभायमान आपकी जय हो, अपने अनन्त सुगुणों के निधान आपकी जय हो। अपने में स्वस्थ, सुस्थिर, योग-रहित आपकी जय हो; अपने मनोज्ञ स्वरूप से सम्पन्न आपकी जय हो।।६।।

जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु बज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान।।७।।

अर्थ : अपने स्वच्छ आत्म-ज्ञान से परिपूर्ण आपकी जय हो, अपने वीर्य से शत्रुरूपी बज्र को नष्ट कर देने वाले आपकी जय हो। महा मुनिओं के आराध्य रूप में ज्ञात आपकी जय हो, निपुण-मतिओं/सम्यग्ज्ञानिओं द्वारा तत्त्वज्ञ रूप में माने गए आपकी जय हो।।७।।

जय सन्तनि मन आनन्दकार, जय सज्जन चित बल्लभ अपार।
जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवि यश कथन न करि अघाय।।८।।

अर्थ : सन्तों के मन को आनन्दित करने वाले आपकी जय हो, सज्जनों के मन को अत्यन्त प्रिय आपकी जय हो। देवता जिनके गुणों को गाकर हर्ष प्राप्त करते/हर्षित होते हैं, उनकी जय हो; जिनके यश का कथन करते हुए कवि सन्तुष्ट नहीं होते हैं, उनकी जय हो।।८।।

तुम महातीर्थ भवि तरण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत।
तुम महामंत्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहौ सार।।९।।

अर्थ : भव्य जीवों को पार उतरने के लिए आप महा तीर्थ हैं, उद्धार करने के लिए महा धर्म

हैं; विषरूपी विघ्नों को भस्म कर देने के लिए महा मन्त्ररूप आप पापरूपी रोगों को समाप्त करने के लिए सारभूत रसायन कहे गए हैं।।९।।

तुम महा शास्त्र का मूल ज्ञेय, तुम महा तत्त्व हौ उपादेय।
तिहुँ लोक महा मंगल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप।।१०।।

अर्थ : महा शास्त्रों के मूल ज्ञेय आप, उपादेय रूप महा तत्त्व हैं। तीनों लोकों में महा मंगल स्वरूप आप, तीनों लोकों में सर्वोत्तम और अनुपम हैं।।१०।।

तिहुँ लोक शरण अघ-हर महान, भवि देत परम पद सुख निधान।
संसार महा सागर अथाह, नित जन्म-मरण धारा प्रवाह।।११।।
सो काल अनन्त दियौ बिताय, तामैं झकोर दुख रूप खाय।
मो दुखी देख उर दया आन, इम पार करौ कर ग्रहण पान।।१२।।

अर्थ : तीनों लोकों के पापों को पूर्णतया समाप्त करने वाले महान शरणभूत आप भव्य जीवों को सुख का निधान परम पद देते हैं। इस अथाह संसाररूपी महा सागर में यह जीव धारा प्रवाहरूप में सदा सतत जन्म-मरण कर रहा है। दु:खरूपी झकोरे खाते हुए उसमें अनन्त काल व्यतीत हो गया है। हे भगवान! आप मुझे दुखी देखकर, हृदय में दया लाकर, मेरा हाथ पकड़कर मुझे इस संसार-सागर से पार कर दीजिए।।११-१२।।

तुम ही हौ इस पुरुषार्थ जोग, अरु हैं अशक्त करि विषय रोग।
सुर नर पशु दास कहें अनन्त, इनमें से भी इक जान 'सन्त'।।१३।।

अर्थ : आप ही इस पुरुषार्थ के योग्य हैं/इस कार्य को करने में समर्थ हैं; शेष सभी जीव विषयरूपी रोगों के कारण अशक्त/शक्ति-हीन/कमजोर हो गए हैं। आपके दास देव, मनुष्य, पशु रूप अनन्त जीव कहे गए हैं। उनमें से 'सन्त' कवि को भी एक दास जान लीजिए।।१३।।

घत्ता-कवित्त : जय विघन जलधि जल हनन पवन बल सकल पाप मल जारन हौ।
जय मोह उपल हन बज्र असल दुख अनल ताप जल कारन हौ।।१४।।

अर्थ : विघ्न रूपी बादलों के जल को नष्ट करने के लिए बल-शाली पवन के समान आप समस्त पापों रूपी मल को जला देते हैं। मोह रूपी शिलाओं को नष्ट करने के लिए वास्तविक बज्र के समान आप दु:खरूपी अग्नि के ताप को नष्ट करने के लिए जल के समान कारण हैं। आपकी सदा जय हो, जय हो।।१४।।

ज्यौं पंगु चढ़ै गिर, गूंग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरै।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अंत सन्त परणाम करै।।१५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्त-श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ : जैसे पंगु/लंगड़ा व्यक्ति पर्वत चढ़ने में, गूँगा स्वर भरने/गाने में, भुजाओं से रहित

व्यक्ति समुद्र को पार करने में महा कष्ट का अनुभव करता है; उसीप्रकार आपकी स्तुति करने का कार्य भी महा लज्जा का स्थान है। 'सन्त' कवि अन्त में आपको प्रणाम करते हैं।।१५।।

ॐ ह्रीं सिद्धों को नमस्कार; एक हजार चौबीस गुण-संयुक्त श्री सिद्ध परमेष्ठी के लिए अनर्घ्य पद-प्राप्ति-हेतु जयमाला महा अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। **इति पूर्णार्घ्यम्**

दोहा : **तीन लोक चूड़ामणि, सदा रहौ जयवन्त।**
विघ्नहरण मंगलकरन, तुम्हैं नमें नित 'सन्त'।।१६।।

अर्थ : हे भगवान! तीन लोक के चूड़ामणि आप सदा जयवन्त वर्तें। विघ्नों का हरण करने वाले, मंगल करने वाले आपको सन्त सदा नमस्कार करते हैं।।१६।।

इसप्रकार अष्टम पूजन समाप्त हुई।।८।।

अडिल्ल : **पूरण मंगलरूप महा यह पाठ है;**
सरस सुरुचि सुखकार भक्ति कौ ठाठ है।
शब्द-अर्थ में चूक होय तो हौ कहीं;
थुतिवाचक सब शब्द-अर्थ यामैं सही।।१।।

अर्थ : यह महा पाठ/विधान परिपूर्ण मंगलरूप, सरस, सुरुचि, सुख-कारक, भक्ति का वैभव है। यदि शब्द और अर्थ में कोई भूल-चूक हो तो हो सकती है; तथापि इसमें सभी शब्द और अर्थ वास्तव में स्तुति-वाचक ही हैं।।१।।

जिनगुणकरण आरंभ हास्य कौ धाम है;
वायस का नहिं सिंधु उतीरण काम है।
पै भक्तनि की रीति सनातन है यही;
क्षमा करौ भगवंत शांति पूरण मही।।२।।

अर्थ : जिनेन्द्र भगवान के गुणों का कथन प्रारम्भ करना, हास्य का ही स्थान है। वायस/कौआ का कार्य समुद्र-पार करना नहीं है; परन्तु भक्तों की यही पद्धति सनातन है/अनादि से ही भक्त-गण भगवान की भक्ति करते आ रहे हैं। परिपूर्ण शान्ति के आधार हे भगवान! आप हमें क्षमा कीजिए।।२।।

इसप्रकार कविवर सन्तलालजी द्वारा रचा गया श्री सिद्ध चक्र विधान और इसका गद्य शैलीवाला अनुवाद समाप्त हुआ।

इसके बाद सरस्वती पूजन आदि करके क्रमशः शान्ति पाठ, विसर्जन पाठ करके पाठ सम्पन्न करें।।

इति शुभं भूयात्

(इसप्रकार सभी का कल्याण हो)